

* श्रीनेमिनाथाय नमः *

जिनवाणी संग्रह

अर्थात्

बृहद् जैन सिद्धान्त संग्रह ।



सम्पादक—

व्याकरण रत्न, पं० सतीशचन्द्र जैन, न्यायतीर्थ ।

पं० कस्तूरचंद छावड़ा “विशारद”

.....

प्रकाशक—

दुलीचंद पन्नालाल, परवार

मालिक—जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,

बड़ाबाजार, कलकत्ता ।

द्वितीय संस्करण १५०० } दीपावली २४५२ { मूल्य सवा दो रुपया ।

प्रकाशक—

दुलीचंद पन्नालाल परिवार

मालिक—जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,

पो० ब० ६७४८ कलकत्ता ।

प्रथम खंड हनुमान प्रेसमें तथा द्वितीय खंड
लक्ष्मीप्रिंटिंग वर्क्स प्रेसमें छपा है ।

मुद्रक :—

भोलानाथ बर्मन

लक्ष्मी प्रिंटिंग वर्क्स,

३५०, अपरचितपुर रोड, कलकत्ता ।

प्रकाशकीय वक्तव्य ।

बंधुओ ! हम आपकी गहरी सहानुभूतिका अनुभव करते हुए सिर्फ तीन हो महिनेमें यह द्वितीयावृत्ति लेकर सेवामें उपस्थित हो रहे हैं । हमें स्वप्नमें भी ऐसी आशा नहीं थी कि आप लोग इतना प्रेम दिखावेंगे । सिर्फ २-२॥ महिनेमें प्रथमावृत्ति खप गई, यह आनंद की बात है । इस नई आवृत्तिमें हमने अरहंतपाशा केवली, शिखर महात्म्य, विद्यावती कृत अनेक पद, संसार दुःख दर्पण, अठारह नाते की कथा आदि और भी बहुतसे आवश्यक विषयोंका समावेश कर दिया है । इससे संग्रह की महत्वता और भी बढ़ जाती है ।

जिन जिन महाशयोंके प्रकाशित विषयोंका हमने इसमें समावेश कर दिया है उन उन महाशयोंके प्रति हम अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं ।

श्रीमान् परोपकारी बन्धु बा० छोटेलाल जी जैन एम० आर० ए० एस० ने सदैवकी भांति अपनी शुभ सम्मति द्वारा हमें पूर्ण सहायता दी है इस महिती कृपाके लिये कृतज्ञ हैं ।

सम्पादक महाशयोंको भी हम धन्यवाद दिये वगैर नहीं रह सकते कि जिनने अपना अमूल्य समय दे कर हमें उपकृत किया है ।

प्रथमावृत्ति की आलोचना जैनमित्र, जैनजगत, परिवार बन्धु, खंडेलवाल जैन हितेच्छु आदि प्रसिद्ध पत्रोंने विस्तृत रूपसे खूब ही उत्तम की थी इस कृपाके लिये भी कार्यालय उनका आभारी है । आशा है आप सज्जन इसी तरह कृपा दृष्टि रखेंगे ।

दीपावली—घोर सं० २४५२ } निवेदक—
लीचन्द पन्नालाल, देवरी सागर

बड़ामारी सुभीता ।

१) एक रुपया प्रवेश फी जमा करा देने से हम अपने छपाये तमाम ग्रन्थ पौनी कीमत में दिया करते हैं। नवीन ग्रन्थ जब तैयार होता है वग़ावर १५ दिन पहिले खबर दी जाती है, जिन्हें नहीं लेना होता है उनका पत्र आनेसे नहीं भेजा जाता। अब बताइये कितना लाभ है ?

आजही पत्र लिखकर ग्राहक बन जावें अगर आप स्वयं ग्राहक हों तो अपने इष्ट मित्रों को बनाने की कृपा करें ।

“मैनेजर”



जैनधर्म और जैन जातिके परम उपकारी श्रीमान् जैनधर्म-
भूषण, धर्मदिवाकर श्रीब्रह्मचारी शोतलप्रसादजी
सम्पादक—“जैनमित्र और वीर”

के :—

कर कमलों में तुच्छ भेंट यह सादर अर्पण करता हूँ ।
जैनधर्मके नावक पर यह प्रेम पुष्प सर धरता हूँ ॥
प्रेम आपसे बाल बृद्ध, गुण सुग्ध, सभ्य जन करते हैं ।
धर्म स्वरूप समझ कर सच्चा सत्य सौख्य यश भरते हैं ॥
हे शांत हृदय ! अहं पूज्यवर कृपा से अपनाइये ।
कर कमलों में ग्रहण कर सत्य मार्ग दिखलाइये ॥

विनीत—

“सम्पादक”

मंदिरों के लिये बड़ाभारी सुभोता ।

काश्मीरी केशर ।

पवित्र केशर हमारे यहां हर समय तैयार रहती है बहुत ही कम नफा लेकर भेजी जाती है एक बार परीक्षा अवश्य कीजिये । ३) तोला ।

स्फटिक की मालायें ।

चमकती हुई सुन्दर मालायें, हमारे यहां से मंगाईये ।
१) की ४ तथा २५) रुपया सैकड़ा ।

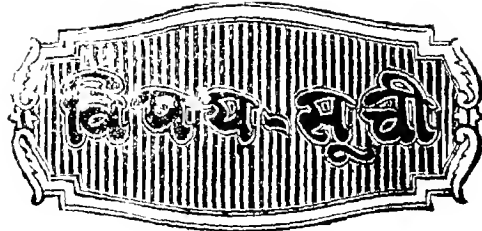
दशांग धूप ।

पवित्रता के साथ तैयार की हुई यह दशांग धूप बहुत ही उत्तम और सुगंधित है दाम ५) रुपया सेर आधपाव का डब्बा ॥८)

हमारा पता—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय,

बड़ाबाजार—कलकत्ता ।



प्रथम खंड

नं०	नाम	पृष्ठ	नं०	नाम	पृष्ठ
१,	णमोकार मंत्र ...	१	१६,	महावीराष्टक(संस्कृत)	५३
२,	णमोकारमंत्रका माहात्म्य	१	१७,	महावीराष्टक (भाषा)	५४
३,	पंच परमेशो नाम	२	१८,	अकलङ्क स्तोत्र (सं०)	५५
४,	चौबीस तीर्थङ्करोंके नाम	२	१९,	भक्तामर स्तोत्र (सं०)	५८
५,	रत्नकरण्ड श्रावकाचार	३	२०,	कल्याणमंदिर सं०	६३
६,	द्रव्य संग्रह ...	१७	२१,	कल्याण मंदिर भा०	६८
७,	अद्याष्टक स्तोत्र ✓	२०	२२,	विषापहार स्तोत्र	७२
८,	दृष्टाष्टक स्तोत्र ✓	२१	२३,	एकीभाव स्तोत्र भा०	७५
९,	सुप्रभात स्तोत्र ✓...	२२	२४,	इष्ट छत्तीसी	
१०,	मोक्ष शास्त्र ...	२३		(अर्थ सहित) ...	७८
११,	जिन सहस्रनाम ✓	३५	२५,	दर्शन पाठ ...	८६
१२,	एकीभाव स्तोत्र (सं०)	४४	२६,	दौलत-कृत स्तुति	८८
१३,	स्वयंभू स्तोत्र (भाषा)	४७	२७,	बुधजनकृत स्तुति	९१
१४,	निर्वाणकांड (गाथा)	५०	२८,	जिनवाणीकी स्तुति	९२
१५,	निर्वाणकांड (भाषा)	५१	२९,	पञ्चपरमेश्वी आरती	९३

नं०	नाम	पृष्ठ	नं०	नाम	पृष्ठ
३०,	आलोचना पाठ	८४	५०	प्रभाती जैनदास कृत	१३०
३१,	पंच मङ्गल रूपचंद	८७	५१	„ भवानी कृत	„
३२,	छहढाला (दौलत)	१०४	५२	भजन मानिक कृत	१३१
३३,	सामायिक पाठ		५३	खम्माच नवल कृत	„
	(भाषा) ...	११५	५४	भंभोट्टी मोहनलाल कृत	„
३४	सामायिक पाठ (सं०)	१२०	५५	राम देश विहारी कृत	१३२
३५	आरती संग्रह		५६	भजन मानिक कृत	„
	(दीपचन्द्र) ...	१२३	५७	रेखता हीरालाल कृत	„
३६	चेतन सुमतिकी होली	१२५	५८	गजल हजारी कृत	१३३
३७	आसाराम कृत होली	„	५९	लावनी	„
३८	मानिक कृत	„	६०	भजन संग्रह	१३४
३९	गंगा कवि कृत	१२६	६१	परमार्थ जकड़ी दौलत	१३६
४०	मेवाराम कृत	„	६२	„ राम कृष्ण कृत	१३७
४१	मानिक कृत	१२७	६३	„ (दौलत)	१३८
४२	दौलत कृत	„	६४	फूलमाल पचीसी	१४२
४३	इंग्लिश शिक्षा पर होली	„	६५	पुकार पच्चीसी ...	१४५
४४	तीर्थंकरोंकी स्तुति प्रभाती		६६	कृष्ण पच्चीसी	१४८
४५	जवाहर कृत	„	६७	उपदेश	१५४
४६	प्रभाती दौलत कृत	१२८	६८	धरम	१५६
४७	„	„	६९	अध्यात्म	१५८
४८	जामोकार महिमा	१२९	७०	जिन गिरास्तवन	१६२
४९	प्रभाती भागचंद कृत	१३०	७१	जिनदर्शन	१६३

नं०	नाम	पृष्ठ	नं०	नाम	पृष्ठ
७२	जिनवर पच्चीसी	१६४	८५	पार्श्वनाथ पूजा	२००
७३	सूतक निर्णय	१६८	८६	महावीर स्वामी	२०५
७४	जिन गुण मुक्तावली	१७१	८७	मेरी भावना	२०७
७५	सुवा बत्तीसी	१७४	८८	अरहंत पाशा केवली	२०८
७६	नामावली स्तोत्र	१७७	८९	शिखर माहात्म्य	२२७
७७	हुक्का निषेध	१७८	९०	मोहरस स्वरूप—	२३६
७८	नेमि व्याह	१८१	९१	लेश्या स्वरूप—	२३७
७९	लावनी (मानिक)	१८३	९२	कुदेवादिकीसेवाकाफल	२३७
८०	वेश्या कुटुलाई	१८४	९३	भोजनोंको प्राथनाएं	२३८
८१	प्रतिमा चालीसी	१८५	९४	माताकापुत्रीकोउपदेश	२३८
८२	समुच्चय पूजा	१८०	९५	किसकाजन्मसफल है	२४०
८३	चंद्रप्रभू जिन पूजा	१८२	९६	जीव प्रति उपदेश	२४०
८४	शांतिनाथ पूजा	१८७			

दूसरा खण्ड ।

नं०	नाम	पृष्ठ	नं०	नाम	पृष्ठ
१	दुखहरण विनती	२४१	७	धारें भाषा	२४८
२	जिनेन्द्र स्तुति	२४३	८	प्रातःकाल स्तुति	२४८
३	विनती भूधर कृत	२४४	९	सायंकाल स्तुति	२५०
४	विनती	२४५	१०	संकट हरण विनती	२५१
५	विनती (नाथूरामजी)	२४६	११	स्तोत्र भूधरदास कृत	२५४
६	विनती (भूधर)	२४७	१२	अरहंत परमेष्ठी मङ्गल	२५६

नं०	नाम	पृष्ठ	नं०	नाम	पृष्ठ
१३	श्रीसिद्ध परमेष्ठीमङ्गल	२५८	३५	नव नारद	३०६
१४	श्रीआचार्यपरमेष्ठीमङ्गल	२६०	३६	ग्यारह रुद्र	"
१५	उपाध्याय परमेष्ठी	" २६३	३७	चौबीस कामदेव	"
१६	साधु परमेष्ठी मंगल	२६४	३८	चौदह कुलकर	"
१७	बारहमासा सीताजी	२६७	३९	बारह प्रसिद्ध पुरुष	"
१८	बाईस परिषह	२६८	४०	विदेहके २० तीर्थङ्कर	३०७
१९	बारहमासाश्रीमुनिराज	२७४			"
२०	बाईसपरिषह(रत्नचन्द)	२७८	४२	भविष्यकी चौबीसी	"
२१	बारह मासा राजुल	२८२	४३	गुण स्थान	३०८
२२	बारह भावना (भैया)	२८८	४४	सोलह कारण भावना	"
२३	बारह भावना (भूधर)	२८८	४५	श्रावकोके उत्तर गुण	"
२४	बारह भावना(बुधजन)	२९०	४६	श्रावककी ५३ क्रिया	"
२५	बारह भावना (रत्नचन्द)	२९२	४७	ग्यारह प्रतिमाओंका	
२६	वैराग्य भावना	२९५		स्वरूप	३१०
२७	समाधिमरण	२९७	४८	श्रावकोके १७ नियम	३१२
२८	अठारह नाते	२९८	४९	सात व्यसनका त्याग	३१३
२९	" कथा	३०१	५०	बाईस अभक्ष्यका त्याग	"
३०	तीर्थकरोंके चिन्ह	३०४	५१	श्रावकके पट कर्म	"
३१	बारह चक्रवर्ती	३०५	५२	दश लक्षण धर्म	३१३
३२	नव नारायण	"	५३	लघु अभिषेक पाठ	३१३
३३	नव प्रतिनारायण	"	५४	बिनय पाठ	३१७
३४	बलभद्र	"	५५	देवशास्त्र गुरुकी पूजा	३१८

नं०	नाम	पृष्ठ	नं०	नाम	पृष्ठ
५६	बीस तीर्थकर पूजा	३२२	७८	रविव्रत पूजा	३७५
५७	अक्रत्रिमचैत्यालयोंका	३२६	७९	पावापुरसिद्धक्षेत्रपूजा	३७८
५८	सिद्ध पूजा	३२७	८०	चम्पापुरजी क्षेत्रपूजा	३८१
५९	सिद्धपूजा भावाष्टक	३३१	८१	जन्म कल्याणक पूजा	३८४
६०	सोलह कारणकाअर्घ	३३२	८२	सम्मेद शिखर विधान	३८७
६१	दश लक्षण धर्मकाअर्घ	३३३	८३	दीपमालिका विधान	३८८
६२	रत्नत्रयका अर्घ	३३४	८४	हंडगिरीक्षेत्र पूजा	४०५
६३	सोलह कारण पूजा	३३५	८५	आराधना पाठ	४०६
६४	दशलक्षण धर्मपूजा	३३६	८६	शान्ति पाठ	४१०
६५	पंच मेरु पूजा	३४१	८७	भाषा स्तुति पाठ	४११
६६	रत्नत्रय पूजा	३४३	८८	सुगंधदशमी व्रतकथा	४१३
६७	दर्शन	३४४	८९	अनंत चौदशव्रत कथा	४१६
६८	ज्ञान	३४६	९०	रत्नत्रय व्रत कथा	४१९
६९	चारित्र	३५०	९१	दश लक्षण व्रत कथा	४२२
७०	नन्दीश्वर,	३५२	९२	मुक्तावली व्रत कथा	४२५
७१	निर्वाण क्षेत्र पूजा	३५२	९३	पुष्पांजलि व्रत कथा	४२८
७२	देव पूजा	३५५	९४	नंदीश्वर व्रत कथा	४३१
७३	सरस्वती पूजा	३५८	९६	निशि भोजन कथा	४३६
७४	गुरु पूजा	३६१	९७	रविव्रतकथा	४३८
७५	मक्शी पार्श्वनाथपूजा	३६४	९८	जेष्ठजिनवर कथा	४४०
७६	गिरनार क्षेत्र पूजा	३६७	९९	शील माहात्म्य	४४२
७७	सोनागिरि सिद्ध क्षेत्र	३७२	१००	चेतन चरित्र	४४४

नं०	नाम	पृष्ठ	नं०	नाम	पृष्ठ
१०१	दौलत कृत पद	४४७	११०	पार्श्व पूजन	४५२
१०२	पद (बुधजन कृत)	”	१११	राजुल वैराग्य	४५२
१०३	पद भूधर कृत	४४८	११२	जीवनकी चार पर्यायें	४५२
१०४	गजल न्यामत कृत	४४८	११३	धर्म निष्ठा	४५३
१०५	अटलनियमभूरामलजी	४४८	११४	पयूषण पर्व भजन	४५३
१०६	दशे अभिलाषा	४५०	११५	गुर्वाबली	४६१
१०७	जैन मूहत्व	४५०	११६	मंगलाष्टक	४६२
१०८	नारी भूषण	४५१	११७	लावनी तीर्थकरचिन्ह	४६३
१०९	हमारा कर्त्ताव्य	४५१	११८	संसार दुखदर्पण	४६४

चित्र परिचय ।

श्री १०८ पूज्य आचार्य शान्तिसागरजी महाराज एक दिन सामायक कर रहे थे कि एक बड़ा भारी सर्प उनके ऊपर चढ़ गया, परन्तु आचार्यजी महाराज ध्यानमें लीन ही रहे आये । यह दृश्य कई महाशयोंने अपनी आंखों देखा है ।

“प्रकाशक”

* श्रीपरमात्मने नमः *

जिनवाणी संग्रह

पहला अध्याय

१ णमोकार मंत्र

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं,
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।

इस णमोकार मन्त्रमें पांच पद, पैंतीस अक्षर, अट्ठावन मात्राएं हैं ॥

२ णमोकार मन्त्रका माहात्म्य

णमोकार है मंत्र सर्व पापोंका हर्ता ।

मंगल सबसे प्रथम यही शुचि ज्ञान सुकर्ता ॥

संसार सार है मन्त्र जगतमें अनुपम भाई ।

सर्व पाप अरिनाश मंत्र सबको सुखदाई ॥ १ ॥

संसार छेदके लिये मन्त्र है सर्व प्रधाना ।

बिपको अमृत करे जगतने यह सब माना ॥

कर्म नाश कर ऋद्धि सिद्धि शिव सुखका दाता ॥

मंत्र प्रथम जिन मंत्र सदा तू क्यों नहिं ध्याता ॥२॥

सुर सम्पत्ति प्रधान मुक्ति लक्ष्मी भी होती ।
 सबे विपत्ति विनाश ज्ञानकी ज्योती होती ॥
 पशु पक्षी नर नारि श्वपच जो धारण करते ।
 ज्ञान, मान, धन, धान्य और सुख सम्पनि भरते ।
 जीवन्धर थे स्वामि एक जन करुणा धारी ।
 कुत्तेको दे मन्त्र शीघ्र गति भली सुधारी ॥
 मंत्र प्रभाव स्वर्गमें जाकर सब सुख पाये ।
 ध्याये जो जन उसे सर्व सुख हों मनचाये ॥४॥

“सतीश”

३ पञ्च परमेष्ठिके नाम

अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्व साधु ।
 ॐ ह्रीं अ सि आ उ सा । ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

नोट—अ सि आ उ सा नाम पञ्च परमेष्ठिका हैं । ॐ में
 पञ्च परमेष्ठिके नाम ही २४ तीर्थङ्करोंके नाम गमित हैं ।

४ चौबीस तीर्थङ्करोंके नाम

१ ऋषभदेव,	२ अजितनाथ,	३ संभवनाथ,
४ अभिनन्दननाथ,	५ सुमति नाथ,	६ पद्मप्रभ,
७ सुपार्श्वनाथ,	८ चन्द्रप्रभ,	९ पुष्पदन्त,
१० शीतलनाथ,	११ श्रेयांशनाथ,	१२ वासुपूज्य,
१३ विमलनाथ,	१४ अनन्तनाथ,	१५ धर्मनाथ,
१६ शान्तिनाथ,	१७ कुन्थुनाथ,	१८ अरनाथ,
१९ मल्लिनाथ,	२० मुनिसुव्रतनाथ,	२१ नमिनाथ,
२२ नेमिनाथ,	२३ पार्श्वनाथ,	२४ वर्द्धमान ।

श्रीसमन्तभद्र स्वामी विरचित ।

५ श्रीरत्नकरण्ड श्रावकाचार

नमः श्री वर्द्धमानाय निधूतकलिलात्मने ।
 सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्यादर्पणायने ॥ १ ॥
 देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिवर्हणम् ।
 संसारदुःखतः सत्वान्यो धरत्युत्तमे सुखे ॥ २ ॥
 सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः ।
 यदीयप्रत्यनोकानि भवन्ति भवपद्धतिः ॥ ३ ॥
 श्रद्धानं परमार्थानां माऽप्तागमतपोभृताम् ।
 त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम् ॥ ४ ॥
 आप्तं नोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना ।
 भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत् ॥ ५ ॥
 श्रुतिपपासाजरातङ्कजन्मांतकभयस्मयाः ।
 न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते ॥ ६ ॥
 परमेष्ठो परंज्योतिर्विरागो विमलः कृती ।
 सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥ ७ ॥
 अनात्मार्थं विना रागैः शास्ता शास्ति सनो हितम् ।
 ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शन्मुरजः किमपेक्षते ॥ ८ ॥
 आप्तोपज्ञमनुलुङ्घ्यमद्रष्टेष्टविरोधकम् ।
 तत्वोपदेशकृत्सार्वं शास्त्रं कापथघट्टनम् ॥ ९ ॥
 विषयाशावशातोतो निरारम्भोऽपरिग्रहः ।
 ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते ॥ १० ॥

इदमेवेदृशमेव तत्त्वं नान्यन्न चान्यथा ।
 इत्यकम्पायसाम्भोवत्सन्मार्गेऽसंशया रुचिः ॥ ११ ॥
 कर्मपरवशे सांते दुःखेरन्तरिनोदये ।
 पापबीजे सुखेऽनास्था श्रद्धानाकाङ्क्षा क्षणा स्मृता ॥ १२ ॥
 स्वभावतोऽशुचौ काये रत्नत्रयपवित्रिते ।
 निर्जुगुप्सागुणप्रीतिर्मता निर्विचिकित्सिता ॥ १३ ॥
 कापथे पथि दुःखानां कापथस्थेऽप्यसम्मतिः ।
 असंपृक्तिरनुत्कीर्तिरमूढा द्वष्टिरुच्यते ॥ १४ ॥
 स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य बालाशक्तजनाश्रयाम् ।
 वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति तद्वदन्त्युपगृह्णन् ॥ १५ ॥
 दर्शनाच्चरणाद्वापि चलतां धर्मवत्सलैः ।
 प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः स्थितिकरणमुच्यते ॥ १६ ॥
 स्वयूथ्यान्प्रति सद्भावसनाथापेतकैतवा ।
 प्रतिपत्तिर्यथायौग्यं वान्सव्यमभिलष्यते ॥ १७ ॥
 अज्ञाननिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथम् ।
 जिनशासनमाहान्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना ॥ १८ ॥
 तावदञ्जनचौरोऽङ्गे ततोऽनन्तमतीस्मृता ।
 उदायनस्तृतीयेऽपि तुरीये रेवती मता ॥ १९ ॥
 ततो जिनेन्द्रभक्तोऽन्यो वारिषेणस्ततः परः ।
 विष्णुश्च वज्रनामा च शेषयोर्लक्ष्यतां गतौ ॥ २० ॥
 नाङ्गहीनमलं छेत्तुं दर्शनं जन्मसन्ततिम् ।
 न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो निहन्ति विषयेदनाम् ॥ २१ ॥
 आपगासत्तारस्नानमुच्यः सिकताश्मनाम् ।

गिरिपातोऽग्निपातश्च लोकमूढं निगद्यते ॥ २२ ॥
 वरोपलिप्सयाशावान् रागद्वयमलोमसाः ।
 देवता यदुपासीत देवतामूढमुच्यते ॥ २३ ॥
 सप्रन्थारम्भहिंसानां संसारावर्त्तवर्त्तिनाम् ।
 पाखण्डिनां पुरस्कारो ज्ञेयं पाखण्डिमोहनम् ॥ २४ ॥
 ज्ञानं पूजां कुलं जातिं बलमृद्धिं तपो वपुः ।
 अष्टावाश्रित्य मानित्वं स्मयमाहुर्गैतस्मयाः ॥ २५ ॥
 स्मयेन योऽन्यानत्येति धर्मस्थान् गर्विताशयः ।
 सोऽत्येति धर्ममात्मोयं न धर्मो धार्मिकैर्विना ॥ २६ ॥
 यदि पापनिरोधोऽन्यसम्पदा किं प्रयोजनम् ।
 अथ पापान्नरोऽस्त्यन्यसम्पदा किं प्रयोजनम् ॥ २७ ॥
 सम्यग्दर्शनसम्पन्नमपि मानङ्गदेहजम् ।
 देवा देवं विदुर्भस्मगूढाङ्गारान्तरौजसम् ॥ २८ ॥
 श्वापि देवोऽपि देवः श्वा जायते धर्मकित्विषात् ।
 कापि नाम भवेदन्या सम्पद्वर्माच्छरीरिणाम् ॥ २९ ॥
 भयाशास्नेहलोमाश्च कुदेवागमलिंगिनाम् ।
 प्रणामं विनयं चैव न कुर्युः शुद्धद्वष्टयः ॥ ३० ॥
 दर्शनं ज्ञानचारित्रात्साधिमानमुपाश्रुते ।
 दर्शनं कर्णधारं तन्मोक्षमार्गं प्रचक्ष्यते ॥ ३१ ॥
 विद्यावृत्तस्य संभूतिस्थितिवृद्धिफलोदयाः ।
 न सन्त्यसति सम्यक्त्वे बीजाभावे तरोरिव ॥ ३२ ॥
 गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान् ।
 अतगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुनेः ॥ ३३ ॥

न सम्यक्त्वसमं किञ्चित्त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि ।
 श्रेयोऽश्रयेश्च मिथ्यात्वसमं नान्यत्तनूभृताम् ॥ ३४ ॥
 सम्यग्दर्शनशुद्धा नारकतिर्यङ् नपुंसकस्त्रीत्वानि ।
 दुष्कुलविकृताल्पायुर्दरिद्रतां च व्रजन्ति नाप्यवतिकाः ॥ ३५ ॥
 भोजस्तेजोविद्यावीर्य्यशोवृद्धिविजयविभवसनाथः ।
 महाकुला महार्था मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूताः ॥ ३६ ॥
 अष्टगुणपुष्टितुष्टा दृष्टिविशिष्टाः प्रकृष्टशोभाजुष्टाः ।
 अमराप्सरसां परिपदि चिरं रमन्ते जिनेन्द्रभक्ताः स्वर्गे ॥ ३७ ॥
 तत्रनिधिसप्तद्वयरत्नाधोशाः सर्वभूमिपतयश्चक्रम् ।
 वर्तयितुं प्रभवन्ति स्पष्टदृशः क्षत्रमौलिशेखरचरणाः ॥ ३८ ॥
 अमरासुरनरपतिभिर्दामधरपतिभिश्च नूतपादाम्भोजाः ।
 दृष्ट्या सुनिश्चितार्था वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्याः ॥ ३९ ॥
 शिवमजरमरुजमक्षयमव्याबाधं विशोकभयशङ्कम् ।
 काष्ठागतसुखविद्याविभवं विमलं भजन्ति दर्शनशरणाः ॥ ४० ॥

देवेन्द्रचक्रमहिमानममेयमानम्

राजेन्द्रचक्रमवनीन्द्रशिरोर्चनीयम् ।

धर्मेन्द्रचक्रमधरोक्तसर्वलोकम्

लब्ध्वा शिवं च जिनभक्तिरूपैति भव्यः ॥ ४१ ॥

अन्यूनमतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात् ।

निःसन्देहं वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः ॥ ४२ ॥

प्रथामानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यम् ।

बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समीचीनः ॥ ४३ ॥

लोकालोकविभक्तयुगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च ।

आदर्शमिव तथामतिरिवैति करणानुयोगं च ॥ ४४ ॥
 गृहमेध्यनगाराणां चारित्र्योत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम् ।
 चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति ॥ ४५ ॥
 जीवाजीवसुतत्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च ।
 द्रव्यानुयोगदीपः ध्रुवविद्यालोकमातनुते ॥ ४६ ॥
 मोहनिमिरापहरणे दर्शनलाभद्वामसंज्ञानः ।
 रागद्वेषनिवृत्ते चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥ ४७ ॥
 रागद्वेषनिवृत्तेर्हिंसादिनिवर्त्तना कृता भवति ।
 अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥ ४८ ॥
 हिंसानतचौर्यभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च ।
 पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्र्यम् ॥ ४९ ॥
 सकलं विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंगविरतानाम् ।
 अनगाराणां त्रिकलं सागाराणां ससंगानाम् ॥ ५० ॥
 गृहिणां त्रेधा निष्ठत्यणुगुणशिक्षाव्रतात्मकं चरणम् ।
 पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रयं यथासङ्ख्यमाख्यातम् ॥ ५१ ॥
 प्राणातिपातवितथव्याहारस्तेयकाममूर्च्छेभ्यः ।
 स्थूलेभ्यः पापेभ्यो व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥ ५२ ॥
 सङ्कल्पात्कृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्त्वान् ।
 न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः ॥ ५३ ॥
 छेदनबन्धनपीडनमतिभारारोपणं व्यतीचाराः ।
 आहारवारणापि च स्थूलवधाद्व्युपरतेः पञ्च ॥ ५४ ॥
 स्थूलमलोकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे ।
 यत्तद्वदन्ति सन्तः स्थूलमृषावादवैरमणम् ॥ ५५ ॥

परिवादरहोभ्याख्या पेशुन्यं कूटलेखकरणं च ।
 न्यासापहागितापि च व्यतिक्रमाः पञ्च सप्त्यस्य ॥ ५६ ॥
 निहित वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं ।
 न हरति यन्न च दत्तं तदकृशचौर्यादुपारमणम् ॥ ५७ ॥
 चौरप्रयोगचौरार्थादानं विलोपसदृशसन्निध्याः ।
 हीनाधिकविनिमानं पञ्चास्तेये व्यतीपाताः ॥ ५८ ॥
 न तु परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेयन् ।
 सा परदारनिवृत्तिः स्वदारसन्तोषनामापि ॥ ५९ ॥
 अन्यविवाहाकरणानङ्गकोडाविट्त्वविपुलतृपः ।
 इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पञ्च व्यतीचाराः ॥ ६० ॥
 धनधान्यादिग्रन्थं परिमाय ततोऽधिकेषु निस्पृहता ।
 परिमितपरिग्रहः स्यादिच्छापरिमाणानामपि ॥ ६१ ॥
 अतिवाहनातिसंग्रहविस्मयलोभातिभारवहनानि ।
 परिमितपरिग्रहस्य च विश्लेषाः पञ्च लक्ष्यन्ते ॥ ६२ ॥
 पञ्चाणुव्रतनिश्चयो निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकम् ।
 यत्रावधिरष्टगुणा द्रव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥ ६३ ॥
 मातंगो धनदेवश्च वारिषेणस्ततः परः ।
 नीलो जयश्च संप्राप्ताः पूजातिशयमुत्तमम् ॥ ६४ ॥
 धनश्रीसत्यघोषौ च तापसा रक्षकावपि ।
 उपाख्येयास्तथा शमश्रु नवनीतो यथाक्रमम् ॥ ६५ ॥
 मद्यमांसमधुत्यागैः सहाणुव्रतपञ्चकम् ।
 अष्टौमूलगुणानाहुर्गृहिणां श्रमणोत्तमाः ॥ ६६ ॥
 दिव्यतमनर्थदण्डव्रतं च भोगोपभोगपरिमाणम् ।

अनुवृंहणाद्गुणानामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ॥ ६७ ॥
 दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं बहिर्न यास्यामि ।
 इतिसङ्कल्पो विग्वतमामृत्युणुपापविनिवृत्यै ॥ ६८ ॥
 मकराकरसदिट्त्रीगिरिजनपदयोजनानि मर्यादाः ।
 प्राहुर्दिशां दशानां प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ॥ ६९ ॥
 अवधेर्बहिरणुपापप्रतिविस्तेर्दिग्व्रतानि धारयताम् ।
 पञ्चमहाव्रतपरिणतिमणुव्रतानि प्रपद्यन्ते ॥ ७० ॥
 प्रत्याख्यानतनु त्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामाः ।
 स्वत्वेन दुरवधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥ ७१ ॥
 पञ्चानां पापानां हिंसादीनां मनोवचः कार्यैः ।
 कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रतं महताम् ॥ ७२ ॥
 ऊर्ध्वार्धस्तान्तिर्यग्यतिपाताः क्षत्रवृद्धिरवधीनाम् ।
 विस्मरणं दिग्विस्तेरत्याशाः पञ्च मन्मन्ते ॥ ७३ ॥
 अभ्यन्तरे दिग्वधरेपाथिकेभ्यः सपापयोगेभ्यः ।
 विरमणमनर्थदण्डव्रतं विदुर्व्रतधराग्रण्यः ॥ ७४ ॥
 पापोपदेशहिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पञ्च ।
 प्राहुः प्रमादव्यर्थात्मनथदण्डानदण्डवराः ॥ ७५ ॥
 नित्यंक्कृ शवणिज्याहिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम् ।
 कथाप्रसङ्गप्रसवःस्मर्त्तव्यः पाप उपदेशः ॥ ७६ ॥
 परशुकृपाणखनित्रज्वलनायुधशृङ्गाशृङ्गलादीनाम् ।
 वधहेतूनां दानं हिंसादानं ब्रूयन्ति बुधाः ॥ ७७ ॥
 वधबन्धच्छेदादेद्वेषाद्रागाश्च परकलत्रादेः ।
 आध्यानमपध्यानं शासति जिनशासने विशदाः ॥ ७८ ॥

आरम्भसङ्गसाहसमिथ्यात्वरोगद्वेषमदमदनैः ।
 चेत कलुषयतां श्रुतिरवरधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥ ७६ ॥
 क्षितिसलिलदहनपवनारम्भविफलं वनस्पतिच्छेदं ।
 सरणं सारणमपि च प्रमादचर्या प्रभाषन्ते ॥ ८० ॥
 कन्दर्प कौतुक्यं मौख्यमतिप्रसाधनं पञ्च ।
 असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥ ८१ ॥
 अध्वार्थानां परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम् ।
 अर्थवतामप्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥ ८२ ॥
 भुक्त्वा परिहातव्यो भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः ।
 उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिः पञ्चेन्द्रियो विषयः ॥ ८३ ॥
 त्रसहतिपरिहरणार्थं शौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये ।
 मद्यं च वर्जनीयं जिनचरणौ शरणमुपयातैः ॥ ८४ ॥
 अल्पफलबहुविघातान्मूलकफलमार्दाणि शृङ्गावेराणि ।
 नवनीतनिम्बकुसुमं कैतकमित्येवमवहेयम् ॥ ८५ ॥
 यदिनिष्ठं तद्वययेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात् ।
 अभिसन्धिकृता विरतिर्विषयाद्योग्याद्भवतं भवति ॥ ८६ ॥
 नियमो यमश्च विहितौ द्वे ध्या भोगोपभोगसंहारे ।
 नियमः परिमितकालो यावज्जीवं यमो ध्रियते ॥ ८७ ॥
 भोजनवाहनशयनस्नानपवित्राङ्गरागकुसुमेषु ।
 ताम्बूलवसनभूषणमन्मथसंगीतगीतेषु ॥ ८८ ॥
 अद्य दिवा रजनी वा पक्षो मासस्तथर्तुरयनं वा ।
 इति कालपरिच्छित्या प्रत्याख्यानं भवेन्नियमः ॥ ८९ ॥
 विषयविषतोऽनुपेक्षानुस्मृतिरतिलौक्यमतिवृषाऽनुभवो ।

भोगोपभोगपरिमाव्यतिक्रमा पञ्च कथ्यन्ते ॥ ६० ॥

देशावकाशिकं वा सामयिकं प्रोषधोपवासो वा ।

वैयावृत्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥ ६१ ॥

देशावकाशिकं स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य ।

प्रत्यहमणुव्रतानां प्रति संहारो विशालस्य ॥ ६२ ॥

गृहहारप्रामाणां क्षेत्रनदीदावयोजनानां च ।

देशावकाशिकस्य स्मरन्ति सीमां तपोवृद्धाः ॥ ६३ ॥

संवत्सरस्मृतुरयनं मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च ।

देशावकाशिकस्य प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः ॥ ६४ ॥

सीमान्तानां परतः स्थूलेतरपञ्चपापसंत्यागात् ।

देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यन्ते ॥ ६५ ॥

प्रेषणशब्दानयनं रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ ।

देशावकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्ययाः पञ्च ॥ ६६ ॥

आसमयमुक्ति मुक्तं पञ्चाघानामशेषभावेन ।

सर्वत्र च सामयिकाः सामयिकं नाम शंसन्ति ॥ ६७ ॥

मूर्धरुहमुष्टिवासोबन्धं पर्य्यकबन्धनं चापि ।

स्थानमुपवेशनं वा समयं जानन्ति समयज्ञाः ॥ ६८ ॥

एकान्ते सामयिकं निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तुषु च ।

चैत्यालयेषु वापि च परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥ ६९ ॥

व्यापारवैमनस्याद्बिबिधवृत्त्यामन्तरात्मविनिवृत्त्या ।

सामयिकं बन्धीयादुपवासे चैकमुक्ते वा ॥ १०० ॥

सामयिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेतव्यं ।

व्रतपञ्चकपरिपूरणकारणप्रवधानयुक्तेन ॥ १०१ ॥

सामयिके सारम्भाः परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि ।
 चेलोपसृष्टमुनिरिव गृही तदा याति यतिभावं ॥ १०२ ॥
 शीतोष्णदंशमशकपरीपहमुपसर्गमपि च मौनधराः ।
 सामयिकं प्रतिपन्ना अधिकुर्वीरन्नवलयोगाः ॥ १०३ ॥
 अशरणमशुभमनित्यं दुःखमनात्मानमावसामि भवम् ।
 मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥ १०४ ॥
 वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे ।
 सामयिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ १०५ ॥
 पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञानव्यः प्रोषधोपवासस्तु ।
 चतुरभ्यवहाय्याणां प्रत्याख्यानं सदेच्छामिः ॥ १०६ ॥
 पञ्चानां पावानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणाम् ।
 स्नानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्यात् ॥ १०७ ॥
 धर्मासृतं सतृष्णः श्रवणाभ्यां पिवतु पाययेद्धान्यान् ।
 ज्ञानध्यानतपो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥ १०८ ॥
 चतुराहारविसर्ज्जेनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः ।
 स प्रोषधोपवासो यदुपोष्यारम्भमाचरति ॥ १०९ ॥
 ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे ।
 यत्प्रोषधोपवासव्यतिलङ्घनपञ्चकं तदिदम् ॥ ११० ॥
 दानं वैयावृत्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये ।
 अनपेक्षितोपचारोपक्रियमगृहाय विभवेन ॥ १११ ॥
 व्यापत्तिव्यपनोदः पदयो संवाहनं च गुणरागात् ।
 वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनाम् ॥ ११२ ॥
 नवपुण्यैः प्रतिपत्तिः सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन ।

अपसूनारम्भाणामार्घ्याणामिष्यते दानम् ॥ ११३ ॥
 गृहकमेणापि निचितं कर्म विमाष्टिं खलु गृहविमुक्तानाम् ।
 अनिथीनां प्रतिपूजा रुधिरमलं धावते वारि ॥ ११४ ॥
 उच्चैर्गोत्रं प्रणतेभोगो दानादुपासनात्पूजा ।
 भक्तः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥ ११५ ॥
 क्षितिगतमिववटर्वाजं पात्रगतं दानमल्पमपि काले ।
 फलतिच्छायाविभवं बहुफलमिष्टं शरीरभृतां ॥ ११६ ॥
 आहारौषधयोरप्युपकरणावासयोश्च दानेन ।
 वैयावृत्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्त्राः ॥ ११७ ॥
 श्रापेणवृषभसेने कौण्डेशः शूकरश्च दृष्टान्ताः ।
 वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः ॥ ११८ ॥
 देवाधिदेवचरणे परिचरणं सर्वदुःखनिर्हरणम् ।
 कामदुहि कामदाहिनि परिचिनुयादादृतो नित्यम् ॥ ११९ ॥
 अहञ्चरणसपर्यामहानुभावं महात्मनामवदत् ।
 मेकः प्रमोदमत्तः कुसुमेनैकेन राजगृहे ॥ १२० ॥
 हरितपिधाननिधाने ह्यनादरास्मरणमत्सरत्वानि ।
 वैयावृत्यस्यैते व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥ १२१ ॥
 उपसर्गं दुर्भिक्षे जरसि रुजायां च निःप्रतीकारे ।
 धर्माय तनुविमोचनमाहुः सल्लेखनामार्याः ॥ १२२ ॥
 अन्तक्रियाधिकरणं तपःफलं सकलदर्शिनः स्तुवते ।
 तस्माद्यावद्विभवं समाधिमरणे प्रयतितव्यं ॥ १२३ ॥
 स्नेहं वैरं सङ्गं परिग्रहं चापहाय शुद्धमनाः ।
 स्वजनं परिजनमपि च श्रान्त्वा क्षमयेत्प्रियैर्बचनैः ॥ १२४ ॥

आलोच्य सर्वमेनः कृतकारितमनुमतं च निर्व्याजं ।
 आरोग्येन्महाव्रतमामरणस्थायि निश्शेषं ॥ १२५ ॥
 शोकं भयमवसादं क्लेदं कालुष्यमरतिमपि हित्वा ।
 सत्त्वोत्साहमुदीयं च मनः प्रसाद्यं श्रुतैरमृतैः ॥ १२६ ॥
 आहारं परिहाप्य क्रमशः स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम् ।
 स्निग्धं च हापयित्वा खरपानं पूरयेत्क्रमशः ॥ १२७ ॥
 खरपानहापनामपि कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्त्या ।
 पंचनमस्कारमनास्तनुं त्यजेत्सर्वेयत्नं ॥ १२८ ॥
 जीवितमरणाशंसे भयमित्रस्मृतिनिदाननामानः ।
 सल्लेखनातिचाराः पञ्च जिनेन्द्रैः समादिष्टाः ॥ १२९ ॥
 निःश्रेयसमभ्युदयं निस्तोरं दुस्तरं सुखाम्बुनिधिम् ।
 निष्पिबति पीतधर्मा सर्वैर्दुःखैरनालोदः ॥ १३० ॥
 जन्मजरामयमरणः शाकं दुःखैर्भयैश्च परिमुक्तम् ।
 निर्वाणं शुद्धसुखं निःश्रेयसमिष्यते नित्यम् ॥ १३१ ॥
 विद्यादर्शनशक्तिस्वास्थ्यप्रह्लादतृप्तिशुद्धियुजः ।
 निरतिशया निरवधयो निःश्रेयसमावसन्ति सुखं ॥ १३२ ॥
 काले कल्पशतेऽपि च गते शिवानां न विक्रिया लक्ष्या ।
 उत्पातोऽपि यदि स्यात् त्रिलोकसम्भ्रान्तिकरणपटु ॥ १३३ ॥
 निःश्रेयसमधिगन्तास्त्रैलोक्यशङ्खामणिश्रियं दधते ।
 निष्किल्बिकालिकाच्छविचामोकरभासुरात्मानः ॥ १३४ ॥
 पूजार्थान्नैश्वर्यैर्बलपरिजनकामभोगभूयिष्ठैः ।
 अतिशयितभुवनमद्भुतमभ्युदयं फलति सद्धर्मः ॥ १३५ ॥
 श्रावकपदानि देवैरेकादश देशितानि येषु खलु ।

स्वगुणाः पूर्वगुणैः सह संतिष्ठन्ते क्रमविवृद्धाः ॥ १३६ ॥
 सम्यग्दर्शनशुद्धः संसारशरीरभोगनिर्विण्णः ।
 पञ्चगुरुचरणशरणो दर्शनिकस्तत्त्वपथगृह्यः ॥ १३७ ॥
 निरतिक्रमणमणुव्रतपञ्चकमपि शीलसमकं चापि ।
 धारयते निःशल्यो योऽसौ व्रतिनां मतो व्रतिकः ॥ १३८ ॥
 चतुरावर्त्त त्रितयश्चतुष्प्रणामः स्थितो यताजातः ।
 सामयिको द्विनिषद्यस्त्रियोगशुद्धस्त्रिसन्ध्यमभिवन्दो ॥ १३९ ॥
 पर्वदिनेषु चतुर्ष्वपि मासे मासे स्वशक्तिमनिगृह्य ।
 प्रोषधनियमविधध्यायी प्रणधिपरः प्रोषधानशनः ॥ १४० ॥
 मूलफलशाकशाखाकरीरकन्दप्रसूनबीजानि ।
 नामानि योऽस्ति सोऽयं सचित्तविरतो दयामूर्तिः ॥ १४१ ॥
 अन्नं पानं स्वाद्यं लेह्यं नाश्नाति यो विभावयाम् ।
 स च रात्रिभुक्तिविरतः सत्वेऽवनुकम्पमानमनाः ॥ १४२ ॥
 मलबीजं मलयोनिं गलन्मलं पूतिगन्धिबीभत्स ।
 पश्यन्नुमनङ्गाद्विरमति यो ब्रह्मचारी सः । ॥ १४३ ॥
 सेवाकृपिवाणिज्यप्रमुखादारम्भतो व्युपारमति ।
 प्राणातिपातहेतोर्योऽसावारम्भविनिवृत्तः ॥ १४४ ॥
 बाह्येऽपुदशसु वस्तुषु ममत्वमुत्सृज्य निर्गमत्वरतः ।
 स्वस्थः सन्तोषपरः परिचित्तपरिग्रहाद्विरतः ॥ १४५ ॥
 अनुमतिरारम्भे वा परिग्रहे वैहिकेषु कर्मसु वा ।
 नास्ति खलु यस्य समधीरनुमतिविरतः स मन्तव्यः ॥ १४६ ॥
 गृहतो मुनिवनमित्रा गुरुपकण्ठे व्रतानि परिगृह्य ।
 भैक्ष्याशनस्तपस्यन्नुत्कृष्टश्चेलखण्डधरः ॥ १४७ ॥

पापमरातिधर्मो बन्धुर्जोवस्य चेति निश्चिन्वन् ।
 समयं यदि जानीते श्रेयो ज्ञाता भ्रुवं भवति ॥ १४८ ॥
 येन स्वयं बीतकलंकविद्या दृष्टिक्रियारत्नकरण्डभावम् ।
 नीतस्तमायाति पतीच्छयेव सर्वार्थसिद्धिस्त्रिषुविष्टेषु ॥ १४९ ॥
 सुखयतु सुखभूमिः कामिनं कामिनीव
 सुनमिव जननी मां शुद्धशीला भुनक्तु ।
 कुलमिव गुणभूषा कन्यका संपुनोता-
 ज्जिनपतिपदपद्मप्रेक्षिणी दृष्टिलक्ष्मीः ॥ १५० ॥

६ द्रव्यसंग्रह

जीवमजीवं द्रव्यं जिनवरवसहेण जेण णिहिट्ठं । देविन्द्विंदं
 वंदं वदे तं सर्व्वदा सिरसा ॥ १ ॥ जीवो उवओगमओ अमुत्ति
 कत्ता सदेह परिमाणो । भोत्ता संसारत्थो सिद्धा सो विस्ससाढ-
 गई ॥ २ ॥ तिक्काले चट्ठपाणा इंदिय बलमाउ आणपाणोय ।
 ववहारा सो जावो णिच्चयणयदो दु चेदणा जस्स ॥ ३ ॥ उवओगो
 दुवियप्पो दंसण णाणं च दंसणं चट्ठधा । चक्खु अचक्खू ओही
 दंसणमध केवलं णेयं ॥ ४ ॥ णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदि ओही
 अणाणणाणाणि । मणपज्जय केवलमवि पञ्चक्खपरोक्खभेयं च
 ॥ ५ ॥ अट्ठचट्ठपाणाणंदंसण सामण्णं जीवलक्खणं भणियं । ववहारा
 सुद्धणया सुद्धं पुण दंसणं णाणं ॥ ६ ॥ वण्ण रस पञ्च गंधा दो
 फासा अट्ठ णिच्चया जीवे । णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति
 बंधादो ॥ ७ ॥ पुग्गलक्कम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णियच्चयदो ।
 चेदणक्कम्माणादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥ ८ ॥ ववहारा सुहदुक्खं

पुगलकम्मफलं पभुंजेदि । आदाणिच्चयणयदो चेदणभावं खु
 आदस्स ॥ ६ ॥ अणुगुरुदेहपमाणा उवसंहारप्पसप्पदो चेदा ।
 असमुहदा ववहारा णिच्चयणयदो असङ्खुदेसो वा ॥ १० ॥ पुढविज-
 लते उवाऊवणप्फदी विवहथावरेइंदी । विगतिग चदुपञ्चम्बा तस-
 जीवा होंति संखादि ॥ ११ ॥ समणा अमणा णेया पञ्चो दिय णिम्मणा-
 परे सव्वे । वादरसुइमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदराय ॥ १२ ॥ मगणगुण-
 ठाणेहिं य चउदसहिं हवंति तह असुद्धणया । विण्णेया ससारी
 सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया ॥ १३ ॥ णिकम्मा अट्टगुणा किंचूणा चरमदेह-
 दो सिद्धा । लोयगगठिदा णिच्चा उप्पादवयेहिं संजुत्ता ॥ १४ ॥
 अज्जीवो पुण णेओ पुगल धम्मो अधम्म आयासं । कालो पुगल
 मुत्तो रुवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु ॥ १५ ॥ सद्दो वन्थो सुहमो
 थूलो सण्ठाणभेदतमछाया । उज्जोदादवसहिया पुगलदव्वस्स
 पज्जाया ॥ १६ ॥ गइपरिणयाण धम्मो पुगलजीवाण गमणसहयारी
 तोयं जह मच्छाणं अच्छंताणेव सो णेई ॥ १७ ॥ ठाणजुदाण
 अधम्मो पुगलजीवाण ठाणसहयारी । छाया जह पहियाणं गच्छं-
 ता णेव सो धरई ॥ १८ ॥ अवगासदाणजोगं जीवादीणं वियाण
 आयासं । जेणं लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं ॥ १९ ॥
 धम्माधम्मा कालो पुगलजीवा य संति जावदिये । आयासे सो
 लोगो तत्तो परदो अलोमुत्तो ॥ २० ॥ दव्वपरिचट्टरूवो जो सो कालो
 हवेइ ववहारो । परिणामादो लक्खो वट्टणलक्खो य परमट्टो ॥ २१ ॥
 लोयायासपदेसे इक्के के जे द्विया हु इक्केका । रयणाणं रासीमिव
 ते कालाणू असंखदव्वणि ॥ २२ ॥ एवं छब्भेयमिदं जीवाजवप्पभेददो
 दव्वं । उत्तं कालविजुत्तं णायव्वा पञ्च अत्थिकाया दु ॥ २३ ॥ संति

जदो तेणेदे अत्थीति भणंति जिणवरा जम्हा । काया इव बहुदेसा
तम्हा काया य अत्थिकाया य ॥२४॥ होंति असंखा जीवे धम्म-
धम्मे अणंत आयासे । मुत्ते तिविह पदेसा कालस्सेगो ण तेण
सो काओ ॥२५॥ एयपदेसो वि अणू णाणाखंधपदेसदो होदि ।
बहुदेसो उवयारा तेण य काओ भणंति सव्वणहु ॥२६॥ जावदिअं
आयासे अविभागी पुग्गलाणुवट्ठं । तं खुपदेसं जाणे सव्वाणु-
ट्ठाणदाणरिहं ॥२७॥ आसवबंधणसंवरणिज्जर मोक्खा सुपुण्णपावा
जे । जीवाजोवविसेसा ते वि समासेण पमणामो ॥२८॥ आसवदि
जेण कम्मं परिणामेणप्पणो स विण्णोओ । भावासवो जिणुत्तो
कम्मासवणं परो होदि ॥२९॥ मिच्छुत्ताविरदिपमादजोगकोहाद-
ओऽथ विण्णोया । पण पण पणदह तिय चट्ठ कमसो भदा दु
पुव्वस्स ॥३०॥ णाणावरणादीणं जोगं जं पुग्गलं समासवदि ।
दव्वासवो स णोओ अणेयभेदो जिणक्खादो ॥३१॥ वज्झदि कम्मं
जेण दु चेदणभावेण भाववधो सो । कम्मादपदेसाणं अण्णोण-
पवेसणं इदरो ॥३२॥ पयडिडिदिअणुमागापदेसभेदा दु चट्ठविधो
बंधो । जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुमागा कसायदो होंति ॥३३॥
चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेऊ । सो भावसंवरो
खलु दव्वासवरोहणअण्णो ॥ ३४ ॥ वदसमिदीगुत्तोओ धम्माणु-
पिहा परोसहजओ य । चारित्तं बहुमेयं णायव्वा भावसंवरविसे-
सा ॥३५॥ जहकालेण तवेण य भुत्तरत्तं कम्मपुग्गलं जेण । भावेण
सड्दि णेया तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा ॥३६॥ सव्वस्स
कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो दु परिणामो । णोओ स भावमोक्खो
दव्वविमोक्खो य कम्मपुधभावो ॥३७॥ सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं

पावं हवन्ति खलु जीवा । सादं सुहाउणामं गोदं पुण्णं पराणि पावं
च ॥३८॥ सम्मद्वंसण णाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे ।
ववहारा णिच्चयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा ॥ ३९ ॥ रयणत्तयेण
वट्टइ अप्पाणं मुयतु अण्णदवियग्गिह । तम्हा तत्तियमइओ होदि
हु मोक्खस्स कारणं आदा ॥४०॥ जोवादोसद्दहणं सम्मनं रूवम-
पणो तं तु । दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं समं खु होदि सदि
जग्गि ॥ ४१ ॥ संसय विमोहविब्भविज्जियं अप्परसरूवस्स ।
गहणं सम्मं णाणं सायारमणेयभेयं च ॥४२॥ जं सामण्णं गहणं
भावाणं णेव कट्टमायारं । अविसेसदूण अट्टे दंसणमिदि भण्णये
समये ॥४३॥ दंसणपुव्वं णाणं छट्ठमत्थाणं ण दुणि उवओगा ।
जुगवं जम्हा केवल्लिणाहे जुगवं तु ते दोवि ॥४४॥ असुहादो वि-
णिवित्तो सुहेपवित्तो य जाण चारित्तं । वदसमिदिगुत्तिरूवं
ववहारणया दु जिण भणियं ॥ ४५ ॥ बहिरम्भतर किरिया रोहो
भवकारणप्पणासट्ठं । णाणिस्स जं जिणुत्तं तं परमं सम्मचारि-
त्तं ॥४६॥ दुविहं पि मोक्खहेउं भाणे पाउणदि जं मुणी णियमा
तम्हा पयत्तचित्ता जूयं भाणं समम्भसह ॥ ४७ ॥ मा मुज्झह मा
रज्जह मा दुस्सह इट्ठणिट्ठअत्थेसु । थिरमिच्छह जइ चित्तं विचित्त-
भाणप्पसिद्धोप ॥४८॥ पणतोस सोल :छप्पण चट्ठ दुग्गेगं च
जवह भाएह । परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरुव एसेण ॥ ४९ ॥
णट्ठचदुघायकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमइओ । सुहदेहत्यो अप्पा
सुद्धो अरिहो विचित्तिज्जो ॥ ५० ॥ णट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स
जाणओ दट्ठा । पुरिसायाओ अप्पा सिद्धो भाएह लोयसिहरत्थो
॥५१॥ दंसणणाणपहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे । अप्पं परं च

जुंजइ सो आयरिओ मुणी झैओ ॥५२॥ जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं
धम्मोबणसणे णिरदो । सो उवभाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो
तस्स ॥५३॥ दंसणणाणसमगं मगं मोक्खस्स जो हु चारितं ।
साधयदि णिच्चसुद्धं साहू स मुणी णमो तस्स ॥ ५४ ॥ जं चिंवि
विचिंतंतो निरीद्वित्ती हवे जदा साहू । लद्धूणय एयत्तं तदाहु तं
तस्स णिच्चयं भाणं ॥ ५५ ॥ मा चिट्ठ मा जंपह किं वि जेण
होइ थिरो । अप्पा अप्पम्मि रओ इणमेव परं हवे भाणं ॥ ५६ ॥
तवसुदवदवं चेदा भाणरहधुरन्धरो हवे जम्हा । तम्हा तत्तियणिरदा
तल्लद्धीए सदा होह ॥५७॥ दब्धसंगहमिणं मुणिणाहा दोससंचय
चुदा सुदपुण्णा । सोधयतु तणुसुत्ताधरेण णेमिचन्दमुणिणा
भणियं जं ॥५८॥

७ अध्याष्टकरत्तोत्रम् ।

अद्य मे सफलं जन्म नेत्रे च सफले मम । त्वामद्राक्षं
यतो देव हेतुमक्षयसम्पदः ॥१॥ अद्य संसारगम्भीरपारावारः सुदु
स्तरः । सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ २ ॥ अद्य मे
क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमले कृते । स्नानोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र
तव दर्शनात् ॥३॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम् ।
संसारणावतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥४॥ अद्य कर्माष्टकञ्चा-
लं विधूतं सकषायकम् । दुर्गतिर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शना-
त् ॥५॥ अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे शुभाश्वैकादशस्थिताः । नष्टानि
विघ्नजालानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ६ ॥ अद्य नष्टो महाबन्धः
कर्मणां दुःखदायकः । सुखसङ्गं समाप्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥७

अद्य कर्माष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम् । सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं
जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥८॥ अद्य मिथ्यान्धकारस्य हन्ता ज्ञानदिवा-
करः । उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥९॥ अद्यहं
सुकृती भूतो निर्धूताशेषकल्मेषः भुवनत्रयपूज्योहं जिनेन्द्र तव
दर्शनात् ॥१०॥ अद्याष्टकं पठेद्यस्तु गुणानन्दितमानसः । तस्य
सर्वार्थसंसिद्धिर्जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥१८॥

इति अष्टाष्टकं स्तोत्रं संपूर्णम्

८ दृष्टाष्टकस्तोत्रम् ।

दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवतापाहरि भव्यात्मनां विभवसम्भवभूरि
हेतुः । दुग्धाब्धिफेनधवलोज्ज्वलकूटकोटीनद्ध्वजप्रकरराजिविरा-
जमानम् ॥ १ ॥ दृष्टं जिनेन्द्र भवनं भुवनैकलक्ष्मीधामर्द्धिवर्द्धि-
तमहामुनिसेव्यमानम् । विद्याधरामरवधूजनमुक्तदिव्यपुष्पाञ्जलि-
प्रकरशोभितभूमिभागम् ॥ २ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवनादिवास-
क्विव्यातनाकगणिकागणगीयगोमान् । नानामणिप्रचयभासुररश्मि-
जालव्यालान्दनिर्मलविशालगवाक्षजालम् ॥ ३ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं
सुरसिद्धयक्षगन्धर्वकिन्नरकरार्पितवेणुवीणा । सङ्गीतमिश्रितनम-
स्कृतधोरनादैरापूरिताम्बरतलोरुदिगन्तरालम् ॥ ४ ॥ दृष्टं जिनेन्द्र-
भवनं विलसद्विलोलमालाकुलालिललितालकविभ्रमाणम् ॥ माधु-
र्यवाद्यलयनृत्यविलासनीनां लीलाचलद्वलयनूपुरनादरम्यम् ॥ ५ ॥
दृष्टं जिनेन्द्रभवनं मणिरत्नहेमसारोज्ज्वलैः कलशचामरदर्पणाद्यैः
सन्मङ्गलैः सततमष्टशतप्रभेदैर्विभ्राजितं विमलमौक्तिकदामशोभम्
॥ ६ ॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं वरदेवदारुकपूरचन्दनतरुष्वसुगन्धिधूपैः ।

मेघायमानगगने पवनाभिघातवज्रवृक्षलदमलकेनतनुङ्गशालम् ॥७॥
 दृष्टं जिनेन्द्रभवनं धवलातपत्रच्छायाणिमग्नतनुयक्षकुमारवृन्दैः ।
 दोधूयमानसितचामरपङ्क्तिभासं भामण्डलयुतियुतप्रतिमाभिरामम्
 ॥८॥ दृष्टं जिनेन्द्रभवनं विविधप्रकारपुष्पोपहाररमणीयसुरत्नभूमिः ।
 नित्यं वसन्ततिलकश्रियमादधानं सन्मङ्गलं सकलचन्द्रमुनीन्द्रबन्ध-
 म् । ॥९॥ दृष्टं मयाद्य मणिकाञ्चनचित्रतुङ्गसिंहासनादिजिनविम्ब-
 विभूतियुक्तम् । चैत्यालयं यदनुगं परिकीर्तितं मे सन्मङ्गलं सकल-
 चन्द्रमुनीन्द्रबन्धम् ॥ १० ॥

॥ इति दृष्टाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

६ सुप्रभातस्तोत्रम् ।

श्रीपरमात्मने नमः ॥ यत्स्नानरोत्सवे यदभयउत्तमामिपेको-
 त्सवे यद्दीक्षाग्रहणोत्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे । यन्निर्वाणग-
 मोत्सवे जिनपतेः पूजाद्भुतं तद्भवैः सङ्गीतस्तुतिमङ्गलोः प्रसरतां
 मे सुप्रभातोत्सवः ॥१॥ श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभिरालीढपाद-
 युगदुर्धरकर्मदूर । श्रीनाभिनन्दनजिनाजितशंभवाख्य ! त्वद्ग्रन्थानतो
 ऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ॥२॥ छत्रत्रयप्रचलचामरवोज्यमानदेवामि-
 नन्दनमुनेसुमते जिनेन्द्र ! पद्मप्रभारुणमणि युतिभासुराङ्ग त्व० ॥३॥
 अर्हन् सुपार्श्वकदलीदलवर्णगात्र प्रालेयतारगिरिमोक्तिकवर्णगौर ।
 चन्द्रप्रभस्फटिकपाण्डुर पुष्पदंत त्व० ॥४॥ संतप्तकाञ्चनरुचे जिन-
 शीतलाल्य श्रेयान्विनष्टदुरिताष्टकलङ्कपङ्क । बंधूकवंधुररुचे जिन-
 वासुपूज्य त्व० ॥५॥ उद्दण्डदर्पकरिपो विमलामलाङ्गस्थेमन्नतजि-
 दनंतसुखाम्बुराशे । दुष्कर्मकल्मषविवर्जित ।

धर्मनाथ त्व० ॥ ६ ॥ देवामरीकुसुमसन्निभं शान्तिनाथं कुन्थो दया
गुणविभूषणभूषिताङ्ग । देवाधिदेव भगवन्नरनोर्थनाथ त्व० ॥ ७ ॥
यन्मोहमलमदमञ्जनमलिलनाथ क्षेमङ्कुराचिनयशासनसुव्रताख्य ।
यत्सम्पदा प्रशिमनो नमिनामधेय त्व० ॥ ८ ॥ तापिच्छगुच्छरुचि-
रोज्ज्वलनेमिनाथ घोरोपसर्गविजयन् जिन पार्श्वनाथ । स्याद्वाद
सूक्तिमणिर्दर्पणवर्द्धमान त्व० ॥ ९ ॥ प्रालेयनीलहरितारुणपीतमा-
सं यन्मूर्तिमव्ययसुखावसथं मुनोन्द्रः । ध्यायन्ति सततिशतं
जिन बलमानां त्व० ॥ १० ॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं माङ्गल्यं परिकीर्ति-
तम् । चतुर्विंशतिनोर्थाणां सुप्रभातं दिने दिने ॥ ११ ॥ सुप्रभातं सुन-
क्षत्रं श्रेयः प्रत्यमिनन्दितम् । देवता ऋषयः सिद्धाः सुप्रभातं
दिने सुप्रभातं तबैकस्य वृषभस्य महात्मनः । येन प्रवर्तितं तीर्थं
भव्यसत्त्वसुखावहम् ॥ १२ ॥ सुप्रभातं जिनेन्द्राणां ज्ञानोन्मोलित
चक्षुषाम् । अज्ञानतिमिरान्ध्रानां नित्यमस्नमितो रविः ॥ १३ ॥ सुप्रा-
भातं जिनेन्द्रस्य चोरः कमललोचनः ॥ येन कर्माटवी दग्धा शुक्ल-
ध्यानोग्रवहिता ॥ १५ ॥ सुप्रभातं सुनक्षत्रं सुकल्याणं सुमङ्गलम् ।
त्रेलोक्यहितकर्तृणां जिनानामेव शासनम् ॥ १६ ॥

इति सुप्रभातस्नोत्रं समाप्तम् ॥

१० मोक्षशास्त्रम् ।

(आचार्य श्रीमदुमास्वामिविरचितम्)

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥ १ ॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं
सम्यग्दर्शनम् ॥ २ ॥ तन्निर्गर्हाधिगमाद्वा ॥ ३ ॥ जीवाजीवास्त्व-
बन्धसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वम् ॥ ४ ॥ नामस्थापनाद्रव्यभावतस्त-

न्यासः ॥५॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥ निर्देशस्वामित्वसाधनऽ
धिकरणस्थितिविधानतः ॥७॥ सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभा-
वाल्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानम् ॥९॥
तत्प्रमाणे ॥१०॥ आद्ये परोक्षम् ॥११॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः
मृतिः संज्ञा चिन्ताऽमिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥१३॥ तदिन्द्रिया
निन्द्रियनिमित्तम् ॥१४॥ अवग्रहेऽवायधारणाः ॥१५॥ बहुबहुवि
धक्षिप्राऽतिःसृताअनुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥१६॥ अर्थस्य ॥१७॥
व्यञ्जनस्यावग्रहः ॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ॥१९॥ श्रुतं मतिपूर्व
द्वयनेकद्वादशभेदम् ॥२०॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥२१॥
क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥ २२ ॥ ऋजुविपुलमती
मनःपर्ययः ॥२३॥ विशुद्धवप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४॥ विशुद्धि-
क्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्ययोः ॥२५॥ मतिश्रुतयोनिबन्धो
द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥२६॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तदनन्तभागे मनः-
पर्ययस्य ॥ २८ ॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥ २९ ॥ एकादीनि
भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥३०॥ मतिश्रुतावधयो विषये
यश्च ॥३१॥ सदसतोरविशेषाद्यद्वच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ॥३२॥ नैग-
मसंग्रहव्यवहारजुसूत्रशब्दसमभिरुद्धैर्वभूता नयाः ॥३३॥

ज्ञानदर्शनयोस्तत्त्वं नयानां चैव न लक्षणम् ।

ज्ञाज्ञस्य च प्रमाणत्वमध्यायेऽस्मिन्निरूपितम् ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥१॥

औपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयि-
कपारिणामिकौ च ॥१॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम्
॥२॥ सम्यक्त्वचारित्र्ये ॥३॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि

च ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्ववारित्र
संयमासंयमाश्च ॥५॥ गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाऽज्ञानाऽसंयमताऽ
सिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकषट्भेदाः ॥ ६ ॥ जीवभव्याऽभव्य-
त्वानि च ॥ ७ ॥ उपयोगो लक्षणम् ॥ ८ ॥ स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः
॥९॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥१०॥ समनस्काऽमनस्काः ॥११॥ संसा-
रिणस्त्रसस्पावराः ॥ १२ ॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्पावराः
॥१३॥ द्वेन्द्रियादयस्त्रसाः ॥१४॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥ १५॥ द्विविधानि
॥१६॥ निर्वृत्त्युपकरणेद्रव्येन्द्रियम् ॥१७॥ लब्धुपयोगौ भावे-
न्द्रियम् ॥१८॥ स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुश्रोत्राणि ॥१९॥ स्पर्शरस-
गन्धवर्णशब्दस्नर्द्धाः ॥२०॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥२१॥ वनस्पत्य-
न्तानामेकम् ॥२२॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि
॥२३॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥२४॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥२५॥
अनुश्रेणि गतिः ॥२६॥ अविग्रहा जीवस्य ॥ २७ ॥ विग्रहवती च
ससारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥२८॥ एकसमयाऽविग्रहाः ॥२९॥ एकं
द्वौ त्रीन्वाऽनाहारकः ॥ ३० ॥ सम्मूर्छनगर्भोपपादाज्जन्म ॥३१॥
सच्चित्तशीतसंवृत्ताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ॥३२॥ जरायु
जाण्डजपोतानां गर्भः ॥३३॥ देवनारकाणामुत्पादः ॥३४॥ शेषाणां
सम्मूर्छनम् ॥३५॥ औदारिकवैक्रियिकाहारकतेजसकार्मणानि शरी-
राणि ॥३६॥ परं परं सूक्ष्मम् ॥३७॥ प्रदेशतोऽसूक्ष्मकणां प्राक्
तैजसात् ॥३८॥ अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अक्षयप्रान्ते ॥४०॥ अक्षय-
सम्बन्धे च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदानीं भाव्यानि युगपदेक-
स्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥ गर्भसम्मूर्छन-
जमाद्यम् ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥ ४६ ॥ लक्षितान्ययं च

॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभंविशुद्धमभ्याघाति चाहाङ्कं प्रमत्त-
संयतम्यैव ॥४९॥ नारकसम्मूर्छिनी नपुंसकानि ॥५०॥ न देवाः
॥५१॥ शोषास्त्रिबेदाः ॥५२॥ औपपदादिकचरमोत्तमदेहाऽसंख्येय-
वर्षायुषाऽनपवर्त्यायुषः ॥५३॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रं द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

रत्नशर्करावानुकापङ्कधूमतमोमहातमःप्रभाभूमयो घनाम्बुवाता-
काशप्रतिष्ठाः समाधोधः ॥१॥ तासु त्रिंशत्पञ्चविंशतिपञ्चदशदश-
त्रिपञ्चोनेकनरकशनसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ॥२॥ नारका-
नित्याऽशुभनरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः ॥ ३ ॥ परम्परोदी-
रितदुःखाः ॥४॥ संक्लिष्टाऽसुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्धाः ॥५॥
तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदश द्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमासत्त्वानां
परा स्थितिः ॥६॥ जम्बुद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः
॥७॥ द्विद्विविंशकम्भा पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो बलयाकृतयः ॥८॥ तन्मध्ये
मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविंशकम्भो जम्बुद्वीपः ॥९॥ भरतर्हमव
नहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतौरात्रतवर्षाः क्षेत्राणि ॥१०॥ तद्विभाजिन
पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनोलङ्कृमिशिखरिणो वर्षध-
रपवेताः ॥११॥ हेमाज्जुनतपनीयवैडूरयरजनहेममयाः ॥१२॥ मणि-
विचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥१३॥ पद्ममहापद्मनि-
गिञ्छकेसरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका हृदास्तेषामुपरि ॥ १४ ॥
प्रथमो योजनसहस्रायामस्तद्वर्ध्वविंशकम्भो हृदः ॥१५॥ दशयोजना-
वगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥ १७ ॥ तद्द्विगुणद्विगुणा
हृदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रोहोधृतिकीतिबुद्धि-
लक्ष्म्यः पत्योपमस्थितयः ससामानिकपरिष्ठाः ॥१९॥ गंगासि-

न्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीतोदानारीनरकांतासुव-
र्णरूप्यकूलारक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥ द्वयोर्द्वयोः
पूर्वा पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥ चतुर्दशनदीसहस्रपरि-
वृता गंगासिन्धवादयो नद्यः ॥ २३ ॥ भरतः षड्विंशतिपञ्चयोजनश-
तविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागायोजनस्य ॥ २४ ॥ तद्द्विगुणद्विगु-
णविस्तारा ॥ २५ ॥ वषधरवर्या विदेहान्ताः उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥ २६ ॥
भरनैरावतयोर्वृद्धिहासी षट्समयाभ्यामुत्सर्पिर्णयवसर्पिणीभ्याम्
॥ २७ ॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥ २८ ॥ एकद्वित्रिपत्योपमस्त्रि-
नयो हैमवनकहारिवर्षकटैवकुरवकाः ॥ २९ ॥ तथोत्तराः ॥ ३० ॥ विदेहेषु
सङ्ख्येयकाला ॥ ३१ ॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशत-
भागः ॥ ३२ ॥ द्विर्जातकीखण्डे ॥ ३३ ॥ पुष्करार्द्धे च ॥ ३४ ॥ प्राङ्मानु
षोत्तरान्मनुष्याः ॥ ३५ ॥ आर्याम्लेच्छाश्च ॥ ३६ ॥ भरनैरावतविदेहाः
कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुस्तरकुरुभ्यः ॥ ३७ ॥ नृस्थिती परावरे त्रिप-
त्योपमान्तमुद्भूते ॥ ३८ ॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥ ३९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मात्रगास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

देवाश्चतुर्णिकायाः ॥ १ ॥ आदितस्त्रिषु पोतान्तलेश्याः ॥ २ ॥
दशाष्टपञ्चदशविकल्पाः कल्पोपपन्नपट्यन्ताः ॥ ३ ॥ इन्द्रसामानिक-
त्रायस्त्रिंशत्परिपदात्तरक्षलोकपालनोकप्रकीर्ण कामियोग्यकिल्बि-
षिकाश्चैकशः ॥ ४ ॥ त्रायस्त्रिंशलोकपालवज्र्याव्यन्तरज्योतिष्काः
॥ ५ ॥ पूर्वयाद्वेन्द्राः ॥ ६ ॥ कायप्रवीचारा आ पेशानात् ॥ ७ ॥ शेषाः
स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचारा ॥ ८ ॥ परेऽप्रवीचाराः ॥ ९ ॥ भवनवासि-
नोऽसुरनागविद्युत्सु पर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥ १० ॥
व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः

॥ ११ ॥ ज्योतिष्काः सूर्यावन्दमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतराकश्च
 ॥ १२ ॥ मेढ्रप्रदक्षिणा नित्यगतयो नृलोके ॥ १३ ॥ तत्कृतः कालवि-
 भागः ॥ १४ ॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ वैमानिकाः ॥ १६ ॥ कल्पोपपन्ना
 कल्पानीताश्च ॥ १७ ॥ उपर्युपरि ॥ १८ ॥ सौधर्मैशानसानत्कुमारमा-
 हेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्टशुक महाशुक शतारसहस्रारं प्वान-
 तप्राणतयोरा रणाच्युतयोर्नवसुप्रैवेयकेषु विजयवैजयन्तजयन्तापरा-
 जितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ १९ ॥ स्थितिप्रभावसुबद्धुतिलेश्याविशुद्धी-
 न्द्रियावधिविषययोऽधिकाः ॥ २० ॥ गतिशरीरपरिग्रहाऽभिमानतो
 हीनाः ॥ २१ ॥ पीतपद्मशुक्लेश्याद्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः
 कल्पाः ॥ २३ ॥ ब्रह्मलोकालयालौकान्तिकाः ॥ २४ ॥ सारस्वतादि
 त्यवहृयरुणगर्दतोयतुषिताव्यावाधारिष्ठाश्च ॥ २५ ॥ विजयादिषु
 द्विचरमाः ॥ २६ ॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनमयः ॥ २७ ॥
 स्थितिरसुरनागसुपर्णाद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपत्योपमार्द्धही-
 नमिताः ॥ २८ ॥ सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके ॥ २९ ॥ सान-
 त्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥ ३० ॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चद-
 शभिर्धिकानि तु ॥ ३१ ॥ आरणाच्युतादूर्द्धमेकैकेन नवसुप्रैवेयकेषु
 विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ ३२ ॥ अपरापत्योपममधिकम्
 ॥ ३३ ॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तरा ॥ ३४ ॥ नारकाणां च
 द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥ ३६ ॥ भव
 नेषु च ॥ ३७ ॥ व्यन्तराणां च ॥ ३८ ॥ परापत्योपममधिकम् ॥ ३९ ॥
 ज्योतिष्काणां च ॥ ४० ॥ तदष्टभागोऽपरा ॥ ४१ ॥ लौकान्तिकाना-
 मष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४॥

अजीवकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥ १ ॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥
जीवाश्च ॥ ३ ॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥ ४ ॥ रुपिणः पुद्गलाः
॥ ५ ॥ आकाशादेकद्रव्याणि ॥ ६ ॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥
असङ्ख्येयाः प्रदेशाः धर्माधर्मैकजीवानाम् ॥ ८ ॥ आकाशस्यानन्ताः
॥ ९ ॥ सङ्ख्येयासङ्ख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥ नाणोः ॥ ११ ॥
लोकाकाशेऽवगाहः ॥ १२ ॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एकप्रदे-
शादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असङ्ख्येयभागादिषु जीवानाम्
॥ १५ ॥ प्रदेशसंहार विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ॥ १६ ॥ गति स्थित्यु-
पग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ॥ १७ ॥ आकाशस्यावगाहः ॥ १८ ॥
शरीरवाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥ सुखदुःखजीवितमरणो-
पग्रहाश्च ॥ २० ॥ परस्परुपग्रहो जीवानाम् ॥ २१ ॥ वर्त्तनापरिणा-
मक्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥ स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्ग-
लाः ॥ २३ ॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्लयाऽऽतपोद्यो-
तवन्तश्च ॥ २४ ॥ अणवःस्कन्धाश्च ॥ २५ ॥ भेदसङ्घातेभ्य उत्प-
द्यन्ते ॥ २६ ॥ भेदादणुः ॥ २७ ॥ भेदसङ्घाताभ्यां चाक्षुषः ॥ २८ ॥
सद्व्यलक्षणम् ॥ २९ ॥ उत्पादव्ययध्रौवयुक्तं सत् ॥ ३० ॥
तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥ ३१ ॥ अर्पितानर्पित सिद्धेः ॥ ३२ ॥ स्रग्ध-
रुक्षत्वाद्बन्धः ॥ ३३ ॥ नजघन्यगुणानाम् ॥ ३४ ॥ गुणसाम्ये स-
दृशानाम् ॥ ३५ ॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥ ३६ ॥ बन्धेऽधिकौ
पारिणामिकौ च ॥ ३७ ॥ गुणपर्ययवद्द्रव्यम् ॥ ३८ ॥ कालश्च
॥ ३९ ॥ सोऽनन्तसमयः ॥ ४० ॥ द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ॥ ४१ ॥
तद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

इति तत्त्वार्थाभिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

कायवाङ्मनः कर्मयोगः ॥ १ ॥ स आस्रवः ॥ २ ॥ शुभः
 पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ सकपायाकपाययोः साम्परायिके-
 र्थापथयोः ॥ ४ ॥ इन्द्रियकपायाव्रतक्रियाः पञ्चचतुःपञ्चपञ्चविंशति-
 संख्याः पूर्वस्य भेदाः ॥ ५ ॥ तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीये
 विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाऽजीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं
 संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकपायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्च
 तुश्चैकशः ॥ ८ ॥ निर्वर्तनानिक्षेपसंयागनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः
 परम् ॥ ९ ॥ तत्प्रदोषनिह्वयमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञानदशो-
 नावरणयोः ॥ १० ॥ दुःखशोकतापाक्रन्दनबधपरिदेवनान्यात्मपरो-
 भयस्थानान्यसद्वेद्यस्य ॥ ११ ॥ भूतवृत्त्यनुकम्पादान सरागसंयमा-
 दियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥ केवलेश्रुतसङ्ख्यभ्रमं
 देवावणोवादो दशेनमाहस्य ॥ १३ ॥ कपायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारि-
 त्रमाहस्य ॥ १४ ॥ बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥ १५ ॥ माया-
 तैर्यग्यातस्य ॥ १६ ॥ अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १७ ॥ स्वमा-
 वमादेवं च ॥ १८ ॥ निःशीलव्रततत्त्वं च सर्वेषाम् ॥ १९ ॥ सरागसंय-
 मसंयमासंयमाऽकामनिज्ज राबालतर्पांसि दैवस्या ॥ २० ॥ सम्यक्त्वं च
 ॥ २१ ॥ यागवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥ २२ ॥ तद्विपरातं
 शुभस्य ॥ २३ ॥ दशेनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नताशीलव्रतेष्वनतोचाराऽ
 भाक्षणज्ञानोपयोगसंवेगौशक्तितस्त्यागतपसा साधुसमाधिर्वैयानृत्य
 करणमहदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्माणप्रभावना
 प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥ २४ ॥ परात्मनिन्दाप्रशंसे
 सदसद्गुणोच्छादनोद्भावेन च नोचैर्गोत्रस्य ॥ २५ ॥ तद्विपर्ययौ नीचै-
 वृत्युनुत्सेकौचोत्तरस्य ॥ २६ ॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥ २७ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिव्रतम् ॥ १ ॥ देशसर्व-
तोऽणुमहती ॥ २ ॥ तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥ ३ ॥ वाङ्-
मनोगुप्तोर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभाजनानि पञ्च ॥ ४ ॥
क्राधलोभभोरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवोचिभाषणं च पञ्च ॥ ५ ॥
शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धिसधर्माऽविसंवादः
पञ्च ॥ ६ ॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वेतरानुस्मरण-
वृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पञ्च ॥ ७ ॥ मनोशामनोऽन्दिन्द्रिय-
विषयरागद्वेषवर्जनानि पञ्च ॥ ८ ॥ हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्श-
नम् ॥ ९ ॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि
च सत्त्वगुणाधिकक्लिश्यमाना विनयेषु ॥ ११ ॥ जगत्कायस्वभावौ
वा संवेगवैराग्यार्थम् ॥ १२ ॥ प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा
॥ १३ ॥ असदभिधानमनृतम् ॥ १४ ॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥ १५ ॥
मैथुनमब्रह्म ॥ १६ ॥ मूर्छा परिग्रहः ॥ १७ ॥ निःशल्यो व्रती
॥ १८ ॥ अगाथेनगारश्च ॥ १९ ॥ अणुव्रतोऽगारी ॥ २० ॥
दिदेशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोगपरिमा-
णातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥ २१ ॥ मारणान्तिकी सल्लेखनां
जोषिता ॥ २२ ॥ शङ्काकांक्षावचिकित्साऽन्यद्वृष्टिप्रशंसासंस्तवाः
सम्यग्दृष्टे रतीचाराः ॥ २३ ॥ व्रतशीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रमम् ॥ २४ ॥
बन्धवद्यच्छेदातिभारारोपणान्नपाननिरोधाः ॥ २५ ॥ मिथ्योपदेश-
रहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥ २६ ॥
स्तेनप्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरू-
पकव्यवहाराः ॥ २७ ॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीताऽपरिगृहीता
गमनानङ्गक्रीडाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥ २८ ॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्य-

सुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमाणाऽतिक्रमाः ॥ २६ ॥ उर्ध्वाव-
 स्तिर्यग्गतिक्रमक्षेत्रवृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि ॥ ३० ॥ आननयनप्रेष-
 प्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः ॥ ३१ ॥ कन्दर्पकोटकुच्यमौखर्या-
 समीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥ ३२ ॥ योगदुःप्रणिधा-
 नान्यनादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३३ ॥ अप्रत्यवेक्षितऽरमार्जितो-
 त्सर्गादानसंस्तोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥ ३४ ॥ सचित्त-
 सम्बन्धसन्निध्याभिष्वदुःपक्काहाराः ॥ ३५ ॥ सचित्तनिक्षेपापिधान-
 परव्यपदेशमात्सव्यकालातिक्रमाः ॥ ३६ ॥ जीवितमरणाशंसाभिवा-
 नुरागसुखानुबन्धनिदानानि ॥ ३७ ॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो-
 दानम् ॥ ३८ ॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥ ३९ ॥

इति सत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रं सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

मिथ्यादर्शनाविरति प्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः ॥ १ ॥ सक-
 षायत्वाज्जोवः कर्मणो योग्यानुपुद्गलानादत्ते स बन्धः ॥ २ ॥ प्रकृति-
 स्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥ ३ ॥ आद्योज्ञानदर्शनावरणवेदनी-
 यमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥ पञ्चनवद्व्यष्टाविंशतिचतुष्टि-
 चत्वारिंशद्विपंचमेदा यथाक्रमम् ॥ ५ ॥ मतिश्रुतावधिमनः पर्ययके-
 चलानाम् ॥ ६ ॥ चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां निद्रानिद्रानिद्राप्रबला-
 प्रबला प्रबलास्त्यानगृह्यश्च ॥ ७ ॥ सदसद्वयं ॥ ८ ॥ दर्शन चारि-
 त्रमोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्या त्विद्विनवषोडशमेदाः सम्य-
 कत्वमिथ्यात्वतदुभयान्यऽकषायकषायौ हासपरत्यरतिशोकभयजुगु-
 प्सास्त्रोषुन्नमुंसकवेदाः अनंतानुबन्धप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्व-
 लनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ॥ ९ ॥ नारकनैर्यद्योत-
 मानुषदैवानि ॥ १० ॥ गतिजातिशरीराङ्गोपाङ्गनिर्माणबन्धनसंज्ञात

संस्थानसंहननस्पर्शरसगंधवर्णानुपून्यागुल्लघूपघातपरघातातपोद्योतो
 च्छ्वास विहायोगतयः प्रत्येकशरीरत्रससुभगसुखरशुभसूक्ष्मपर्याप्ति
 स्थिरादेयशःकीर्तिसेतराणि तीर्थकरत्वं च ॥ ११ ॥ उच्चैर्नोचैश्च
 ॥ १२ ॥ दानलाभमोगोपभागवोर्थाणाम् ॥ १३ ॥ आदितस्ति
 सृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोट्यः परा स्थितिः
 ॥ १४ ॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥ १५ ॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥ १६ ॥
 त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुवः ॥ १७ ॥ अपरा द्वादशमुहूर्ता वेद
 नीयस्य ॥ १८ ॥ नामगोत्रयोरष्टौ ॥ १९ ॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ताः
 ॥ २० ॥ विपाकोऽनुभवः ॥ २१ ॥ स यथानाम ॥ २२ ॥
 नतश्च निर्जरा ॥ २३ ॥ नामप्रत्ययाः सर्वतोयोगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षे
 त्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥ २४ ॥ सद्ब्रह्मः
 शुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ॥ २५ ॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रोऽष्टमोऽध्यायः ॥८॥

आस्त्रनिरोधः सवरः ॥ १ ॥ स गुप्तिसमितिधर्मननुप्रेक्षापरीषद
 जयचारित्रैः ॥ २ ॥ तपसा निर्जरा च ॥ ३ ॥ सम्यग्योगनिग्रहो
 गुप्तिः ॥ ४ ॥ ईर्याभाषेयणादाननिक्षेपोत्सर्गा समितयः ॥ ५ ॥
 उत्तमक्षमामार्दवाजं वशीचसत्यसंयमतपस्त्यागाऽकिंचन्यब्रह्मचर्याणि
 धर्मः ॥ ६ ॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्त्रवसंवरनि-
 र्जरा लोकबोधिदुर्लभधर्मस्वाख्यातत्त्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥
 मार्गाच्यवननिर्जरार्थ परिषोढव्याः परोपहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासा-
 शीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्याक्रोशबध्याञ्जा-
 लाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाऽज्ञानाऽदर्शनानि ६ सूक्ष्म-
 साम्परायलुब्धस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥ १० ॥ एकादश जिने ॥ ११ ॥

वादरसम्पराये सर्वे ॥ १२ ॥ ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने ॥ १३ ॥ दर्शन-
 मोहान्तराययोरदशेनालाभौ ॥ १४ ॥ चारित्रमोहे नाग्यारतिस्त्री-
 निषद्याक्रोशयाश्चासत्कारपुरुस्काराः ॥ १५ ॥ वेदनीये शेषाः ॥ १६ ॥
 एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नेकोनविंशतिः ॥ १७ ॥ साम्ना-
 यिकच्छेदोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसूक्ष्मसाम्पराययथाख्यातमिति
 चारित्रम् ॥ १८ ॥ अनशनावमोदय्यवृत्तिपरिसङ्ख्यानरसपरित्याग-
 विविक्तशय्यासनकायक्लेशा बाह्यतपः ॥ १९ ॥ प्रायश्चित्तविनय-
 वैवावृत्त्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥ २० ॥ नवचतुदशप-
 चद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्व्यानात् ॥ २१ ॥ आलोचनाप्रतिक्रमणतदु-
 भयविवेकव्युत्सर्गतपच्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥ ज्ञानदर्शन-
 चारित्रोपचाराः ॥ २३ ॥ आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्ष्यगलानगण-
 कुलसंघसाधुमनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥ वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नाय-
 धर्मोपदेशाः ॥ २५ ॥ बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ॥ २६ ॥ उत्तमसंहन-
 नस्येकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमाऽऽन्तर्मुहूर्तात् ॥ २७ ॥ आतंरौ-
 द्र्यम्यंशुकुनि ॥ २८ ॥ परे मोक्षहेतू ॥ २९ ॥ आर्तममनोज्ञस्य स-
 म्प्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः ॥ ३० ॥ विपरीतं मनाज्ञ-
 स्य ॥ ३१ ॥ वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥ निदानं च ॥ ३३ ॥ तदविरतदेश-
 विरतप्रमत्तसंयतानाम् ॥ ३४ ॥ हिंसानतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्यो
 रौद्धमविरतदेशविरतयोः ॥ ३५ ॥ आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयाय
 धर्म्यम् ॥ ३६ ॥ शुक्लोच्चार्य पूर्वविदः ॥ ३७ ॥ परे केवलिनः ॥ ३८ ॥
 पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपरतक्रियानिवर्तनी ॥ ३९ ॥
 त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम् ॥ ४० ॥ एकाश्रये सवितर्कवीचारे
 पूर्वे ॥ ४१ ॥ अवीचारं द्वितीयम् ॥ ४२ ॥ वितर्कः श्रुतम् ॥ ४३ ॥

वोच्चारोऽर्थव्यञ्जनयोसंक्रांतिः ॥४४॥ सभ्रमदृष्टिश्रावकविरतानन्त-
वियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशांतमोहक्षपकक्षीणमोहजिनाः क्र-
मशोऽसख्येयगुणनिज्जराः ॥४५॥ पुलाकबकुशकुशोलनिर्ग्रन्थस्ना-
तकानिर्ग्रन्था ॥४६॥ संयमश्रुतपरिसेवनातीर्थलिङ्गलेश्योपपाद-
स्थानविकल्पतः साध्याः ॥४७॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्र नवमोऽध्यायः ॥९॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् ॥१॥ बन्ध-
हेत्व भावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥२॥ औपशमि-
कादिभग्यत्वानां च ॥३॥ अन्यत्र केवलसभ्यक्त्वज्ञानार्शनसिद्धत्वे-
भ्यः ॥ ४ ॥ तदन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगा-
दसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदात्तथा गतिपरिणामाच्च ॥ ६ ॥ आविर्द्धकुलाल-
चक्रवद्व्यपगतलेपालाम्बूवदेरएडबीजवदग्निविखावच्च ॥७॥ धर्मा-
स्तिकायाऽभावात् ॥८॥ क्षत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्ध-
बाधितज्ञानावगाहनान्तरसंख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ॥ ९ ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्र दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यञ्जनसन्धिविवर्जितरेफम् । साधुमि-
रत्र मम क्षमितव्यं को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे ॥ १ ॥ दशाध्याये
परिलिप्ते तत्त्वार्थे पठितं सति । फलं स्यादुपवासस्य भाषितं
मुनिपुङ्गवैः ॥ २ ॥ तत्त्वार्थसूत्रकर्तारं गृह्यपिच्छोपलक्षितम् । वन्दे
गणिं द्रसंजातमुमास्वामिमुनोश्वरम् ॥३॥

इति तत्त्वार्थसूत्रापरनामतत्त्वार्थाधिगममोक्षशास्त्रं समाप्तम् ।

११ श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रम्

(भगवज्जिनसेनाचार्यकृतं)

प्रसिद्धाष्टसहस्रेद्वलक्षणं त्वां गिरां पतिम् ॥ नाम्नामष्टसह

स्त्रेण तोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ॥ १ ॥ श्रोमान्स्वयम्भूषभः शंभवः
 शंभुरात्मभूः । स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ॥ २ ॥
 विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः । विश्वविद्विष्वविद्येशो
 विश्वयोनिरनीश्वरः ॥ ३ ॥ विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो
 विश्वलोचनः । विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः
 ॥ ४ ॥ शिश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः विश्वदृग्वि-
 श्वभूतेशो विश्वज्यातिरनीश्वरः ॥ ५ ॥ जिनो जिष्णुरमेयात्म वि-
 श्वरीशो जगत्पतिः । अनन्तचिद्विन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥ ६ ॥
 युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः परःपरतरः सूक्ष्मः परमेष्ठो स-
 नातनः ॥ ७ ॥ स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरयोनिजः । मोहारिवि-
 जयी जेता धर्मचक्री दयाश्वजः ॥ ८ ॥ प्रशान्तारिनन्तात्मा योगी यो-
 गीश्वरार्चितः । ब्रह्मविद्ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥ ९ ॥ सिद्धो
 बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः । सिद्धः सिद्धांतविद्धेयः
 सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥ १० ॥ सहिष्णुरव्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भ-
 वोद्भवः । प्रभूष्णुरजरोजयो भ्राजिष्णुर्धोश्वरोऽव्ययः ॥ ११ ॥ विमा-
 त्सुरसंभूष्णुः स्वयंभूष्णुः पुरातनः । परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजग-
 त्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीमदादिशतम् ॥ १ ॥

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासन । पूतात्मा परमज्योति-
 र्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ॥ १ ॥ श्रीपतिर्भगवानहंन्नरजा विरजाः शु-
 चिः । तीर्थकृत्केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥ अनन्त-
 दीप्तिर्मानात्मा स्थयंबुद्धः प्रजापतिः । मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्क-
 लो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥ निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निर्कृतोक्तिर्निरामयः । अ-

चलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ॥४॥ अग्रणीग्रामणीने
ता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् । शास्ता धर्मपतिर्द्धर्म्यो धर्मात्मा धर्म
तीर्थकृत् ॥५॥ वृषध्वजो वृषाघ्रीशो वृषकेतुर्वृषायुधः । वृषो वृषप-
तिर्भर्ता वृषभाङ्गो वृषोद्ववः ॥६॥ हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद्भूतभा-
वनः । प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥७॥ हिरण्य-
गर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्ववः । स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो ज-
गत्प्रभुः ॥८॥ सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः सर्वात्मा
सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ९ ॥ सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुक्
सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः । विश्रुतो विश्वतः पादो विश्वशीर्षः शु-
चिप्रवाः ॥ १० ॥ सहस्रशोर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् । भूत
भव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ॥ ११ ॥

इति दिव्यादिशतम् ॥

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः पृष्ठो वरिष्ठधीः । स्थेष्ठो गरिष्ठो
वंहिष्ठः श्रेष्ठो निष्ठो गरिष्ठगोः ॥ १ ॥ विश्वभृद्विश्वसृष्ट विश्वेष्ट
विश्वभुग्विश्वनायकः । विश्वाशीविश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजिता-
न्तकः ॥२॥ विभवो विभवो वीरो विशोको विजरो जरन् । विरागो
विरतोऽङ्गो विविको वीतमत्सरः ॥ ३ ॥ विनेयजनताबन्धुर्विलीना
शेषकल्मषः । त्रियोगो योगविद्विद्वान्त्रिधाता सुविधिः सुधीः ॥४॥
क्षान्तिभाक्पृथिवीमूर्तिः शान्तिभाक्सलिलात्मकः । वायुमूर्तिरसङ्गात् ।
वह्निमूर्तिरधर्मधृक् ॥५॥ सुयज्वा यजमाना मा सुत्वा सुत्रामपूजितः
ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञाङ्गममृतं हविः ॥ ६ ॥ व्योममूर्तिरमूर्तात्मा
निर्लेपो निर्मलोऽचलः । सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः
॥ ७ ॥ मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्रो मन्त्रमूर्तिरनन्तकः । स्वतन्त्रस्तन्त्र-

कृत्स्वान्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥ ८ ॥ कृती कृतार्थः सत्कृत्यः
कृतकृत्यः कृतकतुः । नित्यो मृत्युंजयो मृत्युरमृतात्मामृतो
द्भवः ॥ ९ ॥ ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः । महाब्रह्म-
पतिर्ब्रह्मे महाब्रह्मपदेश्वरः ॥ १० ॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्म-
दमप्रभुः प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ॥ ११ ॥

इति स्थविष्ठादिशतम् ॥ ३ ॥

महाशोकध्वजोशोकः कः स्वप्ना पद्मविष्टरः । पद्येशः पद्मस-
म्भूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥ १ ॥ पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः-
स्तुतीश्वरः । स्तवनोर्हा हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥ २ ॥
गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणोः । गुणाकरो गुणाम्भो
धिगुणज्ञो गुणनायकः ॥ ३ ॥ गुणादरो गुणोच्छेदो निर्गुणः पुण्यगी-
गुणः । शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ॥ ४ ॥ अगण्यः
पुण्यधीर्गण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः । धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्य
निरोधकः ॥ ५ ॥ पापापेनो विपापात्मा विपापात्मा वीतकल्मषः ।
निर्वन्दो निर्मदः शान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ॥ ६ ॥ निर्निमेषो निराहारो
निक्रियो निरुपप्लवः । निष्कलङ्को निरस्तीना निधूताङ्गो निरा-
स्त्रवः ॥ ७ ॥ विशालो विपुलज्योतिरतुलोचिन्त्यवैभवः । सुसंवृतः
सुगुप्तात्मा सुभृत्सुनयतत्त्ववित् ॥ ८ ॥ एकविद्यो महाविद्यो मुनिः
परिदृढः पतिः । धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतान्तकः ॥ ९ ॥
पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः । आता भिषग्वरो वर्यो
वरदः परमः पुमान् ॥ १० ॥ कविः पुराणपुरुषो वर्षोयान्वृषभः
परुः । प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥ ११ ॥

इति महादिशतम् ॥ ४ ॥

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्ष्ण्यः शुभलक्षणः निरक्षः पुण्डरीकाक्षः
 पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥ १ ॥ सिद्धिदः सिद्धिसङ्कल्पः सिद्धात्मा सिद्ध-
 साधनः । बुद्धबोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ॥ २ ॥ वेदाङ्गो वेदवि-
 द्ब्रह्मो ज्ञातरूपो विद्वांवरः । वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वदतांवरः
 ॥ ३ ॥ अनादिनिधनो व्यक्तो व्यक्तवाग्व्यकशासनः । युगादिऋतु-
 गाधारो युगादिजगदादिजः ॥ ४ ॥ अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रो-
 ऽतीन्द्रियार्थदृक् । अनिन्द्रियोऽहमिन्द्राचार्यो महेन्द्रमहितो महान्
 ॥ ५ ॥ उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः । अगाह्यो गहन-
 गह्यं परार्ध्यः परमेश्वरः ॥ ६ ॥ अनन्तर्द्धिमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धिः समग्रयोः
 प्राग्यः प्राग्रहरोऽभ्यग्रयः प्रत्यग्रोऽग्रिमोऽग्रजः ॥ ७ ॥ महातपा
 महातेजा महोदको महोदयः । महायशो महाधामा महासत्त्वो महा-
 धृतिः ॥ ८ ॥ महाधैर्यो महावीर्या महासम्पन्नमहाबलः । महाशक्तिर्म-
 हाज्योनिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ॥ ९ ॥ महामतिर्महानोतिर्महाक्षांतिर्महो-
 दयः । महाप्राज्ञो महाभागो महानदो महाकविः ॥ १० ॥ महामहा म-
 हाकीर्तिर्महाकांतिर्महावपुः । महादानो महाज्ञानो महायोगो महा-
 गुणः ॥ ११ ॥ महामहापतिः प्राप्तमहाकल्याणपञ्चकः । महाप्रभुर्महा-
 प्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ॥ १२ ॥

इति श्रीवृक्षादिशतम् ॥ ५ ॥

महामुनिर्महामौनी महाध्यानो महादमः । महाक्षमो महाशीलो
 महायज्ञो महामखः ॥ १ ॥ महाव्रतपतिर्मह्यो महाकांतिधरोऽधिपः ।
 महामैत्री महामेयो महापायो महोदयः ॥ २ ॥ महाकारुण्यको मन्ता
 महामन्त्रो महायतिः । महानादो महाधोशो महेज्यो महसांपतिः ॥ ३ ॥
 महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् । महात्मा महासांधाम

महर्षिर्महितोदयः ॥ ४ ॥ महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिगुरुः ।
 महापराक्रमोऽनंतो महाकोधरिपुर्वशी ॥५॥ महाभवाश्विसंतारिर्महा-
 मोहाद्रि सूदनः । महागुणाकरः क्षांतो महायोगेश्वरः शमो ॥ ६ ॥
 महाध्यानपतिर्ध्याता महाधर्मा महाव्रतः । महाकर्मारिहात्मज्ञो महा-
 देवो महेशिता ॥७॥ सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः । असंख्ये
 योऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ॥ ८ ॥ सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः
 श्रुतात्मा विष्टरश्चवाः । दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः
 ॥९॥ प्रधानमात्मा प्रकृतिपरमः परमोदयः । प्रक्षोणबंधकामारिः
 क्षेमकृत्क्षेमवासनः ॥१०॥ ऽणवः प्रणयः प्राणः प्रणादः प्रणतेश्वरः
 प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्यु रध्वरः ॥११॥ आनन्दो नंदनो नंदो
 वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः । कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिजयः ॥

इति महामुन्यादिशतम् ॥६॥

असंस्कृतः सुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतांतकृत । अंतकृत्कांतगुःकां-
 तश्चिंतामणिरभीष्टदः ॥१॥ अजितो जितकामारिरमितोऽमितशास-
 नः । जितकोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितांतकः ॥२॥ जिनेन्द्रः
 परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुमिस्वतः । महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो
 नाभिनन्दनः ॥३॥ नाभेयो नाभिजो जातः सुवतो मनुस्त्वतः । अभे-
 द्योऽनत्योनश्वानधिकोऽधिगुरुःसुधीः ॥४॥ सुमेधा विक्रमो म्बामो
 दुराधर्षो निरुत्सुकः । विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्ट प्रत्ययः कर्मणोऽनघः
 ॥५॥ क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षयः क्षेमधर्मपतिः क्षमो । अप्राह्यो ज्ञाननि
 प्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ॥६॥ सुकृतो धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुरा-
 ननः । श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥७॥ सत्यात्मा सत्व-
 विज्ञानः सत्यवाक् सत्यशासनः सत्याशीः सत्यसन्धानः सत्यः

सत्यपरायणः॥८॥ स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्द्वीयान्दूरदर्शनः । अणो
रणोयाननणुर्गुरुर्यो गरीयसाम् ॥९॥ सदायोगः सदाभोगः सदा
तृप्तः सदाशिवः । सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदादयः ॥१०॥
सुघोषः सुमुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् । सुगुप्तागुप्तिभृद्गोप्त
लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥११॥

इति असंस्कृतादिशतम् ॥७॥

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः । मनीषिधिपणो
धोमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ॥ १ ॥ नैकरूपो नयस्तुङ्गो नैकात्मा
नैकधर्मकृत् । अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ॥ २ ॥
ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः । पद्मगर्भो जगद्गर्भो
हेमगर्भः सुदर्शनः ॥ ३ ॥ लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो द्वितीयानि ईशि-
ता । मनोहरो मनोज्ञाङ्गो धीरो गम्भीरशासनः ॥४॥ धर्मयूपो दया-
यागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः । धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः
॥५॥ अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः । सुरूपः सुभगस्त्या-
गो समयज्ञः समाहितः ॥६॥ सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को
निरुद्धवः । अलेपो निष्कलङ्कात्मा वीतरागो गतस्पृहः ॥ ७ ॥
वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःस्पृहो जितेन्द्रियः । प्रशान्तोऽनन्तधाम
विर्मङ्गलं मलहानघः ॥ ८ ॥ अनीदृगुपमाभूतो दृष्टिर्देवमगोचरः ।
अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानेकतत्त्वदृक् ॥ ९ ॥ अध्यात्मगम्यो
गम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः । सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविष-
यार्थदृक् ॥ १० ॥ शंकरः शब्दो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ॥ ११ ॥ त्रिजगद्ब्रह्मोऽभ्य-
र्च्यस्त्रिजगन्मङ्गलोदयः । त्रिजगत्पतिपूजाङ्घ्रिस्त्रिखिलोकाग्रशिखा-
मणिः ॥ १२ ॥ इति बृहदादिशतम् ॥ ८ ॥

त्रिकालदर्शो लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः । सर्वलोकार्तिगः
 पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥ १ ॥ पुण्यपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वाङ्गविस्तरः ।
 आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥ २ ॥ युगमुख्यो युगज्येष्ठो
 युगादिस्थितिदेशकः । कल्याणवर्णः कल्याणः कलयः कल्याणलक्षणः
 ॥ ३ ॥ कल्याणप्रकृतिदीप्तः कल्याणात्मा विकल्मषः । विकलङ्कुः कला-
 तीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥ ४ ॥ देवदेवो जगन्नाथो जगद्धन्धुर्जगद्विभुः ।
 जगद्वितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगद्व्रजः ॥ ५ ॥ चराचरगुरुर्गोप्यो
 गूढात्मा गूढगोचरः । सद्योजानः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः
 ॥ ६ ॥ आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः । सुवर्णवर्णो हवमाभः
 सूर्यकोटिसप्रभः ॥ ७ ॥ तानीयनिभस्तुङ्गो बालार्काभोऽनलप्रभः ।
 संध्याभ्रवभ्रुर्हर्माभस्तप्तचामीकरच्छविः ॥ ८ ॥ निष्ठप्रकनकच्छायः कन-
 तकाञ्चनसन्निभः । हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शान्तकुम्भनिभप्रभः ॥ ९ ॥
 द्युम्नभाजातरूपाभो दीप्तजाम्बूनदद्युतिः । सुधौतकलधौतश्रोःप्रदीप्तो
 हाटकद्युतिः ॥ १० ॥ शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षक्षमः । शत्रु-
 ष्णोप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥ ११ ॥ शान्तिनिष्ठो
 मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः । शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्ति-
 मान्कामितप्रदः ॥ १२ ॥ श्रेयोनिधिरग्निष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
 सुस्थितः स्थावरः स्थाणुः प्रथोयान्प्रथितः पृथुः ॥ १३ ॥

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ॥ ६ ॥

दिवासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः निष्कञ्चनो
 निराशंसो ज्ञातचक्षुरमोमुहः ॥ १ ॥ तेजोराशिनिरन्तोजा ज्ञानाब्धिः
 शीलसागरः । तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्भूर्तिस्तमोपहः ॥ २ ॥ जग-
 च्छूडामणिर्दीप्तः सर्वविघ्नविनायकः । कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोका-

लोकप्रकाशकः ॥३॥ अनिद्रालुप्तन्द्रालुर्जागरूकःप्रभामयः । लक्ष्मी-
पतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥४॥ मुमुक्षुर्वन्धमोक्षज्ञो जिता-
श्चो जितमन्मथः । प्रशान्तरसैशूलूपो भव्यपेटकनायकः ॥ ५ ॥
मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः । आत्मो वागेश्वरः श्रेया-
ञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥ ६ ॥ प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विभ-
भाववित् । सुननुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हनदुर्नयः ॥ ७ ॥ श्रीशः श्री-
श्रितपादाब्जो वीतपीरभयङ्कुरः । उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो
लोकवत्सलः ॥ ८ ॥ लोकोत्तरो लोकपतिलोकचक्षुरपारधीः । धीर-
धोर्बुद्धिसन्मार्गः शुद्धः सूनूनपूतवाक् ॥ ९ ॥ प्रज्ञापारमिताः प्राज्ञो
यतिर्नियमितेन्द्रियः । भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षे वरप्रदः ॥ १० ॥
समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाशुशुक्षणिः । कमण्यः कर्मठः प्रांशुर्हे-
यादेयविचक्षणः ॥११॥ अनन्त शक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥ १२ ॥ समन्तभद्रः शां-
तारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः । सूक्ष्मदर्शी जितानङ्गः कृपालुर्धर्मदेशकः
॥१३॥ शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः । धर्मपालो जग-
त्पालो धर्मेसाम्राज्यनायकः ॥१४॥

इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ॥ १० ॥

धाम्नांपते तवामृति नामान्यागमकोविहैः । समुच्चितान्यनुध्या-
यन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ॥ १ ॥ गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्नो-
चरो मतः । स्तोता तथाप्यसंदिग्धं त्वत्तोऽभीष्टफलं भवेत् ॥२॥
त्वमतोऽसि जगद्भवन्पुस्त्वमतोऽसि जगद्विषक् । त्वमतोऽसि जग-
द्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥३॥ त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्वि-
रूपोपयोगभाक् । त्वं त्रिरूपेकमुष्यत्पङ्कं सोत्थानन्तचतुष्टयः ॥ ४ ॥

त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्च कल्याणनायकः । षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं
समनयसंग्रहः ॥५॥ दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिविक्रः । दशा-
वतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ॥ ६ ॥ युष्मन्नामावलीढूढ्यविल-
सत्सोत्रमालया । भवन्तं वरिषस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ॥ ७ ॥
इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति शक्तिः । यः स पाठं पठत्येनं स
स्यात्कल्याणभाजनम् ॥८॥ ततः सदेहं पुण्यार्थो पुमान्पठति पुण्य-
धीः । पोरुहूतीं श्रियं प्राप्नुं परमामभिलाषुकः ॥९॥

इति भगवज्जिनसेनाचार्यविरचितादिपुराणान्तर्गतं
जिनसहनश्रामस्तवनं समाप्तम् ।

१२ एकोभाक्स्तोत्रम् ।

(श्रीवादिराजप्रणीतम्)

एकोभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबन्धो घोरं दुःखं भव-
भवगतो दुर्निवारः करोति । तस्याप्यस्य त्वयि जिनरवे भक्तिरु-
न्मुक्तये चेज्जेतुं शक्यो भवति न तथा कोपरस्तापहेतुः ॥ १ ॥
ज्योतीरुरं दुरितनिवहध्वान्तविध्वंसहेतुं त्वामेवाहुर्जिनवर ! चिरं
तात्वविद्याभियुक्ताः । चेतोवासे भवसि च मम स्फारमुद्गासमानस-
स्मिन्नहः कथमिव तमो वस्तुनो वस्तुमोष्टे ॥ २ ॥ आनन्दाश्रुस्त-
पितवदनं गद्गाद चा भिजल्पयश्चायेत त्वयि दृढमनाः स्तोत्रमन्त्रै-
र्भवन्तम् । तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देहवल्मीकमध्यान्तिष्का-
स्यन्ते विविधविषमव्याधयः काद्रवेयाः ॥ ३ ॥ प्रागेवेह त्रिदिग्भव
नादेध्यता भव्यपुण्यात्पृथ्वीचक्रं कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदम् ।
ध्यानद्वारं मम रुचिकरं स्थान्तगेहं प्रविष्टस्तत्किं चित्रं जिन ! वपुरिदं

यत्सुवर्णीकरोषि ॥४॥ लोकस्यैकस्त्वमसि भगवन्निनिमित्तेन बंधु-
स्त्वप्येवाऽसौ सकलविषया शक्तिरप्रत्यनीका । भक्तिस्कीतां विरमधि-
वसन्मामिकां चितशय्यां मय्युत्पन्नं कथमिव ततःकलेशयूथं सहेधा
॥५॥ जन्माटव्यां कथमपि मया देव ! दोर्ध्रं भ्रमित्वा प्राप्तैवेयं तव
नयकथा स्फारपोयूषवापी । तस्या मध्ये हिमकरहिमव्यूहशीते
नितान्त निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःखदावोपनापाः ॥६॥ पाद-
न्यासादपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकी । हेमाभासो भवति सुर-
भिः श्रोनिवासश्च पद्मः । सर्वाङ्गे ण स्पृशति भगवस्त्वऽद्यशेषं मनो
मे श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न मामभ्युपैति ॥७॥ पश्यन्तं त्वद्वचनम-
मृतं भक्तिपात्र्या पिवन्तं कर्मरण्यात्पुरुषमसमानन्दधाम प्रविष्टम् ।
त्वां दुर्वारस्मरमदहं त्वत्प्रसादैकभूमिं क्रूराकाराः कथमिव
रुजाकण्टका निर्लुठन्ति ॥८॥ पापाणात्मा तदितरसमः केवलं रत्न-
मूर्तिर्मानस्तम्भो भवति च परस्तादृशो रत्नवर्गः । दृष्टिप्राप्तो हरति
स कथं मानरोगं नराणां प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्तस्य तच्छक्ति-
हेतुः ॥९॥ हृद्यप्राप्तो मरुदपि भवन्मूर्तिशैलोपवाही सद्यः पुंसां नि-
रवधिरुताधूलिबन्धं धुनोति । ध्यानाहृतो हृदयकमलं यस्य तु त्वं
प्रविष्टस्तास्याशक्नः क इह भुवने देवलोकोपकारः ॥१०॥ जानासि
त्वं मम भवभवे यच्च यादूक्च दुःखं जातं यस्य स्मरणमपि मेशस्त्र
वन्निष्पिनष्टि । त्वं सर्वेशः सकृप इति च त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या
यत् कर्तव्यं तदिह विषये देव एव प्रमाणम् ॥११॥ प्राप्रदैवं तव-
नुतिपदैर्जीवकेनोपदिष्टैः पापाचारी मरणसमये सारमेयोऽपि सौ-
ख्यम् । कः संदेहो यदुपलभते वासवश्रोत्रमुत्वं जल्पज्जाप्यैर्मणि-
भिरमलैस्त्वनमस्कारचक्रम् ॥१२॥ शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि

त्वद्यनोवा भक्तिर्नो चेदनवधिसुखा वञ्चिका कुञ्चिकेयम् । शक्यो-
 द्घाटं भवति हि कथं मुक्तिकामस्य पुंसो मुक्तिद्वारं परिदृढमहा-
 मोहमुद्राकवाटम् ॥१३॥ प्रचलन्तः खल्वयमघमवैरन्धकारैः समन्तात्
 पन्था मुक्तैः स्पृष्टितपदः क्लेशगर्तैरगाधैः । तत्कस्तेन ब्रजति
 सुब्रतो देव तत्त्वावभासो यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्वारतीरत्नदीपः
 ॥१४॥ आत्मज्योतिर्निधिरनवधिर्द्रष्टुरानन्दहेतुः कर्मक्षोणीपटल-
 पिहितो योऽनवाप्यः परेषाम् । हस्ते कुर्वन्त्यनति चिरतस्तं भवद्व-
 क्तिमाजः स्तोत्रैर्बन्धप्रकृतिपुरुषोद्दामधात्रीखनित्रैः ॥१५॥ प्रत्यु-
 त्पन्ना नयहिमगिरेरायता चामृताब्धयः देव त्वत्पदकमलयोः सङ्गता
 भक्तिगङ्गा । चेतस्तस्यां मम रुचिवशादाप्लुत क्षालितांहः कलमाषं
 यद्भवति किमियं देव सन्देहभूमिः ॥१६॥ प्रादुर्भूतस्थिरपदसुख
 त्वामनुध्यायतो मे त्वद्येवाहं स इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्पा ।
 मिथ्यैवेयं तदपि तनुते तृप्तिमग्रेष्वरूपां दोषात्मानोऽप्यभिमतफला-
 स्त्वत्प्रसादाद्भवन्ति ॥१७॥ मिथ्यावादं मलमपनुदन्सप्तभङ्गोत्तरंगैर्वा
 गम्भोधिर्भुवनमखिलं देवपर्येतियस्ते । तस्यावृत्ति सपदि विबुधाश्चे
 तसेवाचलेन व्यातन्वन्तः सुचिरममृतासेवया तृप्नुवन्ति ॥१८॥ आ-
 हार्येभ्यः स्वहृयति परं यः स्वभावादहृद्यः शस्त्रग्राही भवति सततं
 वैरिणा यश्च शक्यः । सर्वाङ्गेषु त्वमसि सुभगस्त्व न शक्यः परेषां
 तत्किं भूषावसनकुसुमैः किं च शस्त्रैर्दस्त्रैः ॥१९॥ इन्द्रः सेवां तव
 सुकुरुतां किं तया श्लाघनं ते तस्यैवेयं भवलयकारी श्लाघ्यतामा-
 तनोति । त्वं निस्तारी जननजलधेः सिद्धिकान्तापतिस्त्वं त्वं लो-
 कानां प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थम् ॥२०॥ वृत्तिर्वाचामपर-
 सदृशो न त्वमन्येन तुल्यः स्तुत्युद्गाराः कथमिव ततस्त्वय्यमो नः

क्रमन्ते । मैवं भूवंस्तदपि भगवन्भक्तिपीयूषपुष्टास्ते भव्यान् ममिम-
तफलाः पारिजाता भवन्ति ॥२१॥ कोपावेशो न तव न तव कापि
देवप्रसादो व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षम् । आज्ञावश्यं
तदपि भुवनं संनिधिवैरहारी क्वैवंभूतं भुवनतिलक ! प्राभवं त्यप्प-
रेण ॥२२॥ देव स्तोतुं त्रिदिवगणिकामण्डलोगीतकीर्तिं तोतूर्ति त्वां
सकलविषयज्ञानमूर्तिं जनो यः । तस्य क्षेमं न पदमटतो जातु जाह्नति
पन्थाम्तात्वग्रन्थस्मरणविषये नेष मोमूर्ति मर्त्यः ॥२३॥ चित्ते कुर्वन्निर-
धिसुखज्ञानद्वयोर्यरूपं देव त्वां यः समयनियमादादरेण स्तवीति
श्रेयोमार्गं स खलु सुकृती तावता पूरयित्वा कल्याणानां भवति-
विषयः पञ्चधा पञ्चितानाम् ॥२४॥ भक्तिप्रह्वमहेन्द्रपूजितपद ! त्वत्की-
तने न क्षमाः सूक्ष्मज्ञानदृशोऽपि संयमभृतः के हन्त मन्दा वयम् ।
अस्माभिस्तवनच्छलेन तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते स्वान्त्याधानसुखं-
पिणां स खलु नः कल्याणकल्पद्रुमः ॥२५॥ वादिराजमनु शाब्दिक-
लोको वादिराजमनु तार्किकसिंहः । वादिराजमनु काव्यकृतस्ते
वादिराजमनु मव्यसहायः ॥ २५ ॥

इति श्रोवादिराजकृतमेकीभावस्तोत्रम् ।

१३ स्वयंभूस्तोत्र भाषा ।

चौपाई ।

राजविषैजुगलनि सुख किया । राज त्याग भवि शिवपद
लिया ॥ स्वयं बोध स्वं भू भगवान् । वंदौ आदिनाथ गुणखान
॥१॥ इंद्रक्षीरसागरजल लाय । मेरु न्हुवाये गाय बजाय । मदन
विनाशक सुख करतार । वंदौ अजित अजत पदकार ॥२॥ शुक्रध्या

न करि करम विनाशि । घाति अघाति सकल दुखराशि ॥ लह्यो मुक-
 निपदसुख भविकार । वंदौ संभव भवदुख टार ॥३॥ माना पच्छिम
 रथनमभार । सुपने सोलह देखे सार ॥ भूप पूछि फल सुनि हर-
 पाय । वंदौ अभिनन्दन मन लाय ॥४॥ सब कुवादवादी सरदार ।
 जीते स्यादवादधुनिधार ॥ जैनधरमपरकाशक स्वामि । सुमतिदेव-
 पद करहुं प्रनामि ॥५॥ गर्भ अगाऊ धनपति आय । करी नगरशोभा
 अधिकाय ॥ बरख रतन पञ्चदश मास । नमौ पदमप्रभु सुखकी
 रास ॥६॥ इन्द्र फनिंद्र नरिंद्र त्रिकाल । वानो सुनि सुनि होहिं
 खुस्याल ॥ द्वादश सभा ज्ञानदातार । नमौ सुपारसनाथ निहार
 ॥७॥ सुगुन छियालिस हैं तुम माहिं । दोष अठारह कोई नाहिं ॥
 मोहमहातमनाशक दीप । नमौ चन्द्रप्रभ राख समीप ॥८॥ द्वादश-
 विध तप करम विनाश । तेरह भेद चरित परकाश ॥ निज अनिच्छ
 भविइच्छ करान । वंदौ पुहपदंत मन आन ॥ ९ ॥ भविसुखदाय
 सुरगतें आय । दशविध धरम कह्यो जिनराय ॥ आपसमान सब-
 नि सुखदेह । वंदौ शोतल धर्मसनेह ॥१०॥ समता सुधा कोपवि-
 षनाश । द्वादशांगवानी परकाश ॥ चारसंघ आनन्ददातार । नमौ
 श्रेयांस जिनेश्वर सार ॥११॥ रतनत्रय चिरमुकुट विशाल । शोभे
 कंठ सुगुनमनिमाल ॥ मुक्तितार भरता भगवान । वासुपूज वंदौ
 धर ध्यान ॥१२॥ परमसमाधीरूप जिनेश । ज्ञानी ध्यानी हितउप-
 देश ॥ कर्मनाशि शिवसुख विलसंत । वंदौ बिमलनाथ भगवंत
 ॥१३॥ अंतर बाहिर परिग्रह डारि । परमदिगंबरवनको धारि ॥
 सर्वजीवहित राह दिखाय । नमौ अनंत वचनमनकाय ॥१४॥
 सात तत्त्वपञ्च सनिकाय । अरथ नवों छ दरब बहु भाय ॥

लोक अलोक सकल परकाश । वंदौ धर्मेनाथ अविनाश ॥ १५ ॥
 पञ्चम चक्रवरति निधिभोग । कामदेव द्वादशम मनोग ॥ शान्तिकरन
 सोलम जिनराय । शान्तिनाथ वंदौ हरखाय ॥ १६ ॥ बहुभुति करे
 हरष नहिं होय । निंदे दोष गहैं नहिं कोय ॥ शोलमान परब्रह्मस्व-
 रूप । वंदौ कुंथुनाथ शिवभूष ॥ १७ ॥ द्वादशगण पूजे सुखदाय ।
 धुतिवंदना करे अधिकाय ॥ जाकी निजधुति कबहुं न होय । वंदौ
 अरजिनवर पद होय ॥ १८ ॥ परभव रतनत्रय अनुराग । इस भव
 व्याहसमय वैराग ॥ बालब्रह्म पूरन व्रत धार । वंदौ मल्लिनाथ
 जिनसार ॥ १९ ॥ विन उपदेश स्वयं वैराग । धुति लौकांत करे
 पग लाग ॥ नमः सिद्ध कहि सब व्रत लेहिं । वंदौ मुनिसुव्रत व्रत
 देहिं ॥ २० ॥ श्रवक विद्यावंत निहार । भगतिभावसौ दिया अहार ॥
 वरसे रतनराशि ततकाल । वंदौ नमिप्रभु दीनदयाल ॥ २१ ॥ सब
 जीवनकी वंदी छोर । रागदोष दो बंधन तोर ॥ रजमति तजि
 शिवतियसों मिले । नेमिनाथ वंदौ सुखनिले ॥ २२ ॥ दैत्य कियो
 उपसर्ग अपार । ध्यान देखि आयो फनिधार ॥ गयो कमठ शठ
 मुख कर श्याम । नमौ मेरुसम पारवस्वाम ॥ २३ ॥ भवसागरते
 जाव अपार । धरमपातमें धरे निहार ॥ डूबत काढ़े दया विचार ।
 वर्द्धमान वंदौ बहुवार ॥ २४ ॥

दोहा—चौबोसौ पदकमलजुग, वंदौ मनवचकाय । 'द्यानत'
 पढ़ै सुनै सदा, सो प्रभु क्यों न सहाय ॥ २५ ॥

नवीन छपे ग्रंथोंकी सूची—

पद्मपुराण १०) हरिवंशपुराण ८) विमलपुराण ६)

मल्लिनाथपुराण ४) शान्तिनाथपुराण ६)

दूसरा अध्याय

१४ निर्वर्णकारण्ड (गाथा)

अट्टावयमि उसहो चंपाए वासुपुज्जजिणणाहो । उज्जते
 नेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥१॥ वीसं तु जिणवरिन्दा
 अमरा सुरवंदिदा धुदकिलेसा । सभ्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया
 णमो तेसिं ॥ २ ॥ वरदत्तो य वग्गो सायरदत्तो य तारवरणयरे ।
 आहुट्टयकोडीओ णिव्वाण गया णमो तेसिं ॥३॥ नेमिसामि पज्जण्णो
 संवुकुमारो नहेव अणिरुद्धो । बाहत्तरिकोडीओ उज्जते सत्तसया
 सिद्धा ॥ ४ ॥ रामसुचा वण्णि सुणा लाडणरिंदाण पञ्चकोडीओ ।
 पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ५ ॥ पंडुसुआ
 तिण्णिजणा द्बिडणरिंदाण अट्टकोडीओ । सेत्तंजयगिरिसिहरे
 णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ ६ ॥ सत्ते जे बलभट्टा जादुबणरिंदाण
 अट्टकोडीओ । गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥७॥
 रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहणीलो । णवणवदो को-
 डीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥ ८ ॥ णंगाणंगकुमारा कोडीपञ्चद-
 मुणिवरा सहिया । सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं
 ॥९॥ दहमुहरायस्स सुवा कोडीपञ्चदमुणिवरा सहिया । रेवा-
 उहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१०॥ रेवाणए तीरे पश्चि-
 मभयमि सिद्धवरकूडे । दो चक्की दइ कप्पे आहुट्टयकोडिणिव्वुदे
 वंदे ॥११॥ वडवाणीवरणयरे दक्खिणभायमि चूलगिरिसिहरे ।
 इंदजीदकुंभयणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१२॥ पावागिरिवर-

सिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो । चलणाणईतडग्गे णिव्वाण-
गया णमो तेसिं ॥१३॥ फलहोडीवरगामे पच्चिमभायम्मि दोणगि-
रिसिहरे । गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १४ ॥
णायकुमारमुणिंदो बाल महावाल चेव जउकेया । अट्ठावयगिरि-
सिहरेणिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १५ ॥ अच्चलपुरवरणयरे ईसाणे
भाए मेढगिरिसिहरे । आहुट्ठयकोडोओ णिव्वाणगया णमो तेसिं
॥ १६ ॥ बंसत्थलवरणियरे पच्चिमभायम्मि कुंथुगिरिसिहरे । कुल-
देसभूषणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १७ ॥ जसरहरायस्स
सुआ पञ्चसयाइं कलिंगदेसम्मि । कोडिसिलाकोडिमुणि णिव्वा-
णगया णमो तेसिं ॥ १८ ॥ पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्त-
मुणि पञ्च । रेसंदो गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥ १९ ॥

१५ निर्वाणकाण्ड {भाषा}

(कविवर भैया भगवतीदासजी रचित)

दोहा—वीतराग बंदों सदा, भावसहित सिर नाय ।

कहं कांड निर्वाणकी भाषा सुगम बनाय ॥१॥

चौपाई—आष्टापदआदीसुरस्वामि । वासुपूज्य चंपापुरि नामि ।
नेमिनाथस्वामी गिरनार । बंदों भाव भगति उरधार ॥१॥ चरम
तीर्थकर चरम शरीर । पावापुर स्वामी महावीर ॥ शिखरसमेद
जिनेसुर बीस । भावसहित बंदों जगदीस ॥ २ ॥ वरदतराय खूंद
मुनिन्द । सायरदत्त आदि गुणवृंद ॥ नगरतारवर मुनि उठकोड़ि ।
बंदों भावसहित करजोड़ि ॥३॥ श्रीगिरनारशिखर बिख्यात । कोड़ि
वहसर अरु सौ सात ॥ संबु प्रदुस्र कुमर द्वै भाय । अनिरुधआदि

नमूँ तसु पाय ॥ ४ ॥ रामचन्द्रके सुत द्वै वीर । लाडनहिंद आदि गुणधीर ॥ पांच कोड़ि मुनि मुक्तिमभार । पावागिरि वंदौँ निरधार ॥ ५ ॥ पांडव तीन द्रविड राजान । आठकोड़ि मुनि मुक्ति पयान ॥ श्रीशत्रुंजयगिरिके शीस । भावसाहित वंदौँ निश दीस ॥ ६ ॥ जे बलिभद्र मुक्तिमें गये । आठकोड़ि मुनि औरहिं भये ॥ श्रीगजपंधशिखर सुविशाल । तिनके चरण नमूँ तिहुं काल ॥ ७ ॥ राम हनू सुग्रीव सुडील । गवगवाख्य नील महानील ॥ कोड़ि निन्याणवें मुक्तिपयान । तुंगोगिरि वंदौँ धरि ध्यान ॥ ८ ॥ नङ्ग अनङ्ग कुमार सुजान । पञ्चकोड़ि अरु अर्धप्रमान ॥ मुक्ति गये सिङ्गुनागिरसीस । ते वंदौँ त्रिभुवनपति ईस ॥ ९ ॥ रावणके सुन आदि कुमार । मुक्ति गये रेवातट सार ॥ कोड़ि पञ्च अरु लाख पचास । ते वंदौँ धरि परम हुलास ॥ १० ॥ रेवानदी सिद्ध वरकूट । पश्चिमदिशा देह जहं छूट ॥ द्वै चक्री दश कामकुमार । ऊठकोड़ि वंदौँ भवपार ॥ ११ ॥ बड़वाणी वड़नयर सुचङ्ग दक्षिण दिश गिरिचूल उतङ्ग ॥ इंद्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण । ते वंदौँ भवसागरतर्ण ॥ १२ ॥ सुवरणभद्रआदि मुनि चार । पावागिरिवर शिखरमभार ॥ चेलना नदी तीरके पास । मुक्ति गये वंदौँ नित तास ॥ १३ ॥ फलहोड़ी बड़गाम अनूप । पश्चिमदिशा द्रोणगिरिरूप ॥ गुरुदत्तादि मुनीसुर जहां । मुक्ति गये वंदौँ नित तहां ॥ १४ ॥ बाल महाबाल मुनि दोय । नागकुमार मिले त्रय होय ॥ श्रीअष्टापद मुक्तिमभार । ते वंदौँ नित सुरतसंभार ॥ १५ ॥ अचलापुरकी दिश ईशान । तहां मेढगिरि नाम प्रधान ॥ साढ़े तीन कोड़ि मुनिराय । तिनके चरण नमूँ चित लाय ॥ १६ ॥ वंशखल बनके ढिग होय । पश्चिमदिश

कुंथगिरि सोय ॥ कुलभूषण देशभूषण नाम । तिनके चरणन करूँह
प्रणाम ॥ १७ ॥ जसस्थराजाके सुत कहे । देशकलिंग पांचसौ लहे ॥
कोटि शिला मुनि कोटिप्रमान । बंदन करूँ जोर जुगपान ॥ १८ ॥
समवसरण श्रीपार्श्वजिनंद । रेसंदीगिरि नयनानन्द ॥ वरदत्तादि
पंच ऋषिराज । ते वंदौं नित धरमजिहाज ॥ १९ ॥ तीन लोकके
तीरथ जहां । नित प्रति बंदन कीजे तहां । मन वच कायसहित
सिर नाय । बंदन करहिं भविक गुण गाय ॥ २० ॥ संवत सतरहसौ
इकताल । अश्विन सुदि दशमो सुविशाल ॥ “भैया” बंदन करहि
त्रिकाल जय निर्वाणकांड गुणमाल ॥ २१ ॥

इति निर्वाणकांड भाषा ।

१६ महावीराष्टकस्तोत्रम् ।

शिक्षरिणी छन्दः ।

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः । समं भांति ध्रौव्य-
व्ययजनिलसन्तोऽन्तरहिताः ॥ जगत्साक्षो मार्गप्रकटनपरो भानु-
रिव यो । महावीरस्वामी नयनपथगामो भवतु मे (नः) ॥ १ ॥ अताम्रं
यञ्चभ्रुः कमलयुगलं स्पन्दरहितं । जानान्कोपापायं प्रकटयति
वाभ्यन्तरमपि ॥ स्कूटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वाति विमला ।
महावीर० ॥ २ ॥ नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणिभाजालजटिलं । लस-
त्पादाभोजद्वयमिह यदीयं तनुभृतां ॥ भवज्ज्वाला शान्त्यै प्रमथति
जल वा स्मृतमपि । महावीर० ॥ ३ ॥ यदर्द्धाभावेन प्रमुदितमना
ददुर इह । क्षणादासीत्स्वर्गो गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ॥ लभन्ते
सद्गताः शिवसुखसमाजं किमु तदा । महावीर० ॥ ४ ॥ कनत्स्वर्णा-

भासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो । विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धा-
 र्थतनयः ॥ अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिः । महावीर०
 ॥ ५ ॥ यदीया चाग्ङ्गा विविधनयकल्लोलविमला । बृहज्ज्ञानाम्भो-
 भिर्जगति जनतां या स्नपयति ॥ इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः
 परिचिता । महावीर० ॥ ६ ॥ अनिवारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम-
 सुभटः । कुमारवस्थायामपि निजवलाद्येन विजितः ॥ स्फुरन्नि-
 त्यानन्द प्रशमपदराज्याय स जिनः । महावीर० ॥ ७ ॥ महामोहा-
 तङ्कुप्रशमनपराकस्मिकमिषग् । निरापेक्षो बन्धुर्विदितमहिमा मङ्ग-
 लकरः ॥ शरण्यः साधूनां भवभयभृत्तामुत्तमगुणो । महावीर०
 ॥ ८ ॥ महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतम् । यः पठेच्छु-
 ण्याश्चापि स याति परमां गतिम् ॥ ९ ॥

१७ महावीराष्टक भाषा

पं० गजाधरलालजी, न्यायतीर्थ

जिन्होंकी प्रज्ञामें, मुकुरसम चैतन्य जड़ भी, स्थितो नाशोत्पत्ती,
 युत भलकते साथ सब ही । जगद्ज्ञाता मार्ग, प्रकट करते सूर्य-
 सम जो, महावीरस्वामी, दर्श हमको दें प्रकट वे ॥ १ ॥ जिन्होंके
 दो चक्षू, पलक अरु लाली रहित हो, जनोंको दर्शाते, हृदयमन
 कोघातिलयको । जिन्होंकी शांतात्मा, अतिविमलमूर्ती स्फुटमहा,
 महावीरस्वामी, दर्श हमको दें प्रकट वे ॥ २ ॥ नमते इंद्रोंके, मुकुट-
 मणिकी कांति धरता, जिन्होंके पादोंका युग, ललित, संतत
 जनको । भवाग्नीका हर्ता, स्मरण करते ही सुजल है, महावीर-
 स्वामी, दर्श हमको दें प्रकट वे ॥ ३ ॥ जिन्होंकी पूजासे, मुदित-

मन हो मेंढक जवै, हुआ स्वर्गो ताहो, समय गुणधारो अति-
सुखी । लहै जो मुक्तीके, सुख भगत तो विस्मय कहा, महावीर-
स्वामी, द्रश हमको दें प्रगट वे ॥ ४ ॥ तपे सोने ज्यों भी, रहित
बपुसे, ज्ञानगृह हैं, अकेले नाना भी, नृपतिवर सिद्धार्थ सुन-हैं ।
न जन्मे भी श्रीमान्, भवरत्न नहीं अद्भुतगती, महावीरस्वामी द्रश
हमको दें प्रकट वे ॥ ५ ॥ जिन्होंकी वाग्गंगा, अमल नयकल्लोल
धरती, न्हावाती लोगोंको, सुविमल महा ज्ञान जलसे । अभी
भी संते हैं, बुधजन महाहंस जिसको, महावीरस्वामी, द्रश
हमको दें प्रकट वे ॥ ६ ॥ त्रिलोकीका जेता, मदनभट जो दुर्जय
महा, युवावस्थामें भी, वह दलित कीना स्वबलसे । प्रकाशी
मुक्तीके, अतिसुसुखदाता जिनविभू, महावीरस्वामी, द्रश हमको
दे प्रकट वे ॥ ७ ॥ महामोहव्याधो, हरणकरता वैद्य सहज, बिना
इच्छा बंधू, प्रथितजग कल्याण करता । सहारा भव्योंको सकल
जगमें उत्तम गुणी, महावीरस्वामी, द्रश हमको दें प्रकट वे ॥ ८ ॥

संस्कृत वीराष्टक रच्यो, भागवन्द रुचिवान ।

तस भाषा अनुवाद यह, पढ़ि पावे निर्वान ॥ ६ ॥

१८ अकलंक स्तोत्र ।

शार्दूल विक्रीडित छन्द ।

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सलोकमालोकितम् । साक्षा-
द्येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि ॥ रागद्वेषभया मया-
न्तकजरा लोलबलोभादयो, नालं यत्पदलघनाय स महादेवो मया
बध्यते ॥ १ ॥ द्रष्टुं येन पुरत्रयं शरभवा तीव्राविंश बन्धिना ।

यो वा वृत्तिरिति मत्तवत्पितृवने यस्यात्मजो वा गुहः ॥ सोऽयं किं
मम शङ्करो भयतृपारोषार्तिमोहक्षयं । कृत्वा यः स तु सर्ववित्तनुभृ-
तां क्षेमकरःशङ्करः ॥ २ ॥ यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्देत्येन्द्रवक्षः-
स्थलम् । सारथ्येन धनञ्जयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान् ॥ नासौ
विष्णुरनेककालविधयं यज्ज्ञानमव्याहृतम् । विश्वं व्याप्य विजृम्भते
स तु महाविष्णुः सद्गुणो मम ॥ ३ ॥ ऊर्वश्यामुदपादि रागवहुलं
चेतो यदीयं पुनः । पात्री दण्डकमण्डलुप्रभृतयो यस्याकृतार्थस्थि-
तिम् ॥ आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्माभवेन्मादृशाम् । क्षुत्-
पणाश्रमरागरोगरहितो ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु नः ॥ ४ ॥ योज्यध्वा-
पिशितं समत्स्यकवलं जीवं च शून्यं बद्धम् । कर्त्ता कर्मफलं न भुंक्त
इति यो बक्ता स बुद्धः कथम् ॥ यज्ज्ञानं क्षणवर्ति वस्तु सकले ज्ञातुं
न शक्तः सदा । यो जानन्पुण्यपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात्सबुद्धो मम ॥ ५ ॥

स्वर्गधरा छन्द-ईशः किं छिन्नलिंगो यदि विगतभयः शूल-
पाणिः कथं स्यात् । नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः
सात्मजश्च ॥ आर्द्राजः किन्त्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मा-
न्तरायः । सक्षपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धामानुपास्ते
॥ ६ ॥ ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेग विभ्रान्तचेताः । शम्भुः
खट्वाङ्गधारीगिरिपतितनयापांग लीलानुविद्धः । विष्णुश्चकाधिपः
सन्दुहितरमगमेद्रोपनाथस्य मोहादर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभयः
कोऽयमेवाप्तनाथः ॥ ७ ॥

शार्दूल विक्रोडित छन्द-एको नृत्यति विप्रसार्य ककुभां चक्रं
सहस्रं भुजानेकः शेषभुजङ्गभोगशयने व्याधाय निद्रायते । दृष्टुं
चारुतिलोत्तमामुखमगा देकश्चतुर्वक्त्रता । मेते मुक्तिर्षयं वदन्ति वि-
दुषा मित्येतदत्यद्भुतम् ॥ ८ ॥

स्रग्धरा छन्द- यो विश्वं वेदवेद्यं जननजलनिधेर्मङ्गिणः पार-
दृष्ट्वा पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम् । तं वन्दे
साधुवन्द्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषंतं बुद्धं वा वर्द्धमानं
शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥ ६ ॥

शार्दूलबिक्रीडित छन्द- मायानास्ति जटाकपालमुकुटं चद्रो न
मूर्द्धावला खट्वाङ्गं न च वासुकिर्न च धनुःशूलं न चौघ्रं मुख ।
कामो यस्य न कामिनो न च वृषो गीतं न नृत्यं पुनः सोऽस्मान् पा-
तु निरञ्जनो जिनपतिः सर्वत्रसूक्ष्मः शिखः ॥ १० ॥ नो ब्रह्मांकितभूतलं
न च हरः शम्भोर्न मुद्राङ्कितं नो चन्द्रार्ककराङ्कितं सुरपतेर्वज्रांकितं
नैव च । पङ्क्ताङ्कितं बौद्धदेव हुतभुज्यक्षोर्गैर्नाङ्कितं नग्नं
पश्यत वादिनो जगदिदजैनेन्द्रमुद्रांकितं ॥ ११ ॥ मौञ्जी दण्डकम-
ण्डलु प्रभृतयो नो लाञ्छनं ब्रह्मणो । रुद्रस्यापि जटाकपालमुकुटं
कौपीनखट्वाङ्गना । विष्णोश्चक्रगदादि शङ्खमलं बुद्धस्य रक्ता-
म्बरं । नग्नं पश्यतवादिनोजगदिदं जैनेन्द्रमुद्राङ्कितम् ॥ १२ ॥ नाह-
ङ्कारवशी कृतेन मनसा न द्वेषिणा केवलं । नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति
जने कारुण्यबुद्ध्या मया । राज्ञः श्रोहिमशीतलस्य सदसि प्रायो वि-
दग्धान्मनो बौद्धोद्यान्सकलान् विजित्य सघटः पादेनविस्फालितः ॥

स्रग्धराछन्द- खट्वाङ्गनैवहस्ते न च हृदि रचिता लम्बते मुण्ड-
माला । भस्माङ्गं नैवशूलं न च गिरिदुहिता नैव हस्ते कपालं
चन्द्रार्द्धं नैव मूर्दन्यपि वृषगमनं नैव कण्ठे फणीन्द्र । तं वन्दे
त्यक्तदोषं भवभयमथनं चेश्वरं देवदेवं ॥ १४ ॥

किं वाद्योभगवानमेयमहिमा देवोऽकलङ्कः कलौ, काले योजन-
तासुधर्मं निहितो देवोऽकलङ्कोजिनः । यस्यस्फारविवेक मुद्गलहरो

जालेऽप्रमेयाकुला, निर्मग्ना तनुतेतरां भगवती ताराशिरः कम्पनम्
॥१५॥ सा तारा खलु देवता भगवती मन्यापिमन्यामहे, षण्मासा-
वधि जाड्य सांख्यभगवद्ब्रह्मकलंकप्रभोः । वाक्कलोल परम्पराभिर-
मतेनूनं मनोमज्जन व्यापारं सहतेस्म विस्मितमतिः सन्ताडितेन-
स्ततः ॥ १६ ॥ इति श्रीअकलङ्कस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

१६ भक्तामर-स्तोत्रम् ।

वसन्ततिलका वृत्तम् ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणामुद्योतकं दलितपापतमो विना-
नम् । सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादावालम्बनं भवजले पततां
जनानाम् ॥ १ ॥ यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्व बोधादुद्भूतबुद्धि
पटुभिः सुरलोकनाथैः । स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैस्तोष्ये कि-
लाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥ २ ॥ बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपाद-
पीठ स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम् । बालं विहाय जलसं-
स्थितमिन्दुविम्ब मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ॥ ३ ॥ वक्तुं
गुणान् गुणसमुद्रशशाङ्ककान्तान् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि
बुद्ध्या । कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रवकं को वा तरीतु मलमम्बु-
निधिं भुजाभ्याम् ॥ ४ ॥ सोऽहं तथापि तव भक्ति वशान्मुनीश कर्तुं
स्नवं विगतिशक्तिरपि प्रवृत्तः । प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य सृगो सृगेन्द्रं
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥ ५ ॥ अल्पश्रुतं श्रुतवतां
परिहासधाम त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुहते बलान्माम् । यत्कोकिलः
किल मयौ मधुरं विरौति तच्चान्नचारुकलिकानिकरैरुहेतुः ॥ ६ ॥
त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसंनिबद्धं पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभा-

जाम् । आक्रान्तलोकमलिनीलनशेषमाशु सूर्यांशुभिन्नमिव शार्ध्व-
मन्धकारम् ॥ ७ ॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेदमारभ्यते तनु-
धियापि तव प्रभावात् । चेतोहरिष्यति सतां नलिनीदलेषु मुक्ताफ-
लद्युतिमुपैति ननूदघिन्दुः ॥ ८ ॥ आस्तां तवस्तवनमस्तसमस्तदोषं
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति । दूरे सहस्रकिरणः कुस्ते
प्रभैव पद्माकरेषु जलजानि विकाशमाञ्जि ॥ ९ ॥ नात्यद्भुतं भुवन-
भूषण भूतनाथ भूतेर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः । तुल्याभवन्ति
भवतो ननु तेन किं वा भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥ १० ॥
दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं नान्यत्र तोषमुपयाति जनम्य
चक्षुः । पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धोः क्षारं जलं जलनिधे-
रसितुं क इच्छेत् ॥ ११ ॥ यैः शान्तरागहृदिभिः परमाणुभिस्त्वं
निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत् ! तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः
पृथिव्यां यन्ते समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥ १२ ॥ वक्त्रं कते सुर-
नरोरगनेत्रहारि निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम् । विम्वं कलङ्क-
मलिनं क निशाकरस्य यद्वासरे भवति पाण्डुपलाश-कल्पम् ॥ १३ ॥
सम्पूर्णमण्डलशशाङ्ककलाकलाप शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लङ्घ-
यन्ति । ये संध्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं कस्तान्निवारयति सञ्च-
रतो यथेष्टम् ॥ १४ ॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभिर्नीतं मना-
गपि मनो न विकारमार्गम् । कल्पान्त कालमरुता चलितचलेन
किं मन्दिराद्विशिष्यं चलितं कदाचित् ॥ १५ ॥ निर्धूमवर्तिरपव-
र्जिततैलपूरः कृत्स्नं जगत्त्रय मिदं प्रकटीकरोषि । गम्यो न जातु
मरुतां चलितचलानां दोषोऽपरस्त्वमसि नाथ जगत्प्रकाशः ॥ १६ ॥
नाम्नं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्ज-

गन्ति । नाम्मोघरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासि मुनो-
 न्दलोके ॥ १७ ॥ नित्योदयं दलितमोहमहान्धकारं गम्यं न राहु-
 बदनस्य न बारिदानाम् । विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्प कान्ति वि-
 द्योतयज्जगदपूर्वशशङ्कु विम्बम् ॥ १८ ॥ किं शर्वरीषु शशिनाह्नि
 विवस्वता वा युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमःसु नाथ । निष्पन्नशालिवन-
 शालिनि जीवलोके कार्यं कियज्जलत्रैजलमारनघ्रैः ॥ १९ ॥ ज्ञानं
 यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
 तेजोमहामणिषु याति यथा महत्त्वं नैवं तु काच शकले किरणा-
 कुलेऽपि ॥ २० ॥ मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु हृदयं
 त्वयि तोषमेति । किं वीक्षितेन भयता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मना
 हरति नाथ भवान्तरेपि ॥ २१ ॥ स्त्रोणां शतानि शतशो जनयन्ति
 पुत्रान् नान्या सुतं त्वदुष्मं जनतो प्रसूता । सर्वा दिशो दधति
 भानि सहस्ररश्मो प्राच्येव दिज्जनयति स्फुरद्दंशुजालम् ॥ २२ ॥
 त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमासमादित्यवर्णममलं तमसः पुर-
 स्तात् । त्वामेव सस्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिव
 पदस्य मुनोन्द्र पत्न्याः ॥ २३ ॥ त्वामवश्यं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं
 ब्रह्माणमोश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् । योगोत्तरं त्रिदितयोगमनेक-
 मेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥ २४ ॥ बुद्धस्त्वमेव विबु-
 धार्चितबुद्धिबोद्धात्त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्रयशंकररत्नवात् । ध्या-
 तासि धीर शिवमागंविधेर्विधानाद्वयकं त्वमेवभगवन्पुरुषोस्त
 मोऽसि ॥ २५ ॥ तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ ! तुभ्यं
 नमः क्षितितलामलभूषणाय । तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
 तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशीषणाय ॥ २६ ॥ कोविस्मयोऽत्र यद्दि

नाम गुणैरशेषै स्त्वंसंश्रितो निरवकाशतया मुनीश । दोषैरु पात्त-
व बुधाश्रयजातगर्वैः स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपोक्षितोऽसि ॥२७॥
उच्चै रशोकतरुसंश्रितमुन्मयूखमाभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमोवितानं बिम्बं रवेरिव पयोधरपाश्ववति
॥ २८ ॥ सिंहासने मणिमयस्त्रिशिखा विचित्रे विभ्राजते तव वपुः
कनकाक्षदातम् । बिम्बं वियद्विल सदंशुलतावितानं तुङ्गे दयाद्रि-
शिरसीव सहस्ररश्मेः ॥२९॥ कुन्दावदातचलचामरवाक्शोभं विभ्रा-
जते तव वपुः कलधौत कान्तम् । उद्यच्छशाङ्कुशुचिनिर्भरवारिधार
मुखै स्तटं सुरगिरे रिव शातकौम्भम् ॥३०॥ छत्रत्रयं तव विभाति
शशाङ्ककान्त मुखैः स्थितं स्थगितभानुकर प्रतापम् । मुक्ताफलप्र-
करजाल विवृद्धशोभं प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥ ३१ ॥
गम्भीरतारवपूरितदिग्विभागस्त्रैलोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः ।
सद्धर्मराजजयघोषणघोषकः सन् खेदुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः
प्रवादी ॥ ३२ ॥ मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजातसन्तानकादिकु-
सुमोत्करवृष्टिरुद्धा । गन्धोदविन्दु शुभमन्दमरुत्प्रयाता दिव्या
दिवः पतति ते वयसां ततिर्वा ॥ ३३ ॥ शुभमत्प्रभावलयभू-
रिविमा विभोस्ते लोकत्रये द्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्तिः । प्रोद्य-
द्दिवाकर निरन्तर भूरि संख्या दीपत्या जयत्यपि निशामपि सोम-
सोम्याम् ॥ ३४ ॥ स्वर्गापवर्गगममार्ग विमार्गणेष्टः सद्धर्मतत्त्व-
कथनैकपटुस्त्रिलोकाः । दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्वभा-
षास्वभाव परिणामगुणैः प्रयोज्यः ॥ ३५ ॥ उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्ज-
कान्तो पर्युल्लसन्लम्बयूखशिखाभिरामौ । पादौ पदानि तव यत्र
जिनेन्द्रधत्तः पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥ ३६ ॥ इत्थं

यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य ।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा तादृक्कुतो ग्रहगणस्य वि-
कासिनोऽपि ॥ ३७ ॥ श्च्योतन्मदाविलविलोकपोलमूल मत्त-
भ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम् । ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं दृष्ट्वा
भयं भवतिनो भवदाश्रितानाम् ॥ ३८ ॥ भिन्नेभकुम्भगलदुज्जल-
शोणिताक्तमुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः । बद्धक्रमः क्रमगत
हरिणाधिपोपि नाक्रामति क्रमयुगावलसंश्रितं ते ॥ ३९ ॥ कल्पा-
न्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पं दावानलं ज्वलतमुज्ज्वलमुत्स्फु-
लिङ्गम् । विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं त्वन्नामकीर्तन-
जलं शमयत्यशेषम् ॥ ४० ॥ रक्तक्षेत्रं समदकाकिलकण्ठनीलं क्रीडा-
ङ्गतं फणितमुत्फणमापतन्तम् । आक्रामति क्रमयुगेन निरस्य
शङ्कुस्त्वचामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥ ४१ ॥ बलगत्तुरंगज-
गजितभीमनाद माजौ बलं बलवतामपि भूषोतनामः उद्यद्वा-
कमयूखशिखापविद्धं त्वकीर्तनात्तम इवाशुमिदामुपेति ॥ ४२ ॥
कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाहवेगावतारतरणानुरयोधभीमे ।
युद्धे जयं विजितदुजयजेयपक्षास्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो ल-
भन्ते ॥ ४३ ॥ अम्भोनिधो श्रुमितभोषणनक्रवकपाठोनपीठभय-
दोलवणवाङ्वाग्नौ । रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयान-पात्रस्त्रासं विहाय
भवतः स्मरणाद्ब्रजन्ति ॥ ४४ ॥ उद्भूतभौषणजलोदरभार-
भुग्नाः शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजोवताशाः । त्वत्पादपङ्कज-
रजोमृतदिग्धदेहा मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ॥ ४५ ॥
आपादकण्ठमुखगृह्णन्वेष्टिताङ्गा गाढं वृहन्निगङ्काटिनिवृष्ट-
जङ्घाः । त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतव-

न्यभया भवति ॥ ४६ ॥ मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहि संग्राम
वारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् । तस्यासु नाशमुपयात भयं भियेव
यस्ताववं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥ ४७ ॥ स्तोत्रस्त्रजं तव
जिनेन्द्र गुणोर्निविद्धां भक्त्या मया विविधवर्णविचित्रपुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठगतमजस्रं तं मानतुङ्गमवशा समुपैति
लक्ष्मीः ॥ ४८ ॥

॥ इति श्रीमानतुङ्गाचार्यविरचितं भक्तामरस्तोत्रं ॥

२० कल्याणमन्दिरस्तोत्रं ।

कल्याणमन्दिरमुदारमवद्यभेदि भोताभयप्रदमनिन्दितङ्घ्रिपद्मम् ।
संसारसागरनिमज्जदशेषजंतुपोतायमानपद्मिनस्य जिनेश्वरस्य ॥१॥
यस्य स्वयं सुरगुरुगरिमाम्बुराशेः स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्वि-
धातुम् । तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूमकेतोस्तस्याहमेव किल संस्त-
वनं करिष्ये ॥२॥ युग्मम् ॥ सामान्यतोऽपि तव वणयितुं स्वरूप-
मस्मादृशाः कथमधीश भवन्त्यधीशाः । धृष्टोऽपि कौशिकशिशु-
यदि वा दिवान्धो रूपं प्ररूपयति किं किल घमेश्वरः ॥ ३ ॥ मोह
क्षयादनुभवन्नपि नाथ मर्त्यो नूनं गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत ।
कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मान्मीयेत केन जलधेर्ननु रत्न-
राशिः ॥ ४ ॥ अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ जडाशयोऽपि कर्तुं स्तवं
लसदसंख्यगुणाकरस्य । बालोऽपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य
विस्तोर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ॥ ५ ॥ ये योगिनामपि न
यान्ति गुणास्तवेश वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः । जाता
तदेवमसमीक्षितकारितेयं जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽ-

पि ॥ ६ ॥ आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन संस्तवस्ते नामापि पाति
 भवतो भवतो जमन्ति । तीव्रातपोपहतपान्थजनान्निदाघे प्रीणाति
 पञ्चसरसः सरसोऽनिलोऽपि ॥ ६ ॥ हृद्वर्तिनि त्वयि विभो शिथिली
 भवन्ति जन्तोः क्षणेन निषिडा अपि कर्मबन्धा । सद्यो भुजङ्ग-
 ममया इव मध्यभागमव्यागते वनशिखण्डिनो चन्दनस्य ॥ ८ ॥
 मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र रौद्रैरुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षि-
 तेऽपि । गोम्बामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टमात्रं चौरैरिवाशु पशवः
 प्रपलायम नैः ॥ ९ ॥ त्वं तारको जिन कथं भविनां त एव त्वामु-
 द्बहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः । यद्वा दूतिस्तरति यज्जलमेव नून-
 मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ॥ १० ॥ यस्मिन्हरप्रभृतयाऽ
 पि हतप्रभावाः सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन । विध्या-
 पिता हुतभुजः पयसाथ येन, पीतं न किं तदपि दुर्द्धरवाडवेन
 ॥ ११ ॥ स्वामिन्नतलपरिमाणतपि प्रपन्तास्त्वां जन्तवः कथमहो
 हृदये दधानाः । जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन चिन्त्यो न
 हन्त महतां यदि वा प्रभावः ॥ १२ ॥ क्रोधस्त्वया यद् विभो
 प्रथमं निरस्तो ध्वस्तस्तदा वद कथं किल कमचौराः । प्लोषत्यमुत्र
 यदि वा शिशिरापि लोके नोलद्रमाणि विपिनानि न किं हिमानी
 ॥ १३ ॥ त्वां योगिनो जिन सदा परमात्मरूप-मन्वेपयन्ति हृदया-
 म्भुजकोशदेश । पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य-दक्षस्य सम्भव-
 पदं ननु कारिणिकायाः ॥ १४ ॥ ध्यानाज्जिनेश भवतो भविनः क्षणेन
 देहं विहाय परमात्मज्ञां व्रजन्ति । तीव्रानलादुपलभावमपास्य
 लोके चाप्रीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः ॥ १५ ॥ अन्तः सदैव जिन
 यस्य विभाव्यसे त्वं भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम् । एत-

त्स्वरूपमथ मध्यविवर्तिनो हि यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः
 ॥ १६ ॥ आत्मा मनोषिभिर्यं त्वदभेद बुद्ध्या । ध्यातो जिनेन्द्र
 भवतोह भवत्प्रभावः । पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं किं नाम
 नो विषविकारमपाकरोति ॥ १७ ॥ त्वामेव वीततमसं पर्यादिनोऽपि
 नूनं विभो हस्तिरादिधिया प्रपन्ताः । किं काचकामलिभिरीश
 सितोऽपि शङ्को नो गृह्यते विविधवर्णविपर्ययेण ॥ १८ ॥ धर्मोपदेश-
 समये सविधानुभावा-दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः । अ-
 भ्युद्गते दिनपतौ स महोरुहोऽपि किं वा विबोधमुपयाति न जीव-
 लोकः ॥ १९ ॥ चित्रं विभो कथमवाङ्मुखवृन्तमेव विष्वक्पतत्य-
 विरला सुरपुष्पवृष्टिः । त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश ! गच्छ-
 न्ति नूनमथ एव हि बन्धनानि ॥ २० ॥ स्थाने गभोरहृदयोदधिसम्भ-
 वायाः पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति । पीत्वा यतः परमसंमद-
 सङ्गभाजो भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम् ॥ २१ ॥ स्वामिन्सुदू-
 रमवनस्य समुत्पतन्तो मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघाः । येऽस्मै
 नति विदधते मुनिपुङ्गवाय ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः ॥ २२ ॥
 श्यामं गभोरगिरमुज्ज्वलहेमरत्नसिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिन-
 स्त्वाम् । आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चैश्चामोकराद्रिशिरसीव
 नवाम्बुवाहम् ॥ २३ ॥ उद्गच्छता तव शितियुतिमण्डलेन लुप्त-
 च्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव । सांनिध्यतोऽपि यदि वा तव वीत-
 राग ! नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥ २४ ॥ भो भो
 प्रमादमवधूय भजध्वमेनमागत्य निर्वृतिपुरीं प्रति सार्थवाहम् ।
 एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते ॥
 ॥ २५ ॥ उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ तारान्वितो विधु-

रयं विहताधिकारः । मुक्ताकलापकलितोरुसितातपत्रव्याजातित्रधा
 धृतधनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥ २६ ॥ स्वेन प्रपूरितजगत्त्रयपिण्डितेन-
 कान्तिप्रतापयशसामिव सञ्चयेन । माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन
 सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि ॥ २७ ॥ दिव्यस्रजो जिन नमस्त्रि-
 दशाधिपानामुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान् । पादौ श्रयन्ति
 भवतो यदि वा परत्र त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव ॥ २८ ॥
 त्वं नाथ जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोऽपि यत्तारयस्त्यसुमतो निज-
 पृष्ठलग्नान् । युक्तं हि पार्थिवनिपस्य सतस्तवैव चित्रं विभो
 यदसि कमंविपाकशून्यः ॥ २९ ॥ विश्वेश्वरोऽपि जनपालक दुः-
 तस्त्वं किं वाक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश । अज्ञानवत्यपि सदैव
 कथंचिदेव ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकासहेतुः ॥ ३० ॥ प्रा-
 ग्भारसम्भृतनमांसि रजांसि रोषादुत्थापितानि कमठेन शठेन
 यानि । छायापि तेस्तव न नाथ हता हताशो ग्रस्तस्त्वमीभिर-
 यमेव परं दुरात्मा ॥ ३१ ॥ यद्गर्जद्गूर्जितघनौघमदभ्रभीमं
 भ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरधारम् । दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि
 दध्रे तेनैव तस्य जिन दुस्तरवारिकृत्यम् ॥ ३२ ॥ ध्वस्तोर्ध्व-
 केशविकृताकृतिमत्येमुण्डप्रालम्बभृद्वयदवकत्रविनिर्यदग्निः । प्रेन-
 व्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भवदुःख-
 हेतुः ॥ ३३ ॥ धन्यास्त एव भुवनाधिप ये त्रिसन्ध्यमाराधयन्ति
 विधिर्वद्विभुतान्यकृत्वाः । भक्तयोऽसत्पुलकपद्मलदेहदेशाः पाद
 द्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ॥ ३४ ॥ अस्मिन्नपारभववा-
 रिनिधौ मुनीश ! मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि आकर्णिते
 तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे किं वा विपद्भिष्यदरी सखिध्रं समेति ॥ ३५ ॥

जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं न देव ! मन्ये मया महितमीहितदान-
दक्षम् । तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवानां जातो निकेतनमहं म-
थिताशयानाम् ॥ ३६ ॥ नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन पूर्वं विभो
सकृदपि प्रविलोकितोऽसि । मर्माविधा (भिदो) विधुरयन्ति हि मामनर्थाः
प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते ॥ ३७ ॥ आकर्णितोपि महितोऽपि
निरीक्षितोपि नूनं न चेतसि मया बिभृतोऽसि भक्त्या । जातोऽ-
स्मि तेन जनबांधव दुःखपात्रं यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव-
शून्याः ॥ ३८ ॥ त्वं नाथ दुःखिजनवत्सल हे शरण्य कारुण्यवसते
वशिनां वरेण्य । भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय दुःखाङ्कुरो-
द्गलनतत्परतां विधेहि ॥ ३९ ॥ निःसंख्यसारशरणं शरणं शरण्यमा-
साद्य सादितरिपुप्रथितावदानम् । त्वत्पादपङ्कजमपि प्रणिधानव-
न्ध्यो वन्ध्योऽस्मि तद्वुवनपावन हा हतोऽस्मि ॥ ४० ॥ देवेन्द्रवन्द्य
विदिताखिलवस्तुसार संसारतारक विभो भुवनाधिनाथ । त्राय-
स्व देव करुणाहृद मां पुनीहि सोदन्तमद्य भयदव्यसनान्वुराशोः ॥ ४१ ॥
यद्यस्ति नाथ भवदङ्घ्रिसरोरुहाणां भक्तोः फलं किमपि सन्ततस-
ञ्चितायाः । तन्मे त्वदेकशरणस्य शरण्य भूयाः स्वामी त्वमेव
भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ॥ ४२ ॥ इत्थं समाहितधियो विधिवज्जिनेन्द्र
सान्द्रोल्लसत्पुलककञ्चुकिताङ्गभागाः । त्वद्विम्बनिर्मलमुखाम्बुजव-
दलक्ष्याः ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः ॥ ४३ ॥ जननयन-
कुमुदचन्द्र—प्रभास्वराः स्वर्गसम्पदो भुक्त्वा । ते विगलितमलनि-
चया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते ॥ ४४ ॥



२१ कल्याण मन्दिर (भाषा)

दोहा—परमज्योति परमात्मा, परमज्ञान परवीन ।

बंदू परमानन्दमय, घट घट अन्तर लीन ॥

चौपाई ।

निर्भय करण परम परधान । भव समुद्र जल तारण यान ॥
 शिव मन्दिर अग्रहरण अनिन्द । वन्दू पाश्वे चरण अरविन्द ॥१॥
 कमठ मान भञ्जन बरवीर । गरिमा सागर गुण गम्भीर ॥
 सुर गुरु पारि लहै नहिं जासु । मैं अजान गुणु जम्पू तासु ॥२॥
 प्रभु स्वरूप अति अगम अथाह । क्यों हमसे यह होय निबाह ॥
 ज्यों दिन अन्ध उलूको पोत । कहि न सकै रवि किरण उद्योत ॥३॥
 मोह होन जानै मन माहिं । तोहि न तुल गुण बरणे जाहिं ॥
 प्रलय पयोधि करै जल बौन । प्रगटहि रत्न गिने तिहि कौन ॥४॥
 तुम असंख्य निर्मल गुण खान । मैं मनिहीन कहौं निज बान ॥
 उयों बालक निज बाहिं पसार । सागर परिमित कहे बिचार ॥५॥
 जो योगोन्द्र करहिं तप खेद । तेउ न जानहिं तुम गुण भेद ॥
 भक्ति भाव मुझ मन अभिलाष । ज्यों पक्षी बोलैं निज भाष ॥६॥
 तुम यश महिमा अगम अपार । नाम एक त्रिभुवन आधार ॥
 आवै पवन पद्म सर होय । ग्रीष्म तपन निवारि सोय ॥७॥
 तुम आवत भविजन मन मांहिं । कमै निवन्ध शिथिल हो जाहिं ॥
 ज्यों चन्दन तरु बोलैं मोर । डरहिं भुजङ्ग चलैं चहुं ओर ॥८॥
 तुम निरखत जन दोन दयाल । सङ्कट तैं छूटै तत्काल ॥
 ज्यों पशु घेर लेहिं निशि चोर । ते तज भागहिं देखत भोर ॥९॥

तुम भविजन तारक किम होय । ते बितधार तिरहि ले तोय ॥
 यह ऐसे कर जान स्वभाव । तरहिं मशक ज्यों गर्भित बाव ॥१०॥
 जिन सब देव किये वश वाम । तिन छिनमें जीतो सो काम ।
 ज्यों जल करै अग्नि कुल हान । बड़वानल पीवै सोपान ॥११॥
 तुम अनन्त गुरुवा गुण लिये । क्यों कर भक्त धरै निज हिये ॥
 है लघु रूप तरहिं संसार । यह प्रभु महिमा अगम अपार ॥ १२ ॥
 क्रोध निवार कियो मन शान्ति । कर्म सुभट जीते केहि भांति ॥
 यह पटुनर देखहु संसार । नील वृक्ष ज्यों दहै तुषार ॥ १३ ॥
 मुनि जन हिये कमल निज टोहि । सिद्धस्वरूप सम ध्यावै तोहि ॥
 कमल कणिङ्का बिन नहिं और । कमल बीज उपजनकी ठौर ॥१४॥
 जब तुम ध्यान धरै मुनि कोय । तब विदेह परमात्म होय ॥
 जैसे धातु शिला तनु त्याग । कनक स्वरूप धरै जब आग ॥१५॥
 जाके मन तुम करहु निवास । बिलय जाय सब विग्रह तास ॥
 ज्यों महन्त बिव आवै कोय । विग्र मूल निवारै सोय ॥१६॥
 करहिं विविध जो आत्म ध्यान । तुम प्रभाव तें होय निदान ॥
 जैसे नीर सुधा अनुमान । पीवत विष विकारकी हान ॥ १७ ॥
 तुम भगवन्त विमल गुण लीन । समल रूप मानहिं मतिहीन ॥
 ज्यों नलिया रोग दृग गहै । वर्ण विवर्ण शङ्क सो कहै ॥ १८ ॥

दोहा—निकट रहित उपदेश सुन, तख्तर भयो अशोक । ज्यों
 रवि उगते जीव सब, प्रगट होत भुवि लोक ॥ १९ ॥ सुमन वृष्टि
 ज्यों सुर करहिं, हेठ बोट मुख सोय । त्यों तुम सेवत सुमन जन
 बन्ध अधोमुख होय ॥२०॥ उपजी तुम हिय उदधि तें वाणी सुधा
 समान । जिहिं पीवत भविजन लहै, अजर अमर पदधान ॥ २१ ॥

कहहिं सार तिहुंलोकको, यह सुर चामर होय । भाव सहित जो
जिन नमैं, तिस गति ऊरध होय ॥ २२ ॥ सिंहासन गिरि मेरु
सम, प्रभु घन सुरजत घोर । श्याम सुतन घनरूप लख, नाचत
भविजन मोर ॥ २३ ॥ छवि हित होय अशोक दल, तुम भाम-
ण्डल देख । चोतरागके निकट रह, रहै न राग विशेष ॥ २४ ॥
सीख कहै तिहुंलोकको, यह सर दुंदुभिनाद । शिव पथ सारथ्य
वाह जिन, भजो तजो परमाद ॥ २५ ॥ तीन छत्र त्रिभुवन उदित,
मुक्तागण छवि दैत । त्रिविध रूप धर मनहुं शशि, सेवत नखय
समेत ॥ २६ ॥

पद्मड़ी छन्द—प्रभु तुम शरीर दुति रत्न जेम, परनाप पुञ्जजिमि
शुद्ध हेम । अति धवल सुयश रूपा समान, तिनके गुण तीन विरा-
जमान ॥ २७ ॥ सेवहिं सुरेन्द्रकर नमन भाल, तिन सीस मुकुट
तज देय माल । तुम चरण लगत लहलहै प्रीत, नहिं रमहिं और
सुमन रीत ॥ २८ ॥ प्रभु भोग विमुख तन कर्म दाह, जन पार
करत भवजल निवाह । ज्यों माटी कलस सुपक्य होय, ले भार
अधोमुख निरै सोय ॥ २९ ॥ तुम महाराज निर्धन निरास, तुम
तज वैभव सब जग प्रकाश । अक्षर स्वभाव सेहि लिखे न कोय,
महिमा अनन्त भगवन्त होय ॥ ३० ॥ कोपियो कमठ निज बैर
देख, तिन करी धूलि वर्षा विशेष । प्रभु तुम छाया नहिं भई हीन,
सो भयो पापि लम्पट कलीन ॥ ३१ ॥ गरजत घोर घन अन्धकार,
चमकत विद्युत जल मुसलधार । वरपंत कमठ धर ध्यान रुद्र,
दुस्तर करन्त निज भव समुद्र ॥ ३२ ॥

वस्तु छन्द — भेजे तुरत पिशाच गण ! नाश पास उपसर्ग कारण ।
अग्नि जाल मूकत मुख । धुनि करत जिमि मत्तवारण ॥
काल रूप विकराल । तन रुण्डमाल निज कण्ठ ।
तुम निशंक यह रंक निज । करै कर्म दिहु गंठ ॥ ३३ ॥

चौपाई ।

जे तुम चरण कमल तिहुंकाल, सेवहिं तज माया जञ्जाल ।
भाव भक्ति मन हर्ष अपार, धन धन जगमें तिन अवतार ॥ ३४ ॥
भवसागर महिं फिरत अजान, मैं तुम सुयश सुनों नहिं कान ।
जो प्रभु नाम मन्त्र मन धरै, तासों विपति भुजङ्गन डरै ॥ ३५ ॥ मन
वांछित फल जिन पद मांहि । मैं पूरव भव पूजे नाहिं ॥ माया
मगन मैं फिरो अज्ञान । करहिं रङ्ग जन मुझ अपमान ॥ ३६ ॥
मोह निमिर छाये दृग मोहि । जन्मान्तर देखो नहिं तोहि ॥ तो
दुर्जन सङ्गति मुझ गहै । मरम छेदके कुबचन कहै ॥ ३७ ॥ सुनो
कान यश पूजे पांय । नेनन देखो रूप अघाय ॥ भक्ति हेतु न भयो
चिन्ताव । दुख दायक किया बिन भाव ॥ ३८ ॥ महाराज शर-
णागत पाल । पतित उधारण दीन दयाल ॥ सुमरण करूं नाथ
निज सीस । मुझ दुख दूर करो जगदीश ॥ ३९ ॥ कर्म निकन्दन म-
हिमा सार । अशरण शरण सुयश विस्तार ॥ नहिं सेवूं तुमरे
प्रभु पायं । तो मुझ जन्म अकारथ जाय ॥ ४० ॥ सुरपति बन्दित
दयानिधान । जगतारण जगपति जगयान ॥ दुखसागर ते मोहि
निकास । निर्भयथान देहु सुबरास ॥ ४१ ॥ मैं तुम चरण कमल
गुणगाय । बहुविधि भक्ति करी मनल्याय । जन्म जन्म प्रभु पाऊं
तोय । यह सेवा फल दीजे मोय ॥ ४२ ॥

रोडक छन्द—यहि विधि श्री भगवन्त सुयश जे भव जन भा-
बहिं । ते निश पुण्य भण्डार सञ्च चिर पाप प्रणासहिं ॥ रोम रोम
हुलसन्त अन्त प्रभु गुण मन ध्यावे । स्वर्ग सम्पदा भुञ्ज वेग पञ्चम-
गति पावें ॥४३॥

दोहा—यह कल्याण मन्दिर कियो, कुमुदचन्द्रकी बुद्ध ।

भाषा कहत बनारसी, कारण समकित शुद्ध ॥ ४४ ॥

२२ विषापहार स्तोत्र भाषा

दोहा—आत्म लीन अनन्त गुण, स्वामी ऋषभ जिनेन्द्र ।

नित प्रति बन्दित चरण युग, सुर नागेन्द्र नरेन्द्र ॥१॥

चौपाई ।

विश्व सुनाथ विमल गुण ईश । विहरमान बन्दों जिन बीस ॥
गणधर गौतम शारदमाय । बर दीजे मोहि बुद्धि सहाय ॥ २ ॥
सिद्ध साधु सत गुरु आधार । करूं कवित्त आत्म उपकार ॥ वि-
षापहार स्तवन उद्धार । सुख औषधी अमृतसार ॥ ३ ॥ मेरा मंत्र
तुम्हारा नाम । तुम हो गरुड़ गरुड़ समान ॥ तुम सम वैद्य नहीं
संसार । तुम स्याने तिहुं लोक मभार ॥ ४ ॥ तुम विषहरण करन
जग सन्त । नमो २ तुम देव अनन्त ॥ तुम गुण महिमा अगम
अपार । सुरगुरु शेष लहैं नहिं पार ॥ ५ ॥ तुम परमात्म परमा-
नन्द । कल्पवृक्ष यह सुखके कन्द ॥ मुदित मेरु नय मण्डित धीर ।
विद्यासागर गुण गम्भीर ॥ ६ ॥ तुम दधिमथन महा वरवीर ।
संकट विकट भय भञ्जन भीर ॥ तुम जगतारण तुम जगदीश ।
पतित उधारण विश्वे बीश ॥ ७ ॥ तुम गुणमणि विस्तारमणि

राश । विघ्नबेलि चितहरण चितास ॥ विघ्नहरण तुम नाम अनूप
मंत्र यंत्र तुमही मणिरूप ॥ ८ ॥ जैसे बज्र पर्वत परिहार । त्यों तुम
नाम जू विषापहार ॥ नागदमन तुम नाम सहाय । विषहर विष-
नाशक क्षणमाय ॥ ९ ॥ तुम सुमरण बिंते मनमांहिं । विष पीवे
अमृत हो जाहिं ॥ नाम सुधारस वर्षे जहां । पाप पङ्कमल रहै न
तहां ॥ १० ॥ ज्यों पारसके परसे लोह । निज गुण तज बंचनसम
होह ॥ त्यों तुम सुमरण साधे सूंच । नीच जो पावे पदवी ऊंच
॥ ११ ॥ तुमहिं नाम औषधि अनुकूल । महा मंत्र सर जीवन मूल ।
मूरख मर्म न जाने भेव । कर्म कलङ्क दहन तुम देव ॥ १२ ॥ तुम ही
नाम गारुड गह गहै । काल भुजङ्गम कैसे रहै ॥ तुम्ही धनन्तर हो
जिनराय । मरण न पावेको तुम ठाय ॥ १३ ॥ तुम सूरज उदकाघट
जास । संशय शीत न व्यापे तास ॥ जीवे दादुर वर्षे तोय । सुन
वाणी सरजीवन होय ॥ १४ ॥ तुम बिन कौन करै मुक्त पार । तुम
कर्त्ता हर्त्ता किरपाल ॥ १५ ॥ शरण आयो तुम्हरी जिनराज । अब
मो काज सुधारो आज ॥ मेरे यह धन पूंजी पूत । साह कहै घर
राखो सूत ॥ १६ ॥ करौं वीनती बारंबार । तुम बिन कर्म करैको
क्षार ॥ १७ ॥ विग्रह ग्रह दुख विपति वियोग । और जु घोर जलंधर
रोग ॥ चरण कमल रज टुक तन लाय । कुष्ट व्याधि दीरघ मिट
जाय ॥ १८ ॥ मैं अनाथ तुम त्रिभुवन नाथ । मात पिता तुम सज्जन
साथ ॥ तुम सा दाता कोई न आन । और कहां जाऊं भगवान
॥ १९ ॥ प्रभुजी पतित उधारन आह । बांह गहेकी लाज निबाह ॥
जहां देखों तहां तुमही आय । घट २ ज्योति रही ठहराय ॥ २० ॥ बाट
सुघाट विषम भय जहां । तुम बिन कौन सहाई तहां । विकट व्या-

धि व्यंतर जल दाह । नाम लेन क्षण मांहिं विलाह ॥२१॥ आचार्य
मानतुङ्ग अवसान । संकट सुमिरो नाम निधान ॥ भक्तामरकी
भक्ति सहाय । प्रण राखे प्रगटे निस ठाय ॥२२॥ चुगल एक नृप
विग्रह ठयो । वादिराज नृप देखन गयो ॥ एकीभाव कियो निस-
न्देह । कुष्ट गयो कञ्चन सम देह ॥२३॥ कल्याण मन्दिर कुमुद-चन्द्र
ठयो । राजा विक्रम विस्मय भयो ॥ सेवक जान तुम करी सहाय ।
पारसनाथ प्रगटै तिस ठाय ॥२४॥ गई व्याधि विमल मनि लही ।
तहां फुनि सनिधि तुमही कहो ॥ भवसुदत्त श्रीपाल नरेश । सागर
जल शंकट सुविशेष ॥२५॥ तहां पुनि तुम ही भये सहाय । आन-
न्दसे घर पहुंचे जाय ॥ सभा दुश्शासन पकड़ो वीर । द्रुपदी प्रण
राखो कर धीर ॥ २६ ॥ सोता लक्ष्मण दोनो साज । रावण जीन
विभोषण राज ॥ सेठ सुदर्शन साहस दियो । शूलीसे सिंहासन
कियो ॥२७॥ बारिषेन नृप धरिहो ध्यान । ततक्षण उपजो केवल
जान ॥ सिंह सर्पादिक जीव अनेक । जिन सुमिरे तिन राखी टेक
॥२८॥ ऐसी कीरति जिनकी कहूं । साह कहै शरणागत रहूं ॥ इस
अवसर जीवे यह बाल । मुझ सन्देह मिटे तत्काल ॥ २९ ॥ बन्दी
छोड़ विरद महाराज । अपना विरद निबाहो आज ॥ और आलंब-
न मेरे नाहिं । मैं निश्चय कीनो मन मांहिं ॥ ३० ॥ चरण कमल
छोड़ों ना सेव । मेरे तो तुम सतगुरु देव ॥ तुम ही सूरज तुम ही
चन्द्र । मिथ्या मोह निकंदन कंद ॥३१॥ धर्मचक्र तुम धारण धीर
विषहर चक्र बिड़ारन वीर ॥ वीर अग्नि जल भूत पिशाच । जल
जङ्घम अटवी उदवास ॥३२॥ दर दुश्मन राजा वश होय । तुम प्रसाद
गजे नहिं कोय ॥ हय गज युद्ध सबल सामंत । सिंह शार्दूल महा

भयवन्त ॥ ३३ ॥ दृढ़ बंधन विग्रह विकराल । तुम सुमरत छूटें
तत्काल ॥ पांयन पनहीं नमक न नाज । ताको तुम दाता गजराज
॥ ३४ ॥ एक उथाप थप्यो पुन राज । तुम प्रभु बड़े गरीब निवाज ॥
पानीसे पैदा सब करो । भरी डाल तुम रीती करो ॥ ३५ ॥ हर्त्ता
कर्त्ता तुम किरपाल । कीड़ी कुञ्जर करत निहाल ॥ तुम अनन्त
अल्प मो ब्रान । कंह लग प्रभुजी करों बखान ॥ ३६ ॥ आगम पन्थ
न सूझे मोहि । तुम्हरे चरण बिना किम होहि ॥ भये प्रसन्न
तुम साहस कियो । दयावन्त तब दर्शन दियो ॥ ३७ ॥ साह पुत्र
जब चेत न भयो । हंसत हंसत वह घर तब गयो ॥ धन दशन
पायो भगवन्त । आज अङ्ग मुख नयन लसन्त ॥ ३८ ॥ प्रभुके
चरण कमलमें नयो । जन्म कृतारथ मेरो भयो ॥ कर युग जोड़
नवाऊं शीश । मुझ अपराध क्षमो जगदीश ॥ ३९ ॥ सत्रह सौ
पन्द्रह शुभ यान । नारनौल तिथि चौदस जान ॥ पढ़े सुने तहां
परमानन्द । कल्प वृक्ष महा सुख कन्द ॥ ४० ॥ अष्ट सिद्धि नव
निधि सो लहे । अचलकीर्ति आचार्य कहै ॥ याको पढ़ो सुनो सब
कोय । मनवांछित फल निश्चय होय ॥ ४१ ॥

दोहा—भय भञ्जन रञ्जन जुगत, विषापहार अभिराम ।

संशय तज सुमिरो सदा, श्रीजिनचरको नाम ॥ ४२ ॥

॥ इति श्रीविषापहार भाषा स्तोत्र सम्पूर्ण ॥

२३ एकीभाव स्तोत्र भाषा

दोहा—बादराज मुनिराजके ! चरण कमल चित लाय ।

भाषा एकीभावकी, करूँ स्वपर सुखदाय ॥

चौबीस मात्रा काव्य छन्द ।

जो अनि एकीभाव भयो मानो अनिवारी । सो मुक्त कर्म
 प्रबन्ध करत भव २ दुख भारी ॥ ताहि तिहारी भक्ति जनत रवि
 जो निरवारै । तौ अब और कलेश कौन सो नाहिं विदारै ॥ १ ॥
 तुम जिन ज्योति स्वरूप दुरित अन्धियारि निवारो । सो गणेश
 गुरु कहैं तत्त्व विद्याधनधारी ॥ मेरे चित घर मांहिं बसौ तैजो
 मय यावत । पाप तिमिर अवकाश तहां सो क्यों कर पावत ॥ २ ॥
 आनन्द आंसू बदन धोय तुम सों चित सानै । गद्गद् सुरसों
 सुयश मन्त्र पढ़ पूजा ठानै ॥ ताके बहुविधि व्याध व्याल विर-
 काल निवासी । भजैं थानक छोड़ देह बम्बईके वासी ॥ ३ ॥
 दिवतै आवनहार भये भवि भाग उदय बल । पहले ही सुर आय
 कतक मय कीय महीतल ॥ मनगृह ध्यान दुवार आय निवसे जग
 नामी । जो सुवर्ण तन करो कौन यह अचरज स्वामी ॥ ४ ॥ प्रभु
 सब जगके बिना हेतु बान्धव उपकारी । निरावर्ण सबेज शक्ति
 जिनराज तिहारी ॥ भक्ति रचित मम चित तेज नित बास करोगे ।
 मेरे दुःख सन्ताप देख किम धीर धरोगे ॥ ५ ॥ भव भवमें चिर
 काल भ्रमों कछु कहिय न जाई । तुम श्रुति कथा पिपूष बापिका
 भाग न पाई ॥ शशि तुषार धनसार हार शीतल नहिं या सम ।
 करत न्होन ता माहि क्यों न भव ताप बुझै मम ॥ ६ ॥ श्री विहार
 परिवाह होत शुचि रूख सकल जग । कमल कनक आभाव सुरभि
 श्रीवास धरत पग ॥ मेरो मनसर्वग परस प्रभुको सुख पावै । अब
 सो कौन कल्याण जो न दिन २ दिग आवै ॥ ७ ॥ भव नज सुख
 पद बसे काम मद सुभट संघारे । जो तुमको निर्वन्त सदा प्रिय
 दास तिहारे । तुम वचनामृत पान भक्ति अञ्जलि सो पीवै । तिनै

भयानक क्रूररोग रिपु कैसे छीवै ॥ ८ ॥ मानथम्म पाषाण आत
पाषाण पटन्तर । ऐसे और अनेक रत्न दोखें जग अन्तर ॥ देखत
दुष्टि प्रमाण मान मद तुरत मिटावे । जो तुम निकट न होय
शक्ति यह क्योंकर पावै ॥ ९ ॥ प्रभु तन पवत परस पवन उरमें
निश्चै है । तासों तत्क्षण सकल रोग रज बाहर है । जाके ध्याना
हृत बसो उर अम्बुज मांही । कौन जगत उपकार करण समरथ
सो नाही ॥ १० ॥ जन्म २ के दुख सहे सबते तुम जानो । याद
किये मुझ हिये लगैं आयुधसे मानो ॥ तुम दयालु जगपाल
स्वामि मैं शरण गही है । जो कुछ करना होय करो परमाण वहो
है ॥ ११ ॥ मरण समय तुम नाम मन्त्र जीवक तैं पायो । पापा-
चारी खान प्राण तज अमर कहायो ॥ जो मणिमाला लेय जपै
तुम नाम निरन्तर । इन्द्र संपदा लई कौन संशय इस अन्तर ॥ १२ ॥
जे नर निर्मल ज्ञान मान शुचि चारित्र साथै । अनवध सुखकी
सार भक्ति कृंचो नहिं हाथै ॥ सो शिव वांछिक पुरुष मोक्ष पठ केम
उघारे । मोह मुहर दूढ़ करी मोक्ष मन्दिरके द्वारे ॥ १३ ॥ शिवपुर
कैरो पन्थ पाप तम सो अति छायो । दुख सरूप बहु कूप खाड़
सो विकट बतायो ॥ स्वामो सुख सों तहां कौन जन मारग लागे ।
प्रभु प्रवचन मणि दीप जौनके आगे आगे ॥ १४ ॥ कर्म पटल भू
माहिं दबो आतम निधि भारी । देखत अति सुख होय विमुख जन
नाहिं उधारी ॥ तुम सेवक तत्काल ताहि निश्चय कर धारै ।
श्रुति कुदाल सों खोदि बन्द भू कठिन विदारै ॥ १५ ॥ स्यादवाद
गिर उपज मोक्ष सागर लों धाई । तुम चरणाम्बुज परस भक्ति
गङ्गा सुखदाई ॥ मोचित निर्मल थयो न्होन रवि पूरब तामैं । अब

वह होय मलीन कौन जिन सशय यामैं ॥ १६ ॥ तुम शिव सुख-
 मय प्रगट करत प्रभु चिन्तन तेरे । मै भगवान समान भाव यों
 वरते मेरे ॥ यदपि झूठ है तवहि तूम निश्चल उपजावै । तुम प्र-
 साद सकलहु जीव वांछित फल पावै ॥ १७ ॥ बचन जलधि तुम
 देव सकल त्रिभुवनमें व्यापै । भङ्ग तरङ्गिन बिकथ वाद मल मलिन
 उथापै । मन सुमेर सो मथै नाहि जे सम्यक ज्ञानी । परमामृत
 सों तूम होंहिं ते चिर लों प्राणा ॥ १८ ॥ जो कुदेव छविहीन बसन
 भूषण अभिलापै । बैरी सो भयभीत होय सो आयुध राखै ॥ तुम
 सुन्दर सर्वाङ्ग शत्रु समरथ नहिं कोई । भूषण वसन गदादि
 ग्रहण काहेको होई ॥ १९ ॥ सुरपति सेवा करे कहा प्रभु प्रभुता
 मेरो । सोशलाघ ना लहै मिटै जग सों जग फेरो ॥ तुम भव जल-
 धि जिहाजि तोहि शिव कन्ध उचरिये । तुही जगत् जनपाल नाथ
 थुति को थुति करिये ॥ २० ॥ बचन जाल जड़ रूप आप चिन्मूरत
 भाई । ताते थुति आलाप नाहिं पहुँचे तुम ताई ॥ तो भो निष्फल
 नाहिं भक्ति रस मोने वायक ॥ सन्तनको सुरतरु समान वांछित
 वरदायक ॥ २१ ॥ कोप कभी नहिं करो प्रोत कबहुं नहिं धारो ।
 अति उदास बेचाह चित्त जिनराज तिहारो ॥ तदपि आनि जग बहै
 बैर तुम निकट न लहिये । यह प्रभुता जग तिलक कहां तुम बिन
 सरधरिये ॥ २२ ॥ सुर तिय गावै सुयश स्वर्गगति ज्ञान स्वस्पी ।
 जो तुमको थिर होय नमै भवि आनन्द रूपी ॥ ताहि क्षेमपुर
 चलन वाट बांकी नहिं हो है । श्रुतिके सुमिरण मांहिं सो न कब
 ही तर मोहै ॥ २३ ॥ अतुल चतुष्टय रूप तुमै जो चित्तमें धारै ।
 आदर हो तिहुं काल माहिं जग युति विस्तारै ॥ सो स्वीकृत शिव

पन्थ भक्ति रचना कर पूरे । पञ्च कल्याणक ऋद्धि पाय निश्चै
दुख चूरै ॥ २४ ॥ अहो जगत्पति पूज्य अवधि ज्ञानी मुनि हारे ।
तुम गुण कीर्तन माहिं कौन हम मन्द विचारे ॥ थुति छल सो
तुम विषै देव आदर विस्तारे । शिव सुख पूरण हार कल्पतरु
यही हमारे ॥ २५ ॥ बादराज मुनिराज शब्द विद्याके स्वामी ।
बादराज मुनिराज तर्क विद्यापति नामी ॥ बादराज मुनिराज काव्य
करता अधिकारी । बादराज मुनिराज बड़े भवजन उपकारी ॥ २६ ॥

मूल अर्थ बहु विधि कुसुम, भाषा सूत्र मभार ।

भक्तिमाल भूदर करो, करो कण्ठ सुखकार ॥ १ ॥

तीसरा अध्याय

२४ इष्ट छत्तीसी ।

सोरठा — प्रणमूँ श्री अरहंत, दयाकथित जिन धर्मको । गुरु
निरग्रंथ महंत, अवरन मानूँ सर्वथा ॥ १ ॥ बिन गुणकी पहिचान
जानै वस्तु समानता । तार्ते परम बखान, परमेष्टी गुणको कहूँ ॥ २ ॥
रागद्वेषयुत देव, माने हिंसाधर्म पुनि । सप्रन्थगुरुको सेव, सो
मिथ्याती जग भ्रमै ॥ ३ ॥

अरहंतके ४३ मूल गुण ।

दोहा — चौतीसों अतिशय सहित, प्रातिहार्य पुनि आठ ।

अनंत चतुष्टय गुणसहित, छोयालीसों पाठ ॥ ४ ॥

अर्थ—३४ अतिशय, ८ प्रातिहार्य, ४ अनंतचतुष्टय ये अरहंत-
नके ४६ मूलगुण होते हैं। अब इनका भिन्न २ वर्णन करते हैं।
जन्मके १० अतिशय।

अतिशय रूप सुगन्ध तन, नाहिं पसेव निहार। प्रियहिमवचन
अतौल बल, रुधिर श्वेत आकार। लच्छन सहसर आठ तन,
समचतुष्कसंठान। वज्रवृषभनाराच युत, ये जनमन दश जान ॥६॥

अर्थ—१ अत्यन्त सुन्दर शरीर, २ अति सुगन्धमय शरीर,
पसेवरहित शरीर, ४ मलमूत्ररहित शरीर, ५ हित मितप्रियवचन
बोलना, ६ अतुल बल, ७ दुग्धवन् श्वेत रुधिर, ८ शरीरमें एक
हजार आठ लक्षण, ९ समचतुस्त्रसंस्थान १० वज्रवृषभनाराचसं-
नन ये दश अतिशय अरहंत भगवानके जन्मसे ही उत्पन्न होते हैं।

केवलज्ञानके १० अतिशय।

योजन शत इकमें सुभिक्ष, गगनगमन मुख चार। नहिं, अदया
उपसर्ग नहिं, नाहीं कवलाहार ॥ सब विद्या ईश्वरपनों, नाहिं बढ़े
नख केश। अनिमिष दृग छायारहित, दश बंचलके वेश ॥८॥

अर्थ—१ एक सौ योजनमें सुभिक्षता; अर्थात् जिस स्थानमें
केवली हों उनसे चारों तरफ सौ सौ योजनमें सुकाल होता है, २
आकाशमें गमन, ३ चार मुखोंका दीखना, ४ अदयाका अभाव,
५ उपसर्गरहित, ६ कवल (ग्रास) वर्जित आहार, ७ समस्त विद्या-
ओंका स्वामीपना, ८ नखकेशोंका नहीं बढ़ना ९ नेत्रोंकी पलकें
नहीं झपकना, १० छायारहित शरीर। ये १० अतिशय केवल-
ज्ञान उत्पन्न होनेसे प्रगट होते हैं ॥८॥

देवकृत १४ अतिशय।

देवरचित हैं चार दश, अर्द्धमागधी भाष । आपस मांहीं मित्रता
निरमल दिश आकाश ॥६॥ होत फूल फल ऋतु सबे, पृथ्वी काच
समान । चरण कमलतल कमल है, नभ तैं जय जय बान ॥१०॥
मन्द सुगन्ध बयारि पुनि, गंधोदककी वृष्टि । भूमिविषे कंटक नहीं,
हर्षमयी सब सृष्टि ॥११॥ धर्मचक्र आगे रहे, पुनि वसु मङ्गल सार ।
अतिशय श्रीअरहन्तके, ये चौतीस प्रकार ॥

अर्थ—१ भगवानकी अर्द्धमागधी भाषाका होना, २ समस्त
जीवोंमें परस्पर मित्रताका होना, ३ दिशाओंका निमल होना,
४ आकाशका निमल होना, ५ सब ऋतुके फल पुष्प धान्यादिक-
का एक ही समय फलना, ६ एक योजनतककी पृथिवीका दर्पण-
वन निर्मल होना, ७ चलते समय भगवान्के चरण कमलके तले
सुवर्णकमलका होना, ८ आकाशमें जय जय ध्वनिका होना, ९
मंदसुगन्धित पवनका चलना, १० सुगन्धमय जलकी वृष्टि होना,
११ पवनकुमार देवोंके द्वारा भूमिका कण्टक रहित होना, १२ स-
मस्त जीवोंका आनन्दमय होना, १३ भगवानके आगे धर्मचक्रका
चलना, १४ छत्र, चमर, ध्वजा, घन्टादि अष्ट मङ्गल द्रव्योंका साथ
रहना । इस प्रकार सब मिलाकर ३४ अतिशय अरहन्त भगवानके
होते हैं ॥१२॥

अष्ट प्रातिहार्य ।

तरु अशोकके निकटमें, सिंहासन छबिदार । तीन छत्र सिरपर
लसें भामंडल पिछवार ॥१३॥ दिव्यध्वनि मुखतें स्त्रिरे पुष्पवृष्टि
सुर होय । ढारैं चौसठि चमर लख । बाजैं दुंदुभि जोय ॥१४॥

अर्थ—१, अशोकवृक्षका होना, २ रत्नमय सिंहासन, ३ भग-

वानके सिरपर तीन छत्रका फिरना, ४ भगवानके पीछे भामण्ड-
लका होना, ५ भगवानके मुखसे दिव्यनिका होना, ६ देवाके
द्वारा पुष्पवृष्टिका होना, ७ यक्षदेवोंद्वारा चौसठ चंवरोका दुरना,
दुंदुभी बाजोका बजना ये आठ प्रातिहायें हैं ।

अनन्तचतुष्टय ।

ज्ञान अनन्त अनन्त सुख, दरस अनन्त प्रमान ।

बल अनन्त अरहंत सा, इष्टदेव पहिचान ॥१५॥

अर्थ—१ अनन्तदर्शन अनन्तज्ञान, २ अनन्तसुख, ४ अनन्तवीर्य
जिसमें इतने गुण हा, वह अरहन्त परमेष्ठी हैं ।

अष्टादशदोषवर्जन ।

जनम जरा तिरषा श्रुधा विस्मय आरत खेद । रोग शोक मद
मोह भय निद्रा चिन्ता खेद ॥१६॥ राग द्वेष अरु मरण जुत, यह
अष्टादश दोष । नाहिं होत अरहंतके सो छबि लायक मोष ।

अर्थ—१, जन्म, २ जरा, ३ तृषा, ४ श्रुधा, ५ आश्चर्य, ६ अरति
(पीड़ा), ७ खेद, (दुःख), ८ रोग, ९ शोक, १० मद, ११ मोह, १२
भय, १३ निद्रा, १४ चिन्ता, १५ पसीना, १६ राग, १७ द्वेष, १८
मरण ये १८ दोष अरहन्त भगवानमें नहीं होते ॥१७॥

सिद्धोंके ८ गुण ।

समकित दरसन ज्ञान, अगुरुलघु अवगाहना ।

सूक्ष्म वीरजवान निराबाध गुन सिद्धके ॥१८॥

अर्थ—१ सम्यक्त्व, २ दर्शन, ३ ज्ञान, ४ अगुरुलघुत्व, ५ अव-
गाहनत्व, ६ सूक्ष्मत्व, ७ अनन्तवीर्य, ८ अव्याबाधत्व ये सिद्धोंके
८ मूलगुण होते हैं ॥

आचार्यके ३६ गुण — द्वादश तप दश धर्मजुत पालें पञ्चाचार ।

पट् आवश्यक त्रयगुणि गुन आचारज पदसार ॥

अर्थ—तप १२, धर्म १०, आचार ५, आवश्यक ६, गुणि ३ ये आचार्य महाराजके ३६ मूलगुण होते हैं । अब इनको भिन्न २ कहते हैं ॥ १६ ॥

द्वादश तप ।

अनशन ऊनोदर करे, व्रतसंख्या रस छोर । विविक्तशयन आसन धरे काय कलेश सुठोर । प्रायश्चित धर विनयजुत वैयाव्रत स्वाध्याय । पुनि उत्सर्ग विचारके धरे ध्यान मन लाय ॥२१॥

अर्थ—१ अनशन, २ ऊनोदर, ३ व्रतपरिसंख्यान, ४ रसपरित्याग, ५ विविक्तशय्याशन, ६ कायकलेश, ७ प्रायश्चित लेना, ८ पांच प्रकारका विनय करना, ९ वैयाव्रत करना, १० स्वाध्याय करना ११ व्युत्सर्ग (शरीरसे ममत्व छोड़ना), और १२ ध्यान करना ये बारह प्रकारके तप हैं ॥२१॥

दश धर्म—छिमा मारदव आरजव, सत्यवचन चित पाग ।

संजम तप त्यागी सरव, आकिंचन तियत्याग ॥

अर्थ—१ उत्तमक्षमा, २ मारदव, ३ आर्जव, ४ सत्य, ५ शौच, ६ संयम, ७ तप, ८ त्याग, ९ आकिंचन, १० ब्रह्मचर्य ये दश प्रकारके धर्म हैं ॥ २२ ॥

पट आवश्यक—समता धर बंदन करे, नाना थुती बनाय ।

प्रतिक्रमण स्वाध्यायजुत, कायोत्सर्ग लगाय ॥

अर्थ—१ समता (समस्त जीवोंसे समता भाव रखना) २, बंदना, ३ स्तुति (पञ्चपरमेष्ठिनीकी स्तुति) करना, प्रतिक्रमण (लगे

हुए दोषोंपर पश्चात्ताप) करना, ५ स्वाध्याय, और ६ कायोत्सग (ध्यान) करना ये छह आवश्यक हैं ॥२३॥

पंचाचार और तीन गुप्ति ।

दर्शन ज्ञान चारित्र तप, वीरज पंचाचार ।

गोपे मनवचकायको, गिन छत्तीस गुन सार ॥

अर्थ—१ दर्शनाचार, २ ज्ञानाचार, ३ चारित्राचार, ४ तपाचार, ५ वीर्याचार, ६ मनोगुप्ति मनको वशमें करना, २ वचनगुप्ति वचनको वशमें करना, ३ कायगुप्ति शरीरको वशमें करना, इस प्रकार सब मिलाकर आचार्यके ३६ मूलगुण हैं ॥२४॥

उपाध्यायके २५ गुण ।

चौदह पूरबको धरे, ग्यारह अङ्ग सुजान ।

उपाध्याय पच्चीस गुण, पढ़ै पढ़ावै ज्ञान ॥२५॥

अर्थ—११ अङ्ग १४ पूर्वको आप पढ़ें और अन्यको पढ़ावें ये ही उपाध्यायके २५ गुण हैं ॥२५॥

ग्यारह अङ्ग ।

प्रथमहि आचारांग गुनि, दूजो सूत्रकृतांग । ठाण अङ्ग तीजो सुभग, चोथो समवायांग ॥२६॥ व्याख्या प्रज्ञति पचमो, ज्ञातृ कथा षट आन । पुनि उपासकाध्ययन है, अन्तःकृत दशठान ॥ अनुत्तरणउत्पाद दश, सूत्रविपाक पिछान । बहुरि प्रश्नव्याकरण-उत्त, ग्यारह अङ्ग प्रमान ॥

अर्थ—१ आचारांग, २ सूत्रकृतांग, ३ स्थानांग ४ समवायांग, ५ व्याख्याप्रज्ञति, ६ ज्ञातृकथांग, ७ उपासकाध्ययनांग, ८ अन्तःकृतदशांग, ९ अनुत्तारोत्पाददशांग, १० प्रश्नव्याकरणांग, ११ वि-

पाकसूत्रांग, ये ग्यारह अङ्ग हैं ॥२८॥

चौदह पूर्व ।

उत्पादपूर्व अग्रायणी, तोजो वीरजवाद । अस्ति नास्ति परवाद पुनि, पंचम ज्ञानप्रवाद ॥ छट्टो कर्मप्रवाद है, सत्प्रवाद पहिचान । अष्टम आत्मप्रवाद पुनि, नवमों प्रत्याख्यान ॥१०॥ विद्यानुवाद पूरव दशम, पूर्वकल्याण महत । प्राणवाद किरिया बहुल, लोक-बिंदु है अन्त ॥३१॥

अर्थ—१ उत्पादपूर्व, २ अग्रायणि पूर्व, ३ वीर्यानुवादपूर्व, ४ अस्तिनास्तिप्रवादपूर्व, ज्ञानप्रवादपूर्व, ६ कर्मप्रवादपूर्व, ७ सत्प्रवादपूर्व, ८ आत्मप्रवादपूर्व, ९ प्रत्याख्यानपूर्व, १० विद्यानुवादपूर्व, ११ कल्याणवादपूर्व, १२ प्राणानुवादपूर्व, १३ क्रियाविशालपूर्व, १४ लोकबिन्दुपूर्व ये १४ पूर्व हैं ॥

सर्वसाधुके २८ मूलगुण ।

पंचमहाव्रत—हिंसा अनृत तस्करो, अब्रह्म परिग्रह पाय । मन-वचननते त्यागवो, पंचमहाव्रत थाय ॥३२॥

अर्थ—१ अहिंसा महाव्रत, सत्य महाव्रत, ३ अचौर्य महाव्रत, ४ ब्रह्मचर्य महाव्रत, ५ परिग्रहत्याग महाव्रत, ये पांच महाव्रत हैं । पांच समिति—ईर्या, भाषा, एषणा, पुनि क्षेपन, आदान । प्रतिष्ठापनाजुत क्रिया, पांचों समिति विधान ॥

अर्थ—१ ईर्या समिति, २ भाषासमिति, ३ एषणासमिति ४ आदाननिक्षेपणसमिति, ५ प्रतिष्ठापनासमिति, ये पांच समिति हैं ॥

पांच इन्द्रियोंका दमन ।

सपरस रसना नासिका, नयन श्रोत्रका रोध ।

षट् आवशि मंजन तजन, शयन भूमिको शोध ॥

अर्थ—१ स्पर्शन (त्वक्), २ रसना, ३ घ्राण, ४ चक्षु, और ५ श्रोत्र—इन पांच इंद्रियोंका वश करना सो इन्द्रियदमन है (छह आवश्यक आचार्यके गुणोंमें देखो) ॥३४॥

शेष सात गुण ।

वस्त्रत्याग कचलौच अरु, लघु, भोजन इकबार ।

दांतन मुखमें ना करें, ठाढ़े लेहिं अहार ॥३५॥

अर्थ—१ यावज्जीव स्नानका त्याग, २ शोधकर (देख भाल कर) भूमिपर सोना, ३ वस्त्रत्याग (दिगम्बर होना), केशोंका लौंच करना, ५ एक बार लघु भोजन करना, ६ दन्तधावन नहीं करना, ७ खड़े खड़े आहार लेना, इन सात गुणोंसहित २८ मूल गुण सर्व मुनियोंके होते हैं ॥३४॥

साधर्मो भवि पाठनको, इष्टछतीसी ग्रन्थ ।

अल्पबुद्धि बुधजन रच्यो, हिनमिन शिवपुरपन्थ ॥

इति पंचपरमेष्ठी १४३ मूलगुणोंका वर्णन समाप्त ।

२५ दर्शनपाठ ।

अनादिनिधन महामंत्र ।

णमो अरहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोण सव्वसाहूणं ॥१॥

मंदिरजीकी वेदीगृहमें प्रवेश करते हो “जय जय जय निःसहि, निःसहि, निःसहि” इस प्रकार उच्चारण करके उपर्युक्त महामंत्रका ६ बार पाठ करे । तत्पश्चात् —

चत्वारि मंगलं—अरहन्त मंगलं । सिद्ध मंगलं साहू मंगलं
केवलपण्णत्तो धम्मो मङ्गलं । चत्वारि लोगुत्तमा । अरिहन्त लो-
गोत्तमा सिद्ध लोगुत्तमा । साहू लोगुत्तमा । केवलपण्णत्तो धम्मो
लोगुत्तमा ॥२॥ चत्वारि सरणं पव्वज्जामि, अरहन्त सरणं पव्व-
ज्जामि । सिद्धसरणं पव्वज्जामि । साहूसरणं पव्वज्जामि । केव-
लिपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वजामि ॥ ॐ भौं भौं स्वाहा ॥

वर्तमान चौबीस तीर्थकरोके नाम ।

श्रीऋषभः १ अजितः २ संभवः ३ अभिनन्दनः ४ सुमतिः ५
पद्मप्रभः ६ सुपाश्वः ७ चन्द्रप्रभः ८ पुष्पदन्तः ९ शीतलः १० श्रीयांस
११ वांसुपूज्यः १२ विमलः १३ अनन्तः १४ धर्मः १५ शान्तिः १६
कुन्धुः १७ अरः १८ मल्लिः १९ मुनिसुव्रतः २० नमिः २१ नेमिः २२
पार्श्वनाथः २३ महावीरः २४ इति वर्तमानकालसम्बन्धो चतुर्विंश-
तितोर्थकरेभ्यो नमो नमः ।

अद्य मे सफलं जन्म, नेत्रे च सफले मम । त्वामद्वाक्षं यतो
देव, हेतुमक्षयसम्पदः ॥१॥ अद्य संसारगम्भीरपारावारः तुदुस्तरः ।
सुतरोऽयं क्षणेनैव जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥२॥ अद्य मे क्षालितं गा-
त्रं नेत्रं च विमले कुने । स्नानोऽहं धर्मतीर्थेषु जिनेन्द्र तव दर्श-
नात् ॥३॥ अद्य मे सफलं जन्म प्रशस्तं सर्वमङ्गलम् । संसारार्ण-
वतीर्णोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥४॥ अद्य कर्माष्टकज्वालं बि-
भ्रतं सकषायकम् । दुर्गतिर्विनिवृत्तोऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥५॥
अद्य सोम्या मृदाः सर्वे शुभाश्चैकादशास्थिताः । नष्टानि विघ्नजा-
लानि जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥६॥ अद्य नष्टो महाबन्धः कर्मणा दुः-
खदायकः । सुखसंगं समापन्नो जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥७॥ अद्य क-

मोष्टकं नष्टं दुःखोत्पादनकारकम् । सुखाम्भोधिनिमग्नोऽहं जिनेन्द्र
 तव दर्शनात् ॥ ८ ॥ अथ मिथ्यान्धकारस्य हन्ताज्ञानदिवाकरः ।
 उदितो मच्छरीरेऽस्मिन् जिनेन्द्र तव दर्शनात् ॥ ९ ॥ अद्याहं सुकृती
 भूतो निर्धूताशेषकल्मषः । भुवनत्रयपूज्योऽहं जिनेन्द्र तव दर्शनात्
 ॥ १० ॥ चिदानन्दैकरूपाय जिनाय परमात्मने । परमत्माप्रकाशाय
 नित्यं सिद्धात्मने नमः ॥ ११ ॥ अन्यथा शरणं नास्तित्वमेव
 शरणं मम । तस्मात्कारुण्य भावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ १२ ॥ न
 हि त्राता न हि त्राता न हि त्राता जगत्रये । वीतरागात्परो देवो न
 भूतो न भविष्यति ॥ १३ ॥ जिने भक्तिजिने भक्तिर्जिने भक्तिदिने
 दिने । सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भये भवे ॥ १४ ॥
 जिनधर्मविनिर्मुक्तं मा भवन् चक्रवर्त्येति । स्याञ्चेत्रोऽपि दरि-
 द्रोऽपि जिनधर्मानुवासितम् ॥ १५ ॥

इस प्रकार बोलकर साष्टांगनमस्कार करना चाहिये । नम-
 स्कारके पश्चात् पूजनके लिये चांदल चढ़ाना हो तो नीचे लिखा
 श्लोक तथा मन्त्र पढ़कर चढ़ावे ।

अपारसंसारमहासमुद्रप्रोत्तारणे प्राज्यतरीन्सुभक्त्या ।

दीर्घाक्षताड्ढै ध्रुवलाक्षतोर्ध्वै र जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं अक्षयपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षतान् निवेपामि ।

यदि पुण्योसे पूजन करना हो तो नीचे लिखा श्लोक पढ़ें ।

विनीतभग्याब्जविबोधसूर्यान् वर्यान् सुचर्याकथनैकधुर्यान् ।

कुन्दारविन्दप्रमुखप्रसूनैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥ १॥

ॐ ह्रीं कामबाणविध्वंसनाय देवशास्त्रगुरुभ्यः पुण्यं निवेपामि ।

यदि किसीको लोंग, बंदाम, इलायची या कोई प्रासुक दरा

फल चढ़ाना हो तो, नीचे लिखा श्लोक और मन्त्र पढ़कर चढ़ावे ।

शुभ्यद्विलुभ्यन्मनसाऽप्यगम्यान् कुवादिवादाऽस्खलितप्रभावान् ।

फलैल्ल मोक्षफलाभिसारैर् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं मोक्षफलप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्यः फलं निर्वपामि ॥

यदि किसीको अर्घ्य चढ़ाना हो, तो नीचे लिखा श्लोक पढ़ें ।

सद्धारिगन्धाक्षनपुष्पजातेर् नैवेद्यदीपामलधूपधूम्रैः ।

फलैर्विचित्रैर्घनपुण्ययोग्यान् जिनेन्द्रसिद्धान्तयतीन् यजेऽहम् ॥

ॐ ह्रीं अनर्घ्यपदप्राप्तये देवशास्त्रगुरुभ्योऽर्घ्यं ।

इस प्रकारके द्रव्योंमेंसे जो द्रव्य हो, उसी द्रव्यका श्लोक व मन्त्र पढ़कर वह द्रव्य चढ़ाना चाहिये । तत्पश्चात् नीचे लिखी दोनों स्तुतियां अथवा दोनोंमेंसे कोई एक स्तुति अवश्य पढ़नी चाहिये ।

२६ दौलतराम कृत स्तुति

देहा—सरल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानन्दरसलोन ।

सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरिरजरहसबिहीन ॥

जय बीतराग विज्ञानपूर । जय मोहतिमिरको हरनसूर ॥ जय

ज्ञान अनन्तानन्तधार । दृगसुख वीरजमण्डित अपार ॥ १ ॥ जय

परमशान्ति मुद्रा समेत । भविजनको निज अनुभूति हेत ॥ भवि

भागनवश जोगे वशाय । तुम धुनि हूँ सुनि विभ्रम नशाय ॥ २ ॥

तुम गुण विन्तत निज पर विवेक । प्रघट्टै, विघट्टै आपद अनेक ॥

तुम जगभूषण दूषणवियुक्त । सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥ ३ ॥

अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप । परमात्म परमपावन अनूप ॥ शुभ

अशुभ विभाव अभाव कीन । स्वाभाविक परिणतिमय अलीन ॥३॥
 अष्टादशदोष विमुक्त धीर । सुचतुष्टयमय राजत गंभीर ॥ मुनि
 गणधरादि सेवत महंत । नवकैवल लब्धिरमा धरन्त ॥ ५ ॥ तुम
 शासन सेय अमेय जीव । शिव गये जाहिं जै हैं सदीव ॥ भव-
 सागरमें दुःख छारवारि । तारनको और न आप टारि ॥ ६ ॥ यह
 लखि निजदुःखगदहरणकाज । तुमही निमित्त कारण इलाज ॥
 जानें तानै मैं शरण आय । उचरों निज दुख जो चिर लहाय ॥ ७ ॥
 मैं भ्रमरो अपनयो बिसरि आप । अपना ये विधिकल पुण्य-पाप ॥
 निजको परको करता पिछान । परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥ ८ ॥
 आकुलित भयो अज्ञानधारि । ज्यों मृग मृगतृष्णा जानि वारि ॥
 तन परणतिमें आयो चितारि । कबहुं न अनुभवो म्वरदसार ॥ ९ ॥
 तुमको बिन जाने जो कलेश । पाये सो तुम जानत जिनेश ॥ पशु
 नारक नर सुर गतिमंभार । भव धर धर मखो अनन्तवार ॥ १० ॥
 अब काललब्धिबलने दयाल । तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ॥ मन
 शान्त भयो मिट सकलद्वंद । चाख्यो स्वातमरस दुखनिकन्द ॥ ११ ॥
 तानै अब ऐसो करहु नाथ । विद्युरे न कभी तुव चरण साथ ॥
 तुम गुणगणको नहिं छेव देव । जग तारनको तुम त्रिरद एव
 ॥ १२ ॥ आत्मके अहित विषय कपाय । इनमें मेरी परेणति न
 जाय ॥ मैं रहूं आपमें आप लीन । सो करो होहुं ज्यों निजाधोन
 ॥ १३ ॥ मेरे न चाह कुछ और ईश । रत्नत्रयनिधि दोजे मुनीश ॥
 मुक्त कारनके कारज सु आय । शिव करहु हरहु मम मोहताप ॥ १४ ॥
 शशि शांतकरन तपहरनहेत । स्वमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीबत
 पियूष ज्यों रोग जाय । त्यों तुम अनुभवतै भव नसाय ॥ १५ ॥

त्रिभुवन तिहुंकाल मंभार कोय । नहिं तुम बिन निजसुख दाय
होय ॥ मो उर यह निश्चय भयो आज । दुखजलधि उतारन तुम
जिहाज ॥ १६ ॥

दोहा—तुमगुणगणमणि गणपती, गणत न पावहिं पार ।
'दौल' स्वल्पमति किम कहै, नमूँ त्रियोग संभार ॥

२७ अथ बुधजनकृत स्तुति

प्रभु पतितपावन मैं अपावन, चरन आयो शरणनी । यो वि-
रद् आप निहार स्वामी, मेट जामन मरनजी ॥ तुम ना पिछान्या
आन मान्या, देव विविध प्रकारजी । या बुद्धिसेती निज न जा-
ण्या, भ्रम गिण्या हितकारजी ॥ १ ॥ भवविकट वनमें करम बेरी,
जानधन मेरो हस्यो । तब इष्ट भूत्यो भ्रष्ट हौय, अनिष्टगति धरनो
फिस्यो ॥ धन घड़ी यो धन दिवस योही, धन जनम मेरो भयो ।
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभुको लख लयो ॥ २ ॥ छवि
वीतरागी नगनमुद्रा, दृष्टि नासापै धरै । वसुप्रातहाथे अनन्त
गुणयुत, कोटि रविछबिको हरै ॥ मिट गयो तिमर मिथ्यात मेरो
उदय रवि आतम भयो । मो उर हरख ऐसो भयो, मनु रङ्ग चिन्ता-
मणि लयो ॥ ३ ॥ मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, वीनऊँ तब चरनजी ।
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनो तारन तरनजी ॥ जाचूँ नहीं
सुरवास पुनि, नरराज परिजन साथजी । 'बुध' जाचहूँ तुव भक्ति
भवभव, दीजिये शिवनाथजी ॥ ४ ॥

इस प्रकार एक या दोनों स्तुति पढ़कर पुनः साष्टांग नम-
स्कार करना चाहिये । तपश्चात् नीचे लिखा श्लोक पढ़कर गंधो-
दक मस्तकपर तथा हृदयादि उत्तम अंगोंमें लगाना चाहिये ।

निर्मलं निर्मलीकरणं पवित्रं पापनाशनम् ।

जिनगन्धोदकं वंदे अष्टकर्मविनाशकम् ॥ १ ॥

यदि आशिका लेनी हो, तो यह दोहा पढ़कर लेना चाहिये ।

दोहा—श्रीजिनवरकी आशिका, लीजे शीश चढ़ाय ।

भवभवके पातक कटें, दुःख दूर हो जाय ॥ १ ॥

तत्पश्चात् नीचे लिखे दो अथवा एक कवित्त पढ़कर शास्त्र-
जीको साष्टांग नमस्कार करके शास्त्रजीको सुनना चाहिये ।
अथवा थोड़ा बहुत किसी भी शास्त्र तो स्वाध्याय करना चाहिये ।

२८ जिनकाणी माताकी स्तुति ।

वीरहिमाचलतै निकसो, गुरुगौतमके मुख कुंड डरी है । मोह
महाचल भेद चली, जगकी जड़ता नप दूर करी है ॥ ज्ञानपयो-
निधिमाहिं रली बहुभङ्ग तरङ्गनिसों उछरा है । या शुचि शारद
गंगनदी प्रति, मैं अंजुलीकर शोस धरी है ॥ १ ॥ या जगमंदिरमें
अनिवार अज्ञान अंधर लयो अति भारो । श्रीजिनकी धुनि दीप-
शिखासम, जो नहिं होत प्रकाशनहारी ॥ तो किस भांति पदार्थ-
पांति, वहां लहते रहते अविचारो । या विधि संत कहै धनि है
धनि, है जिन वैन बड़े उपकारो ॥ २ ॥

रात्रिको भी इसी प्रकार दशन करके तत्पश्चात् दीप धूपसे
नीचे लिखी अथवा जिसपर रुचि हो वह आरती करना चाहिये ॥

२९ पंचपरमेष्ठीकी आरती ।

मनवचननकर शुद्ध पंचपद, पूजो भविजन सुखदाई । सबजन
मिलकर दीप धूप ले, करहुं आरती गुणगाई ॥ ऐक ॥ प्रथमहिं

श्री अरहंत परमगुरु, चौतिस अतिशय सहित बसैं ॥ प्रातिहार्य
वसु अतुल चतुष्टय, सहिय समवसुत मांहि लसैं । श्रुधा तृषा
भय जन्म जरा मृत, रोग शोक रति अरति महा । विस्मय खेद
स्वेद मद निद्रा, राग द्वेष मिल मोह दहा ॥ इन अष्टादश दोष
रहित नित, इन्द्रादिक पूजत आई ॥ सब० ॥ दूजे सिद्ध सदा सुख-
दाता, सिद्धशिलापर राजत हैं । सम्यक्दर्शन ज्ञान वांछ अरु,
सूक्ष्मपणाको छाजत है ॥ गुरु लघू अवगहन शक्ति धर, बाधा-
विन अशरीरा है । तिनका सुमरण नित्य किये तें, शीघ्र नशत
भव पीरा है ॥ या कारण नित चित्तशुद्ध कर, भजहु सिद्ध शिवके
राई । सब० ॥ तीजे श्रीआचार्य परमगुरु छत्तिस गुणके धारी हैं ।
दर्शन ज्ञान चरण तप वीरज, पंचाचार प्रचारी है ॥ द्वादशतप
दशधर्म गुप्तित्रय, षट् आवश्यक नित पालें । सब मुनिजनको
प्रायश्चित दे, मुनिघतके दूषण टालें ॥ ऐसे श्रीआचार्य गुरुनकी,
पूजा करिये चित लाई । सब० ॥ चौथे श्रीउवभायकरणपंकजरज,
सुखदा भविजनको । ग्यारह अंग सुपूव चतुर्दश, पढ़ै पढ़ावें मुनि
गनको ॥ मुनिके सब आचरण आचरें, द्वादश तपके धारी है ।
स्यादवाद सुखकारी विद्या, सब जगमें विस्तारी है ॥ ऐसे श्री-
उवभाय गुरुनके, चरणकमल पूजहु भाई । सब० ॥ पंचम आरति
सर्वसाधुकी, आठवीस गुण मूल धरें । पंचमहाव्रत पंचसमिति-
धर, इन्द्रिय पांचों दमन करें ॥ षट् आवश्यक केशलोच, इक बार
खड़े भोजन करते । दांतन स्नान त्याग भू सोवन, यथाजात
मुद्रा धरते ॥ या विधि “पञ्जालाल” पंचपद, पूजत भवदुख नश
जाई । सब० ॥

इस प्रकार आरता बोलकर नीचे लिखा श्लोक दोहा और मंत्र पढ़कर आरतीको मस्तक चढ़ावे ।

ध्वस्तोद्यमान्धोक्तविश्वविश्वमोहान्धकारप्रतिघातदीपान् ।

दीपैः कनत्काञ्चनभाजनस्थैर जिनेन्द्रसिद्धान्तयतो न यजेऽहम्

दाहा — स्वपरप्रकाशनयोनि अति, दोषक तमकर होन ।

जासूँ पूजूँ परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥१॥

३० आलोचना पाठ ।

दोहा—वन्दां पांचो परम गुरु, चोवीसौं जिनराज ।

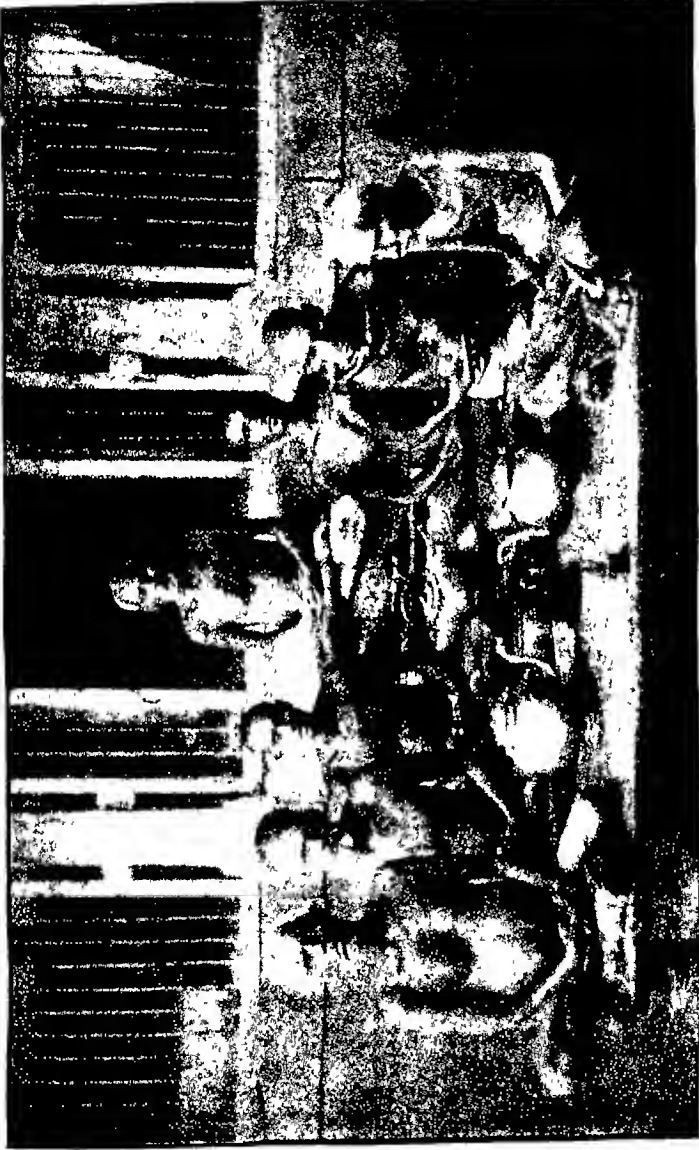
कहं शुद्ध आलोचना, शुद्ध करनके काज ॥१॥

सखो छन्द (१४ मात्रा)

सुनिये जिन अरज हमारी । हम दोष किये अति भारी ॥
 तिनकी अब निवृत्तिकाजा । तुम शरन लही जिनराजा ॥ २ ॥
 इक बे ते चऊ इन्द्री वा । मनरहित सहित जे जीवा ॥ तिनकी नहिं
 कहना धारो । निरदई ह्वे घात विचारो ॥ ३ ॥ समरम्भ समारम्भ
 आरम्भ । मनबचनन कोने प्रारम्भ ॥ कृत कारित मोदन करिकै ।
 काधादि चतुष्टय धरिकै ॥ ४ ॥ शत आठ जु इम भेदनतै । अघ
 कीने परछेदनतै ॥ तिनकी कहुं को लौ कहानी । तुम जानत केवल
 ज्ञानो ॥ ५ ॥ विपरीत एकांत विनयके । संशय अज्ञान कुनयके ॥
 वश हाय घोर अघ कीने । बचतैं नहिं जात कहाने ॥ ६ ॥ कुगुरु-
 नकी सेवा कीनी । केवल अदयाकरि भोनी ॥ या विधि मिथ्यात
 भ्रमायो । चहुंगति मधि दोष उपायो ॥ ७ ॥ हिंसा पुनि झूठ जु
 चोरी । परवनितासों दूगजोरी ॥ आरम्भपरिग्रह भीनो । पुन पाप

जु या विधि कीनो ॥ ८ ॥ सपरस रसना घ्राननको । वस्त्र कान
विषय सेवनको ॥ बहु करम किये मनमानी । कलु न्याय अन्याय
न जानी ॥ ९ ॥ फल पञ्च उदंबर खाये । मधु मांस मद्य
चिन चाहै ॥ नहिं अष्ट मूलगुणधारी । विसन जु सेये दुखकारी
॥ १० ॥ दुइ बीस अभख जिन गाये । सो भी निशदिन भुंजाये ॥
कलु भेदाभेद न पायो । ज्यों त्यों करि उदर भरायो ॥ ११ ॥ अनं-
तान जु बधी जानो । प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानो ॥ संज्वलन चौक-
री गुनिये । सब भेद जु षोडश सुनिये ॥ १२ ॥ परिहास अरति रति
शोग । भय ग्लानि निवेद संजोग ॥ पनवीस जु भेद भये इम ।
इनकं वश पाप किये हम ॥ १३ ॥ निद्रावश शयन कराई । सुपने
मधि दोष लगाई ॥ फिर जागि विषय वन धायो । नाना विध
विषफल खायो ॥ १४ ॥ श्रिये हार निहार विहारा । इनमें तहिं
जतन विचारा ॥ विन देखी धरी उठाई । विन शोधी भोजन
खाई ॥ १५ ॥ तब ही परमाद सतायो । बहु विध विकल्प उप-
जायो ॥ कलु सुधि बुधि नाहिं रही है । मिथ्या मति छाय गई
है ॥ १६ ॥ मरजादा तुम ढिग लीनी । ताहू मैं दोष जु कीनी ॥
भिन्न २ अत्र कैसे कहिये । तुम ज्ञान विषै सब पश्ये ॥ १७ ॥
हा हा मैं दुष्ट अपराधी । त्रसजीवन राशि विराधी । थावरकी
जतन न कीनो । उरमें करुणा नहिं लीनी ॥ १८ ॥ पृथिवी बहु
खोद कराई । महलादिक जागां चिनाई । पुन विन गाल्यो जल
ढोत्यो । पङ्क्तै पवन विलोत्यो ॥ १९ ॥ हा हा मैं अदयाचारी ।
बहु हरितकाय जु विदारी ॥ या मधि जीवनिके खंदा । हम खाये
धरि आनन्दा ॥ २० ॥ हा मैं परमाद बसाई । विन देखे अगनि

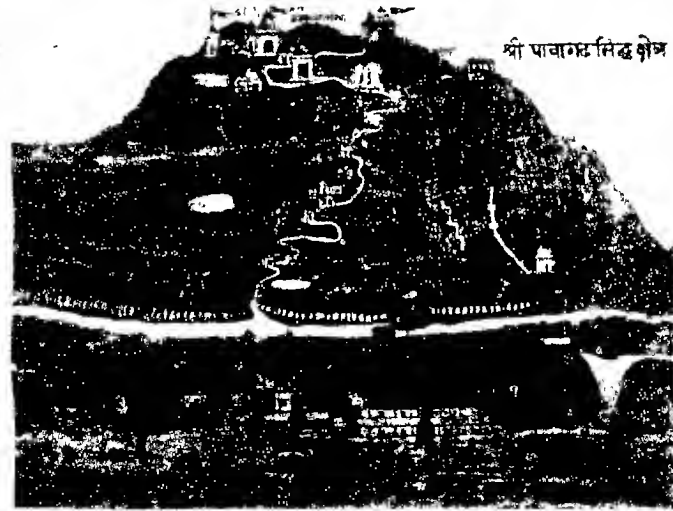
जलाई । तामधि जे जीव जु आये । ते हू परलोक सिधाये ॥२१॥
 बांधो अन रात्रि पिसायो । ईंधन बिन सोध्यो जलायो ॥ भाडू
 ले जांगा बुहारी । चिएटो आदिक जीव विदारी ॥ २२ ॥ जल
 छानि जीवानी कीनी । सोहू पुनि डारि जु दीनो ॥ नहिं जल-
 थानक पहुंचायो । किरिया बिन पाप उपाई ॥ २३ ॥ जल मल-
 मोरिन गिरवायो कृमि कुल बहु घात करायो ॥ नदियनि विच
 चीर धुवाये । कोसनके जीव मराये ॥ २४ ॥ अन्नादिक शोध
 कराई । तामै जु जीव निसराई ॥ तिनका नहिं जतन करायो ।
 गरियालै धूप डरायो ॥ २५ ॥ पुनि द्रव्य कमावन काज । बहु
 आरम्भ हिंसा साज ॥ कीये निसनावश भारी । कसला नहिं रश्च
 विचारी ॥ २६ ॥ इत्यादिक पाप अनंता । हम कीने श्रीभगवंता ॥
 सन्तति चिरकाल उपाई । बानीतै कहिय न जाई ॥ २७ ॥ ताको
 जु उदय जब आयो । नानाविध मोहि सतायो ॥ फल भुंजत
 जिय दुख पावै । बचनै कैसें करि गावै ॥ २८ ॥ तुम जानत
 केवल ज्ञानी । दुख दूर करो शिवथानी ॥ हम तौ तुम शरन
 लही है । जिन तारन विरद सही है ॥ २९ ॥ जो गांवपनी इक
 होवै । सो भी दुखिया दुख खोवै ॥ तुम तीन भुवनके स्वामी ।
 दुख मेटो अंतरजामी ॥ ३० ॥ द्रोपदिको चीर बढ़ायो । सीता पनि
 कमल रचायो ॥ अंजनसे किये अकामी । दुख मेटो अन्तरयामी
 जामा ॥ ३१ ॥ मेरे अग्रगुन न चितारो । प्रभु अपना विरद निहारो ॥
 सब दोष रहित करि स्वामी । दुख मेटहु अन्तरजामी ॥ ३२ ॥
 इन्द्रादिक पदवी न चाहूं । विषयनि में नाहिं लुभाऊं ॥ रागादिक
 दोष हरोजे । परमात्म निजपद दीजे ॥ ३३ ॥



श्री १०८ आचार्य शांतिलागजी, मुनि संघ सहित विराजे हैं।



श्रीविन्ध्यागिरीजी, श्रावणवेलगोला ।



श्री पावागढसिद्धक्षेत्र

श्रीसिद्धक्षेत्र पावागढजी ।

दोषरहित जिनदेवजी, निजपद दीज्यो मोहि ।
 सब जीवनके सुख बढ़े, आनन्द मङ्गल होय ॥३४॥
 अनुभव माणिक पारखी; जौहरी आप जिनन्द ।
 येही वर मोहि दीजिये, चरन शरण आनन्द ॥३५॥
 इति आलोचना पाठ ।

स्वर्गीय कविवर पं० रूपचन्द्रजी पांडे कृत—

३१ पंचकल्याणक पाठ

श्रीगर्भकल्याणक ॥

पणविवि पञ्च परम गुरु, गुन जिनशासनो । सकलसिद्धिदा-
 तार सु, विघ्नविनासनो ॥ शारद अरु गुरु गौतम, सुमतिप्रकासनो
 मङ्गल कर चऊ-संघहिं, पापपणासनो ॥

पाप पणासन गुणहि गरुडा, दोष अष्टादश रहे । धरि ध्यान
 कर्म विनाश केवल—ज्ञान अविचल जिन लहे । प्रभु पञ्चकल्याण-
 क विराजित, सकल सुर नर ध्यावहीं । त्रैलोक्यनाथ सु देव जिन-
 वर जगत मङ्गल गावहीं ॥१॥

जाके गर्भकल्याणक, धनपति आइयो । अवधिज्ञान - पर-
 वान सु इन्द्र पठाइयो ॥ रवि नव बारह योजन, नयारि सुहावनो ।
 कनकरयणमणिमण्डित, मन्दिर अति वनी ॥

अनि वनी पोरि पगारि परिखा, सुवन उपवन सोहिए । नर
 नारि सुन्दर चतुरभेख सु, देख जनमन मोहिए ॥ तहां जनकगृह
 छह मास प्रथमहि रतनधारा बरषियो । पुनि रुचिकवासनि जननि
 सेवा, करहि' सब विधि हरषियो ॥२॥

सुरकुञ्जरसम कुञ्जर धवल धुरन्धरो । केहरि केशरशोभित,
नखशिखसुन्दरो ॥ कमलाकलशन्हवन, दोय दाम सुहावनो । रवि
शशि मण्डल मधुर, मीन जुग पावनी ॥

पावनि कनक घट युगम पूरण, कमलकलित सरोवरो । कल्लो-
लमालङ्कृत सागर, सिंहपीठ मनोहरो ॥ रमणीक अमरविमान
फणिपति,—भुवन भुवि छविछाजये । रुचि रतन राशि दिपन्त दहन
सु, तेजपुञ्ज विराजिये ॥३॥

ये सखि सोलहो सुपने, सूती सयनहीं । देखे माय मनोहर,
पच्छिम-रयनहीं ॥ उठि प्रभात पिय पूछियो, अवधि प्रकाशियो ।
त्रिभुवनपति सुत होसो, फल तिहि भासियो ॥

भासियो फल तिहि चित्ति दम्पति, परम आनन्दित भए ।
छहमास परि नवमास पुनि तहं, रयन दिन सुखसूं गये ॥ गर्भाव
तार महन्त महिमा, सुनत सब सुख पावहीं । भणि 'रूपचन्द्र'
सुदैव (जिनवर, जगत मङ्गल गावहीं ॥

श्रीजन्म कल्याणक ।

मतिश्रुतअवधिविराजित, जिन अब जनमियो । तिहुंलोक
भयो छोभित; सुरगण भरमियो ॥ कल्पवासि घर घंट; अनाहद
बजियो । जोतिष घर हरिनाद, सहज गल गजियो ॥

गजियो सहजहिं शंख भावन,—भुवन शब्द सुहावने ।
विंतरनिलय पटु पटहि वज्जिय, कहत महिमा क्यों बने ॥ कंपत
सुरासन अवधि बल जिन,—जनम निहचै जानियो । धनराज तव
गजराज माया,—मयी निरमय आनियो ॥५॥

योजन लाख गयन्द, वदन-सौ निरमए । वदन वदन वसु दन्त

दन्त सर संठये ॥ सर सर सौ-पणवोस कमलिनी छाजहीं । कम-
लिनी कमलिनी कमल, पचोस विराजहीं ॥

राजहीं कमलिनी कमल अठोतर, सौ मनोहर दल बने । दल
दलहिं अपछरा नटहिं नवरस, हावभाव सुहावने ॥ मणि कनक-
कंकण वर विचित्र, सु अमरमण्डप सोहिये । घन घण्ट चंवर
धुजा पताका, देखि त्रिभुवन मोहिये ॥

तिहिं करि हरि चढ़ि आयउ, सुरपरिवारियो । पुरहिं प्रदच्छना
देत सु, जिन जयकारियो ॥ गुप्त जाय जिन—जननहिं, सुखनिद्रा
रचो । मायामय शिशु राखि तौ, जिन आन्यो सची ॥

आन्यो सची जिनरूप निरखत, नयन तृपति न हूजिये । तब
परम हरपित हृदय हरिने, सहस लोचन पूजिये ॥ पुनि करि प्रणाम
जु प्रथम इन्द्र उछंग धरि प्रमु लोनऊ । ईशानइन्द्र सु चन्द्रछावि
शिर, छत्र प्रभुके दोनऊ ॥७॥

सनतकुमार महेन्द्र, चमर दुहि ढारहीं । शेष शक्र जयकार
शब्द उच्चारहीं ॥ उच्छव सहित चतुर्विधि, सुर हरपित भए । यो-
जन सहस निन्याणवे, गगन उलंघिए ॥

लंघि गये सुरगिरि जहां पांडुक-वन विचित्र विराजही । पां-
डुकशिला तहां अर्द्धचन्द्रसमान, मणि छवि छाजही ॥ योजन
पचास विशाल दुगुणायाम, वसु ऊंचो गणी । वर अष्ट मङ्गल
कनक कलशनि सिंहपीठ सुहावनी ॥८॥

रचि मणिमण्डप शोभित मध्य सिंहासनो । थाप्यौ पूरब-मुख
तहां, प्रभु कमलासनौ ॥ बाजहिं ताल मृदङ्ग; वेणु वीणा घने ।
दुन्दुभि प्रमुख मधुर धुनि और जु बाजने ॥

बाजने बाजहिं सचीं सब मिलि, धवल मंगल गावहीं । पुनि करहिं नृत्य सुरांगना सब, देव कौतुक धावहीं ॥ भरि छीरसा-गर जल जु हाथहिं, हाथ सुर गिरि ल्यावहीं । सौधर्म अरु ई-सानइन्द्र सु, कलस ले प्रभु न्हावहीं ॥ ६ ॥ वदन उदर अवगमह, कलशगत जानिये । एक चार वसु योजन, मान प्रमानिये ॥ सहस-अठोतर कलशा, प्रभुके सिंग ठरै । पुनि शृंगारप्रमुख आचार सबै करै ॥ करि प्रगट प्रभु महिमा महोच्छव, आनि फुनि मातहिं दियो । धनपतिहिं सेवा राखि सुरपति, आप सुरलोकेहिं गयो ॥ जनमाभिषेक महन्त महिमा, सुनत सब सुख पावहीं । भण 'रूप-चन्द्र' सुदेव जिनवर, जगत मंगल गावहीं ॥ १० ॥

श्रीतप कल्याणक ।

भ्रमजलरहित शरीर, सदा सब मल रहिउ । छीर-वरन वर रुधिर, प्रथम आकृति लहिउ ॥ प्रथम सारसंहनन, सुरूप विराजहीं ।

सहज—सुगन्ध सुलच्छन, मण्डित छाजहीं ॥ छाजहिं अतुलबल परम प्रिय हित, मधुर वचन सुहावने । दश सहज अतिशय सुभग मूरति, बाललील कहावने ॥ आवाल काल त्रिलोकपति मन, रुचित उचित जु नित नये । अमरोपनीत पुनीत अनुपम, सकल भोग विभोगये ॥ ११ ॥ भवतन—भोग-विरत्त, कदाचित् चित्तए । धन यौवन प्रिय पुत्ता, कलत्त अनित्तए ॥ कोई न शरन मरन दिन, दुख चहुं गति भस्सो । सुख दुख एकहि भोगते, जिय विधवश परयो ॥

परयो विधि वश आन चेतन, आन जड़ जु कलेवरो । तन अशुचि परतै होय आश्रव, परिहरै तो संवरो ॥ निजरा तपबल होय समकित,—बिन सदा त्रिभुवन भ्रम्यो । दुर्लभ विवेक बिना

न कबहं, परम धरम विषै रम्यो ॥१२॥ ये प्रभु बारह पावन, भावन
भाइया । लौकांतिक वर देव, नियोगी आइया ॥ कुसुमांजलि दे
चरन, कमल शिरनाइया । स्वयंबुद्ध प्रभु थुति करि, तिन समुभा-
इया ॥ समुभाय प्रभु ते गये निजपद, पुनि महोच्छव हरि कियो ।
रुचिरुचिर चित्र विवित्र शिविका, कर सुनन्दन बन लियो ॥ तहं
पञ्चमुष्टो लोंच कीनों, प्रथम सिद्धिनि नुनि करी । मण्डित महाव्रत
पंच दुर्द्धर, सकल परिग्रह परिहरी ॥ १३ ॥ मणिमयभाजन केश,
परिद्विय सुरपती । छोर-समुद्र-जल खिपिकरि, गये अमरावती ॥
तप संजमबल प्रभुको, मनपरजय भयो । मौनसहित तप करत,
काल कछु तहं गयो ॥ गयो कछु तहं काल तपबल, रिद्धि वसु
विधि सिद्धिया । जसु धर्मध्यानबलेन स्वयंगय, सप्त प्रकृति प्रसि-
द्धिया ॥ खिपि सातवें गुण जनन बिन तहं, तोन प्रकृति जु बुधि
बढ़ । करि करण तीन प्रथम शुक्लबल, क्षिपकश्रृंणी प्रभु चढ़े
॥१४॥ प्रकृति छतीस नवै गुण, ध्यान विनासिया । दशमें सूच्छम
लोभ-प्रकृति तहं नासिया । शुक्ल ध्यानपद पूजो, पुनि प्रभू पूरियो ।
बारहमें गुण सोरह, प्रकृति जु चूरियो ॥ चूरियो त्रैसठि प्रकृति
इहाविधि, यातिया कर्मह तणो । तपकियो ध्यान प्रयंत बारह, विधि
त्रिलोक शिरोमणो ॥ निःकर्मकल्याणक सुमहिमा, सुनत सब सुख
पावहीं । भण 'रूपचन्द्र' सुदेव जिनवर जगत मङ्गल गावहीं ॥१६॥

श्रीज्ञानकल्याणक ।

तेरहमें गुण - ध्यान, संयोगि जिनेसुरो । अनन्तवतुष्टयमण्डित,
भयो परमेसुरो ॥ समवशरन तब धनपति, बहुविधि निरमयो ।
आगम जुगति प्रमाण, गगनतल परिठयो ॥ परिठयो चित्रविचित्र

मणिमय, सभामण्डप सोहिये । तिहं मध्य बारह बने कोठे बैठ
सुरनर मोहये ॥ मुनि कल्पवासिनी अरजिका पुनि, ज्योति-भोम-
भुवन तिया । पुनि भवन व्यंतर नभग सुर नर, पशुनि कोठे बैठिया
॥१६॥ मध्यप्रदेश तीन, मणि पीठ तहां बने । गंधकुटी सिंहासन
कमल सुहावने ॥ तीन छत्र सिर शोभित, त्रिभुवन मोहये । अन्त-
रीक्ष कमलासन, प्रभुतन साहिये ॥

सोहए चौसठि चमर ढरन, अशोकतरु तल छाजिये । फुनि
दिव्यधुनि प्रतिशब्द जुत तहं, देवदुंदुभि बाजए ॥ सुरपुहुपवृष्टि
सुप्रभामंडल, कोटि रवि छवि छाजए । इमि अष्ट अनुपम प्रातिहा-
रज, वर विभूति विराजए ॥ १७ ॥ दुइसै योजन मान; सुभिच्छ
चहुं दिशी । गगन गमन अरु प्राणी; चर नहिं अहनिशी ॥ निरुप-
सर्ग निरहार; सदा जगदीसए । आनन चार चहुंदिशि; शोभित
दीसये ॥ दीसये अशेष विशेष विद्या, विभव घर ईसुरपनो । छाया-
विवर्जित शुद्धफटिक; समान तन प्रभुको बनो ॥ नहिं नयन पलक
पतन कदाचित्; केश नख सम छाजहीं । ये घातियाछयजनित अ-
तिशय; दश विचित्र विराजहीं ॥ १८ ॥ सकल अरथमय मागधि;
भाषा जानिये । सकल जीवगत मेत्री—भाव बखानिये । सकल
ऋतु त्र फलफूल, वनस्पति मन हरे । दर्पणसम मनि अवनि; पवन
गति अनुसरे ॥ अनुसरे परमानन्द सबको; नारि नर जे सेवता ।
योजन प्रमाण धरा सुमार्जहिं; जहां मारुत देवता ॥ पुनि करहि
मेघकुमार गंधो—दक सुवृष्टि सुहावनी । पदकमलतर सुर खिपहिं
कमल सु; धरणि शशिशोभा बनी ॥ १९ ॥ अमल गगन तल अरु
दिशि तहं अनुहारहीं । चतुरनिकाय देवगण; जय जयकारहीं ॥

धर्मचक्र चले आगे; रवि जहं लाजहीं । फुनि भृंगार-प्रमुख वसु;
मंगल राजहीं ॥ राजहीं चौदह चार अतिशय; देवरजित सुहावने ।
जिनराज केवल ज्ञानमहिमा; अवर कहत कहा बने ॥ तब इंद्र-
आनि कियो महोच्छव; सभा शोभित अति वनी ॥ धर्मोपदेश दियो
तहां; उच्छरिय वानी जिनतनी ॥ २० ॥ श्रुया तृषा अरु राग; द्वेष
असुहावने । जनम जरा अरु मरण; त्रिदोष भयावने ॥ रोग शोक
भय विस्मय, अरु निद्रा घणो । खेद स्वेद मद मोह; अरति चिंता
गणो ॥ शणिये अठारह दोष तिनकरि; रहित देव निरञ्जनो ॥ नव
परमकेशल लब्धिमंडित; शिवरमणि-मनरञ्जनो ॥ श्रीज्ञानकल्याणक
सुमहिमा; सुनत सब सुख पावहीं । भणि 'रूपवन्द' सुदेव जिनवर
जगत मंगल गावहीं ॥२१॥

श्री निर्वाण कल्याणक ।

केवलदृष्टि चराचर; देख्यो जारिसो । भविजनप्रति उपदेश्यो;
जिनवर तारिसो ॥ भवभयमोत महाजन; शरणौ आइया । रत्नत्रय-
लच्छन शिवपंथ लगाइया ॥ लगाइया पंथ जु भव्य फनि; प्रभु
नृत्तिय सुकल जू पूरियो । तजि तेरहें गुणथान योग; अयोग पथ-
पग धारियो ॥ पुनि चौदहें चौथे सुकलबल, बहत्तर तेरह हती ।
इमि प्राति वसुविधि कर्म पढ़ुंच्यो, समयमें पंचमगती ॥२२॥ लोक-
शिखर तनुवान, बलयमहं संठियो । धर्मद्रव्यविन गमन न; जिहिं
आगे कियो ॥ मयनरहित मूषोदर; अवर जारिसो । किमपि हीन
निजननुते, भयौ प्रभु तारिसो ॥ तारिसो पर्जन्य नित्य अविचल;
अर्थपर्जन्य क्षणक्षयी । निश्चयनयेन अनन्तगुण विवहार, नय वसु
गुणमयी ॥ वस्तु स्वभाव विभावविरहित, शुद्ध परणति परिणयो ।

चिद्रूप परमानन्द मंदिर, सिद्ध परमात्म भयो ॥ १३ ॥ तनुपरमाणू
 दामिनिपर, सब खिर गये । रहे शेष नखकेशरूप; जे परिणये ॥ तब
 हरिप्रमुख चतुरविधि; सुरगण शुभ सच्या । माया मई नखकेश
 रहित जिनतनु रच्यो ॥ रचि अगर चन्दन प्रमुख; परिमल; द्रव्य
 जिन जयकारिया । पद पतत अग्निकुमार मुकटानल सुवाधि
 संस्कारियो ॥ निर्वाण कल्याणक सुमहिमा सुनत सब सुख पा-
 इयो । भण रूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगति मङ्गल गाइयो ॥ मैं
 मतिहीन भक्तिवश भावना भाइयो । मंगल गीत प्रबन्ध सो निज
 गुण गाइयो ॥ ज नर सुनहिं बखानहीं स्वर धरि गावहीं । मन
 बांछित फल ते नर निश्चय पावहीं ॥ पावैं ते आठो सिद्धि नव-
 निधि मन प्रतीत जो आनिये । भ्रम भाव छूटै सकल मनके जिन
 स्वरूप ये जानिये । पुनि हरै पातक टरत विघ्न सो होय मङ्गल
 नित नये । भण रूपचन्द्र त्रिलोकपति जिनदेव चौसंगहि गये ॥

॥ इति श्रीजिनेन्द्रनिर्वाण कल्याण मङ्गल समाप्तम् ॥

३२ छहढाला

श्रीयुत पण्डित दौलतरामजी कृत—

तीन भुवनमें सार, वीतराग विज्ञानता ।

शिवस्वरूप शिवकार, नमहुं त्रियोग समहारिके ॥

प्रथमढाल—चौपाई छन्द १५ मात्रा ।

जे त्रिभुवनमें जीव अनन्त । सुख चाहैं दुखते भयवन्त ॥ तातें
 दुखहारी सुखकार । कहैं सीख गुरु करुणाधार ॥ १ ॥ ताहि सुनो
 भवि मन थिर आन । जो चाहो अपने कल्याण ॥ मोह महा मद

पियो अनादि । भूल आपको भरमत बादि ॥ २ ॥ तास भ्रमण को
 है बहु कथा पै कछु कहूं कही मुनि यथा ॥ काल अनन्त निगोद
 मंभार । बीतीं एकेन्द्री तन धार ॥ ३ ॥ एक श्वासमें अठदशबार ।
 जन्मो मरो भरो दुख भार ॥ निकस भूमि जल पावक भया । पवन
 प्रत्येक बनस्पति थयो ॥ ४ ॥ दुर्लभ लहि ज्यों चिन्तामणी । त्यों
 पर्याय लहो त्रस तणी ॥ लट पिपील अलि आदि शरीर । धरधर
 मरो सही बहुपीर ॥ ५ ॥ कबहुं पंचेन्द्रिय पशु भयो । मन बिन नि-
 पट अज्ञानो थयो । सिंहादिक सैनी हूँ कूर । निर्बल पशु हति खाए
 भूर ॥ ६ ॥ कबहुं आप भयो बलहीन सबलनकर खायो अति दीन ॥
 छेदन भेदन भूखरु प्यास । भार बहन हिम आतप त्रास ॥ ७ ॥ बध
 बंधन आदिक दुख घनै । कोट जीभकर जात न भनै ॥ अतिसंक्लेश
 भावने मरो । घोर शुभ्र सागरमें परो ॥ ८ ॥ तहां भूमि परसत
 दुख इसो । बीछू सहस डसें नहिं तिसो ॥ तहां राध श्रोणित
 बाहिनी । कृमि कुल कलित देह दाहिनो ॥ ९ ॥ सेमरतरु जुत दल
 असिपत्र । असि ज्यों देह विदारें तत्र ॥ मेरुसमान लोह गालजाय ।
 ऐसी शीत उष्णता थाय ॥ १० ॥ तिल तिल करें देहके खण्ड ।
 असुर भिड़ावें दुष्ट प्रचण्ड ॥ सिंधु नीरते प्यास न जाय । तो
 पण एक न वृंद लहाय ॥ ११ ॥ तीन लोकको नाज जो खाय ।
 मिटै न भूख कणा न लहाय ॥ ये दुख बहु सागरलों सहै । करम
 योगते नरगति लहै ॥ १२ ॥ जननी उदर बसो नवमास । अङ्ग सकु-
 चते पाई त्रास ॥ निकसत जे दुख पाये घोर । तिनको कहत न
 आवे ओर ॥ १३ ॥ बालपनेमें ज्ञान न लह्यो । तरुण समय तरुणी
 रत रह्यो ॥ अर्द्धमृतक सम बूढ़ापनो । कैसे रूप लखें आपनो ॥ १४ ॥

कभी अकाम निर्जरा करै । भवनत्रिकमें सुर—तन धरै ॥ विषय
चाह दावानल दह्यो । मरत विलाप करत दुःख सह्यो ॥१५॥ जो
विमानवासी हू थाय । सम्यक्दर्शन बिन दुख पाय ॥ तहँते चय
थावर तन धरै । यों परिवर्तन पूरे करै ॥ १६ ॥

द्वितीय ढाल—पदरोछंद १५ मात्रा ।

ऐसे मिथ्या दृग ज्ञान चर्णा । वश भ्रमन भरत दुःख जन्म मर्ण ॥
ताते इनको तजिये सुज्ञान । सुन तिन संक्षेप कहं बखान ॥ १ ॥
जीवादि प्रयोजन भूततत्त्व । सरधै तिन मांहि विपर्ययत्व ॥ चेत-
नको है उपयोग रूप । बिन मूर्ति चिन्मूर्ति अनूप ॥२॥ पुद्गल नभ
धर्म अधर्म काल । इनतैन्यारी है जीव चाल ॥ ताकूँ न जान विप-
रीति मान । करि करै देहमें निज पिछान ॥३॥ मैं सुखी दुखी मैं रडू
राव । मेरो धन गृह गोधन प्रभाव ॥ मेरे सुत तिय मैं सबल दीन ।
वे रूप सुभग मूरख प्रवीन ॥४॥ तन उपजत अपनो उपजजान ।
तन नशत आपको नाश मान । रागादि प्रगट ये दुःख दैन ।
तिनहीको सेवन गिनत चैन ॥५॥ शुभ अशुभ वंध्रके फल मकार ।
रति अरत करै निजपद बिसार । आनम हितहेतु विराग ज्ञान । ते
लखे औपकूँ कष्ट दान ॥६॥ रोके न चाह निज शक्ति खोय । शिव-
रूप निराकुलता न जोय । या ही प्रतीत युत कलुक ज्ञान । सो
दुखदायक अज्ञान जान ॥७॥ इन जुत विषयनिमें जो प्रवृत्त । ताकूँ
जानो मिथ्या चरित्त ॥ यो मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह । अब जे
गृहीत सुनिये सुतेह ॥८॥ जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव । पोखैं चिर
दर्शन मोह एव ॥ अन्तर रागादिक धरें जेह । बाहर धन अंख-
रते सनेह ॥९॥ धारे कुलिंग लहि महत भाव । ते कुगुरु जन्म जल

उमलनाव ॥ जे राग द्वेष मलकरि मलोन । बनितागदादि जुन
चिन्ह चोन्ह ॥१०॥ तेहैं कुशेव तिनकी ज, सेव । शठ करत न तिन
भवभ्रमणछेव ॥ गगादि भाव हिंसा समेत । दर्वित प्रसथावर मरण
खेत ॥११॥ जे क्रिया तिन्हें जानहु कुधर्म । निस सरधे जीव लहे
अशर्म ॥ यांकू गृहीत मिथ्यात जान । अब सुन ग्रहीत जो है अ-
जान ॥१२॥ एकान्त बाद दूषित समस्त । विषयादिक पोशक अ-
प्रशस्त ॥ कपिलादि रचित श्रुतका अभ्यास । सोहै कुबोध बहु देन
त्रास ॥१३॥ जो ख्यातिलाभ पूजादि चाह । धर करत विविध
विध देहदाह ॥ आतम अनात्मके ज्ञान हीन । जे जे करनो तन
करन छीन ॥१४॥ ते सब मिथ्या चारित्र त्याग । अब आतमके
हितपथ लाग ॥ जगजाल भ्रमणको देय त्याग । अब दोलत निज-
आतमसु पाग ॥१५॥

तृतीय ढाल । जोगी रासा ।

आतमको हित है सुख सो सुख, आकुलता बिन कहिये ।
आकुलता शिवमांहि न तातैं, शिव मग लाग्यो चाहिये ॥ सम्यक्-
दर्शन ज्ञान चरन शिव, मग सो दुबिधि बिचारो । जो सत्यारथ
रूपसो निश्चय, कारण सों व्यवहारो ॥१॥ परद्रव्यनतैं भिन्न आप
मैं, रुचि सम्यक्त भला है । आप रूपको जानपनो सो, सम्यक ज्ञान
कला है ॥ आपरूपमें लीन रहे धर, सम्यक चारित सोई । अब
शिवहार मोख-मग सुनिये, हेतु नियतको होई ॥ २ ॥ जीव अजीव
तत्व अरु आश्रय, बंधरु संवर जानो । निजंर मोक्ष बहे निज
तिनको, ज्योको त्यों सरधानो ॥ है सोई समकित बिबहारी, अब
इन रूप बखानो । तिनको सुन सामान्य विशेषै, दिढ़ प्रतीति उर

आनो ॥ ३ ॥ बहिरातम अन्तःआतम परमातम जीव त्रिधा है ।
 देह जीवको एक गिने, बहिरातम तत्व मुधा है ॥ उत्तम मध्यम
 जघन त्रिविधिके, अन्तर आतम ज्ञानी । त्रिविधि संग बिन शुध
 उपयोगी, मुनि उत्तम निजध्यानी ॥ ४ ॥ मध्यम अन्तर आतम
 हैं जे, देशव्रती आगारी । जघन कहे अविरत समदृष्टि, तीनों
 शिवमगचारी ॥ सकल निकल परमातम द्वैविधि तिनमें घाति
 निवारी । श्री अरहंत सकल परमातम, लोकालोक निहारी ॥ ५ ॥
 ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्ममल वर्जित सिद्ध महंता । ते हैं निकल
 अमल परमातम, भोगे शर्म अनन्ता ॥ बहिरातमता हेय जानि तजि,
 अन्तर आतम हूजे । परमातमको ध्याय निरन्तर, जो नित आनंद
 पूजे ॥ ६ ॥ चेतनता बिन सो अजीव है, पंच भद ताके हैं । पुद्गल
 पंचवरण रस गंध दो फरसबस् जाके हैं ॥ जिय पुद्गलको चरन
 सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी । तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन बिन
 मूर्ति निरूपी ॥ ७ ॥ सकलद्रव्यको वास जासमें, सो आकाश
 पिछानो । नियत बर्तना निशिदिन सो व्यवहार काल परिमानो ॥
 यो अजीव अब आश्रव सुनिये, मन वच काय त्रियोगा । स्थिया
 अविरत अरु कषाय पर,—माद सहित उपयोगा ॥ ८ ॥ ये ही
 आतमको दुखकारण, ताते इनको तजिये । जीव प्रदेश बंध
 विधिसों सो, बंधन कबहुं न सजिये ॥ शमदमते जो कर्म न आवै,
 सो संवर आदरिये । तप बलतैं विधि भरन निरजरा, ताहि सदा
 आचरिये ॥ ९ ॥ सकलकमेतें रहित अवस्था, सो शिव थिर सुख
 कारी । इहिबिधि जो सरधा नतवनको, सो समकित व्यवहारो ॥
 देव जिनेन्द्र गुरु परिग्रह बिन, धर्मदयायुत सारो । येह मान सम-

कितको कारण, अष्ट अंग जुत धारो ॥ १०॥ वसुमद टारि निवारि
 त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो । शंकादिक वसु दोष बिना,
 संवेगादिक चित पागो ॥ अष्ट अंग अरु दोष पचीसों, अब संक्षे-
 पहु कहिये । बिन जाने तैं दोष गुननकों, कैसे तजिये गहिये ॥ ११॥
 जिन बचमें शंका न धार वृष, भवसुख वांछा भाँनै । मुनितन मलिन
 न देख घिनावै, तत्वकुतत्व पिछानै ॥ निजगुण अरु पर औगुण
 ढाँकै, वा निजधर्म बढावै । कामादिक कर वृपतैं चिगते, निज
 परको सु दिहावै ॥ १२॥ धर्मोसो गऊ बच्छ प्रीति सम, कर
 जिन धर्म दिपावै । इन गुणतैं विपरीत दोष वसु, तिनको सतन
 खपावै ॥ पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै ।
 मद न रूपको मद न ज्ञानको, धनबलको मद भाँनै ॥ १३॥ तपको
 मद न मद जु प्रभुताको; करै न सो निज जानै । मद धारै तो यही
 दोष वसु; समकितको मल ठानै ॥ कुगुरु कुदेव कुवृष सेवककी;
 नहिं प्रशंस उचरै है । जिन मुनि जिन श्रुति बिन कुगुरादिक,
 तिन्हें न नमन करे है ॥ दोष रहित गुणसहित सुश्री जे; सम्यक्-
 दर्श सजै हैं; चरित मोहवश लेश न संजम; पें सुरनाथ जजै हैं ॥
 गेही पै गृहमें न रचे ज्यौ; जलमें भिन्न कमल है । नगरनारिको
 प्यार यथा कावेमें हेम अमल है ॥ १५॥ प्रथम नरक बिन षटभू
 ज्योतिष; वान भवन सब नारी । थावर विकलत्रय पशुमें नहि;
 उपजत सम्यक्धारी ॥ तीनलोक तिहुंकाल माहिं नहिं; दर्शन सो
 सुखकारी । सकल धरमको मूल यही इस; बिन करनी दुखकारी
 ॥ १६॥ मोक्षमहलकी परथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान चरित्रा । सम्य-
 कता न लहै सो दर्शन; धारो भव्य पवित्रा ॥ दौल समझ सुन चेत

सयाने, काल वृथा मत खोवें । यह नरभव फिर मिलन कठिन है
जो सम्यक् नहिं होवै ॥१७॥

चतुर्थे ढाल ।

दोहा – सम्यक श्रद्धा धारि पुनि, सेवहु सम्यकज्ञान ।

स्वपर अथे बहु धर्मयुत, जो प्रगटावन भान ॥

रोलाछन्द २५ मात्रा ।

सम्यक साथै ज्ञान, होय पै भिन्न अराधा । लक्षण श्रद्धा जान
दुहमें भेद अबाधो ॥ सम्यक कारण जान, ज्ञान कारज है सोई ।
युगपत् होतेहू, प्रकाश दीपकतैं होई ॥ १ ॥ तास भेद दो है, परोक्ष
परतक्ष तिन माहीं । मति श्रुत दीय परोक्ष, अक्ष मनतैं उपजाहीं ॥
अवधि ज्ञान मन पर्यय, दो है देश प्रत्यक्षा । द्रव्यक्षेत्र परिमाण,
लिये जानै, जिय स्वच्छा ॥२॥ सकल द्रव्यके गुण, अनन्त पर्याय
अनन्ता । जानैं ऐकै काल, प्रगट केवलि भगवन्ता ॥ ज्ञान समान न
आन, जगतमें सुखको कारण । इहि परमामृत जन्म, प्ररामृत रोग-
निवारन ॥३॥ कोटिजन्म तप तपै, ज्ञान बिन कर्म भरै जे । ज्ञानी
के छिनमांहि जि-गुमितैं सहज टरै ते ॥ मुनिब्रत धार अनन्त, बार
गोवक उपजायो । पै निज आनम ज्ञान बिना सुखलेश न पायो ॥
तातैं जिनवर कथित, तरव अभ्यास करीजो । संशय विभ्रम मोह,
त्याग आपो लख लीजै ॥ यह मानुष पर्याय, सुकुल सुनघो जिन-
वानी । इह विधि गये न मिलै, सुमनि ज्यो उदधि समानी ॥५॥
धन समाज गज बाज, रात तो काज न आवै । ज्ञान आपको रूप
भये, फिर अवल रहावै ॥ तास ज्ञानको कारण स्वपर बिबेक ब-
खानो । कोटि उपाय बनाय, भव्य ताको उर आनो ॥६॥ जो पुरख

शिव गए, जाहिं अब आगे जे हैं । सो सब महिमा ज्ञान-तणी
मुनिनाथ कहे हैं ॥ विषय चाह दबदाह, जगत जन अरनि दभावे ।
तास उपाय न आन, ज्ञानघन — घान बुभावे ॥७॥ पुण्य पाप फल
माहि, हरष विलखो मत भाई । यह पुद्गल पर्याय, उपजि विनशौ
थिर थाई ॥ लाख बातकी बात, यही निश्चय उर लावो । तोरि
सकल जगदन्द—फन्द निज मातम ध्यावो ॥८॥ सम्यग्ज्ञानी होय
बहुरि दृढ़ चारित लीजै । एकदेश अरु सकल देश, तसु भेद क-
हीजै । ब्रसहिंसाको त्याग, वृथा थावर न संघारे । परबधकार
कठोर निन्द्य, नहिं बयन उचारै ॥९॥ जलमृत्तिका विन और, नाहिं
कलु गहै अदत्ता । निज बनिता विन सकल, नारिसौं रहै विरत्ता ॥
अपनी शक्ति विचार, परिग्रह थोरो राखे । दस दिश गमन प्रमाण
ठान, तसु सोम न नाखे ॥ ताहुमें फिर ग्राम, गली ग्रह बाग
बजारा । गमनागमन प्रमाण ठान, अन सकल निवारा । काहूके
धनहानि, किसी जय हार न चिंतै । देय न सो उपदेश, होय अघ
बनज कृपितै ॥११॥ कर प्रमाद जल भूमि, वृक्ष पावक न विराधै ।
असि धनु हल हिंसोप—करन नहिं, दे जश लाधै ॥ राग द्वेष कर-
तार, कथा कबहुं न सुनीजै । औरहु अनरथ दण्ड, हेतु अघ तिन्हें
न कीजै ॥१२॥ धर उर समता भाव, सदा सामायक करिये । प-
रब चतुष्टय माहि, पाप तज प्रोषध धरिये ॥ भोग और उपभोग,
नियमकर ममत निवारै । मुनिको भोजन देय, फेर निज करहि
अहारै ॥१३॥ बारह व्रतके अतीचार, पाय पन पन न लगावै । मरण
समय सन्यास, धार तसु दोष नशावै ॥ यों श्रावक व्रत पाल. स्वर्ग
सोलम्न उपजावै । तहंते चय नर जन्म, पाय मुनि हूवै शिव जावै ।

पञ्चम ढाल ।

मनोहर छन्द १४ मात्रा ।

मुनि सकल घनी बड़ भागी । भवभोगनतै वैरागी ॥ वैराग्य
 उपावन माई । चिंतै अनुप्रेक्षा भाई ॥१॥ इन चिन्तत समरस जागे,
 जिम ज्वलन पवनके लागै ॥ जबही जिय आतम जानै । तबही
 जिय शिवसुख ठानै ॥२॥ जोवन गृह गो धन नारी । हय गय उन
 आन्नाकारी ॥ इन्द्रिय भोग छिन थाई । सुरधनु चपला चप-
 लाई ॥३॥ सुर असुर खगाधिप जेतै । मृत ज्यों हरि काल दले
 ते ॥ माणिमंत्रतंत्र बहु होई । मरते न बचावे कोई ॥४॥ चहुंगति दुख
 जीव भरै हैं । परिवर्तन पञ्च करै हैं ॥ सब विधि संसार असारा । तामें
 सुख नाहिं लगारा ॥५॥ शुभ अशुभ कर्म फल जेतै । भोगें जिय
 एकहिं तेतै ॥ सुत दारा होय न सोरी । सब स्वारथके हैं भीरी ॥६॥
 जलपय ज्यों जियतन मेला । पै भिन्न २ नहिं मेला ॥ जो प्रगट
 जुदे धन धामा । क्यों है इक मिल सुत रामा ॥७॥ पल रुधिर
 राध मल थैलो । कीकस बसादितै मैलो ॥ नव द्वार बहै घिनकारी
 अस देह करै किम यारो ॥८॥ जो योगनकी चपलाई । तातें है
 आश्रव भाई ॥ आश्रय दुखकार घनेरे । बुद्धिवंत तिन्हें निरधरे ॥९॥
 जिन पुण्य पाप नहिं कीना । आतम अनुभव चित दीना ॥ तिनहीं
 विधि आवत रोके । संबर लहि सुख अवलोके ॥१०॥ निज काल
 पाय विधि भरना । तासों निजकाज न सरना ॥ तप करि जो कर्म
 खपावे । सोई शिवसुख दरसावे ॥११॥ किनहुं न करो न धरै को ।
 यद् द्रव्यमयी न हरै को ॥ सो लोकमाहिं बिन समता । दुख सहै
 जीव नित भ्रमता ॥१२॥ अंतिम ग्रीवकलोंको हृद । पायो अनन्त

विरिचों पद । पर सम्यक्ज्ञान न लाधौ । दुर्लभ निजमें मुन साधौ
॥ १३ ॥ जे भाव मोहतै न्यारे । दृग्ज्ञान वृतादिक सारे ॥ सो
धर्म जवै जिय धारै । तबहीं सुख अवल निहारै ॥ १४ ॥ सो धर्म
मुनिनकरि धरिये । तिनकी करतूति उचरिये ॥ ताकूँ सुनिये
भवि प्राणी । अपनो अनुभूति पिछानी ॥ १६ ॥

अथ षष्ठम ढाल—हरिगीता छंद २८ मात्रा ।

षट्काय जीवन हननतै सब, बिध दरब हिंसा टरी । रागादि
भाव निवारतै, हिंसा न भावित अवतरी ॥ जिनके न लेश मृषा न
जल तृण, हूं बिना दीर्यों गहैं । अष्टदश सहस विधि शीलधर
चिदब्रह्ममें नित रमि रहैं ॥ १ ॥ अन्तर चतुर्दश भेद बाहर, संग दश-
धातै टलै । परमाद तजि चऊ करम हो लखि, समिति ईर्यातै चलै ॥
जग सुहितकर सब अहित हर, श्रुति सुखद सब संशय हरै । भ्रम
रोग हर जिनके बचन मुख, चद्रतै अमृत भरै ॥ २ ॥ छायालीस
दोष बिना सुकुल, श्रावक तणे घर अशनको । लै तप बढ़ावन हेत
नहिं तन; पोषते तजि रसनको ॥ शुचि ज्ञान संयम उपकरण लखि,
कै गहैं लखिकै करै । निर्जंतु थान विलोक तन मल, मूत्र श्लेषम
परिहरै ॥ ३ ॥ सम्यकप्रकार निरोध मन वच, काय आतम ध्या-
वते । तिन सुधिर मुद्रा देखि मृगगण, उपल खाज खुजावते ॥
रस रूप, गंध तथा फरस अरु, शब्द शुभ असुहावने । तिनमें न
राग विरोध पंचेंद्रिय जयन पद पावने ॥ ४ ॥ समता सम्हारै धुति
उचारै; बन्दना जिन देवको । नित करै श्रुति रति करै प्रतिक्रम
तजै तन अहमेवको ॥ जिनके न न्हौन न दंतधोवन, लेश अंबर
आवरण । भूमाहिं पिछली रयनिमें कछु शयन एकासन करण ॥ ५ ॥

इकबार लेत अहार दिनमें खड़े अलप निज पानमें । कचलौंच करत न डरत परिपह, सों लगे निज ध्यानमें ॥ अरि मित्र महल मसान वंचन, कांच, निन्दन धुतिकरण । अर्धावतारण असि प्रहारण-में सदा समता धरण ॥६॥ तप तपै द्वादश धरें वृष दश, रत्नत्रय सेवै सदा । मुनि साथमें वा एक चिचरै, चहै नहिं भवसुख कदा ॥ यों हैं सकल संयम चरित सुनिये स्वरूपाचरण अब । जिस होत प्रगटे आपनी निधि, मिटै परकी प्रवृत्ति सब ॥७॥ जिन परम पैनी सुबुधि छैनी डार अन्तर भेदिया । वरणादि अरु रागादिने, निज भावको न्यारा किया ॥ निजमाहिं निजके हेत निजकर, आपको आपै गहो । गुणगणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, मंभार कलु भेदन रहो ॥ जहं ध्यान ध्याता ध्येयको न, विलकष बच भेद न जहां । चिद्भाव कर्म चिदेश कर्ता, चेतना किरिया तहां ॥ तीनों अभिन्न अखिन्न शुद्ध, उपयोगकी निश्चल दशा । प्रगटी जहां दृग्ज्ञानव्रत ये, तीनधा एकै लशा ॥ ६ ॥ परमाण नय निक्षेपको न उद्योत, अनुभवमे दिखै । दृग्-ज्ञान—सुख-बल मय सदा नहिं; आन भाव जो मो चिखौ ॥ मैं साध्य साधक मैं अबाधक, कमें अरु तसु फलनितै ॥ वितपिंड चंड अखंड, सुगुन करड च्युत पुनि कल-नितै ॥ १० ॥ यों चिन्त्य निजमें धिर भए तिन, अकथ जो आनन्द लहो । सो इन्द्र नाम नरेन्द्र वा अह-मिन्द्र कै नाहीं कह्यो ॥ तबही शुक्ल ध्यानाग्नि करि चउ, घात विधि कानन दहो । सब लख्यो केवलज्ञान करि भवि, लोककों शिवमग कह्यो ॥११॥ पुनि घाति शेष अघात बिधि, छिनमाहिं अष्टम भू वसे । बसु कर्म विनसै सुगुण बसु, सम्यक्त आदिक सब लसै ॥ संसार खार अपार पारावार, तरि

तीरहिं गये। अविकार अधल अरूप शुभ, चिद्रूप अविनाशी भये
॥ १२ ॥ निजमाहिं लोक अलोक गुण, पर्याय प्रतिबिम्बित थये।
रहि हैं अनन्तानन्त काल यथा तथा शिव परणये ॥ धनि धन्य
हैं जे जीव नरभव, पाय यह कारज किया। तिनही अनादा भ्रमण
पञ्च, प्रकार तजि बर सुख लिया ॥ १३ ॥ मुख्योपचार दुभेद यों
वड़, भागि रत्न त्रय धरें। अरु धरेंगे ते शिव लहैं तिन, सुजशजल-
जगमल हरैं ॥ इम जानि आलस हानि साहस, ठानि यह सिद्ध
आदरों। जबलों न रोग जरा गहै तब लों जगत निजहित करों
॥ १४ ॥ यह राग आग दहै सदा तातै समामृत पीजिये ॥ चिर भजे
विषय कषाय अब तो, त्याग निजपद लोजिये ॥ कहा रच्यो पर
पदमें न तेरो, पद यहै क्यों दुख सहे। अब दौल होउ सुखी स्वपद
रचि, दाव मत चूकौ यहै ॥ ५ ॥

दोहा—इक नव वसु इक वर्षकी, तीज सुकुल बैशाख। करयो
तत्त्व उपदेश यह, लखि बुधजनकी भाख ॥ १ ॥ लघु धी तथा
प्रमादते, शब्द अर्थकी भूल। सुधो सुधार पढो सदा; जो पावो
भव कूल ॥ २ ॥

३३ समाधिक पाठ भाषा ।

अथ प्रथम प्रतिक्रमण कर्म ।

काल अनन्त भ्रम्यो जगमें सहियो दुख भारी। जन्ममरण नित
किये पापको है अधिकारी ॥ कोटि भवांतरमाहिं मिलन दुर्लभ

सामायक धन्य आज मैं भयो योग मिलियो सुख दायक ॥ १ ॥
 हे सर्वज्ञ जिनेश किये जे पाप जु मैं अब । ते सब मनवचकाय
 योगकी गुति बिना लभ ॥ आप समीप हजरमाहिं मैं
 खड़ो खड़ो अब । दोष कहं सो सुनो करो नठ दुख देहिं जब
 ॥ २ ॥ क्रोध मान मद लोभ मोह मायावश प्राणी । दुःख-
 सहित जे किये दया तिनकी नहिं आनी ॥ बिना प्रयोजन एकेंद्रिय
 बिति चउ पंचेंद्रिय । आप प्रसादहि मिटै दोष जो लग्यो मोहि जिय
 ॥ ३ ॥ आपसमें इक ठोर थापि करि जे दुख दीने । पेलि दिये
 पगतलें दाबकरि प्राण हरोने ॥ आप जगतके जीव जिते तिन
 सबके नायक । अरज करौं मैं सुनो दोष मेढो सुखदायक ॥ ४ ॥
 अंजन आदिक चोर महा घनघोर पापमय । तिनके जे अपराध भये
 ते क्षिमा क्षिमा किय ॥ मेरे जे अब दाप भये ते क्षमों दयानिधि ।
 यह पड़िकोणो कियो आदि षट कर्ममाहि विधि ॥ ५ ॥

अथ द्वितीय प्रत्याख्यानकर्म ।

जा प्रमादवश होय विराधे जीव घनेरे । तिनको जो अपराध
 भयो मर अघ ढेरे ॥ सो सब भूठो होउ जगतपतिके परसादै । जा
 प्रसादतैं मिलै सर्व सुख दुःख न लाधै ॥ ६ ॥ मैं पापी निर्लज्ज दया-
 करि हीन महाशठ । किये पाप अति घोर पापमति होय चित्त दुठ ॥
 निदूहूं मैं बारबार निज जियको गरहूं । सबविध धर्म उपाय पाय
 फिर पापहिं करहूं ॥ ७ ॥ दुर्लभ है नरजन्म तथा श्रावककुल भारी ।
 सतसंगति संयोग धर्म जिन श्रद्धाधारी ॥ जिनबचनामृतधार समा
 वतैं जिनवाणी । तौहू जीव संहारे धिक धिक धिक हम जानी ॥ ८ ॥
 इन्द्रियलंपट होय खोय निज ज्ञान जमा सब । भ्रमानी जिम करै

तिसो विधि हिंसक हूँ अब ॥ गमनागमन करंतो जीब विराधे
भोले । ते सब दोष किये निन्दू अब मनबच तोले ॥६॥ आलोचन-
विध थकी दोष लागे जू घनेरे । ते सब दोष बिनाश होउ तुमतैं
जिन मेरे ॥ बार बार इस भांति मोह मद दोष कुटिलता । ईर्षादि-
कतैं भये निन्दिये जे भयभीता ॥१०॥

तृतीय सामायिक कर्म ।

सब जीवनमें मेरे समताभाव जग्यो है । सब जिय मो सम
समता राखो भाव लग्यो है ॥ आर्त्ता रौद्र द्वय ध्यान छांड़ि करिहं
सामायक ॥ संयम मो कब शुद्ध होय यह भाव बधायक ॥ ११ ॥
पृथिवी जल अरु अग्नि वायु चउ काय बनस्पति । पांचहि थावर-
माहिं तथा त्रस जीव वसैं जिन ॥ वे इन्द्रिय तिय चउ पंचेंद्रिय-
माहिं जीव सब । तिनमें क्षमा कराऊँ मुकर क्षमा करो अब
॥१२॥ इस अवसर मैं मेरे सब सम कञ्चन अरु त्रण । महल मसान
समान शत्रु अरु मित्रहि सम गण ॥ जामन मरन समान जानि हम
समता कीनो । सामयिकका काल जिनै यह भाव नवोनो ॥ १३ ॥
मेरो है इक आत्म ताने ममत जु कीनौ ॥ ओर सबै मम भिन्न
जानि समतारस भोनौ ॥ मात पिता सुत वंधु मित्र त्रिय आदि
सबे यह । माते न्यारे जानि जथारथरूप कयों गह ॥ १४ ॥ मैं
अनादि जगजालमाहिं फंस रूप न जान्यो । एकेंद्रिय दे आदि
जन्तुको प्राण हराण्यो ॥ ते अब जीव समूह सुनी मेरी यह अरजी
भवभवको अपराध क्षमा कीज्यो करि मरजी ॥१५॥

अथ चतुर्थ स्तवनकर्म ।

नमूँ ऋषभ जिनदेव अजित जिन जोत कर्मको । संभव भव-

दुखहरण करण अभिनन्द शर्मको ॥ सुमति सुमति दातार तार
 भवसिंधु पारकर । पद्मप्रभ पद्मप्रभ भानि भवभीति प्रीतिधर ॥१६॥
 श्रीसुपाश्व कृत पास नाश भव जास शुद्ध कर । श्रीचन्द्रप्रभ चन्द्र-
 कान्तिसम देहकान्ति धर । पुष्पदन्त दमि दोषकोश भवि पोष
 रोषहर । शीतल शीतल करन हरन भवनाप दोषहर ॥ १७ ॥ श्रेय
 रूप जिन श्रेय धेय नित सेय भव्यजन । वासुपूज्य शतपूज्य वास-
 वादिक भवभय हन ॥ विमल विमल मतिदेन अन्तगत हैं अनन्त
 जिन । धर्म शर्म शिवकरण शांति जिन शान्तिविधायिन ॥ १८ ॥
 कुन्थ कुन्थ मुख जीवपाल अरनाथ जाल हर । मल्लि मल्लसम माह-
 मल्ल मारण प्रचार धर ॥ मुनिसुव्रत व्रत करण नमन सुरसंग्रहि
 नमि जिन । नेमिनाथ जिन नेमि धर्मरथ मांहि ज्ञान धन ॥१९॥
 पार्श्वनाथ जिन पार्श्वउपलसम मोक्षरमापति । वर्द्धमान जिन
 नमूं वमूं भवदुःख कर्मकृत ॥ याविधि मैं जिनसंग्ररूप चउवीस
 संख्यधर । स्तऊं नमूं हूं बार बार बंदौं शिवसुखकर ॥२०॥

पञ्चम वन्दनाकर्म ।

बन्दू मैं जिनवीर धीर महावीर सु सन्मति वर्द्धमान अतिवीर
 बन्दहों मनवचनकृत ॥ त्रिशलाननुज महेश धीश विद्यापति बंदू ।
 बन्दू नितप्रति कनकरूपतनु पाप निकन्दू ॥२१॥ सिद्धारथ नृपमन्द
 द्वंद्व दुखदोष मिटावन । दुरित दवानल ज्वलितज्वाल जगजीव उ-
 धारन ॥ कुण्डलपुर करि जन्म जगतजिय आनन्दकारन । वर्ष ब-
 हस्तरि आयु पाय सब ही दुख टारन ॥२२॥ सप्त हस्त तनु तुङ्ग
 भङ्ग कृत जन्म मरण भय । बालब्रह्ममय क्षेत्र हेय आदेय ज्ञानमय ॥
 दे उपदेश उधारि तारि भवसिंधु जीवघन । आप बसे शिवमाहिं

ताहि बन्दौ मनवचन ॥ २३ ॥ जाके बन्दनथकी दोष दुख दूरहि जावै । जाके बन्दनथकी मुक्ति नित्य सम्मुख आवै ॥ जाके बन्दन-थकी बंध होवै सुरगनके । ऐसे वीर जिनेश बन्दिहं क्रमयुग तिनके ॥ २४ ॥ सामायिक पटकर्ममाहिं बंदन यह पञ्चम वन्दे वीरजिनेन्द्र इन्द्रशतबन्ध वन्द्य मम ॥ जन्म मरण भय हरो करो अघ शांतशांत मय । मैं अघ कोष सुपोष दोषको दोष विनाशय ॥ २५ ॥

छट्टा कायोत्सर्गकर्म ।

कायोत्सर्गविधान करूं अन्तिम सुखदाई । कायत्यजन मय होय काय सबकों दुखदाई ॥ पूरव दक्षिण नमूं दिशा पश्चिम उत्तर मै । जिनगृह वंदन करूं हरूं भवपापतिमिर मै ॥ २६ ॥ शिरोनतीमें करूं नमूं मस्तक कर धरिकें । आवर्त्तादिक क्रिया करूं मनबच मद हरिकें ॥ तीन लोक जिन भवनमांदिं जिन हैं जु अकृत्रिम । कृत्रिम हैं द्वयअर्द्धद्वोपमाहीं वंदौं जिम ॥ २७ ॥ आठ कोडिपरि छप्पन लाख जु सहस सत्याणूं । चारि शतकपरि असी एक जिनमंदिर जाणूं ॥ व्यंतर ज्योतिषमांदिं संख्यरहिते जिनमन्दिर । जिनगृह वन्दन करूं हरहु मम पाप सघकर ॥ २८ ॥ सामायिक सम नाहिं और कोउ वैर मिटायक । सामायिक सम नाहिं और कोउ द्वैत्री-दायक ॥ श्रावक अणुवन आदि अंत समम गुणधानक । यह आवश्यक किये होय निश्चय दुखहानक ॥ २९ ॥ जे भवि आतम काज करण उद्यमके धारी । ते सब काज बिहाय करो सामायिक सारी ॥ राग दोष मद मोह क्रोध लोभादिक जे सब । बुध महाबन्ध वि-लाय जाय तानै कीज्यो अब ॥ ३० ॥ इति ॥

३४ सामायिक पाठ (संस्कृत)

सत्त्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदः; क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।
 माध्यस्थ्यभावं विपरीतवृत्तौ; सदा ममात्मा विदधातु देव ॥ १ ॥
 शरीरतः कर्तुमनन्तशक्तिः; विभिन्नमात्मानमपास्नदोषम् । जिने-
 न्द्र कोषादिव खड्ग्यष्टिः; तब प्रसादेन; ममास्तु शक्तिः ॥ २ ॥ दुःखे
 सुखे वैरिणि बन्धुवर्गः; योगे वियोगे भवने वने वा । निराकृताशेष
 ममत्वबुद्धेः समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ ॥ ३ ॥ मुनीश ! लीला-
 विव कीलिताविव, स्थिरौ निपाताविव विस्मिताविव । पादौ त्वदो-
 यौ मम तिष्ठतां सदा, तमोऽधुनातौ हृदि दीपकाविव ॥ ४ ॥ एके-
 न्द्रियाद्या यदि देव देहिनः; प्रमादतः संचरता इतस्ततः । क्षता
 विभिन्ना मिलिता निपीडिताः तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ॥ ५ ॥
 विमुक्तिमार्गप्रतिकूलवर्त्तिनः; मया कषायाक्षवशेन दुर्ध्रिया । चारित्र
 शुद्धेर्यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ॥ ६ ॥ विनि-
 न्दनालोचनगर्हणैरहं; मनोवचः काय कषायनिर्मितम् । निर्हन्मि पापं
 भवदुःखकारणं; भिषग्विषं मन्त्रगुणैरिवाखिलम् ॥ ७ ॥ अतिक्रमं यं
 विमतेर्व्यतिक्रमं; जिनातिचारं सुचरित्रकर्मणः । व्यधामनाचारमपि
 प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ॥ ८ ॥ क्षतिं मनः शुद्धिबिधे-
 रतिक्रमं; व्यतिक्रमं शीलव्रतेर्विलंघनम् । प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्त्त-
 नं, वदन्त्यनाचारमिहातिशक्तिनाम् ॥ ९ ॥ यदर्थमात्रापदवाक्यहीनं
 मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् । तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सर-
 स्वती केवलबोधलब्धिः ॥ १० ॥ बोधिः समाधिः परिणाम शुद्धिः
 स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः । चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने,

त्वां वंद्यमानस्य ममास्तु देवि ॥ ११ ॥ यः स्मर्यते सर्व्वमुनीन्द्र-
वृन्दैः, यः स्तूयते सर्व्वनरामरन्दैः । यो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः,
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १२ ॥ यो दर्शनज्ञानसुखस्वभावः, सम-
स्तसंसारविकारबाह्यः । समाधिगम्यः परमात्मसंज्ञः, स देवदेवो
हृदये ममास्ताम् ॥ १३ ॥ निषूदते यो भवदुःखजालम्, निरीक्षते यो
जगदन्तरालम् । योऽन्तर्गतो योगिनिरोक्षणीयः, स देवदेवो हृदये
ममास्ताम् ॥ १४ ॥ विमुक्तिमार्गप्रतिपादको यो, यो जन्ममृत्युव्य-
सनाद्यतीतः । त्रिलोकलोको विकलोऽकलङ्कः, स देवदेवो हृदये म-
मास्ताम् ॥ १५ ॥ क्रोडीकृताशेषशरीरविर्गाः, रागादयो यस्य न सन्ति
दोषाः । निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम्
॥ १६ ॥ यो व्यापको विश्वजनीनवृत्तेः, सिद्धो विबुद्धो धृतकर्मबन्धः
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १७ ॥
न स्पृश्यते कर्मकलङ्कदोषैः, यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मिः । निर-
ञ्जनं नित्यमनेकमेकं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ १८ ॥ विभाषते
यत्र मरीचिमाली, न विद्यमाने भुवनावभासो । स्वात्मस्थितं बोध-
मय प्रकाशं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ १९ ॥ विलोक्यमाने सति
यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्टमिदं चिक्चितम् । शुद्धं शिवं शान्तम-
नाद्यनन्तं, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ २० ॥ येन क्षता मन्मथमान-
मूर्च्छा, विषादनिद्राभयशोकचिन्ता । क्षयोऽनलेनेव तरुप्रपञ्च, स्तं देव-
माप्तं शरणं प्रपद्ये ॥ २१ ॥ न संस्नरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी विधा-
नतो नो फलको विनिर्मितः । यतो निरस्ताक्षकषायविद्विषः, सुधी-
भिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ॥ २२ ॥ न संस्नरो भद्रसमाधिसाधनं, न
लोकपूजा न च संघमेलनम् । यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिनिशं,

विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनाम् ॥२३॥ न सन्ति बाह्या मम केच-
नार्थाः, भवामि तेषां न कदाचनानाहम् । इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य
बाह्यां, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र मुक्त्यै ॥२४॥ आत्मानमात्मन्य-
वलोक्यमानस्त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः । एकाग्रचित्तः खलु यत्र
तत्र, स्थितोपि साधुर्लभते समाधिम् ॥२५॥ एकः सदा शाश्वतिको
ममात्मा, विनिर्मलः साधिगमस्वभावः । बहिर्भवाः सन्त्यपरं सम-
स्ताः, न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः ॥ २६ ॥ यस्यास्ति नैक्यं
वपुषापि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः । पृथक्कृते चर्मणि
रोमकृपाः । कुतो हि निष्ठन्ति शरीरमध्ये ॥ २७ ॥ संयोगतो दुःख-
मनेकभेदं, यतोऽश्नुते जन्म चने शरीरो । ततस्त्रिधासौ परिवर्ज-
नीयो यियासुना निर्वृतिमात्मनोनाम् ॥२८॥ सर्वं निराकृत्य विक-
ल्पजालं, संसारकान्तारनिपानहेतुम् । विविक्तमात्मा नमवेक्ष्यमाणो
निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे ॥२९॥ स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा,
फलं तदीयं लभते शुभाशुभम् । परेण दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं
कृतं कर्म निरर्थकं तदा ॥ ३० ॥ निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो, न
कोपि कस्यापि ददाति किञ्चन । विचारयन्नेवमनन्यमानसः, परो
ददातीति विमुच्य शेमुषोम् ॥ ३१ ॥ यैः परमात्माऽमितगतिबन्धः
सर्वविविक्तो भृशमनवद्यः । शश्वदधोते मनसि लभन्ते, मुक्तिनिकेतं
विभ्रमं वरन्ते ॥३२॥

इति द्वात्रिंशता वृत्तैः परमात्माननोद्धते ।

योऽनन्य गत चेतस्को, यात्यसौ पद्मवपयम् ॥३३॥



३५ आरती संग्रह

प्रथम आरती ।

यह विधि मंगल आरती कीजै । पञ्च परम पद भजि सुख लीजै ॥ टेक ॥ प्रथम आरती श्रीजिनराजा । भव दधि पार उतार जिहाजा ॥ १ ॥ दूजी आरती सिद्धन केरी । सुमरण करत मिटैभव फेरी ॥ २ ॥ तीजी आरती सूर मुनिन्दा । जन्म मरण दुख दूर करिन्दा ॥ ३ ॥ चौथी आरती श्री उबज्झाया । दर्शन देखत पाप पलाया ॥ ४ ॥ पांचवी आरती साधु तुम्हारी । कुमति विनाशन शिव अधिकारी ॥ ५ ॥ छट्टी ग्यारह प्रतिमा धारी । श्रावक वन्दों आनन्द कारी ॥ ६ ॥ सातवीं आरती श्रीजिनवाणी । दानत स्वर्ग मुक्ति सुखदानी ॥ ७ ॥

द्वितीय आरती ।

आरती श्रीजिनराज तुम्हारी । कर्म दलन सन्तन हितकारी ॥ टेक ॥ सुर नर असुर करत तब सेवा । तुमहीं सब देवनके देवा ॥ १ ॥ पञ्च महाव्रत दुद्धर धारे । राग दोष परिणाम विडारे ॥ २ ॥ भव भयभीत शरण जे आये । ते परमार्थ पन्थ लगाये ॥ ३ ॥ जो तुम नाम जपै मन माहिं । जन्म मरण भय ताको नाहिं ॥ ४ ॥ समोशरण सम्पूरण शोभा । जीते क्रोध मान मद लोभा ॥ ५ ॥ तुम गुण हम कैसे कर गावैं । गणधर कहत पार नहिं पावैं ॥ ६ ॥ करुणा सागर करुणा कीजै । दानत सेवकको सुख दीजै ॥ ७ ॥

तृतीय आरती ।

आरती कीजै श्रीमुनिराजकी । अधम उधारन आतम काजकी ॥ टेक ॥ जा लक्ष्मीके सब अभिलाशी । सो साधन कर्म बत

नाशी ॥१॥ सब जग जीत लियो जिन नारी । सो साधनि नागिनि
 वत छारी ॥२॥ विषयन सब जगको बश कीने । ते साधन विषवत
 तज दीने ॥३॥ भुविकोराज चहत सब प्राणी ॥ जीर्ण तृणवत त्यागो
 ध्यानी ॥४॥ शत्रु मित्र सुख दुख सम माने । लाभ अलाभ बराबर
 जाने ॥५॥ छहों कायि पीड़न व्रत वारें । सबको आप समान निहारै
 ॥ ६ ॥ यह आरती पढ़ै जो गावैं । दानन मन वांछित फल पावैं
 चतुर्थ आरती ।

किस विधि आरती करौ प्रभु तेरी । अगम अकथ जस बुध
 नहिं मेरो ॥ टेक ॥ समुद्र विजय सुन रजमति छारो । यों कहि
 थुति नहिं होय तुम्हारी ॥ १ ॥ कोटि स्तम्भ वेदी छवि सारी ।
 समोशरण थुति तुमसे न्यारी ॥२॥ चारि ज्ञान युन तिनके स्वामी ।
 सेवकके प्रभु अन्तर्यामी ॥ ३ ॥ सुनके वचन भविक शिव जाहिं ।
 सो पुद्गलमें तुम गुण नाहिं ॥४॥ आतम ज्योति समान बनाऊं ।
 रवि शशि दोपक मूढ़ कहाऊं ॥ ५ ॥ नमन त्रिजग पति शोभा
 उनकी । तुम शोभा तुममें निज गुणको ॥ ६ ॥ मानसिंह महा-
 राजा गावे । तुम महिमा तुम ही बन आवे ॥ ७ ॥

पञ्चम आरती ।

यह विधि आरती करुं प्रभु तेरी । अगम अव्यक्त निज
 गुण केरी ॥ टेक ॥ अचल अखंड अतुल अविनाशी । लोकालोक
 सकल परकाशी ॥ १ ॥ ज्ञान दग्द सुख वरु गुणवारी । परमात्मा
 अविकल अविकारी ॥२॥ क्रोध आदि रागादिक तेरे । जन्म जरा-
 मृत कर्म न नेरे ॥ ३ ॥ अत्रपु अवध करण सुखराशी । अभय
 अनाकुल शिवपद बासी ॥ ४ ॥ रूप न रेख न भेष न कोई । विष्णू

रति प्रभु तुमहीं होई ॥ ५ ॥ अलख अनादि अनन्त अरोगी । सिद्ध
विशुद्ध स्वआतम भोगी ॥ ६ ॥ गुण अनन्त किम वचन बतावे ।
दीपचन्द्र भव भावना भावे ॥ ७ ॥ इति ॥

३६ चेतन सुमतिकी होली ।

अबकी मैं होरी खेलों सुमतिसे । यह मन भाय गई मेरे डटके
॥ टेक ॥ अनुभव गात्र दम सुख पिचकारी, तकि २ मारो कुमति
घर हटके ॥ १ ॥ ज्ञान गुलाल थाल निज परिणति लालनलाल
कुवाल पलटके ॥ २ ॥ प्रमुदिन गात्र क्षमादिक सखियां शम दम
साज मन्दिरमें खटके ॥ ३ ॥ नयो २ फाग नयो २ अवसर खेले
हजारी क्यों भव भटके ॥ ४ ॥

३७ आसाराम कृत होली ।

होरी रे मन तोहि खिलाऊं चेतन राम रिभाऊं । अम्बर अंग
करो अति सुन्दर भूषण भाव बनाऊं । कर्म सवे वसु केसर घोरो
गर्व गुलाल उड़ाऊं ॥ भलीविधि धूम उड़ाऊं ॥ १ ॥ चोआ चित्त
करो अति सियरो हियरो अति जरद जड़ाऊं । ज्ञानके सागरमें
धसके तहां ते सवरी गहि ल्याऊं । भली विधि मंगल गाऊं ॥ २ ॥
मन मृदङ्ग बजे मधुरी ध्वनि कर खम्माच बजाऊं । पञ्च सखी
अपने संग लेके सुधूम धमार-गवाऊं भली विधि सों निरताऊं ॥ ३ ॥
ऐसी होरी जे मुनि खेलें तिन पद शीस नवाऊं । आसाराम करें
बिनती प्रभु भक्ति अभैपद पाऊं । तबै निज दास कहाऊं ॥ ४ ॥

३८ मनिक कृत होली ।

जामें आवागमन बाकी होरी । हमारेको खेल ऐसी होरी

॥ टेक ॥ हिंसादिक नित धाय २ के बहु विधि कर पैकरोरी । पाप कींच बहु भांति लपेटत विषय कुरंग छिरकोरी ॥ १ ॥ कुमति कुनारि डारि भ्रम फांसी बहुत करी बरजोरी । कर्म धूल अंग ल्यावत प्यावत मोह अमल कटोरी ॥ २ ॥ कषाय पचीस नृत्य कारिन संग गति २ नाछत चोरी । राग द्वेष दोऊ छैल छबीले देत कुमगकी डोरी ॥ ३ ॥ यों चिरकाल खेल जिय मानिक पाये दुःख करोरी । जनधर्म परभाव भविक अब प्रीति सुपदसों जोरी ॥ ४ ॥

३६ गंगा कृत होली ।

खेलत फाग प्रवीना ॥ टेक ॥ दया वसन्त सखा दश लाक्षण समकित रंग जु कीना । बान गुलाल चारित्र अर्गजा शोल अतरमें भीना ॥ १ ॥ ध्यानानल आस्त्र होरी दाबन्ध व्रपत कर खीना । निर्जर नेह मुक्त धन फगुआ निज परणतिको दीना ॥ २ ॥ गंगा मन आनन्द भयो है सब बिकल्प तज दीना । निज सर्वज्ञनाथ प्रभु आगे नाम निरन्तर लीना ॥ ३ ॥

४० मेवाराम कृत होली ।

अरे मन खेल खिलारी फाग रचो संसारी ॥ टेक ॥ काम क्रोध दोऊ छैल छबीले कुमति हाथ पिचकारी । पाप कींच बहु भांति भरी है देत बदनपर डारी ॥ १ ॥ मोह मृदङ्ग मजीरा मान मद लोभ तमूरा चारी । आशा तृष्णा निरख करत हैं लेत तान गति न्यारी ॥ २ ॥ पांच पचीसी कामिनी घटमें गावत मनसो गारी । ऋगङ्ग मिलि फगुआ मांगत भाव बतावत भारी ॥ ३ ॥ खेलत खेल युग बहू बीते अब जिय भयो दुखारी । मेवाराम जैन हित होरी अबकी बर हमारी ॥ ४ ॥

४१ मानिक कृत होली

कहा वानि परी पिय तोरी-कुमति संग खेलत है नित होरी
॥टेक॥ कुमति कूर कुबिजा रंग राची लाज शरम सब छोरी । राग
द्वेष भय धूलि लगावे नाचे ज्यों चकडोरी । अक्ष विषय रंग भरि
पिचकारी कुमति कुत्रिय सबोरी । जा प्रसंग चिर दुखी भये फिर
प्रीति करत बरजोरी ॥ २ ॥ निज घरकी पिय सुधि बिसारके परत
पराई पोरी । तीन लोकके ठाकुर कहियत सो विधि सबोरी बोरी
॥ ३ ॥ बरजि रही बरजों नहिं मानत ठानत हठ बरजोरी । हठ
तजि सुमति सीख भजि मानिक तो बिलसो शिव गोरो ॥४॥

४२ दौलत कृत होली ।

छाड़ि दे तूं यह बुधि भोरी-वृथा पर सों रत जोरी ॥ टेक ॥
जे पर हैं न रहैं थिर पोषत जे कल मलकी भोरी । इन सों करि
ममता बनादिसे बंधे कर्मकी डोरी । सहे भव जलधि हिलोरी ॥१॥
बे जड़ है तूं चेतन ज्योंही आप बतावत जोरी । सम्यक् दर्शन ज्ञान
चरण तप इन सत्संग रचोरी ॥ सदा विलसौ शिव गोरी ॥ २ ॥
सुखिया भये सदा जे नर जासों ममता टोरी । “दौल” हिये अब
लीजे पीजे ज्ञान पियूष कटोरी ॥ मिटै भव व्याधि कटोरी ॥ ३ ॥

४३ इंग्लिश शिक्षा पर होली

छैल मिडिल कैसी होरी मचाई ॥ टेक ॥ देशी रीति लिवास
छाड़िके कोट लिये सिलवाई । खुले अगाड़ी कटे पिछाड़ी टोपी
गोल जमाई । घड़ी आगे लटकाई ॥ छैल मिडिल कैसी० ॥ १ ॥
बूटदेवको पहिन पांवमें तनियां खूब कसाई । बैठन नहिं पतलूनदेत

है ठाढ़े करन मुताई । धन्य अङ्गरेजी आई छैल० ॥ २ ॥ टेढ़ा डंडा हाथ साथमें बंडा श्वान सुहाई । गले गुलूबन्द कालर डटके मुखमें चुरट दवाई । धुआं फक फक उड़ाई ॥ छैल० ॥ ३ ॥ घरमें जा अंगरेजो बोलें समझन नाहिं लुगाई । मागें वाटर देनी है रोटी बोल उठे झुंझलाई । डेम यू क्या ले आई ॥ छैल० ॥ ४ ॥ कौन बनावे रंग वसन्ती कौन गुलाल उड़ाई । स्याहीकी डबिया हाथ चुरस है करते हैं बूट सफाई । छोड़के सलेमसाई ॥ छैल० ॥ ५ ॥ सातों जाति मिडिलकर बैठे दूर भई पण्डिताई । गिट पिट मिस्टर होटल जावें मदिरा मटन उड़ाई । लेडीसे आंख लड़ाई ॥ छैल० ॥

४४ तीर्थकरोंकी स्तुति प्रभाती

बंदों जिन देव सदा खरण कमल, तेरे । जा प्रसाद सकल कर्म छूटत अघ मेरे ॥ टेक ॥ ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन केरे । सुमति पद्म श्री सुपार्श्व चन्द्रा प्रभु मेरे ॥ १ ॥ पुष्प दन्त शीतल श्रियांस गुण घनेरे । वासपूज्य विमल अनन्त धर्म जग उजेरे ॥ २ ॥ शान्ति कुन्थु अरह मल मुनि सुव्रत केरे । नमि नेमि पार्श्वनाथ महावीर मेरे ॥ ३ ॥ लेत नाम अष्टयाम छूटत भव फेरे । जन्म पाय जादोराय चरननके चेरे ॥ ४ ॥

४५ जकाहर कृत प्रभाती

उठि प्रभात सुमिरन कर श्री जिनेन्द्र देवा ॥ टेक ॥ सिंहासन झिलमिलात तीन छत्र शिर सुहात चमर फहरात सदा भविजन भजेवा ॥ १ ॥ भटे श्री पार्श्व जिनेन्द्र कर्मके कटे जु फन्द अस्वसेनके जु नन्द बामा सुखदेवा ॥ २ ॥ बानी तिहूँ काल खिरे:

पशुवन पर दृष्टि परे नमस्त सुरनर मुनीन्द्रादिक चरन सीस नैवा
॥ ३ ॥ प्रभुके चरणारविन्द जपत हैं जवाहरबन्द कर जोरें ध्यान
धरें चाहत नित सेवा ॥ ४ ॥

४६ दौस्तकृत प्रभाती

पारस जिन चरण निरखि हरष ज्यों लहायो । चितवत चन्दा
चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुनि घनघोर सोर मोरके
मन हरष ओर रंक निधि समाज राज पाय मुदित थायो ॥१॥ ज्यों
जन चिर श्रुधित कोय भोजन लह सुखित होय भेषज मद हरन
पाय आतुर हरषायो ॥ २ ॥ बासर धनि आज दुरित दुरे फिर
सुकुत आज शान्ताकन देखि महामोह तम बिलायो ॥३॥ जाके
गुन जानन शोभानन भव कानन इमि जान दौल सरन आय शिंव
मुख ललसायो ॥ ४ ॥

४७ दौस्तकृत प्रभाती

निरखत जिन चन्द्र वदन सुपद खरुचि आई ॥ टेक-॥ प्रगटी
निज आनकी पिछान ज्ञान भानकी कला उद्योत होत काम यामि-
नी पलाई ॥१॥ साखत आनन्द खाद पायो बिनसो बिषाद मानन
अमिष्ट इष्ट कल्पना नसाई ॥ २ ॥ साधो निज साधकी
समाधि मोह व्याधिकी उपाधि कविराधिके अराधना सुहाई ॥३॥
धन दिन छिन आज सुगुन चिंते जिनराई । सुधरो सब काज
दौल अचल रिद्धि पाई ॥ ४ ॥

४८ णमोकार महिमा प्रभाती

प्रातकाल मंत्र जपो णमोकार भाई । अक्षर पैसीस शुद्ध हृदयमें
धराई ॥ टेक ॥ नर भव तेरो सुफल होत पातक टर जाई । विघन

जासु दूर होत संकटमें सहाई ॥ १ ॥ कल्पवृक्ष कामधेनु चिन्ताम-
णि जाई । ऋद्धि सिद्धि पारस तेरे प्रगटाई ॥ २ ॥ मंत्र जन्त्र तन्त्र
सब जाही बनाई । सम्पति भण्डार भरे अक्षय निधि आई ॥ ३ ॥
तीन लोक माहिं सार वेदनमें गाई । जगमें प्रसिद्ध धन्य मंगलोक
भाई ॥ ४ ॥

४६ भागचन्द्रकृत प्रभाती

परणति सब जीवनकी तीन भांति वरणी । एक पुण्य एक
पाप एक राग हरणी ॥ टेक ॥ जामें शुभ अशुभ बन्द दोतराग
परणति भव समुद्र तरणी ॥ १ ॥ छांड़ि अशुभ क्रिया कलाप मत
करो कदाचि पाप शुभमें न मगन होय अशुद्धता विसरणी ॥ २ ॥
यावत ही शुभोपयोग तावत ही मन उद्योग तावत ही करण योग
कही पुण्य करणी ॥ ३ ॥ भागचन्द्र जा प्रकार जीव लहे सुख अपार
याको निरधार स्यादवादकी उचरणी ॥ ४ ॥

५० जैनदासकृत प्रभाती

उठि प्रभात पूजिये श्रो आदिनाथ देवा । आलसको त्याग
जागि पूजा विधि मेवा ॥ टेक ॥ जल चन्दन अक्षत प्रीति सम
लेवा । पुष्पते सुवास होय काम जरि जेवा ॥ १ ॥ नैवेद्य उज्ज-
ल करि दीप रतन लेवा । धूपते सुगन्ध होय अष्ट कर्म खेवा
॥ २ ॥ श्रीफल बादाम लोंग डोंडा शुभ मेवा । उज्ज्वल करि अर्घ
पूजि श्रीजिनेन्द्र देवा ॥ ३ ॥ जिनजी तुम अर्ज सुनो भवदधि उत-
रेवा । जैनदास जन्म सुफल भगति प्रभू एवा ॥ ४ ॥

५१ सबानीकृत प्रभाती

ताण्डव सुरपतिने जहां हर्ष माख धारी । ॥ टेक ॥ रलु रलु

रुनु नूपुर ध्वनि ठुमकि २ पेंजन पग झुन झुन झुन किन छवि
लगति अति प्यारी ॥ १ ॥ अ न न न न सार दानि स न न न न
न किनरान अ घ घ घ गंधवं सर्व देत जहां तारी ॥ २ ॥ पं पं पं
पग भपटि फं फं फ फ न न न न न वं व मृदङ्ग बाजे बीना धुन
सारी ॥ ३ ॥ अ द द द द द विद्याधर दि दि दि दि दि दि देव
सकल दास भमानी ज्यो कहे जिन चरनन बलिहारो ॥ ४ ॥

५२ मानिककृत भजन

नहीं रुचे और छवि नैननमें, तेरो शान्ति छवी मन बस गई
रे ॥ टेक ॥ निर्विकार निर्ग्रथ दिगम्बर देखत कुमति विनसि गई
रे ॥ १ ॥ चिर मिथ्यातम दूर करनको चन्द्र कला सो दरश रही रे
॥ २ ॥ मानिक मन मयूर हृषनको मेघ घटा सो दरश रही रे ॥ ३ ॥

५३ नवलकविकृत खम्माच

आज कोई अद्भुत रचनारचो ॥ टेक ॥ समोशरण शोभा
देखनको-होड़ा होड़ी मची ॥ १ ॥ स्वर्ग विमान तले छवि जाके
देखत मनन खिची ॥ २ ॥ जिन गुण स्वादत रसिया परनकी
रोभन जात मचो ॥ ३ ॥ नवल कहे ऐसो मन आवे हष धार कर
नची ॥ ४ ॥

५४—मोहनलालकृत भंभोटो ।

देखि सखी छवि आज भलो रथ चढ़ि यदुनन्दन आवत हैं
॥ टेक ॥ तोन छत्र माथे पर सोहैं त्रिभुवननाथ कहावत हैं ॥ १ ॥
मोर मुकट केसरिया जामा चौसठ चमर दुरावत हैं ॥ २ ॥ ताल
मृदङ्ग साज सब बाजत आनन्द मङ्गल गावत हैं ॥ ३ ॥ मोहनलाल
जास चरननकी भुकि झुकि शीस नवावत हैं ॥ ४ ॥

५५ विहारीकृत—राग देश ।

आज जिनराज दर्शनसे भयो आनन्द भारी हैं ॥ टेक ॥ लखे
ज्यों मोर घन गर्जे सुनिधि पाये भिखारी है । तथा मो मोड़की
वार्ता नहीं जाती उच्चासी है ॥१॥ जगनके देव सब देखे क्रोध भय
लोभ भारी है ॥ तुम्हीं दोषावरण बित हों कहा उपमा तिहारी है
॥२॥ तुम्हारे दर्शबिन स्वामी भई चहुंगतिमें ख्वारी है । तुम्हीं पद
कंज नमते ही मोहनी धूल भारी है ॥३॥ तुम्हारी भक्तिसे भवजन
भये सब सिन्धु पारी हैं । भक्ति मोहि दीजिये अबिचल सदा या-
चक विहारी है ॥४॥

५६ मानिककृत—सोरठा ।

ज्ञानी पिया क्यों बिखरे निज देश । कुमति कुरमिनी सोत
संग राचे छाय रहे परदेश ॥ टेक ॥ अनन्तकाल परदेशनि छाये
पाये बहुत कलेश । देश तुम्हारे सुपद समारो त्रिभुवन होउ नरेश
॥१॥ भ्रम मद पाय छकाय रहो घन ज्ञान रहो नहिं लेश । दुखी
भये बिललात फिरत हो गति २ धरि दुरिमेश ॥२॥ यह संसार
जानि लख सुख नहीं रंचक लेश । मानिक काल लाभ पावस
लहि सुमति हाथ उपदेश ॥ ३ ॥

पिल्लू ।

स्वामी मुजरा हटारा लीजे ॥ टेक ॥ तुम तो बीतराग आनंद
घन हमको भी अब कीजे ॥ १ ॥ जगके देव सब रागी द्वेषी यासे
निज गुण दीजे ॥२॥ आदि देव तुम समानको वेग अचल पद दीजे ॥

५७ हीरालाल कृत रेखता

भगवान आदिनाथ जिन सां मन मेरा लगा । आराम मुझे

होत दुःख कर्षसे भगा ॥ टेक ॥ मरु देवी नन्द धर्म कन्द कुलमें
सुर उगा । नृप नाभिराजके कुमार नमत सुर खला ॥१॥ युगका
निवार धर्मको संसारको तगा । बसू कर्मको जराय शिव पन्थमें
लगा ॥२॥ अब तो करो शिताव मिहरवान दिल लगा । कहें दास
होरालाल दीजे मुक्तिका भगा ॥३॥

५८ हजारीकृत—मजल ।

ख्याल कर दिल मभार चेतन अजय करमने भकाई गतियां
॥टेक॥ निगोद बस कर सुबोध खोया त्रिजग व नारक बनस्य-
तियां । कभी मनुष वा कभी सुरग वा अबादि ते दिन बितार्ई
रतियां ॥२॥ यह दुःख भर २ यतीम हूवा न गोरकी कहूं सुमाई
बतियां । पड़ा हूं अब तो उसोके दर पर लगैं हजारी न यम की
पनियां ॥३॥

५९ हजारीकृत—लावनी ।

प्रभू भवसागर पार करो, मेरे रागादिक शत्रु हरो ॥ टेक॥
तुम्हीं हो नित्य निरञ्जनदेव । कर इन्द्रादिक धारी सेव ॥ नामसे
पाप टरें स्वयमेव । अरज चित दोजे हमारी पव ॥ दोहा ॥ तुम
सुमरनसे नाथजी, सीजे हमरो काज ॥ तुम देवनके देव हो, लोक
शिखिर महाराज ॥ जगतमें तारन बिरद धरो । मेरे रागादिक०
॥१॥ जन्म मरणादि अनल भारी । चरण धुति भरत सलिल
भारो ॥ तासु मिट जात तापकारी । होत सुख अविबल अवि-
कारी ॥ दोहा ॥ ऐसे तुम गुण अबिन्त वर, तासम कीजे मोय ।
मोहादिक अरि अति प्रबल तिनका दीजे खोय ॥ आज तुम देखत
काज सरो । मेरे० ॥२॥ कर्म बसु अगणित दुखदाई । तासु बरा

है गति २ पाई ॥ नरक औ निगोद भटकाई ॥ गर्भ दुख कहो
 नहीं जाई ॥ दोहा ॥ बीते काल अनन्त बिर, लखो न तुम दूग
 सोय । अब मो लब्धि भई करन, तुम दरशन पायो जोय ॥
 शरण लखि निर्बल मोह परो । मेरे ॥ ३॥ तुम्हीं अति दीन अक्षम
 तारे । किये बहुतनके निस्तारे ॥ आज धन धन्य भाग गहारे । वैन
 तुम गुण मुख उच्चारै ॥ दोहा ॥ तुम भ्राता तुम ही हितू ; तुम
 माता तुम तात । दुःख रूप भव कूप ते काढ़ि लेहु गहि हाथ ॥
 हजारी शरण लयो तुम्हारो । मेरे रागादिक शत्रु हरो । प्रभू ॥ ४॥

६० भजन संग्रह

ठुमरी—तारन तरण तरण तारण प्रभु तुम तारण हम जानी
 ठुमरी—॥ टेक ॥ तुम समान अब देव न दूजा भूरय माधुरी वानी ॥ १ ॥
 लख चौरासी योनिमें भटको तब मैं आनि पिछानी ॥ २ ॥ कामधे
 नु पारस चिन्तामणि मन वांछित फल दानी ॥ ३ ॥ चन्द्रस्वरूप ध्यान
 धरि प्रभुको दीजे मुक्ति निसानी ॥ ४ ॥

दादरा—निरखत छवि नाथ नैना छकित रस व्हे गये ॥ टेक ॥
 रवि कौट द्विति लज जात है नख दीप अपार ॥ १ ॥ इकतो परम
 वैरागी दूजे शान्ति सरूप ॥ २ ॥ उपमा हजारीसे ना बने अनुपम
 जग चन्द्र निरखत छवि नाथ नैना छकित रस व्हे गये ॥ ३ ॥

दादरा—नाभि धर नाचत हरि नटवा ॥ टेक ॥ अद्भुत ताल
 बृक्ष आकृत धर चवट राग पटवा ॥ १ ॥ मणिमय नूपरादि
 भूषण युत चुर सुरंग पटवा ॥ २ ॥ किन्नर कर धर तीन बजावत
 लावन लय भटवा ॥ ३ ॥ दौलत ताहि लखें दूग तृगने सुभक्त
 शिव वटवा ।

कहरवा—लीजे खबर हमारी दयानिधि ॥ टेक ॥ तुम तो दीन दयाल जगतके सब जीवन हितकारी ॥ १ ॥ मो मत हीन दीन तुम समर्थ चूक माफ कर म्हारी ॥ २ ॥ भूधरदास आस चरननकी भव २ शरण तिहारी ॥ ३ ॥

भैरवी—जगमें प्रभु पूजा सुखदाई ॥ टेक ॥ दादुर कमल पाखुरी लेकर प्रभु पूजाको जाई । श्रेणिक नृप गजके पगसे दवि प्राण नजे सुर जाई ॥ १ ॥ द्विज पुत्रीने गिर कैलास पूजा आन रचाई लिंग छेद देव पति लोतो अन्त मोक्ष पद पाई ॥ २ ॥ समोशरण विपुलाचल ऊपर आये त्रिभुवन राई । श्रेणिक बसु विधि पूजा कीनो तीर्थकर गोत्र बंधाई ॥ ३ ॥ छानत नरभव सफल जगतमें जिन पूजा रुचि आई । देवलोक ताके घर आगन अनुक्रम शिव-पुर जाई ॥ ४ ॥

रसिया—तोसे लागी रे लगन चेतन रसिया ॥ टेक ॥ कुमति सोत सङ्ग तुम राचे नाना भेष गति २ धरिया ॥ १ ॥ नरक माहिं विललात फिरत ते बे दुःख बिसरि गये रसिया ॥ २ ॥ नोठ नोठ नरकनसे कढ़ कर मानुस भव दुर्लभ बसिया ॥ ३ ॥ नर भव पाय वृथा मत खोवो ऐसा अवसर नहिं मिलिया ॥ ४ ॥ कहत हजारी सुमति सङ्ग राचे कुमति छोड़ तुम हो सुखिया ॥ ५ ॥

भजन कवाली ।

कहां गये जैन जातिके वीर नैया पार लगाने वाले ॥ टेक ॥ कहां गये उमास्वामी महाराज, तत्वारथ मय रचा जहाज, क्यों नहीं रखते लज्जा आज, जैनी लज्जा रखनेवाले ॥ कहां० ॥ १ ॥ स्वामी रक्षक श्री अकलङ्क, नाशा जैन जाति आतंक, काटा बौद्ध

धर्मका टुकड़ा, जैनी ध्वजा उड़ाने वाले ॥ कहां० २ ॥ देखत पात्र
केसरी सिंह, वादी गज भाजें कर चिह्न । आते अब तुम क्यों न
ढिंग, भव्योंका भय हरनेवाले ॥ कहां० ३ ॥ उन संतति हम विद्या
हीन, बाल व्याह कर धन बल छीन, फूटसे हो गये तेरा तीन,
सत्यानास मिटानेवाले ॥ कहां० ४ ॥ गटपट खाय विदेशी खांड,
रण्डी और नचावें भांड, सारी लोक लाजको छांड, बदरश्मोंके
चलानेवाले ॥ कहां० ५ ॥ संभालो अब ना हो स्वच्छन्द राखो
रही जो तज कर द्वंद, शुभमति दायक भज जिन चन्द्र, जाति
उन्नती कराने वाले ॥ कहां गये० ६ ॥

६१ परमार्थ जकड़ी ।

(दौलतराम कृत)

अब मन मेरा वे, सोख बचन सुन मेरा । भज जिनगर पद वे,
जो विनशै दुःख तेरा विनशै दुःख तेरा, भववन केरा, मन वच
तन जिन चरन भजो । पंच करन वश राख सुज्ञानो, मिथ्या मत
मग दौरेतजो ॥ मिथ्या मत मग पणि अनादि ते, तैं चहुंगति
कीधा फेरा । अबहं चेत अचेत होहु मत, सोख बचन सुन मन
मेरा ॥ १ ॥ इस भव बनमें वे, तैं साता नहिं पाई । बसु बिधि
वश हैवे, तैं निज सुधि बिसराई । तैं निज सुधि बिसराई भाई
तार्ते विमल न बोध लहा । पर परण्तिमें मग्न भयो तू जन्म जरा
मृत दाह दहा ॥ जिनमत सार सरोवर कूं अब, गहो लाज निज
चित्तनमें । तो दुख दाह नशै सब नातर, फेर बसैं इस भव बनमें
॥ २ ॥ इस तनमें तू वे, क्या गुन देख लुभाया । महा अपावन वे,

सतगुरु याहि बताया ॥ सतगुरु याहि अपावन गाया, मल मूत्रा-
दिकका गोहा । कमि कुल कलित लखत धिन आवे, तासों क्या
कीजे नेहा ॥ यह तन पाय लगाय आपनी, परणति शिव मग
साधनमें । तो दुख द्वंद नशै सब तेरा, यही सार है इस तनमें ।
॥ ३ ॥ भोग भले न सही, रोग शोकके दानी । शुभगति रोकन वे,
दुर्गति पथ अगवानी ॥ दुर्गति पथ अगवानी है जे, जिनकी लगन
लगी इनसों । तिन नाना विधि बिपति सही है, बिमुख भया निज
मुख तिन सों ॥ कुअर भस्त्र अलि शलभ हिरन इन, एक अक्ष वश
मृत्यु लही । यातें देख समझ मन माहीं, भवमें भोग भले न सहो
॥ ४ ॥ काज सरे तब वे, जब निजपद आराधै । नशै भवा बलिवे
निराबाध पद लाधै ॥ निराबाध पद लाधै तब तोहि केवल दर्शन
ज्ञान जहां । सुख अनन्त अति इन्द्रिय मण्डित वीरज अचल अनंत
तहां ॥ ऐसा पद चाहै तो भवि जिन बार बार अबको उचरै ।
'दौल' मुख्य उपचार रख्य, जो सेवे तो काज सरे ॥ ५ ॥

६२ परमार्थ जकड़ी ।

(रामकृष्ण कृत)

अरहन्त चरण चित लाऊं । पुनः सिद्ध शिवंकर ध्याऊं ॥
बन्दों जिन मुद्रा धारो । निर्ग्रन्थ यतो अविकारी । अविकार करुणा
वन्त बन्दो सकल लोक शिरोमणी । सर्वज्ञ भाषित धर्म प्रणमूं
देय सुख सम्पति घनी । ये परम मंगल चार जगमें चार लोकोत्तम
यही । भव भ्रमत इस असहाय जियको और रक्षकको नहीं ॥१॥
मिथ्यात्व महारिषु दंडो । बिरकाल वस्तुवर्त्ति हंडो ॥ उपबोग न-

यन गुण खोयो । भर नौंद निगोदे सोयो ॥ सोयो अनादि निगो-
 दमें जिय निकस फिर स्थावर भयो । भू तेज तोय समोर तरवर
 थूल सूक्ष्म तन लियो । कृमि कुन्थु अलिसेनी असेनी व्योम जल
 थल संचरो । पशु योनि बासठ लाख इस विधि भुगति मर २
 अवतरो ॥ २ ॥ अति पाप उदय जब आयो । महा निंद्य नरकपद
 पायो थित सागरो बन्द जहां है । नाना विधि कष्ट तहां है ॥
 है त्रास अति आताप वेदन शीत बहु युत है सहो । जहां मार मार
 सदैव सुनिये एक क्षण साता नहीं ॥ नारकि परस्पर युद्ध ठाने
 असुरगण क्रीड़ा करें । इस विधि भयानक नरक थानक सहें जो
 परवश परें ॥ ३ ॥ मानुष गतिके दुःख भूलो । वस उदर अधोमुख
 झूलो । जन्मत जो संकट सेयो । अविवेक उदय नहिं वोयो ॥ वोयो
 न कछु लघुवाल वयमें वंश तरु कोंपल लगी । दल रूप यौवन वय
 सो आयो काम दो तब उर जगी ॥ जब तन बुढायो घटो पौरुष
 पान पकि पीरा भयो । झड़ परो काल बयार बाजत वादि नर भव
 यों गयो ॥ ४ ॥ अमरापुरके सुख कीने । मनो वांछित भोग नवीने ।
 उर माल जवे मुरझानी बिलपो आसन्न मृत्यु जानी ॥ मृत्यु
 जानो हाहाकार कीनो शरण अब काको गहूं । यह स्वर्ग संपति
 छोड़ अब मैं गर्भ वेदनु कषों सहूं ॥ तब देव मिल समझाइयो पर
 कुछ विवेक न उर वसो । सुर लोक गिरिसे गिर अज्ञानो कुमति
 कांदो फिर फंसो ॥ ५ ॥ इस विधि इस मोही जीने । परिवर्तन पूरे
 कीने ॥ तिनकी बहु कष्ट कहानी । सो जानत केवल ज्ञानी । ज्ञानी
 बिना दुःख कौन जाने जगत बनमें जो लहा । जरा जन्म मरण स्व-
 रूप तीक्ष्ण त्रिविध दावानल दहा । जिनमत सरोवर शीतपर अब-

न बैठ तपत बुभाय-हूं । जय मोक्षपुरकी वाट बूझौ अब न देर
लगाय हूं ॥ ६ ॥ यह नर भव पाय सुझानी । कर २ निज कारज
प्राणी । तिर्यक् योनि जब पावे । तब कौन तुझे समभावे ॥ स-
मभाय गुरु उपदेश दीनो जो न तेरे उर रहें । तो जान जीव अ-
भाग्य अपना दोष कहूंको न है । सूरज परकाशे तिमिर नाशै
सकल जनका भ्रम हरे । गिरि गुफागर्भ उद्योत होत न ताहि भानु
कहा करे ॥ ७ ॥ जग माहि विषय बन फूलों । मन मधुकर तिस
विच भूलो । रस लीन तहां लिपटानो । रस लेत न रंच अघानो ॥
न अघाय क्यों ही रमौ निशि दिन एक क्षण भी ना चुके । नहीं
रहे बरजो बरज देखो बार बार तहां झुके ॥ जिनमत सरोज
सिद्धांत सुन्दर मध्य याहि लगाय हूं । अब रामकृष्ण इलाज याको
किये ही सुख पाय हूं ॥ ८ ॥ इति ॥

६३ परमार्थ जकड़ी ।

(दौलतरामजी कृत)

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं । शारद अम्बा चित लाऊं ॥ दो
विधि परिग्रह परिहारो । गुरु नमो स्वपर हितकारी ॥ हितकार
तारकदेव श्रुत गुरु परस्मि निज उर लाइये । दुःखदाय कुपथ वि-
हाय शिव सुखदाय जिन वृष ध्याइये । चिरसे कुमग पगि मोह
उगकर ठगो भव कानन परो । चौरासी लख नित योनिमें जराम-
रण जन्मन दौ जरो ॥ १ ॥ मोह रिपुने दई है घुमारया । तिस वश
निगोदमें परिधा । तहां स्वांस पकके माहीं । अष्टादश मरण लहाहीं
लहि मरण एक मुहूर्तमें छायसठ सहस्र शत तीन हीं । शत तीन

काल अनन्त यों दुःख सहे उपमा ही नहीं ॥ कबहुं लहो वर आयु
 क्षिति जल पवन पावक तर तनो । बसु भेद किंचित कहुं सो मुनि
 कह्यो जो गौतम गणो ॥ २ ॥ पृथिवी दो भेद बखान । मृदु माटी
 कठिन पाषाण । मृदु द्वादश सहस्र वरसकी । पाहन बाईस सहस्र
 की । पुनः सहस्र सात कही उदक त्रय सहस्र सही है समोरकी ।
 दिन तीन पावक दश सहस्र तर प्रमिति ना तसु पीरकी । दिन घात
 सूक्ष्म देहधारी घातयुत गुरुन लहो । तहां खनन तापन ज्वलन
 धिंजन छेद भेदन दुःख सहो ॥ ३ ॥ संखादि दो इन्द्रो प्राणी । तिथि
 द्वादश वर्ष बखानी । जूआदि ते इन्द्रिय हैं ते । वास्वर ऊंनवास
 जियेंते । जीवे वर्ष दल अलि प्रमुख व्यालीस सहस्र उरगतनी ।
 खगकी बहत्तर सहस्र नव पूर्वांग सरीसृपकी भनी । नर मत्स्य
 पूर्व कोड़ि की थिति कर्म भूमि बखानिये । जलचर बिकल दिन
 भोग भू नर पशु त्रिपल्य प्रमाणिये ॥ ४ ॥ अघवंश कर नरक बसेर।
 भुगता तहां कष्ट घनेरा । छेदे तिल पिल तन सारा । भेपें द्रव
 पूति मभारा । मभार खजानल पचावें शूली ऊपरें । सींच देह
 जलक्षारसे खल कहें ब्रह्मनोके करें । वैतरणी सरिता समल जल
 अति दुःखद तर सेमल तने । अति भीमवन असि क्रौंत समदल
 लगन दुःख देने घने ॥ ५ ॥ तिस भूमें हिर गरमाई । मेरु सम लोह
 गलाई । तहां की तिथि सिंधु तनो है । यों दुःख नरक अवगो है ।
 अवनी तहांकीसे निकल कबहुं जन्म पायो नरो । सर्वांग सकुचिन
 अति अपावन जठर जननोके परो । तहां अघोमुख जनना रत्तांश
 थकी जियो नव मांस लो । तिस पीरमें कोई सोर नाहीं सहै आप
 निकास लो ॥ ६ ॥ जन्मत जो संकट पायो रत्नासे जात न नायो ।

लहे बल्लपने दुःख भारी । तरुणापो लियो दुःखकारी । दुःखकार
इष्ट वियोग अशुभ संयोग शोक सरोगता । पर सेवा ग्रीवम शील
पावस सहै दुःख अति भोगता । काहूकी प्रिय काहूको बांधव
काहू सुता दुराचारिणी । काहू व्यसन रत पुत्र दुष्ट कलत्रके ऊपर
ऋणी ॥ ७ ॥ वृद्धापनके दुःख जेते । लखिये सब नैनो तेते । मुख
लार बहे तन हाले । बिना शक्ति न बसन सम्हाले । न सम्हाल
जाको देह की तो कहो क्या वृषकी कथा । तब ही अचानक यम
प्रसे यों मनुज जन्म गयो वृथा ॥ काहू जन्म शुभ ठान किंचित लियो
पद चउ देखको । अभियोग किल्बिष नाम पायो सहो अति ही दुःख
को ॥ ८ ॥ तहां देख महत्सुर ऋद्धी । भूरोकर विषयो गृद्धी । कबहुं
परिवार नशानो । शोकाकुल हो बिलखानो । बिलखाय अति जब
मरण निकटो सहो संकट मानसी । सुर बिभव दुःखद लगे तबें
जब लखी माल मलानसी । तब अमर बहु उपदेश दें समुझाइयो
समझो न क्यों । मिथ्यात्व युत, डिग कुगति पाई लहै फिर सो
सुपद क्यों ॥ ९ ॥ यों चिरभव अटवी गाही । किंचित् साता न
लहाई ॥ जिन कथित धर्म नहीं जानो । पर मैं आपापन मानो ॥
मानो न सम्यक्करत्रय आत्म अनात्ममें फांसो । मिथ्या चरण
दृग् ज्ञान रंजो जाय नव ग्रीवक बसो ॥ पर लहो ना जिन कथित
शिव मग वृथा भ्रम भूलों जिश । बिद्धावके दर्शाव बिन सब गये
पहले तप किया ॥ १० ॥ अब अद्भुत पुण्य कमायो । कुल जाति
बिमल तू पायो ॥ यामें सुन सोख सयाने । विषयोसे रति मति
ठाने । ठाने कहा रति विषयसे ये विषय विषयसे लखो । ये देय
मरण अनन्त इनको त्याग आत्म रस बखो ॥ या रस रसिक

जन बसे शिव अथ बसत फिर बसि हैं सहो । दौलत स्वरचि पर
विरचि सद्गुरु सीख नित उर धर यही ॥ ११ ॥ इति ॥

चौथा अध्याय

६४ फूलमाल पच्चीसी ।

दोहा—जैन धरम जेपन किया, दया धरम संयुक्त ।

यादों वंश बिषैं जये, तोन ज्ञान करि युक्त ॥१॥

भयो महोत्सव नेमिको, जू नागढ़ गिरनार । जाति चुरासिय
जैनमत जुरै क्षोहनो चार ॥ २ ॥

माल भई जिनराजकी, गूँथी इन्द्रन आय ॥

देशदेशके भव्य जन; जुरे लेनको धाय ॥ ३ ॥

छप्पय—देश गौड़ गुजरात चौड़ सोरठ वीजापुर । करनाटक
कशमीर मालवो अरु अमेरधुर ॥ पानीपत होंसार और बैराट महा
लघु । काशी अरु मरहट्ट मगध तिरहुत पट्टन सिंधु ॥ तह वंग
चंग बंदर सहित; उदधि पार लौ जुरिय सब । आए जु चीन मह
चीन लग, माल भई गिरनारि जब ॥४॥

नाराच छन्द ।

सुगन्ध पुष्प वेलि कुंदि केतकी मगायकें । चमेली चंप
सेवती जुही गुही जु लायकें ॥ गुलाब कंज लायची सबै सुगन्ध
जातिके । सुमालती महा प्रमोद लै अनेक भांतिके ॥ ५ ॥ सुवर्ण
तारपोई बीच मोति लाल लाइया । सु हीर पन्न नील पीत पथ

जोति छाइया ॥ शची रची विचित्र भाँति चित्त देवनाई है । सु-
 न्द्रने उछाहसों जिनेन्द्रको चढ़ाई है ॥ ६ ॥ सुमागहीं अमोल माल
 हाथ जोरि बानियें । जुरी तहां चुरासि जाति रावराज जानिये ॥
 अनेक और भूपलोग संठसाहुको गर्ने । कहालु नाम वर्णियें सुदे-
 खते सभा बनें ॥७॥ खण्डेलवाल जैसवाल अग्रवाल आइया ।
 व घेरवाल पोरवाल देशवाल छाइया ॥ सहेलवाल दिल्लीवाल सेत-
 वाल जातिके । बढेलवाल पुष्पभाल श्री श्रीमाल पांतिके ॥८॥ सु
 ओसवाल पल्लुवाल नूखवाल चौसखा । पद्मावतीय पोरवाल दू-
 ढरा अठैसखा । गगेरवाल बंधुराल तोर्णवाल सोहिला । करिंद-
 वाल पल्लुवाल मेडवाल खोहिला ॥९॥ लमेंचु और माहुर माहेसुरी
 उदार हैं सुगोलवार गोलपूर्व गोलहूं सिंघार हैं ॥ बंधनौर मागधी
 विहारवाल मूजरा । सुखरुड राग होय और जानराज बूसरा ॥१०॥
 भुराल और सोरठी मुराल और चितौरिया । कपोल सोमराठ वर्ग
 हूमड़ा नागौरिया ॥ सीरीगहोड़ भंडिया कनौजिया अजोधिया ।
 मिवाड़ मालवान और जोधड़ा समोधिया ॥११॥ सुभट्टनेर रायवल
 नागरा रुधाकरा । सुकंथ राह जालुराह वालमीक भाकरा ॥ परवार
 लाड़ चोड़ कोड़ गोड़ मोड़ संभरा । सु खंडिआत श्री खंडा चतुर्थ
 पञ्चमं भरा ॥१२॥ सु रत्नाकार भोजकार नारसिंह हैं पुरो । सु
 जम्बूवाल और क्षेत्रब्रह्म वैश्य लौ जुरी ॥ सु आइ हैं चुरासि जाति
 जैनधर्मकी घनी । सबै विराजी गोठियों जु इन्द्रकी सभा बनी
 ॥१३॥ सुमाल लेनको अनेक भूपलोग आवहीं । सु एक एकतैं
 सुमाग मालको बड़ा वही ॥ कहें जु हाथ जोरि जोरि नाथ
 माल दीजिये । मंगाय देउ हेमरत्न सो भण्डार कीजिये ॥ १४ ॥

बखलवाल बाकड़ा हजार बीस देत हैं। हजार दे पन्नास
परवार फेरि लेत हैं। सु जैसवाल लाख देत माल
लेत चोपसों। जु दिल्लीवाल, दोय लाख देत हैं अगोपसों
॥ १५ ॥ सु अग्रवाल बोलिये जु माल मोह दीजिये। दिनार देहु
एक लक्ष सो गिनाय लोजिये खंडेलवाल बोलिया जु दोय लाख
देउंगो। सुबाँटिके तमोल में जिनैन्द्र माल लेउंगो ॥ १६ ॥ जु-
संभरी कहैं सु मेरि खानि लेहु जायकें। सुवर्ण खानि देत हैं
चिसौड़िया बुलायके ॥ अनेक भू गाँव देउ रायसो चंदेरिका।
खजान खोली कोठरीं सु देत हैं अमेरिका ॥ १७ ॥ सुगौड़वाल यों
कहैं गयन्द बीस लीजिये। मढ़ाय देव हेमदंत माल मोहि दीजिये ॥
परमारके तुंगसाजि देत हैं बिना गिने। लगाम जोन पाहुड़े जड़ाउ
हेमके बने ॥ १८ ॥ कनौजिया कपूर देत गाड़िया भरायकें। सुहोरा
मोती लाल देत ओशवाल आयके ॥ सु हंमड़ा हंकारहीं हमें न
माल देउगे। भराइये जिहाजमें कितेक दाम लेउगे ॥ १९ ॥ कितेक
लोग आयके खड़ेते हाथ जोरिकें। कितेक भूष देखिके चले जु
बाग मोरिकें ॥ कितेक सूप यों कहैं जु कैसे लक्षि देत हौ। लूटाय
माल आपनों सु फूलमाल लेत हौ ॥ २० ॥ कई प्रवीन श्राविका
जिनैन्द्रको बधावहीं। कई सुकंड रागसों खड़ी जु माल गावहीं।
कईसु नृत्यकों करै लहैं अनेक भावहीं। कई मृदंग तालपै सु-
अंगको फिरावहीं ॥ २१ ॥ कहैं गुरु उदार धी सु यों न माल
पाइये ॥ कराइये जिनैन्द्र यज्ञ बिं हूं भराइये ॥ चलाइये जु संघ
जात संघहो कहाइये। तबै अनेक पुण्यसों अमोल माल पाइये
॥ २२ ॥ संबोधि सर्व गोदिसो गुरु उतारकें लई। बुलायकें

जिनेन्द्रमाल संघ रायको दर्ई । अनेक हर्षसों करैं जिनेंद्र तिलक
पाइये । सुमाल श्रीजिनेंद्रकी बिनोदीलाल गाइये ॥ २३ ॥

दोहा—माल भई भगवन्तको, पाई संग नरिन्द । लालबिनोदी
उच्चरै सबको जयति जिनंद ॥ २४ ॥ माला श्री जिनराजकी, पाधे
पुण्य संयोग । यश प्रगटै कीरति बढ़ै, धन्य कहैं सब लोग ॥ २५ ॥ इत

६५ पुकार पच्चीसी ।

दोहा—जै यह भव संसारमें, भुगतें दुःख अपार ।

सो पुकार पच्चीसिका, करैं कविन इक ढार ॥

तेईसा छन्द ।

श्री जिनराज गरीब निवाज सुधारन काज सबे सुखदाई ।
दीनदयाल बड़े प्रतिपाल दया गुणमाल सदा शिर नाई ॥ दुगति
टारन पापनिवारन हो भवतारन को भव ताई । बारही बार पुका-
रतु हों जनकी बिनतो सुनिये जिनराई ॥ १ ॥ जन्म जरा मरणो
त्रय दोष लगे हमको प्रभु काल अनाई । तासु नसावनको तुम
नाम सुनो हम वैद्य महा सुखदाई ॥ सो त्रय दोष निवारनको
हमारे पद सेवतु हां चित ल्याई । बारहो० ॥ २ ॥ जो इक छे
भवको दुख होय तो राख रहों मनको समझाई । यह चिरकाल
कुहाल भयो अब लों कहूं अन्त परो न दिखाई ॥ मो पर या जग
मांहि कलेश परे दुख घोर सहे नहिं जाई । बारहो० ॥ ३ ॥ देख
दुखी पर होत दयाल सुहै इक ग्रामपतो शिर नाई । हो तुम नाथ
त्रिलोकपती तुमसे हम अर्ज करो शिर नाई ॥ मो दुख दूर करो
भवके बसु कर्मन ते प्रभु लेउ छुड़ाई । बारही० ॥ ५ ॥ कर्म बडे

रिपु हैं हमरे हमरी बहु होन दशा कर पाई । दुःख अनन्त किये
 हमको हर भांतिन भांतिन खाद लगाई ॥ मैं इन बैरिनके बश हूँ
 करिके भटको सु कहो नहिं जाई । बारही० ॥ ५ ॥ मैं इस ही भव
 काननमें भटको चिरकाल सुहाल गमाई । किञ्चित् ही तिलसे
 सुखको बहु भांति उपाय करे ललचाई ॥ चार गते चिर मैं भटको
 जहां मेरु समान महा दुखदाई । बारही० ॥ ६ ॥ नित्य निगोद
 अनादि रहो त्रसके तनकी जहां दुर्लभताई । ज्यों क्रम सो निकसो
 वह ते त्यों इतर निगोद रहो चिरछाई ॥ सूक्ष्म बादर नाम भयो
 जब ही यह भांति धरी पर्यायी । बारही० ॥ ७ ॥ जबहीं पृथ्वी
 जल तेज भयो पुनि मारुत होय वनस्पति काई । देह अघात धरी
 जब सूक्ष्म घातत बादर दीरघताई ॥ एक उदै प्रत्येक भयो सह
 धारण एक निगोद बसाई । बारही० ॥ ८ ॥ इन्द्रिय एक रही
 चिरमें कब लब्धि उदै स्वयं उपशमताई । वे त्रय चार धरी जब
 इन्द्रिय देह उदै विकलत्रय आई ॥ पंचन आदि किधौं पर्यन्त धर
 इन इन्द्रियके त्रस काई । बारही० ॥ ९ ॥ काय धरी पशुकी बहु
 बार भई जल जन्तुनकी पर्याई । जो थल मांहि अकाश रहो चिर
 होय पखेरू पङ्क लगाई ॥ मैं जितनी पर्याय धरीं तिनके वरणे कहूं
 पार न पाई । बारही० ॥ १० ॥ नरक मभार लियो अवतार परौ
 दुख भार न कोई सहाई । जो तिलसे सुख काज किये अघते सब
 नरकनमें सुधि आई ॥ ता तियके तनकी पुतली हमरे हियरा करि
 लाल भिराई ॥ बारही० ॥ ११ ॥ लाल प्रभा सु महीं बह हैं अरु
 शकर रेत उन्हार बताई । पङ्क प्रभा जु धुआंवत है तमसी सु
 प्रभासु महातम ताई ॥ जोजन लाख जु षोड़स पिएड तहां इकही

छिनमें गल जाई ॥ बारही० ॥ १२ ॥ जे अघ घात महा-दुखदायक
 में विषया रसके फल पाई । काटत हैं जबहीं निरदय तबहीं सरिता
 महिं देत बहार्ई ॥ देव अदेव कुमार जहां बिच पूरव बेर बतावत
 जाई ॥ बारही० ॥ १३ ॥ ज्यों नर देह मिलो क्रम सों करि गर्भ
 कुवास महा दुखदाई । जे नव मास कलेश सबे मलमूत्र अहार
 महाजय ताई ॥ जे दुख देखि जबै निकसो पुनि रोवत बालपने
 दुखदाई । बारही० ॥ १४ ॥ योवनमें तन रोग भयो कबहूँ विरहा-
 नल व्याकुलताई । मान विषे रस भोग चहों उन्मत्त भयो सुख
 मानत ताही । आय गयो क्षणमें विरधापन यह नर भव यह भांति
 गमाई । बारही० ॥ १५ ॥ देव भयो सुर लोक विषे तब मोहि रहो
 परया उर लाई । पाय विभूति बढे सुरकी पर सम्पति देखते शू-
 रत जाई ॥ माल जबै मुरभाय रहो धित पूरण जानि तबै बिल-
 लाई ॥ बारही० ॥ १६ ॥ जे दुख मैं भुगते भवके तिनके वरणे कहुं
 पार न पाई । काल अनादिन आदि भयो तहं मैं दुख भाजन हो
 अघ माहीं ॥ सो दुख जानत हो तुमहीं जबहीं यह भांति धरी
 पर्यायी । बारही० ॥ १७ ॥ कर्म अकाज करै हमरे हमको चिरकाल
 भये दुखदाई । मैं न बिगाड़ करो इनको बिन कारण पाय भये अरि
 आई ॥ मात पिता तुम हो जगके तुम छांड़ि फिरादि करों कहं
 जाई ॥ बारही० ॥ १८ ॥ सो तुम सों सब दुःख कहों प्रभु जानत हो
 तुम पीर पराई । मैं इनको सत्संग कियो दिनहूँ दिन आवत मोहि
 वुराई ॥ ज्ञान महानिधि लूट लियो इन रड्डु कियो यह भांति
 हराई ॥ बारही० ॥ १९ ॥ मैं प्रभु एक सरूप सहो सब यह इन
 दुष्टनकी कुटिलाई । पाप सु पुण्य दुहुं निज मारगमें हमको यह

फांसि लगाई ॥ बारही० ॥ २० ॥ यह बिनती सुन सेवककी निज
 मारगमें प्रभु लेख लगाई ॥ मैं तुम दास रहो तुमरे संग लाज करो
 शरणागति आई ॥ मैं कर दास उदास भयो तुमरो गुणमाल सदा
 उर लाई । बारही० ॥ २१ ॥ देर करो मत श्री करुणानिधि जू पति
 राखन हार निकाई । योग जुरे क्रमसो प्रभुजी यह न्याय हजूर भैंयो
 तुम आई ॥ आन रहो शरणागति हों तुम्हरो सुनिवे तिहुंलोक
 बड़ाई । बारहिंवार० ॥ २२ ॥ मैं प्रभुजी तुम्हरी समको इन अन्तर
 पाय करो दुसराई । न्याय न अन्त कटे हमरो न मिले हमको तुम
 सी ठकुराई ॥ सन्तन राख करो अपने ढिग दुष्टनि देहु निकास
 बहाई । बारही० ॥ २३ ॥ दुष्टनकी सत्संगतिमें हमको कछु जान
 परो न निकाई । सेवक साहबकी दुबिधा न रहे प्रभुजी करिये सु
 भलाई ॥ फेर नमों सु करो अरजी जसु जाहर जानि परे जगताई ।
 बारही० ॥ २४ ॥ यह बिनती प्रभुके शरणागति जे नर चित्त लगाय
 करेंगे । जे जगमें अपराध करे अघ ते क्षणमात्र भरेमें हरेंगे । जे
 गति नीच निवास सदा अवतार सुधी स्वरलोक धरेंगे । देवीदास
 कहें क्रम सों पुनि ते भवसागर पार तरेंगे ॥ २५ ॥ इति ॥

६६ अथ कृपण पक्षीसी ।

सवेया इकतीसा ।

एक समय देहुरामें पञ्च सब बैठे हुते, संघाने बात जात
 जाबेकी चलाई है । भली हैं जो चलो गिरनार परसन जहां जन्म
 सुफल और कीर्ति बड़ाई है ॥ वहां बैठो हुती एक कृपण पुरुष
 नारि तिन यह सुनी बात घरमें चलाई है । सुनोजी पियारे पोव

आवे जो तुम्हारे जीव हम तुम दोनों चले भली बन आई है ॥ १ ॥

पुरुष वाक्य—बावरी भई है नारि काहूको लगी बयार बुद्धि गई मारी तोहि कहा दिस आई है । मोसों तू कहत अविचारी ओंधी सीधी बात मेरे कुल . . . कौनने चलाई है ॥ कहा तोहि भूत लगा ज्ञान सब दूर भगा समझ ना परे तुझे कोन बहकाई है । मोसे तू कहत धन खरबन जात जानत है गोरी हम क्योंकर कमाई है ॥ २ ॥

स्त्री वाक्य—जानत हों नाथ माया तुम्हींसे ऊपजी है फेरके कमाय लीजो कहा याकूँ गही है । चले है भलो जु साथ नेम-नाथ पूजवेको फेर ऐसो साथ कहीं पायवेको नहीं है ॥ ताते पिया कीजै जगमें सुयश लीजै भगवत पूजा कीजै यही सार सही है । लक्ष्मी अनेक चार आयके विलाय गई मुझे तो बताओ यह काके धिर रही है ॥ ३ ॥

पुरुष वाक्य—बावरी न जाने बात कौन काज इतरात जगमें सुयश कहा पोट बांध लीजिये । तोड़िये वे हाथ जिन हाथन खरब डारो अपनी कमाई धन आये नहिं दीजिये ॥ कहा तू सयानी भई मोहि समझायवे को गोदमेंसे पूत डार पेट आस कीजिये । जानत न निया बौरो, अन्त तोहि मत थोरी कहत चलन जात बातें धन लीजिये ॥ ४ ॥

स्त्री वाक्य—धन तो बढ़ै गा दिन दिन सुन मेरी पीय धमके किये ते धन अति अधिकायगा । धमके कियेसे यश कीरति प्रकट होत धर्मके कियेसे नर भली गति जायगा ॥ लक्ष्मी है चञ्चल फिरत चक्रके समान धिरता नहीं है धन क्षणमें पलायगा । तातें

पिया धरम कीजै, जगमें सुयश लीजै, चार विधि दान दीजै महा
सुख पायेगा ॥ ५ ॥

पुरुष वाक्य—कहत कहा है राड़, घरमें भई है सांड, मुझे
किया चाहे भांड धन खरचायके। मोहि ना रहन देत दिन रात
जिय लेत ताते हूं रहोंगो अब ओर ठौर जायके ॥ घर में निकसि
गयो जाय कहीं बैठ गयो तहां एक मित्र मिलो पृथ्वी बनायके।
कहा मेरे मित्र आज देख्यो दलगीर तोहैं कारण सो कौन मुझे
कहो समुझायके ॥ ६ ॥

मित्र वाक्य--क्या तो मेरे मित्र तेरे घर कुछ चोरी हुई क्या
हमारे मित्र द्वार मांगत फकीर है। क्या हमारे मित्र कुछ राज-
दण्ड देनो पड़ो किधों मित्र प्यारे तेरे तन कुछ पीर है ॥ क्या
हमारे मित्र तेरे कोई मिहमान आयो या हमारे मित्र तेरा मेरा
हित् वीर हैं। सांची बात कहो मोसे ताहीको इलाज करूं मेरे मन
सोच भयो भारी दलगीर है ॥ ७ ॥

रूपण वाक्य—ना तो मेरे मित्र कुछ चोरी भई मेरे घर नहीं
मेरे मित्र कुछ राजा दण्ड लिया है। न तो कोई मरा न तो कोई
मिहमान आया ना तो भीड़ पड़ो नहीं खोटा काम किया है ॥ रात्रि
दिन मेरे मित्र घरमें सतावे नारी वही बान कहै जासो फाटा जात
हिया है। हमने ये लक्ष्मी कमाई बड़े कष्टोंसे उसने उपाय धन
खोयबेको किया है ॥ ८ ॥ कहा कहूं मेरे मित्र कहो पड़ती न कछु
सोई बात कहे जासों होत उत्पात है। गिरनार सङ्ग चले मोसे
कहे तू भी चाल एतो सुन मित्र मेरो हियो फाट्यो जात है ॥
जायके चढ़ाये एक बार फल कूल पान देवता न खाय सब माली

ले जात है। बड़ो दुःख कहो कैसे सहं मेरे मित्र गिरनार गये घरवार भी नशात है ॥ ९ ॥ मेरो कहो मान मित्र भले दलगीर भयो पापिनी नियाको बेग पोहर पठाइये। जात्रो चले जांय जब पचास साठ कोस फेर आदमीके हाथ दे संदेश बुलवाइये ॥ और भांति जीवन न पावो सुनो प्यारे मित्र तुझे मैं सिखाऊं वही घर पर सुनाइये। तेरे बाप भाईके बध्वाई बटी बेग दे बुलाई तिया देर न लगाइये ॥ १० ॥

तेरे बिना मित्र मुझेको सिखावे ऐसो मेरे प्राण रखे भाई जीवदान दियो है। पर उपकारी तैं विचारी भली बात यह गयो हुयो घर मेरो तेने राख लियो है ॥ ऐसो मन्त्र कौनको फुरत ऐसो अवसरमें उत्तम उपाय तैं बताया यश लियो है। तेरी मैं बड़ाई करूं कहां ताई मेरे मित्र रामकी दुहाई डूबतेकूं थाम लियो है ॥११॥

झूटा एक कागज बनायके सुनाया जाय सुन त्रिया चिट्ठी तेरे पीहरसे आई है क्षेम है। कुशल तेरे भाईके पुत्र हुआ लिखी है जरूर तेरे भाईने बुलाई है ॥ बेग चली जायने बिलम्ब नहीं ठीक त्रिया दिन चारहीमें बजत बध्वाई है ॥ घणों दिन बीते पीछे गई न गई समान औसरके बीते कहा आदर बड़ाई है ॥१२॥

आदर बड़ाई मैंने छोड़ी सब स्वामी नाथ रहूं घर बैठी कहीं जाऊंगी न आऊंगी। मेरी देह नोकी नाहिं ज्वर सो भयो है मेरे ताते कल्लु औषधि महीना एक खाऊंगी ॥ अब तो पड़ी है जीकी देखों कब होऊं नोकी हुई तौ भी मांस दो एक न्हाऊंगी। सुणत बचन ये कृपण मन राजी भयो सुन्दर सओनी तेने बात कही सा-ऊंगी ॥१३॥

इतनेमें संघ गिरनार कीउ सङ्ग चलो भट्टारक बोल तब दुन्दु भी बजाई है। जात चौरासी सब श्रावकोंमें चिट्ठी गई चतुर्विध सङ्ग लिये गोठ सब आई है ॥ बाजत नकारे अति भारी २ लोग आये नाचत अखाड़े इन्द्र कैसी छवि छाई है। आगो लेत सङ्घई करन मनुहार बिनोदन धन कहै सब तेराये कमाई है ॥१४॥

नाचत तुरंग चले शोभित सुरङ्ग सबै झूलत गयंद मानो घटा जुर आई है। रथनयै नाना भांति ध्वजा फहरात जात पालकी अनेक भांति लोगोने बनाई है ॥ बलभरुआसे छड़ी आशण अनूप बने प्यादे सवार ले निशान चमकाई है। ऐसी भांति गावन बजावन चलत सब बोलत है जै जै शब्द बाजत बधाई है ॥१५॥

जहां २ जात खरचत खात भली भांति ठौर २ होत जेवनार एकवानकी। बांटत तम्बोल गांव २ प्रति भली भांति कहां लो बड़ाई कीजे संघईके दानकी ॥ हंसी राजी खुशी सेतो संघ गिरनार गयो देखत समाज सबसे सुधि आनकी। संघ ही साथी मन गमन आनन्द भरे बार २ करत बड़ाई सन्मानको ॥१६॥

गढ़ गिरनारकी तलहटीमें डेरो किये एकते सुरङ्ग एक मानो बनचाये है। बाजत नगारखाना गरजत घन जैसी विजली चमकसे निशान चमकाये हैं। बरपत मेघसे सरस लोक दान देत सुण २ कोरति अधिक लोक धाये हैं ॥ मिश्रुक अनेक देश देशनके भेले भये सुणी गिरनारजीपै जैनी लोग आये है ॥१७॥ चढे गिरनारजी तै तीन प्रदक्षिणा दै जय जयकार बोल २ मन हर्षाये हैं। अष्ट द्रव्य हाथ लिये पूजनेका ठाठ किये कञ्चनके धार बीच मोती भरवाये हैं ॥ रत्नोके क्षीपक दशांग धूप खासी खरीं आरती उतारी तन

फूलें ना समाये हैं ॥१८॥ पूजे नेमिनाथ जिननाथ तीन लोकनाथ
इन्द्र चन्द्रनाथ पूजा कीनी जादोपतिकी । पृथिवीके नाथ सुरनाथ
मृत्यु लोकनाथ विद्याधरनाथ चक्रवर्ती पतिरतिकी ॥ व्यन्तरके
नाथ हरिनाथ प्रति हरिनाथ नारद सहित मुनिगण सब जातिकी ।
इत्यादिक पूजन हरष युत किये पीछै सब हीने फेर पूजा कीनी
राजमतिकी ॥१९॥

करो है प्रतिष्ठा विंव हेमके बनाय नये चतुर्विध संघ सन्मान
अनि कीनो है । यथायोग्य सब पहरायके तम्बोल दीने गुरुने ति-
लक संघ पदवीको दोनो है ॥ मास एक पूजन विधान कियो भली
भांति उलटे पलट फेर निज घर चिन्हां है । सुनके नगर लोग
आदर सूं लेने आये रूपण सुणत मन नवीनो है ॥२०॥ हाय हाय
हम हूं न गये ऐसे संघ बोच देखो माली ल्याओ सब लक्ष्मी बटो-
रके । जो कि हम जाते नित खाते तो पराय सिर चढ़ती सो में ही
लेनो मांगके बटोरके ॥ फूल माल में ही देनो नेवज समेट लेतो
पंसा टका लेनी सबहीके हाथ जोरके । में तो मन्द भारी मुझे
कुमनिने घेर लियो छाती सिर पीट पीट रोवे सिर फोरके ॥२१॥

घर आय खाट परे लक्ष्मीका शोक करै कालज्वर चढ़ो आन
अंग ताप तपो है । वायु पित्त कफ बढ़ै कंठ घरड़ान लगो हाथ
पांव तोरि मोरे बावरो सो भयो है ॥ सन्निपात व्याधि भई सुधि
बुधि भूल गई हाय हाय करे देखो माली धन लियो है । आरितरु
खद परिणामन शरीर तजो मरके रूपण नर्क तीसरेमें गयो है ॥२२॥

रूपणकी नारी भली किया करी बालमकी बारमें दिवस सर्व
पञ्चनको जिमायो है । देख सब लक्ष्मी विचार कियों मन बोच यह

तो चञ्चल अनित्य भाव भायो है ॥ लगी खरबन धन जिनको भ-
वन कीनो करी है प्रतिष्ठा धन खूब ही लगायो है ॥ आप लई दिक्षा
न इच्छा थो भोगनकी मनको वैराग्य भाव प्रगट दिखायो है ॥२३॥

द्वादशानुप्रेक्षाय मनमें वैराग्य लाय केशका कराय लोंव अर्ज-
का सो भई है । तप करे द्वादश परीपढ़ सहेँ दोष बीस तीजे चौथे
दिन उठ उदण्ड बन लई है ॥ तिहुं काल सामायक दस विधि धर्म
पाले तीनों रतन हिय धार सूधो परतई है । ऐसे काल पूरो कीनो
अन्त संन्यास लीनो शुभ ध्यान देह त्याग तीजे स्वर्ग गई है ॥२४॥

छप्पे—रूपण गयो मर नरक स्वर्ग सुख बनित पायो । धिक
धिक बाकी हुई नार जश जगने गायो ॥ द्रव्य गया नहिं संग
युगलमेंको जननीके । जश अपजश रह जात बुद्धि नहिं हो सब-
हीके ॥ कहें लाल विनोदी जन सुनो द्रव्य पाय यश लीजियो । कर
जानि प्रतिष्ठा यज्ञ शुभ दान सचनको दीजियो ॥२५॥ इति ॥

{ ६७ } उपदेश पचीसी प्रारम्भः ।

दोहा—बीतरागके चरण जुग, बन्दों शोस नवाय ।

कहूं उपदेश पचीसिका, श्रीगुरुकेसे पसाय ॥

चौपाई—बसत निगोद काल बहु गयो । चेतन सावधान ना भयो ॥
दिन दश निकस बहुर फिर परना । एते पर एता क्या करना ॥२॥
अनन्त जीवकी एक ही काय । जन्म मरण एकत्र कराय ॥ स्वांसमें
बार अठारह मरना । एते पर एता क्या करना ॥ ३ ॥ अक्षर भाग
अनन्तम कहो । चेतन ज्ञान यहां तक रहो ॥ कौन शक्तिसे तहां
कि करता । एतेपर एता क्या करना ॥४ पृथ्वी तेज नीर

अरुवाह । वनस्वतीमें बसे शुभाय ॥ ऐसी गतिमें बहु दुख
भरना । एतेपर एता क्या करना ॥ ५ ॥ केतिक काल यहां ही
गयो । तहंसे कड़ विकलत्रय भयो ॥ ताको दुख कुछ जाय न
वरना । एतेपर एता क्या करना ॥ ६ ॥ पशु पक्षीकी काया पाई
चेतन तहां रहो लपटाई ॥ बिन विवेक कहो क्यों तरना । एते
पर एता क्या करना ॥ ७ ॥ इम तिर्यव महा दुख सहे । सो काहू
ते जाय न कहे ॥ पाप कमेसे इस गति परना । एते पर एता क्या
करना ॥ ८ ॥ बहुरो पड़ो नर्कके माहीं । सो दुख कैसे वरणे
जाहीं ॥ भू दुर्गन्ध नाक जहां सरना । एतेपर एता क्या करना ॥ ९ ॥
अग्नि समान तप्त भू कहीं । कितहू शीत महा बन रही ॥ शूली
सेज क्षणक ना डरना । एते पर एता क्या करना ॥ १० ॥ परम
अधर्मो असुर कुमार । छेदन भेदन करे अपार ॥ तिनके वशसे
नाहिं उबरना । एतेपर एता क्या करना ॥ ११ ॥ रंचक सुख जहं
जियको नाहीं । बसते यहां नर्क गति माहीं ॥ देखत दुष्ट महा
भय भरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १२ ॥ पुण्य योग भयो
सुर अवतार । फिरत २ इस जगति मभार ॥ आवत काल देख
थर हरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १३ ॥ सुर मन्दिर अरु
सुख संयोग । निशि दिन मन वांछित वर भोग ॥ क्षण इक माहिं
तहांसे टरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १४ ॥ बहुत जन्म
तक पुण्य कमाय । तब कहूं लही मनुज पर्याय ॥ तामें लयो जरा-
दिक मरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १५ ॥ धन योवन सब
ही ठकुराई । कर्म योगसे नव निधि पाई ॥ सो स्वप्नान्तर कैसा
भरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १६ ॥ इन विषयनके तो दुख

दीनों । तबहूँ तू तिनहीं रस भीनो ॥ तनक विवेक हृदय न
 धरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १७ ॥ पर संगति कितना
 दुख पावे । तब भी तोंकों लाज न आवे ॥ वासन संग नीर ज्यों
 जरना । एतेपर एता क्या करना ॥ १८ ॥ देव धर्म गुरु शास्त्र न
 जाने । स्वपर विवेक न उरमें आने ॥ क्यों होसी भवसागर त-
 रना । एतेपर एता क्या करना ॥ १९ ॥ पांचों इन्द्रिय अति घट-
 मारे । परम धर्म धन मूलत हारे ॥ हाथ पिवहिं एता दुख भर-
 ना । एतेपर एता क्या करना ॥ २० ॥ सिद्ध समान न जाने आप-
 यासे तोहि लगत है पाप ॥ चोल देख घट पटहि बघरना । एतेपर
 एता क्या करना ॥ २१ ॥ श्रीजिन बचन अमिय रस वानी । पीवे नाहिं
 मूढ़ अज्ञानो ॥ जासे होय जन्म मृत्यु हरना । एते पर एता क्या
 करना ॥ २२ ॥ जी चेतें तो है यह दाव । नातर बैठा मङ्गल गाव ।
 फिर यह नर भव बृक्ष न फरना । एते पर एता क्या करना ॥ २३ ॥
 भैया बिनवे बारम्बार । चेतन चेत भलो अवतार । हो दूल्ह शिव
 रानी वरना । एते पर एता क्या करना ॥ २४ ॥

दोहा—ज्ञान मई दर्शन मई चारित्र मई सुभाय । सो परमात्म
 ध्याइये यही मोक्ष सुखदाय ॥ २५ ॥ सत्रह सौ इकनालीसके मार्ग
 शीर्ष निरपक्ष । तिथि शङ्कर गण लीजिये श्रीरविवार प्रत्यक्ष ॥ २६ ॥

६८ धर्म पक्षीरसी ।

दोहा—भव्य कमल रवि सिद्ध जिन, धर्म धुरन्धर धोर ।

नमत सुरेन्द्र जग तम हरण; नमो त्रिविध गुरवोर ॥

चौपाई—मिथ्या विषयनमें रति जीव । ताते जगमें भ्रमें

सदीव ॥ विविध प्रकार गहैं परयाय । श्रोजिनधर्म न नेक सुहाय
 ॥२॥ धर्म बिना बहुगतिमें परे । चौरासीलख फिर फिर धरे ॥ दुख
 दाषानल माहिं तपन्त । कर्म करे फल भोग लहन्त ॥३॥ अति दुर्लभ
 मानुष पर्याय । उत्तम कुल धन रोग न काय ॥ इस अवसरमें धर्म
 न करे । फिर यह अवसर कबहुं न सरे ॥ ४ ॥ नरकी देह पाय रे
 जीव । धर्म बिना पशु जान सदीव ॥ अर्थ काममें धर्म प्रधान ।
 ता बिन अर्थ न काम न मान ॥ ५ ॥ प्रथम धर्म जो करै पुनीत ।
 शुभसङ्गत आवै कर प्रीति ॥ विघ्न हरे सब कारज करे । धन सों
 चारों कृते भरे ॥६॥ जन्म जरा मृत्यु बश होय । तिहुंकाल डोले
 जग सोय ॥ श्रोजिन धर्म रसायन पान । कबहुं न रुचे उपजे अ-
 ज्ञान ॥७॥ ज्यों कोई मूर्ख नर होय । हलाहल गहे अमृत खोय ॥
 त्यों शठ धर्म पदारथ त्याग । विषयन सों ठाने अनुराग ॥ ८ ॥
 मिथ्याग्रह गहिया जो जीव । छांड़ धर्म विषयन चित दीव ॥ ज्यों
 पशु कल्पवृक्षको तोड़ । वृक्ष धतूरेकी भू जोड़ ॥९॥ नर देही जानों
 परधान । विसर विषय कर धर्म सुजान ॥ त्रिभुवन इन्द्रतने सुख
 भोग । पूजनीक हो इन्द्रन जोग ॥ १० ॥ चन्द्र बिना निश गज बिन
 कन्त । जैसे तरुण नारि बिन कन्त ॥ धर्म बिना त्यों मानुष देह ।
 तातें करिये धर्म सुनेह ॥ ११ ॥ हथ गय रथ पावक बहु लोग ।
 सुभट बहुत दल चार मनोग । ध्वजा आदि राजा बिन जान । धर्म
 बिना त्यों नरभव मान ॥ १२ ॥ जैसे गन्ध बिना है फूल । नीर
 बिहीन सरोवर धूल ॥ ज्यों बिन धन शोभित नहीं भोन । धर्म
 बिना त्यों नर चिन्तोन ॥१३॥ अरचे सदा देव अरहन्त । चर्चे गुरु-
 पद कहुणावन्त । खरखे दाम धरम सों प्रेम । रुचे विषय सुफल

नर एम ॥ १४ ॥ कमला चपल रहे धिर नाहिं । योवन रूप जरा
 लिपटाहिं ॥ सुत मित नारी नाथ संयोग । यह संसार स्वप्नको
 भोग ॥ १५ ॥ यह लख बित धर शुद्ध स्वभाव । कीजै श्रीजिन धर्म
 उपाव ॥ यथा भाव तैसो गति गहै । जैसी गति तैसो सुख लहै
 ॥ १६ ॥ जो मूर्ख है धर्म कर हीन । विषय ग्रन्थ रविब्रत नहिं कीन ।
 श्रीजिन भाषित धर्म न गहै । सो निगोदको मारग लहै ॥ १७ ॥
 आलस मन्द बुद्धि है जास । कपटी विषय मग्न शठ तास ॥ काय-
 रता मद परगुण ढकै । सो तिर्यञ्चयोनि लक्ष सकै ॥ १८ ॥ आरत
 रुद्र ध्यान नित करे । क्रोध आदि मतसरता धरे ॥ हिंसक बैरभाव
 अनुसरे । सो पापिष्ट नरक गति परे ॥ १९ ॥ कपट हीन करुणा
 वित माहिं । है उपाधि ये भूले नाहिं ॥ भक्तिवन्त गुणवन्त जो
 कोय । सरलस्वभाव जो मानुष होय ॥ २० ॥ श्रीजिन वचन मग्न
 तप दान । जिन पूजे दे पात्रहि दान ॥ रहै निरन्तर विषय उदास ।
 सोई लहै स्वर्ग आवास ॥ २१ ॥ मानुष योनि अन्तके पाय । सुन
 जिन वचन विषय विसराय ॥ गहे महाव्रत दुर्द्धर वोर । शुक्ल-
 ध्यान धर लहै शिव धोर ॥ २२ ॥ धर्म करत सुख होत अपार । पाप
 करत दुख विविध प्रकार ॥ बाल गुपाल कहै सब नार । इष्ट होय
 सोई अवधार ॥ २३ ॥ श्रीजिनधर्म मुक्ति दातार । हिंसा धर्म परत
 संसार ॥ यह उपदेश जान बड़ भाग । एक धर्म सो कर अनुराग
 ॥ २४ ॥ व्रत संयम जिम पद थुति सार । निर्मल सम्यक भाव
 निवार ॥ अन्त कषाय विषय कृषि करो । जो तुम भक्ति कामिनो
 वरो ॥ २५ ॥

दोहा—बुध कुम्भदिनि शशि सुख करन, भो दुख नाशन जान ।

कह्यो ब्रह्म जिन दास यह, ग्रन्थ धर्मकी खान ॥२६॥ दानत जे
वांचें सुनें, मनमें करे उछाय । ते पावैं सुख शान्ति भी, मन
वांछित फल दाय ॥ ॥ इति ॥

६६ अध्यात्म पञ्चासिका ।

दोहा—आठ कर्मके बंधेमें, बन्धजीव भव बास । कर्म हरे सब
गुण भरे, नमों सिद्धि सुखरास ॥१॥ जगत मांहिं चहुं गति विषै,
जन्म मरण वश जीव । मुक्ति माहिं तिहुंकालमें, चेतन अमर स-
दीव ॥ २ ॥ मोक्ष माहिं सेती कमी, जगमें आवे नाहिं । जगके
जीव सदीव ही, कर्म काट शिव जाहिं ॥ ३ ॥ पूर्व कर्म उद्योगते
जोव करै परिणाम । जैसे मदिरा पानते, करै गहल नर काम ॥४॥
नार्ते बाधें कर्मको, आठ भेद दुखदाय । जैसे चिकने गातमें, धूलि-
पुञ्ज जम जाय ॥ ५ ॥ फिर तिन कर्मनके उदय, करै जीव बहु
भाय । फिरके बांधे कर्मको, ये ससार सुभाय ॥ ६ ॥ शुभ भावन
ते पुण्य है, अशुभ भाव तें पाप । दुहू आच्छादित जीवसो, जान
सके नहीं आप ॥ ७ ॥ चेतन कर्म अनादिके, पावक काठ बखान ।
क्षीर नीर तिल तेल ज्यों, खान कनक पाखान ॥ ८ ॥ लाल बन्ध्यों
गठड़ी विष्टै; भानु छिपो घन मांहिं । सिंह पीअरे मैं दियो, जोर
चले कछु नाहिं ॥९॥ नीर बुझावै आगको, जले टोकनी माहिं, देह
माहिं चेतन दुखी, निज सुख पावे नाहिं ॥१०॥ तदपि देहसों छुटत
है, अन्तर तन है संग । सो न ध्यान अग्नी दहै, तब शिव होय अ-
भंग ॥ ११ ॥ राग दोष तें आप हीं, पड़े जगतके माहिं । ज्ञान भाव
ते शिव लहै, दूजा संगी नाहिं ॥ १२ ॥ जैसे काहू पुष्पके द्रव्य

गड़ो घर माहिं । उदर भरे कर भीखसे, व्योम जाने नाहिं ॥ १३ ॥
 ता नरसे कीन्हीं कहा, तू क्यों मांगे भीख । तेरे घरमें निधि गड़ी,
 दीनी उत्तम सीख ॥ १४ ॥ ता के वचन प्रतीत सो, वह कीयो मन माहिं ।
 खोद निकाले धन बिना, हाथ परे कुछ नाहिं ॥ १५ ॥ त्यों अना-
 दिकी जीवके, परजै बुद्धि बखान । मैं सुर नर पशु नारकी, मैं मूरख
 मतिमान ॥ १६ ॥ तासों सतगुरु कहत हैं, तुम चतन अभिराम ।
 निश्चय मुक्ति सरूप हो, ये तेरे नहिं काम ॥ १७ ॥ काल लब्ध पर-
 तीत सो, लबत आपमें आप । पूरण ज्ञान भये बिना, मिटे न पुण्य
 अरु पाप ॥ १८ ॥ पाप कहत हैं पुण्यको, जीव सकल संसार ।
 पाप कहत हैं पुण्यको, ते विरले मति धार ॥ १९ ॥ बन्दीखानेमें
 परे, जाते छूटे नाहिं । बिन उपाय उद्यम किये, त्यों ज्ञानी जग
 माहिं ॥ २० ॥ साबुन ज्ञान विराग जल, कोरा कपड़ा जीव । रजक
 दक्ष धोवे नहीं, बिमल न लहे सदीव ॥ २१ ॥ ज्ञान पवन तप अगन
 बिन, दहे मूस जिय हेम । क्रोड़ वर्ष लों राखिये, शुद्ध होय मन केम
 ॥ २२ ॥ दरव कर्म दौं कर्म तें, भाव कर्मते भिन्न । विकल्प नहीं
 सुबुद्धिके शुद्ध चेतना चिन्ह ॥ २३ ॥ चारों नाहिं सिद्धके, तू चा-
 रोके माहिं । चार बिनासे मोक्ष है, और बात कछु नाहिं ॥ २४ ॥
 ज्ञाता जीवन मुक्ति हैं, एक देश यह बात । ध्यान अग्नि बिन
 कर्म वन, जले न शिव किम जात ॥ २५ ॥ दर्पण काई अधिर
 जल, मुख दोसे नहिं कोय । मन निर्मल धिर बिन भये, आप
 दर्श क्यों होय ॥ २६ ॥ आदिनाथ केवल लह्यो, सहस वर्ष तप
 ठान । स्मेई पायो भरतजी, एक महूरत ज्ञान ॥ २७ ॥
 राग दोष संकल्प है, नयके भेद विकल्प । दोष भाव मिट जाय

जब, तब सुख होय अनल्प ॥ २८ ॥ राग विराग दुभेद सो, दोय रूप परणाम । रागी भूमि या जगतके, वैरागी शिव धाम ॥ २९ ॥ एक भाव है हिरणके; भूख लगे तृण खाय । एक भाव मंजारके; जीव खाय न अघाय ॥ ३० ॥ विविध भावके जीव बहु; दीसत है जग माहिं । एक कछू चाहे नहीं; एक गजे कछु नाहिं ॥ ३१ ॥ जगत अनादि अनात है; मुक्ति अनादि अनन्त । जीव अनादि अनन्त है; कर्म दुविधि सुन संत ॥ ३२ ॥ सबके कर्म अनादिके कर्म भव्यको अन्त । कर्म अनन्त अभव्यके; तीन काल भटकंत ॥ ३३ ॥ फरश वरन रस गन्ध सुर; पांचो जाने कोय । बोले डोले कौन है; जो पूछे है सोय ॥ ३४ ॥ जो जाने सो जीव है; जो माने सो जीव । जो देखे सो जीव है, जीवे जीव सदोव ॥ ३५ ॥ जात पना दो विधि लसे; विपै निर विषय भेद । निर विषयो सम्बर लसे; विषयो आश्रव वेद ॥ ३६ ॥ प्रथम जीव श्रद्धान सो; कर वैराग्य उपाय ॥ ज्ञान किया सो मोक्ष है; यही बात सुखदाय पुद्गलसे चेतन बंध्यो; यही कथन है बेय जीव बंध्यो निज भाव सो, यही कथन आदेय ॥ ३८ ॥ बन्ध लखे निज ओरसे, उद्यम करै न कोय । आप बन्ध्यो निज सों समझ, त्याग करै शिव होय ॥ ३९ ॥ यथा भूपको देखके, ठोर रीतिको जान । तब धन अभिलाषी पुरुष, सेवा करै प्रधान ॥ ४० ॥ तथा जीव सरधान कर, जाने गुण परयाय । सेवे शिव धन आश धर, समता सो मिल जाय ॥ ४१ ॥ तीन भेद व्यवहार सों, सर्व जीव सब ठाम । श्रीअरहन्त परमात्मा, निश्चय चेतनराम ॥ ४२ ॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म रति, अहं बुद्धि सब ठोर । हित अनहित सरथ नहीं, मूढ़नमें शिर-

मौर ॥ ४३ ॥ ताप आप पर पर लखै, हेय उपादे ज्ञान । अब्रती
 देश ब्रती महा, ब्रती सबे मतिमान ॥ ४४ ॥ जा पदमें सब पद
 लसे, दर्पम ज्यों अविकार । सकल निकल परमात्म, नित्य निर-
 अन सार ॥ ४५ ॥ बहिरात्मके भाव तज, अन्तर आत्म होय । पर-
 मात्म ध्यावै सदा, परमात्म सो होय ॥ ४६ ॥ बूंद उदधि मिल
 होत दधि, बीती फरश प्रकाश । त्यों परमात्म होत है, परमात्म
 अभ्यास ॥ ४७ ॥ सब आगमको सार ज्यों, सब साधनको धेव ।
 जाको पूजे इन्द्र सां, सो हम पायो देव ॥ ४८ ॥ सोहं सोहं नित्य
 जपे, पूजा आगम सार । सत संगतिमें बैठना, यहै करे व्यवहार
 ॥ ४९ ॥ अध्यात्म पञ्चाशिका, माहिं कह्यो जो सार । दानत
 ताहि लो रहो, सब संसार असार ॥ ५० ॥ ॥ इति ॥

७० श्रीजिनगिरा स्तवन ।

शिखरणी छन्द ।

शरण आया माना, जिनेश्वर वाणी दुख हरो । विरद अनुपम
 तेरा, प्रगट जगन्नाता सुख करो ॥ भ्रमो जग बहुतेरा, सहा दुःख
 जन्मन मरणका । टरे नाहीं टारा, यत्न बहु कीना हरणका ॥ १ ॥
 भजे बहुते देवा, करी बहु सेवा शरणको । फंसे भव दुख सोही,
 न पाई आशा शरणकी ॥ अष्ट विधि खल भारी, हमारी कीनी
 दुर्दशा । इन्हींके वश माता, भवोदधि दुखमें मैं फंसा ॥ २ ॥ सतत
 चारों गतिमें, भ्रमावै मोकों ये बली । ज्ञान धनको हरिके, भुलाई
 मोकों शिवगली ॥ नरक पशु नर देवा, चतुर्गतिमें जो दुख लहो ।
 कहा जाता नाहीं तुम्हीं सब जानो जो सहो ॥ ३ ॥ निबल मोकों

पाके, सताते ये काल अति घने । शरण राखो माता, बचावो इनसे
निज जने ॥ सुमति अब दे माता बिनाशों आठों खलनमें । लहौं
शिवपुर पंथा, दहौं ना फिर त्रय ज्वलनमें ॥ ४ ॥ अल्प मति में
माता, सुमति निज दीजे दासको । यही विनती मेरी, पुरावो अम्बे
आशको ॥ युगल पदकी सेवा, करत नर देवा ध्यायके । लहत
शिव सुख मेवा, शरण मां तेरी पायके ॥ ५ ॥

दोहा—तुम पदाब्ज मो उर बसो, गशो तिमिर अज्ञान ।

सेवक नाथूरामको, दीजे मां बरदान ॥६॥ ॥इति॥

७१ जिन दर्शन ।

दोहा—दर्शन श्रोजिनदेवका नाशक है सब पाप । दर्शन सुर-
गतिदाय है, साधन शिव सुख आप ॥ १ ॥ जिन दर्शन गुरु बन्दना
इनसे अघ क्षय होय । यथा छिद्रयुत कर विषें चिर तिष्ठेना तोय
॥ २ ॥ वीतराग मुख दर्शियो पद्म प्रभा समलाल । जन्म जन्म कृत
पापसो, दर्शन नाशे हाल ॥ ३ ॥ जिन दर्शन रवि सारखा, होय
जगत तम नाश । विगसित बित्त सरोज लख, करता अर्थ प्रकाश
॥ ४ ॥ धर्मामृतकी वृष्टिको इन्दु दश जिनराय । जन्म ज्वलन
नाशे बड़े सुख सागर अधिकाय ॥ ५ ॥ सप्त तत्त्व दर्शें ग्रहे
वसु गुण सम्यक सार । शान्ति दिग्भ्यर रूप जिन दर्शि नमों बहु
वार ॥ ६ ॥ चेतन रूप जिनेश किय आत्म तत्त्व प्रकाश । ऐसे
श्री सिद्धान्तको नित्य नमों सुख आश ॥ ७ ॥ अन्य शरण बांछो
नहीं तुम्हीं शरण स्वयमेव । यासे करुणामाध धर रखो शरण जिन
देव ॥ ८ ॥ त्रिजगतमें इस जीवको तारणहार न कोय । वीतराग

वरदेव बिन भया न आगे होय ॥ ६ ॥ श्रीजिन भक्ति सदा मिलो
 प्रतिदिन भव २ माहिं । जब तक जग बासी रहों अन्तर वांछों
 नाहिं ॥ १० ॥ यिन जिन वृष शिव हो नहीं चाहे हो चक्रीश । धनी
 दरिद्री होत सब जिन वृषसे शिव ईश ॥ ११ ॥ जन्म जन्म कृत पाप
 भव कोटि उपार्जा होय । जन्म जरादिक मूलसे जिन बन्दन क्षय
 होय ॥ १२ ॥ यह अनूप महिमा लखी जिन दर्शनकी व्यक्त । यासे
 पद शरणा लिया नाथूराम जिन भक्त ॥ १३ ॥ जिन दर्शन लखि
 संस्कृत भाषा किया बनाय । भव्य जीव नित उर धरो यह भव
 भव सुखदाय ॥ १४ ॥ ॥ इति ॥

७२ श्रीजिनकर पचीसी ।

छप्पे छन्द-ऋषभ आदि चौबीस तीर्थ पनि तिन गुण गाऊं ।
 दिवपुर कुल पितु मात वर्ण लक्षण बतलाऊं ॥ काये आयु शिव
 आसन अरु शिव सान मनोहर । कहूं सर्व दर्शाय जांय पातक
 भव भय हर ॥ प्रातःकाल प्रतिदिन पढ़े स्वर्ग मुक्ति सुख सो लहै ।
 क्रमशः ऊंचे पाय पद नाथूराम सेवक कहै ॥ १ ॥ सर्वार्थसिद्धिसे
 ऋषभोजन बसे अयोध्या । वंशैश्वराकु प्रधान नामि पितु अनुपम
 योद्धा ॥ मरुदेवा जिनमात वर्ण कञ्चन तनु सोहै । वृष लक्षण
 शत पांच चाप तनु लख जग मोहै ॥ धिति चौरासी पूर्व लख
 पद्मासन कैलास गिरि । मुक्ति थान जिनराज नवो जन्म ना होय
 फिर ॥ २ ॥ तज सर्वार्थसिद्धि अयोद्धा बसे अजित जिन । श्रेष्ठ
 वंश इक्ष्वाकु पिता जिन शत्रु कहे तिन ॥ विजयासेना मात तनु
 गज लक्षण वर । ढोंच शतक धनु तनु धिति पूर्व लाख बहत्तर ॥

कायोत्सर्ग आसन विमल मुक्ति थान सम्मेदचल । नमों त्रियोग
सम्हालके त्रिजगनाथ तुमको स्वथ ॥ ३ ॥ सम्भव ग्रीवक त्याग
जन्म श्रावस्ती लीना । वंश कहो इक्ष्वाकु जितारि पितुहि सुख
दोना । मान सुसेना हेमवर्ण घोटक शुभ लक्षण । शतक चार धनु
देह साथ लख पूर्व आयु गण ॥ खड्गासनसे शिव गये मुक्तिनाथ
सम्मेद गिरि । नमो त्रिलोकीनाथको जन्म मरण ना होय फिर
॥ ४ ॥ अभिनन्दन तज विजय अयोध्या पितु संवर घर । सिद्धार्था
जिन मात वंश इक्ष्वाकु जन्म वर ॥ कनक वर्ण कपि चिन्ह हूँठ
शत चाँप कायु जिन । पूर्व लाख पञ्चास आयु खड्गासन है तिन ॥
श्रीसम्मेदाचल विमल मुक्तिनाथ जिनराजका । त्रिकाल वंदों
भावसे धन्य जन्म है आजका ॥ ५ ॥ वैजयंत तज सुमति अयो-
द्धानगरी आये । पिता मेघ प्रभु मात मङ्गला अति मन भाये ॥
विमल वंश इक्ष्वाकु हेम तनु चक्रवा लक्षण । धनुष तीन शत
देह तुंग त्रिभुवनके रक्षण ॥ आयु पूर्व चालीस लख खड्गासन
राजे अटल । सम्मेद शिखरसे शिव गये नमों २ तुमको स्वथल
॥ ६ ॥ पद्म प्रभु ग्रीवक सु त्याग कोशाम्बो आये । धारण नृप
पितुमात सुसीमा आनन्द पाये ॥ वंश कहो इक्ष्वाकु कमल सम
लाल वर्ण तन । कमल चिन्ह तन तुंग चाँप ढाई सौ भगवन ॥
आयु तीस लख पूर्वका खड्गासनसे शिव गये । सम्मेद शिखर
शिवक्षेत्र जिन नमों आज आनन्द लये ॥ ७ ॥ नाथ सुपाश्री ग्रीव-
कसे काशी उपजाये । सुप्रतिष्ठितपितु माता पृथिवीके मन भाये ।
विमल वंश इक्ष्वाकु हरित तन स्वस्तिक लक्षण । धनुष दोयसौ
काय बीस लख पूर्व आयु भण ॥ खड्गासन सम्मेदगिर सिद्ध-

क्षेत्रसे शिव गये । त्रिजग ताप हर्तारिको हाथ छोड़ हम इत नये
 ॥ ८ ॥ वैजयंत तज चन्द्रपुरी चन्द्रप्रभु स्वामी । महासेतु पितु
 मात लक्ष्मणाके भये नामी ॥ श्रेष्ठ वंश इक्ष्वाकु शुक्ल तनु शशि
 लक्षण धर । धनुष डेढ़ सौ देह लाख वश पूर्व आयु सर । खड़-
 गासनसे मुक्त हो अजर अमर अव्यय भये । शिव धान शिखर
 सम्मेद जिन तिन पदको हम नित नये ॥ ९ ॥ पुष्पवन्त आरण
 विय तज काकन्दी राजे । पिता नृपति स्वामी मात रामा सुख
 साजे ॥ वंश लहो इक्ष्वाकु शुक्ल तनु मगरा लक्षण । सौधनु तुंग
 शरीर आयु नोलाख पूर्व गण ॥ खड़गासनसे शिव गये सम्मेदा-
 चल मुक्ति थल । नमों त्रिलोकीनाथ मैं तुम पद पंकज युग विम-
 ल ॥ १० ॥ शीतल अच्युत त्याग बास मङ्गल पुर लीना । दृढ़
 रथ तात सुमात सुनन्दाको सुख दीना ॥ निर्मल कुल इक्ष्वाकु
 हेम तन श्रीतरु लक्षण । नव्वे धनुष शरीर आयु लाख पूर्व विच-
 क्षण ॥ खड़गासन दृढ़ धारके सम्मेदाचल ध्यान धर । मुक्ति भये
 तिनको नवें शीश नाथ हम जोड़कर ॥ ११ ॥ श्रेयान्त पुष्पोत्तर-
 से चय बसे सिंहपुर । विष्णुपिया विष्णु श्रीमाता उभय धर्मधुर ॥
 वंशेक्ष्वाकु पुनीत हेम तब गेंडा लक्षण । असीचाप तनु लाख
 असीखड वर्ष आयु भण ॥ खड़गासन दृढ़ शिव समय मुक्ति धान
 सम्मेदगिर । नमों त्रियोग लग्नायके अशुभ कर्म कलु जाय
 खिर ॥ १२ ॥ वासपूज्य कापिष्ठ स्वर्गसे चय चम्पापुर । लिया अम
 बसुपूज्य पिता माता बिजया उर ॥ कयात वंश इक्ष्वाकु अरुण
 तनु मणिहा लक्षण ॥ सत्तर धनुष शरीर उख जब जनके रक्षण ॥
 लाख बहुरार वर्षका आयु यस आसन भटल । सिद्ध क्षेत्र चम्पा-

पुरी बन्दों सुखदाता अबल ॥ १३ ॥ विमल शुक द्विष त्याग
कल्पिला जन्म लिया घर । कृत वर्मा जिन तात सुरम्या मात
गुणाकार ॥ विमुल वंश इक्ष्वाक कनक तन बराह लक्षण । साठ
चाप तनु तुङ्ग साठ लख वर्ष आयु गण ॥ खड्गासन सम्मेद-
गिर मुक्ति धान बन्दन करों । त्रिभुवननाथ प्रमादसे अब न भवो-
द्धि में परों ॥ १४ ॥ सहस्रार दिवसे अनन्त जिन जन्म अधोध्या ।
सिंहसेन पितु ग्रह लिया भविजन प्रति बोधा ॥ सर्व यशा जित-
मान वंश इक्ष्वाकु बखानो । हेमवर्ण सेई लक्षण जिनवरके जानो ॥
काय धनुष पंचासका आयु तोसलख पूर्व जिन । खड्गासन सम्मे-
दशिव नवो चरण कर जोड़ तिन ॥ १५ ॥ पुण्योत्तरसे धर्मनाथ
चय वसे रत्नपुर । भानु पिता सुवता मात इक्ष्वाकु वंश धुर ॥
हेमवर्ण लक्षण सु वज्र तनु धनु पैतालिस । आयु लाख दश वर्ष
संग आसन विधि जालिस ॥ सम्मेदाचल मुक्ति थल धर्मपोत धर
भव्य जन । पार किये भव उद्धिसे करुणाकर करुणायतन ॥ १६ ॥
शांतिनाथ पुण्योत्तरसे चय गजपुर आये । विश्वसेन घरा माता
गृह बजे बधाये ॥ कुरुवंशी तनु हेमवर्ण लक्षण मृग सोहै । काय
धनुष चालोस आयु लख वर्ष लयो है । खड्गासनसे शिव गये
मुक्तिनाथ सम्मेदगिरि । युग चरण कमल मस्तक धरों बंधे कर्म
खलु जांय खिरि ॥ १७ ॥ कुथुनाथ पुण्योत्तरसे चय जन्मे गजपुर ।
सूर्य पिता श्रीदेवी माता उमय धर्मधुर ॥ कुरुवंशी तनु हेमवर्ण
लक्षण अज्ञ जानो । काय धनुष तैतीस काम सुरकी पहिचानो ॥
आयु सहस्र पंचानवे वर्ष बाँड आसन कहो । सम्मेद शिखर शिव-
सेव सुम जिन बन्दत हम सुख लहो ॥ १८ ॥ अरहनाथ सर्वार्थ

सिद्धसे गजपुर आये । पिता सुदर्शन माता मित्रा लख सुख पाये ॥
 शुभ कुरुवंश महान हेम तनु मच्छ चिन्हवर । तीस चांप तन तुंग
 त्रिजन मनमोहन सुन्दर ॥ सहस्र चउरासो वर्षका आयु खंड
 आसन अटल । शिवथान शिखर सम्मेद जिन बन्दों तिनके पद
 कमल ॥ १६ ॥ मलिनाथ तज विजय जन्म मिथिलापुर लीना ।
 कुम्भ पिता रक्षिता माताको बहु सुख दीना ॥ वंश कहो इक्ष्वाकु
 हेम तनु घट लक्षण वर । काय धनुष पञ्चीस तुंग महैं लख सुर
 नर ॥ आयु वर्ष पचपन सहस्र खड्गासन सोहैं अचल । शिवथान
 शिखर सम्मेदवर तीर्थराज विसरे न पल ॥ २० ॥ मुनिसुवत
 अपराजितसे कुशाग्रपुर राजे । पितु सुमित्र पञ्चावन माताको सुख
 साजे ॥ हरिवंशी तनु श्याम कच्छ लक्षण शुभ सोहैं । बीस
 धनुषका काय तुंग देखत मन मोहैं ॥ तीस सहस्र सु वर्षका आयु
 खंग आसन सुभग । सम्मेद शिखर शिवथान प्रभु तीर्थराज भवि
 मुक्ति मग ॥ २२ ॥ प्राणत तज नमिनाथ जन्म मिथिलापुर लीना ।
 विजय पिता वप्रामाताको अति सुख दीना ॥ विमल वंश इक्ष्वाकु
 वर्ण तनु हेम सुहावन । पञ्च पाखुरी अड्ड पञ्चदश चांप सुभग
 तन ॥ आयु वर्ष दश सहस्रका पद्यासनसे शिव गये । सिद्धक्षेत्र
 सम्मेदगिरि वन्दित हों मंगल नये ॥ २२ ॥ बैजयन्तसे नेमनाथ
 सूरिपुर प्रगटे । सिद्ध विजय शिवदेवीके देखत दुख विघटे ॥ लहो
 श्रेष्ठ हरिवंश श्याम तनु शंख अड्डवर । काय धनुष दश सहस्र
 वर्षका आयु पूर्णधर ॥ खड्गासन गिरिनारिसे राजमती पति
 शिव गये । पशुबंदि छुड़ाई दयाकर तिन पदपंकज हम नये ॥ २३ ॥
 प रस प्रभु आनत दिव तज काशीमें राजे । अभ्रसेन बामा माता

गृह दुन्दुमि बाजे ॥ उग्र वंश तनु नोल चिह्न अहिराज विराजे ।
नव कर काय उत्तंग आयु शत वर्ष सुलाजे ॥ खड्गासन
सम्पेदगिर मुक्ति थान मद कमठ हर । मन वच तन् बन्दन करों
ते धीसम जिनराज वर ॥२४॥ वर्धमान पुष्पोत्तरसे कुण्डलपुर
आये । सिद्धार्थ पितु त्रिशला माता लख सुख पाये ॥ नाथ वंश
तनु हेमवर्ण हरि चिह्न मनोहर । सात हाथ तनु आयु बहत्तर
अब्द लयोबर ॥ खड्गासन पावापुरी मुक्ति थान जगताप हर ।
नवे सु नाथूराम नित हाथ जोड़ युग शीश धर ॥ २५ ॥ इति ॥

७३ सूतक निर्णय

सूतकमें देव शास्त्र गुरुका पूजन प्रक्षालादि तथा मंदिरजीका
वस्त्राभूषणादिक स्पर्शनकी मनाई है तथा पात्रदान भी वर्जित है ।
सूतक पूर्ण होनेके बाद प्रथम दिन पूजन प्रक्षाल तथा पात्रदान
करके पवित्र होवे । सूतक विवरण इस प्रकार है । १, जन्मका दश
दिन माना जाता है । २, स्त्रीका गर्भ जितने माहका पतन हुआ हो
उतने दिनका सूतक मानना चाहिये, विशेषतः यह है कि यदि तीन
माहसे कमका हो तो तीन दिनका सूतक मानना चाहिये । ३ प्र-
सूती स्त्रीको ४५ दिनका सूतक होता है । इसके पश्चात् वह स्नान
दर्शन करके पवित्र होवे ॥ कहीं २ चालीस दिनका भी माना जाता
है । ४, प्रसूति स्थान एक माहतक अशुद्ध है । ५, रजस्वला स्त्री
पांचवे दिन शुद्ध होती है । ६, व्यभिचारिणी स्त्रीके सदा ही सूतक
रहता है, कभी भी शुद्ध नहीं होती । ७, मृत्युका सूतक १२
दिनका माना जाता है । तीन पीढ़ीतक १२ दिन, चौथी पीढ़ीमें ६

दिनका, छठो पीढ़ीमें ४ दिन, सातवीं पीढ़ीमें ३ दिक्, आठवीं पीढ़ीमें एक दिन रात, नवमीं पीढ़ीमें स्नान मात्रसे शुद्धता कही है। ८, जन्म तथा मृत्युका सूतक गोश्रके मनुष्यको ५ दिनका होता है। ९, आठ वर्षतककी बालकके मृत्युका ३ दिनका और तीन दिनके बालकका सूतक १ दिनका जानो। १०, अपने कुलका कोई गृहत्यागी उसका संन्यासमरण अथवा किसी कुटुम्बीका संग्राममें मरण हो जाय, तो १ दिनका सूतक होता है। यदि अपने कुलका देशांतरमें मरण करे और १२ दिन पूरे होनेके पहले मालूम हो तो शेष दिनोंका सूतक मानना चाहिये। यदि दिन पूरे हो गये होवें तो स्नानमात्र सूतक जानो। ११, घोड़ी, भैंस, गौ आदि पशु तथा दासी अपने गृहमें जने तो १ दिनका सूतक होता है। गृह बाहर जने तो सूतक नहीं होता। १२, दासी, दास तथा पुत्रीके प्रसूत होय या मरे, तो ३ दिनका सूतक होता है। यदि गृह बाहर हो तो सूतक नहीं। यहांपर मृत्युकी मुख्यतासे ३ दिनका कहा है। प्रसूतका १ ही दिन जानो। १३, अपनेको अग्निमें जलाकर (सती होकर) मरे तिसका छह माहका तथा और और हत्याओंका यथायोग्य पाप जानना। १४, जने पीछे भैंसका दूध १५ दिनतक, गायका दूध १० दिनतक और बकरीका दूध ८ दिनतक अशुद्ध है पश्चात् खाने योग्य है। प्रगट रहे कि कहीं देश-भेदसे सूतक विधानमें भी भेद होता है इसलिये देशपद्धति तथा शास्त्र-पद्धतिका मिलानकर पालन करना चाहिये।

(श्रावकधर्मसंग्रहसे उद्धृत)

७४ जिनगुण मुक्तावली

दोहा — श्रीजिनेश यतीशको, सुमिर हिये उपकार ।

जिनवर गुण मुक्तावली, लिखूं स्वपर सुखकार ॥१॥

चौपाई ।

तीर्थकर पदके गुण घणे । घन धारावत जाहि न गिणें ॥ य-
थाशक्ति करिये चिन्तौन । जाते होय पाप विष बौन ॥ २ ॥ सतयु-
गमें प्रगटे परवीन । मानुष देह दोषकर हीन ॥ आर्य्यखण्ड आय
अवतरे । युगल सृष्टिमें जन्म न धरे ॥ ३ ॥ क्षत्री वंश बिना नहिं
और । जाके गर्भ जन्मकी ठौर ॥ माताके रज दोष न होय । एक
पूत जन्मै शुभसोय ॥ ४ ॥ मात पिताके देह मभार । मल अरु मूत्र
नहीं निर्धार ॥ गर्भ शोध देवी आदरै । स्वर्ग सुगन्धि लाय शुचि
कै ॥ ५ ॥ जाके औदारिक तन माहिं । सात कुधातु मल ते नाहिं ।
यानै परमोदारिक कहो । आदि पुराण देख सर दहो ॥ ६ ॥ केवल
ज्ञान समय तन सोय । सहज निगोद बिना तब होय ॥ नारि नपुं-
सकके सम्बन्ध तीर्थकर पद उदय न बन्ध ॥ ७ ॥ जाके संयम समय
सही । आलोचन विधि वरणी नहीं ॥ मस्तक भाग विराजें केश ।
श्याम सचिकन सुभग सुवेश ॥ ८ ॥ अधिक हीन जिस अंग न होय ।
आधिव्याधि व्यापै नहिं कोय ॥ विष शस्त्रादिक कारण पाय ।
आयु कर्म स्थित छेद न ताय ॥ ९ ॥

दोहा — इत्यादिक महिमा घणो, तीर्थङ्कर परमेश ।

दश विधि जाके जन्म हैं, अतिशय और विशेष ॥१०॥

चौपाई ।

प्रभुके अङ्ग न होब फसेव । नहीं निहार किया स्वयमेव ॥

नाशा नेत्र कर्ण मल नहीं । जीभ दन्त मल मूत्र न कहीं ॥ ११ ॥
 क्षीर बराबर रुधिर अनूप । शंख वर्ण शुचि मान सरूप ॥ समच-
 तुरस्त्र सुभग संठान । तुंग देह दश ताल प्रमान ॥ १२ ॥
 दोहा—अग्ने कर अंगुष्ठ सो, मध्यमिका पर्यन्त ।

बारह अंगुल ताल यह, अब धारो मतिवन्त ॥ १३ ॥

याहो अपने ताल सों, दशगुण ऊंच शरीर ।

सम चतुरस्त्र संठानको, यह प्रमाण है बीर ॥ १४ ॥

चौपाई—प्रथम सारसंहनन अविद्ध । वज्रवृषभ नाराच प्रसिद्ध ।
 रूप सम्यदा अचरजकार । सुर नर नाग नयन मनहार ॥ १५ ॥ सहस्र
 अठोत्तर लक्षण लसै । चक्रोके तन चौसठ बसै ॥ लक्षण पाय सुल-
 क्षण भिन्न । सो प्रतिमाके आसन विह्व ॥ १६ ॥ सहज सुगन्धि
 बसै वपुमाहिं । सब सुगन्धि जासो द्रवजाहिं ॥ लोक उठावन
 शक्ति निवास । अतुल अनन्त देह बल जास ॥ १७ ॥ प्रिय हित
 वचन अमृत उनहार । सब जगजन्तु श्रवण सुखकार ॥ जन्म जात
 अतिशय दश येह । अब दश केवलके सुन लेह ॥ १८ ॥ दोसौ यो-
 जन परिमित लोय । चहुंदिपमें दुर्मिक्ष न होय ॥ व्योम विहार भू-
 मिषत जास । बपुसों होय न प्राण निवास ॥ १९ ॥ सब उपसर्ग
 रहित जग सूप । निराहार अति तृप्त स्वरूप ॥ एक दिशा सन्मुख
 मुख जोय । चतुरानन देखे सम कोय ॥ २० ॥ सब विद्या हैं अति
 गंभीर । छाया वरजित विमल शरीर ॥ पलक पात लोचन नहिं
 गहैं । नख अरु केश एकसे रहैं ॥ २१ ॥

सोरठा—नई रसादिक धात, होय न अशन अभावतैं ।

तिस कारण ते भ्रात, नख अरु केश बढे नहीं ॥ २२ ॥

दोहा—ये दश अतिशय ज्ञानके, लिये ग्रन्थ परमान ।

चौदह सुरकृत होत हैं, ते अब सुनो सुजान ॥२३॥

चौपाई ।

भाषा अर्धमागधी नाम । सकल जीव समके तिहि ठाम ॥
मागध नाम देव परिभाव । यह गुण प्रगटै सहज सुभाव ॥ २४ ॥
सबकी होय एकसी देव । उर मैत्री वरते स्वयमेव ॥ सब ऋतुके
फल फूल समेत । बनस्पती अति शोभा देत ॥२५॥ रत्नभूमि दर्पण
उनहार । गति अनुकूल पवन संचार ॥ सकल सभा आनन्द रस
लेह । मरुत कुमार बुहारी देह ॥२६॥ योजन मिति निर्मल भू ठवै ।
मेघकुमार गंधि जल चवै ॥ छप्पन २ चहुंदिश मांहि । वञ्चन
कमल गगन पथ जाहिं ॥२७॥ एक सरोज मध्य सुर करै । ताते
अधर पेंड प्रभु धरै ॥ निमल दिश निर्मल नभ होय । जन आहान
करै सुरलोय ॥२८॥ धर्म चक्र आगे तन भिन्न । चलै धर्म चक्रोपति
चिन्ह ॥ भारी दर्पण प्रमुख मनोज्ञ । मङ्गल द्रव्य आठ विधि
योग्य ॥२९॥ दोहा—आठ प्रतिहार्यव विभव, तीरथ प्रभुके होय ।
नाम ठाम तिनके सुगम सुनिये सज्जन लोय ॥ ३० ॥ समोसरणमें
मणिखचित, मध्य त्रिमेखलपीठ । गन्धकुटी तापर बनी, चतुरा-
मुख मन ईठ ॥३१॥ बीच सिंहासन जगमगै, मणिमाणकमय रूप ।
अन्तरीक्ष राजै तहां, पद्मासन जग भूप ॥३२॥

सोरठा—समोरणमें मीत, प्रभु पद्मासन ही रहैं ॥

यह अनादिकी रोति, और भांति मत जानिये ॥३३॥

दोहा—तीन छत्र सिर सोहिये, चन्द विंब उनहार । भामण्डल

चहुंदिश दिपै, रवि छवि छिपै निहार ॥ ३४ ॥ यज्ञ अमर चोसठ
चमर, ढारत खरे सुहाहिं । बरषें सुमन सुहावने, सुर दुन्दुभि गर-
जाहिं ॥ ३५ ॥ जातरु-नीचे नाथको उपजौ केवल ज्ञान । लोक शोकके
हरणतैं, सो अशोक अभिराम ॥ ३६ ॥ तीन काल वाणो खिरे, छह
छह घड़ी प्रमाण । श्रोताजनके श्रवणलों, सो निरक्षरी जान ॥ ३७ ॥
इह विधि जिनवर गुण कथा, कहत लहतको पार । वाहिय गुण
निज प्रगट सो, लिखे ग्रन्थ अनुसार ॥ ३८ ॥ अन्तरङ्ग महिमा अतुल
कापै बरणी जाय । सुरगुरुसे नहिं कह सके, थके स्थविर मुनिराय
॥ ३९ ॥ तोर्यङ्कुर गुण चिन्तवन, परम पुण्यको हेत । सम्यक रख
अंकुर हैं, उपजौ भवि उर खेत ॥ ४० ॥ जिनवर गुण मुक्तावली, छन्द
सूतमें पोय । गुणमाला भूधर गुही करत कंठ सुख होय ॥ ४१ ॥

७५ सूवावतीसी

दोहा—नमस्कार जिन देवको, करों दुहं करजोर । सुवाब-
तीसी सुरस मैं, कहूं अरिन दल मोर ॥ १ ॥ आतम सुआ सुगुरु
वचन, पढ़त रहै दिन रैन ॥ करत काज कबरोतिके, यह अचरज
लखि नैन ॥ २ ॥ सुगुरु पढ़ावे प्रेमसों, यही पढ़त मनलाय ॥ घटके
पट जो ना खुले, सबही अकारथ जाय ॥ ३ ॥

चौपाई ।

सुवा पढ़ायो सुगुरु बनाय । करम बनहि जिन जइयो भाय ।
भूले चूके कबहु न जाहु । लोभ नलिनि पै दगा न खाहु ॥ ४ ॥
दुर्जन मोह दगाके काज । बांधी नलनी तर धर नाज ॥ तुम जिन
बैठहु सुवा सुजान । नाज विषय सुख लहि तिहं थान ॥ ५ ॥ जो

बैठहु तो पकरि न रहियो । जो पकरो तो दूढ़ जिन गहियौ ॥ जो
 दूढ़ गहो तो उलटि न जइयो । जो उलटो तो तजि भजि धइयो ॥ ६ ॥
 इह बिधि सूआ पढ़ायो निज । सुवटा पढ़िके भवो विचिन्त । पढ़त
 रहै निशदिन ये बैन । सुनत लहै भय प्रानी चैन ॥ ७ ॥ इक दिन
 सुवटे आई मनै । गुरु संगत तज भज गये बने ॥ बनमें लोभ
 नलिन अति बनो दुर्जन मोह दगाको तनी ॥ ८ ॥ ता तरु विषय
 सुखनके काज । बैठ नलिनपै बिलसै राज ॥ ९ ॥ बैठो लोभ नलिन
 पै जबै । विषय स्वाद रस लटके तबै ॥ लटकत तरु उलटि गये
 भाव । तर मुण्डी ऊपर भये पांघ ॥ १० ॥ नलिनी दूढ़ पकरै पुनि
 रहै । मुखतै बचन दीनता कहै ॥ कोउ न बनमें छुड़ावनहार ।
 नलनी पकरहि करहि पुकार ॥ ११ ॥ पढ़त रहै गुरुके सब बैन ।
 जे जे हितकर सिखये ऐन ॥ सुवटा बनमें उड़ निज जाहु । जाहु
 तो भूल खता निज खाहु ॥ १२ ॥ नलनीके जिन जइयो तीर ।
 जाहु तो तहां न बैठहु वीर ॥ जो बैठो तो दूढ़ ना गहो । जो
 दूढ़ गहो तो पकरि न रहो ॥ १३ ॥ जो पकरो तो चुगा न खइयो । जो
 तुम खावो तो उलट न जइयो । जो उलटो तो तज भज धइयो ।
 इतनी सीख हृदयमें लहियो ॥ १४ ॥ ऐसे बचन पढ़त पुन रहै ।
 लोभ नलिन तज भजतो न चहै ॥ आयो दुर्जन दुर्गत रूप । पकड़े
 सुवटा सुन्दर मूप ॥ १५ ॥ डारे दुखके जाल मझार । सो दुख
 कहत न आवै पार ॥ भूख, प्याख बहु संकट सहै । परवस परे
 महा दुख लहै ॥ १६ ॥ सुवटाकी सुधि बुधि सब गई । यह तौ
 बात और कह्यु भई ॥ आय परे दुख सागर माहिं । अब इततै
 कितको भज जाहिं ॥ १७ ॥ केतो काल गयो इह दौर । सुवटे

जियमें ठानी और ॥ यह दुख जाल कटे किहं मांछि । ऐसी मनमें
 उपजी खांति ॥ १८ ॥ रात दिना प्रभु समरन करै । पाप जाल
 काटन चित धरै ॥ क्रम क्रम कर काट्यो अघ जाल । सुमरन फल
 भयो दीनदयाल ॥ १९ ॥ अब इततैं जो भजके जाऊं । तौ नलनी-
 पर बँठ न खाऊं ॥ पायो दाव भज्यो ततकाल । तज दुर्जन दुर्गति
 जज्जाल ॥ २० ॥ आये उड़त बहुर वनमाहिं ॥ बैठे नरभव द्रमक
 छाहिं ॥ तित इक साधु महा मुनिराय ॥ धर्म देशना देत सुभाय
 ॥ २१ ॥ यह संसार कर्मवन रूप । तामहि चेतन हुआ अनूप ॥ पढ़त
 रहै गुरु बचन विशाल । तोहूँ न अपनी करै संभाल ॥ २२ ॥ लोभ
 नलिनतैं बैठे जाय । विषय स्वाद रस लटके आय । पकरहि दुर्जन
 दुर्गति परै । तामें दुःख बहुत जिय भरे ॥ २३ ॥ सो दुख कहत न
 आवे पार । जानत जिनवर ज्ञानमभार ॥ सुनतैं सुवटा चौक्यो
 आप । यह तो मोहि पस्यो सब पाप ॥ २४ ॥ ये दुख तौ सब में
 ही सहे । जो मुनिवरने मुखतैं कहें ॥ सुवटा सोचौ हिये मभार ।
 ये गुरु सांचे तारनहार ॥ २५ ॥ मैं शठ फिरियो करम वन माहिं ।
 ऐसे गुरु कहूं पाये नाहिं ॥ अब माहि पुण्य उदय कलु भयो ।
 सांचे गुरुको दर्शन लयो ॥ २६ ॥ गुरुकी गुणस्तुति बारम्बार । सु-
 मिरे सुवटा हिये मभार ॥ सुमरत आप पाप भज गयो । घटके पट
 खुल सम्यक थयो ॥ २७ ॥ समकित होत लखी सब बात । यह मैं
 यह परब्रह्म विख्यात ॥ चेतनके गुण निजमहि धरे । पुढ़ल रागा-
 दिक परिहरे ॥ २८ ॥ आप मगन अपने गुण माहिं । जन्म मरण भय
 जियको नाहिं ॥ सिद्ध समान निहारत हिये । कर्म कलंक सबहिं
 तज दिये ॥ २९ ॥ न्यावत आप माहिं जगदीश । दुहुं पद एक विरा-

जत ईश ॥ इहविधि सुवटा ध्यावत ध्यान । दिन दिन प्रति प्रगटत
कल्याण ॥३०॥ अनुक्रम शिवपद जियका भया । सुख अनन्त विल
सत नित नया ॥ सतसंगति सबको सुख देय । जो कुछ हियमें
ज्ञान धरेय ॥३१॥ केवलपद आतम अनुभूत । घट घट राजत ज्ञान
संजुत ॥ सुख अनंत बिलसै जिय सोय । जाके निजपद परगट
होय ॥३२॥ सुबा बत्तीसी सुनहु सुजान । निजपद प्रगटत परम
निधान ॥ सुख अनंत विलसहु ध्रुव नित्त । ' भैयाकी ' बिनती
धर चित्त ॥ ३३ ॥ संवत सत्रह त्रैपन माहि । आश्विन पहिले
पक्ष कहाहि ॥ दशमीं दशों दिशा परकास । गुरु संगति तैं शिव
सुखभास ॥३४॥

७६ नामावली स्तोत्र

छन्द १६ मात्रा ।

जय जिनंद सुख कंद नमस्ते । जय जिनंद जिन फंद नमस्ते ॥
जय जिनंद वरबोध नमस्ते । जय जिनंद जित क्रोध नमस्ते ॥ १ ॥
पाप ताप हर इन्दु नमस्ते । अहं वरन जुन विन्दु नमस्ते ॥ विष्टा-
चार विशिष्ट नलस्ते । इष्ट मिष्ट उतकृष्ट नमस्ते ॥ २ ॥ परम धर्म वर
शर्म नमस्ते । मम भर्म घन धर्म नमस्ते ॥ दृगविशाल वर भाल
नमस्ते । हृद दयाल गुनमाल नमस्ते ॥३॥ शुद्धबुद्ध अविरुद्ध नम-
स्ते । रिद्धिसिद्धि वर वृद्ध नमस्ते ॥ वीतराग विज्ञान नमस्ते ।
चिद्विलास धृत ध्यान नमस्ते ॥४॥ स्वच्छ गुणांबुधि रत्न नमस्ते ।
सत्त्व हितकर यत्न नमस्ते ॥ कुनयकरी मृगराज नमस्ते । मिथ्या
खग वर बाज नमस्ते ॥५॥ भव्य भवोदधि पार नमस्ते । शर्माभुत

सित सार नमस्ते ॥ दश ज्ञान सुखवोर्य नमस्ते । चतुरानन धर
 धोर्य नमस्ते ॥ ६ ॥ हरिहर ब्रह्मा विष्णु नमस्ते । मोह मई
 मनु विष्णु नमस्ते ॥ महादान महभोग नमस्ते । महा ज्ञान मह
 जोग नमस्ते ॥ ७ ॥ महा उग्र तप सूर नमस्ते । महा मौन गुण
 भूरि नमस्ते । धरम चक्रि वृष केतु नमस्ते । भवसमुद्र शत सेतु
 नमस्ते ॥ ८ ॥ विद्याईश मुनीश नमस्ते । इन्द्रादिक नुत शील
 नमस्ते ॥ जय रत्नत्रय राह नमस्ते । सकल जीव सुखदाय नमस्ते
 ॥ ९ ॥ अशरण शरण सहाय नमस्ते । भव्य सुपन्थ लगाय नमस्ते ॥
 निराकार आकार नमस्ते । एकानेक आधार नमस्ते ॥ १० ॥
 लोकालोक विलोक नमस्ते । त्रिधा सवें गुण थोक नमस्ते ॥ सह
 दल दल मल नमस्ते । कल मल जित लल नमस्ते ॥ ११ ॥ भुक्ति
 मुक्ति दातार नमस्ते । उक्ति सुक्ति शृंगार नमस्ते ॥ गुण अनल
 भगवन्त नमस्ते । जै जै जै जयवन्त नमस्ते ॥ १२ ॥

इति पठित्वा जिनवरणाग्रं परि पुष्पांजलिंक्षिपेत् ।

७७ दुक्कानिषेध पच्चीसी ।

दोहा—बंदो वीर जिनेश पद, कह्यो धर्म जगसार । वरते पंचम
 कालमें, जगत् जीव हितकार ॥ १ ॥ ताहि न त्यागे धूम सो, जारे
 उर निज जान । देखो चतुर विचारके, तिनसम कौन अयान ॥ २ ॥

चौपाई छन्द—हैं जगमें पुरुषार्थ चार, तिनमें धर्म पदार्थ
 सार । जाके सधें होय सब सिद्ध, या विन प्रगटै एक न रिद्ध
 ॥ ३ ॥ सो पुनि दया रूप जिन कहो, करुणाविन कहूं धर्म न लहो ।
 यामें छहों कायकी घात; लहिये कहां दयाकी घात ॥ ४ ॥ सो अब

सुनां सबै बिरनंत, सुनिके त्याग करो मतिवन्त । हरित कायकी
उत्पत्ति येह, अग्नि संयोग भूमि गनि लेह ॥५॥ अग्नि नोर है याको
साज, इन धित सरे नहीं यह काज । काढत धूप वदन तैं जान,
होय समोर कायको हान ॥६॥ इह विधि थावर दया न होई, त्रस-
को त्रस होय सुनि सोई । कुयूँ आदि जीव या माहिं, छैचत
खांस सबै मरजाहिं ॥७॥ उपजैं जीव गुड़ाखू वीच । हुई है तहां
त्रसनकी मोच । हिंसा होय महा अघ संच, ऐसे दया पले नहिं
रंच ॥ ८ ॥ यही बात जाने सब कोय ; जहां हिंसा तहां धर्य न
होय । बहुरि धर्म नाश भयो जहां, सकल पदारथ विनसे तहां ॥९॥
तातैं निंद जानि यह कर्म, पापमूल खोयें धन धर्म । यामें कोई
न दोसे स्वाद, प्रात होत ही आवे याद ॥ १० ॥ भव्य जीव सामा
यक करे, सब जीवन सों समता धरे । यह जोरे सब याको साज,
और सकल विसरे घर काज ॥११॥ सेवे याहिं पुरुष उर अन्ध,
यातैं मुख आवे दुर्गन्ध । उत्तम जीवनको नहि काम । सिलगे
हलक होय उर श्याम ॥१२॥ जाको कोई ना आदरे । सो कुवस्तु
सब यामें परे । यातैं सब पवित्रता जाई । परकी जूँठ गहै मन
लाई ॥१३॥ यासों कछु पेट नहिं भरे, हाथ जरे मुख कडुवा परे ।
गिने न याकर रैनी सवार, बुरो व्यसन है देख विचार ॥ १४ ॥
दोहा—स्वाद नहीं स्वारथ नहीं, परमारथ नहीं हाथ ।

क्यों भपटे जग जूँठको, यही अचम्भो मोय ॥१५॥

चौपाई छन्द ।

साधरमी जन बैठे जहां, सोहे नहीं पुरुष वह तहां । जिमि
हंसनकी गोठ मफार, काग न शोभा लहे लगार ॥१६॥ यामें नफा

नहीं तिल मान, प्रकट हानि है शैल समान । बह विवेक बुध
हिरदय धरो, ऐसी मानि भूल मत करो ॥ १७ ॥ इतनी विनती पे
हठ गहे, मोह उदय त्याग नहिं कहे । तासों मेरी कछु न बसाय,
लाठी लेय न मारो जाय ॥ १८ ॥

दोहा—सरल चित्त सुनि भेद यह तजे आपसों आप । हठग्राम
हठगहि रहे, जिनके पोते पाप ॥ १९ ॥ हठी पुरुष प्रति हित बचन,
सबे अकारण जाहिं । ज्यों कपूरको मेलिये, कृकरके मुख मांहि ॥
‘भूधरदास’ मनसों कही, यही यथार्थ बात । सुहित जान हिरदे
धरो, कोप करो मत भ्रात ॥ २१ ॥ सबहीको हित सोख है, जान
भेद नहिं कोय । अमृतपान जोई करें, ताहीको गुण होय ॥ २२ ॥

कविस तमाखूके विषयमें ॥

जहरकी सासु दुष्ट दुलही हलाहलकी वोछीकी बहिन पर
तंबरूप साजी है । नाती करियारोकी धतूरेकी ममानी पितियानी
वच्छनागकी जहानमें विराजी हैं । कहें गंगादत्त वह पचावे धन्य
प्राणी औ अफीमकी जिठानी विषखोपरेकी आजी है । मादुरकी
मौसी महतारी सिंघियाकी यह तमाखू दर्दमारोको किन्ने उप-
राजी है ॥ २३ ॥ चित्तको भ्रमाय देत मनको लुभाय लेत
गुणको न देखे कछु खाये क्या भलाई है । वशन विनाश करे मु-
खमें दुर्गन्धि लहे उष्णताकी बाधाने रक्तता सुखाई है । गर्दमके
मूत्रवत जामन लगाय कर कृषीकार वोय पुनि समूह करि तपाई
है । धन्य है खवट्यनको खाय जो तमाखूको सभामांझ दूर होय
पुचपुची लगाई है ॥ २४ ॥

लाखनी—धर्म भूल आचरण बिगाड़ा इसका हेतु नहीं रहा

इलम । विवेक जाता रहा हियेसे सबकी जूंटी पियें विलम ॥टेक॥
 प्रथम तमाखू महा अशुचि है, म्लेच्छ इसको बनाते हैं । छूने योग्य
 नहीं बिलकुलके अपमा तोय लगाते हैं । डंडी विलममें धूम योगतें
 जोव असंख्य बताते हैं । पीते ही मर जायं सभी यह यह जिन
 श्रुतिमें गाते हैं ॥ होती इसमें अपार हिंसा जरा दया नहीं आती
 गिलम । विवेक जाता ॥ कौमरिजालोंके साथ पीते गई आबरू ये
 क्या बनो है । हया दूर कर धर्म लजाते उन्हींमें जा उनकी मत सनी
 है ॥ बचसं गांज। पियें पिलावेंउन्हींने बुद्धितेरी ये हनी है । स्वास
 प्रगट कर बदन जलाता प्राण हरणको ये हरफनी है ॥ लगाना
 दमका बहुत बुरा है पीते तनमें पड़े खिलम । विवेक० ॥ थावर
 त्रसकर सहित भरा जल कुवास है ए निधान हुका । सुतोय परते
 सुजीव मरते है पापका ए निधान हुका ॥ रोग भिन्न हो जाय कहें
 मर पीते हैं हम यह जान हुका । शुद्ध औषधि करो ग्रहण तुम अ-
 शुचि दूर करिये जान हुका । सोख सुगुरुकी यही रूपचन्द्र त्यागो
 जल्द मत करो विलम । विवेक० ॥

७८ नेमि व्याह ।

(विनोदीलाल कृत सवेथा ।)

मौर धरो शिर दूलहके कर कंकण बांध दर्द कस डोरी ।
 कुंडल काननमें भलकें अति भालमें लाल विराजत रोरी ॥ मोतो-
 नकी लड़ शोभित है छवि देखि लजें बनिता सब गोरी । लाल
 विनोदीके साक्षिको मुख देखनको दुनियां उठ दौरी ॥ १ ॥ छत्र
 फिरे शिर दूलहके तब वारत रत्न शिवादेवी मेया । रूपज इने बल-

भद्र उते कर दोरत चमर चले बोज भैया ॥ भूप^१ समुद्र विजय
 सब संग चले वसुदेव उछाह करैया । लाल विनोदके साहिबकी
 बनिता सब ही मिलि लेत बलैया ॥ २ ॥ गोंड़े गये जब नेम प्रभू
 पशु पक्षिन खेच पुकार करी है । नाथसे नाथनके प्रतिपाल दयाल
 सुनो विनती हमरी है ॥ बन्दि पड़े बिललायं सबे बिन कारण
 बिपदा आनि परी है । पूछत लाल विनोदीके साहिब सारथी क्यां
 इन बन्दि भरी है ॥ ३ ॥ सारथीने कर जोड़ कहो सुन नाथ इन्हें
 जु बिदारे'गे अब । यादव संग जुरे सबरे तिन कारण ये सब
 मारे'गे अब ॥ इनके बच्चा बनमें बिलपें इनको वे आज संघा-
 रे'गे अब । ताते तुमसे फर्याद करें हमरो गति नाथ सुधारे'गे
 अब ॥ ४ ॥ बात सुनी उतरे रथसे पशु पक्षिनकी सब बन्दि
 छुड़ाई । जावो सबे अपने थलको हमरो अपराध क्षमा करो भाई ॥
 धृक् है ऐसो जोनो जगमें तबही प्रभु द्वादश भावना भाई । देव
 लोकान्तिक आय गये जिन धन्य कहैं सब यादव राई ॥ ५ ॥ प्रभु
 तो बिन ऐसी कौन करे औ को जगमें यह बात विचारे । कौन
 तजे सुत बन्धु वधू अरु को जगमें ममता निवारे ॥ को वसु कर्मनि
 जीत सके अरु आप तरे अरु औरन तारे । लाल विनोदके साहबने
 यश जीत लयो जग जीतन हारे ॥ ६ ॥ नेम उदास भये जबसे
 कर जोड़के सिद्धका नाम लयो है । अम्बर भूषण डार दिये शिर
 मौर उतारके डार दयो है । रूप धरों मुनिका जब ही तब ही
 चढ़िके गिरिनारि गयो है । लाल विनोदीके साहिबने तहां पंच
 महाव्रत योग ठयो हैं ॥ ७ ॥ नेमकुमारने योग लयो जब होनेको
 सिद्ध करी मन इक्षा । या भबके सुख जान अनित्य सो आदर

एक उहण्डकी भिक्षा ॥ स्नेह तजो घरबार तजो नहीं भोग विला-
सनको मन शिक्षा । लाल विनोदीके साहिबके संग भूप सहल
लई तब दिक्षा ॥ ८ ॥ काहूने जाय कही सुनो राजुल तेरो पिया
गिरिनारि चढ़ो है । इतनी सुन भूमि पछार लई मानो तन सेती
जीव कढ़ो है ॥ सो उपसेनसे जाय कही सुन तात विधाता अनर्थ
गढ़ो है । लाज सबै सुध भूल गई पिय देखनको जु उछाह बढ़ो
है ॥ ९ ॥ लाइली क्यों गिरनारि चढ़े उस ही पति तुल्य सुधी वर
लाऊं । प्रोहितको पठावाऊं अभी बहु भूपरके सब देश दुंदाऊं ॥
व्याह रचों फिरिके तुम्हरो महि मण्डलके सब भूप बुलाऊं । लाल
विनोदीके नाथ बिना द्युतिवंतको कंत तुझे परणाऊं ॥ १० ॥
काहे न बात सम्हाल कहो तुम जानत हो यह बात भली है ।
गालियां काढ़त हो हमको सुनो तात भली तुम जीभ चली है ।
तैं सबको तुम तुल्य गिनो तुम जानत ना यह बात रली है । या
भवमें पति नेमि प्रभू वह लाल विनोदीको नाथ बली है ॥ ११ ॥
मेरा पिया गिरनारि चढ़ो सुन तात मैं भी गिरिनारि चढ़ोंगी ।
संग रहों पियके वनमें तिन ही पियको मुख नाम पढ़ोंगी ॥ और
न बात सुहाय कछू पियकी गुणमाल हियेमें पढ़ोंगी । कंत हमारे
रचें शिवसे शिव थानको मैं भी सिवान चढ़ोंगी ॥ १२ ॥ इति ॥

७६ लावनी ।

धन्य दिवस धनि घड़ी आजकी जिन छवि नजर पड़ी । खपर
भेद बुधि प्रगट भई उर भमं बुद्धि बिसरी ॥ टेक—नासिकाग्र है
दृष्टि मनोहर वर विराग सुथरी । आतम शुद्ध सुराजत मानो अनु-

भव सुरस भरी ॥ १ ॥ शांत्याकृति निरखत ही परकी आरति सर्व
गरी । चिर मिथ्या तम नाश करनको मानो अमृत भरी ॥ २ ॥
वीतराग ताका सुहेतु सुनि मोह भुजग विसरी । पट भूषण बिनवै
सुन्दरता नाहीं रंक हरी ॥ ३ ॥ जाकी युति शत कोट चन्द्रने अद्भुत
जग विस्तरी । तारक रूप निहारि देव छवि मानिक नमन करी ॥ ४ ॥

८० कैश्या कुटलाई

मन करो प्रीति वेश्या विष बुझी कटारी । है यही सकल रोग-
नकी खान हत्यारी ॥ टेक ॥ औषधि अनेक हैं सर्प डसेकी
भाई । पर इसके काटेकी नहिं कोई दवाई ॥ गर लगे वान तो
जीवित हू रहि जाई । पर इसके नैनके वानसे होय सफाई ॥ है रोम
रोम विष भरी करो ना यारी । है यही सकल रोगनकी खान
हत्यारी ॥ १ ॥ यह तन मन धन हर लेय मधुर बोलीमें । बहुतोंका
करै शिकार उमर भोलीमें ॥ कर दिये हजारों लोटपोट होलीमें ।
लाखोंका दिल कर लिया कैद चोलीमें ॥ गई इसी कर्ममें लाखों ही
जमीदारी । है यही सकल रोगनकी खान हत्यारी ॥ २ ॥ हो गये
हजारोंके बल वीर्य छारा । लाखोंका इसने वंश नाश कर डारा ॥
गठिया प्रमेह आतिशने देश बिगारा । भारत गारत हो गया
इसीका मारा ॥ कर दिये हजारों इसने चोर और ज्वारी । है यही
सकल दुर्गुणकी खानि हत्यारी ॥ ३ ॥ इसही ठगनीने मद्य मांस
सिखलाया । सब धर्म कर्मको इसने धूर मिलाया ॥ और दया
क्षमा लज्जाको मार भगाया । ईश्वर भक्तीका मूल नाश करवाया ।
हों इसके उपासक रौरवके अधिकारी । है यही ० ॥ ४ ॥ वह नव-

युवकोंको नैन सैनसे खावे । और धनवानोंको चट्ट गट्ट कर जावे ॥ धन हरण करे फिर पीछे राह बतावे । करै तीन पांच तो जूते भी लगवावे ॥ पिटवा कर पीछे ल्यावे पुलिस पुकारी । है यही० ॥ ५ ॥ फिर किया पुलिसने खूब अतिथि सत्कारा । हो गई सजा मिला मजा इश्कका सारा ॥ जो झूठ होय तो सज्जन करो विचारा । दो त्याग झूठ करो सत्य वचन खोकारा ॥ अब तजो कर्म यह भति निन्दित दुखकारी । है यही सकल रोगोंकी खानि हत्यारी ॥ ६ ॥

८१ प्रतिमा चालीसी

दोहा—दुःख हरण सब सुखकरण श्रीजिन मुद्रासार । नित-प्रति वंदे भव्य जन नागा करे गंवार ॥ १ ॥ प्रतिमा आगे विग्रहक्षय मझल होय हजूर । जैसे आँधी मेटके घन वर्षे भरपूर ॥ २ ॥ दर्शन चिन्ता कोटि फल करते कोटा कोर । कोटा कोटी कोट पथ फल अनंत प्रभु ओर ॥ ३ ॥

चौपाई ।

अब जो दूढ़िया करत है आन । प्रतिमा निन्दाचार विधान ॥ प्रथम अचेतन कृत्रिम दोष । एकेंद्री अह आरम्भ होय ॥ ४ ॥
(उत्तर दोहा)—तासों जैनी कहत है उत्तर चार विचार ।

सांच होय तो पूजियो तज झूठा हंकार ॥ ५ ॥

(अचेतनका उत्तर) चौपाई ।

वाणी श्रीजिनवरकी होय । पुद्गलमई अचेतन सोय ॥ तिनके सुनते प्रगटे ज्ञान । यूँ प्रतिमा लख उपजै ध्यान ॥ ६ ॥ जिनवर अमर भये

शिव पाय । रहों अचेतन जड़मय काय ॥ सो पूजो वंसी सुर राय ।
बहुबिधि नाचै गाय बजाय ॥७॥

(कृत्रिमका उत्तर) चौपाई ।

उत्तम स्तवन अनेक प्रकार । ढाल बोनती आदिक सार ॥
पढ़ते सुनते पुण्य बढ़ाय । ज्यों प्रतिमा तैं निर्मल भाय ॥८॥

(एकेन्द्रका उत्तर—दोहा)

बनस्पती कागद कलम, स्थाही अग्नि सुभाय ।
एकेन्द्रो पुस्तक प्रगट, क्यां मानो शिर नाय ॥९॥

(प्रश्नोत्तर दोहा)

पोथी पञ्चेन्द्री विखे, ताते कही मनोज्ञ । प्रतिमा पञ्चेन्द्री घड़े सो
क्यूं नांही योग्य ॥ १० ॥ पोथी ज्ञानी पढ़त है, ताते उपजे बोध ।
पूजा चरनी करत है, आरन रौद्र निरोध ॥११॥

(आरम्भका उत्तर) गीता छन्द ।

जिन गर्भ होत नगर बनायो न्हवन जन्म कल्याणमें । तपमें
करो वर्षा पहुपकी बाग सरवर ज्ञानमें ॥ निर्वाण होत शरीर दाहा
इन्द्र हरष सुरमें गया । यह पञ्चकल्याणक भक्ति कर एक अव-
तारी भया ॥ १२ ॥

(व्रतीको आरम्भका फल-चौपाई)

भरत समकित्ती गृह व्रत धार । सेना सहित नाग असवार ॥
पूज्यो आदीश्वर जिनराय । अवधि ज्ञान पायो सुखदाय ॥ १३ ॥
भरत जाय कैलाश पहार । परे बहत्तर जिनप्रह सार ॥ तामें धरे
बहत्तर बिम्ब । मुक्त भये तजके जगडिम्ब ॥१४॥ श्रेणिक हो हाथी

असवार । महावीर पूजो जिनसार ॥ बांध्यो शुभ तीर्थकर मोत ।
आरम्भको फल प्रगट उद्योत ॥१५॥

दोहा—साधु बन्दने जात हो, जूती पहिन हमेश । राह पाप
तुमको लगे, किधों साधुको लेश ॥ १६ ॥ जो पातक तुमको चढ़ै,
क्यों जावो हो वीर । जो मुनिवरको लगत है, मने करे किन धीर
॥१७॥ पूजामें हिंसा सहल पुण्य अतन्त अपार । विष कनिका नहिं
कर सके, सागर दोष लगाए ॥ १८ ॥ पैसेका टोटा जहां, बढ़ता
लाख किरोर । सो व्यापार करे नहीं, सोच कइ तत्र धोर ॥१९॥
चित्र लिखी नारी लखे मन गदला बहु हात । मूर्ति शांति जिनेशकी,
देखे ज्ञान उद्योत ॥ २० ॥ यह बातें प्रगट सुनी, ज्वाब दियो नहिं
जाय । हार भानके यूँ कह्यो, हम नहिं माने भाय ॥२१॥

चोपाई—नाम थापना द्रव्यरु भाव । निक्षेपे हैं चार सुभाव ॥
तीनों मानत हो महाराज । थापन नहिं मानो किह काज ॥ २२ ॥
पैनालीसों आगम माहिं । प्रतिमा पूजा है सब थाहिं ॥ सो तुम
साधु सुनी सब लोय । नरभव सफल करो भ्रम खोय ॥२३॥ जोवा
अभिगम ग्रन्थ मझार । सुरविज इन्द्र नामनेसार ॥ अकितम प्रति-
माकी बहु करो । पूजा भक्ति विनय बहु धरो ॥२४॥ उववाईमें क-
थन निहार । अंबड़ संन्यासो व्रत धार ॥ जिन पूजा बंदना सो
करी । है कि नहीं तुम भाषो खरो ॥२५॥ ज्ञातृ कथामें देखो वीर ।
सती दौपदीने धर धीर ॥ कृत्रिम प्रतिमा पूजा करी । महा सतीमें
सो गुण भरी ॥ २६ ॥ नाम उपाशक दशा प्रधान । दशभ्रावकने
क्रिया प्रधान ॥ परतीर्थ परदेवक रमे । निज तीरथ निजदेव सो
रमे ॥२७॥ सूत्र कृतांग माहिं बिस्तार । प्रतिमा भेजी अक्षयकुमार ।

आर्द्रकुमार मीतको जान । तिसरें पायो सम्यक् ज्ञान ॥ २८ ॥ सूत्र
भगौती माहिं विचार । जंघा चारण विद्या चार ॥ अकितम प्रति-
मा पूजा करी । महामुनेनि थुतिरस भरी ॥

दोहा—इन्हें आदि बहु शाखा हैं, तुम आगममें वीर ।

सांचोके झूठी कहो पक्षपात तज धोर ॥ ३० ॥

(प्रतिमा मानी तिसका वचन) दोहा ।

प्रतिमा दर्शन योग्य है, दीप चढ़ावन वीर ।

दीप धूप फल फूल चरु चन्दन अक्षत धोर ॥ ३१ ॥

(उत्तर) दोहा—आठो आरम्भके किये, गरा स्वर्ग जे जाहिं ।

तिनकी कथा प्रसिद्ध है, जिन-आगमके माहिं ॥ ३२ ॥

(पूजा फल) कवित्त ।

नीरके चढ़ाये भवनीर तीर पावे जीव चंदन चढ़ाये चंदसेवे
दिन रात है । अक्षत सों पूजते न पूजे अक्षदुख जाको फूलन सो
पूजे फूल जातमें न जात है ॥ दीजे नैवेद्य ताते लीजे निर्वेदपद
दीपक चढ़ाये ज्ञान दीपक विकसात है । धूपके खेयते भ्रमदौर धूप
जाय जैसे फल सेती मोक्ष फल अर्घ अघघात है ॥ ३३ ॥

सवैया—साधुहुंकी पूजातें हजार गुणा फल जिन जिनते
हजार गुणा फल पूजा सिद्ध को ॥ सिद्ध तें हजार गुण फल पूजा
प्रतिमाकी तिहुंकाल दाता आठो नवो निधिसिद्धिको ॥ शांत
मुद्रा देख साधु अरहन्त सिद्ध भये प्रतिमा ही कर्ता है पांचो पद
वृद्धिकी । करे न बखान सिद्ध होनको है यही ध्यान मोक्षफल देय
कौन बात स्वर्ग अद्विकी ॥ ३४ ॥

(कुण्डलो) छन्द—खूल्हा चक्री ऊकली नीर बुहारो पञ्च ।

छट्टा द्रव्य उपावना छहों कार्य अघसंच ॥ हरण इन्होंके पाप अथं
षट्कर्म बखानूँ। जिन पूजा गुरु सेव पढ़त समय तप दान ॥ सबमें
पहिले प्रात उठत पूजा सुख मूला। कर पूजा जिनराज काज तज
चक्री चूल्हा ॥ ३५ ॥

सवैया—धन्य जिन भवन करे हैं सोभी धन्य बिम्ब धरे दोनों
निस्तरे वह संघई कहावई। कोऊ पूजा करे जाय कोऊ न्हौन देखे
आय गन्धोदक पाय लाय आनन्द बढ़ावई ॥ कोई द्रव्य लावे कोई
पढ़े कोई नमे ध्यावे कोई छत्र चामर सिंहासन बढ़ावई। कोई
नाचे गावे वा बजावे भक्तिको बढ़ावे पुण्य तीन लोकमें न पूजा
सम पावई ॥ ३६ ॥

दोहा—तीन लोक तिहुँकालमें, पूजा सम नहिं पुन्य।

ग्रहवासीको प्रात हो बिन पूजा घर सुन्य ॥ ३७ ॥

अडि़ल—दूँदक मतके शाख उक्त बातें कही। निज मत
पोया नाहीं न परनिंदा गही ॥ समझे सज्जन सत बसाय न
मूढसों। ज्ञान हियेमें नाहिं लगे हैं रूढ़ सों ॥ ३८ ॥

दोहा—थोरासा यह कथन है। लेहु बहुत कर मान।

नित प्रति पूजा कीजिये, यह परभव सुखदान ॥ ३९ ॥

चौपाई—दिल्लो तख्त वरुन परकाश। सत्रहसै इक्यासी मास ॥

जेठ शुक्ल कुरचन्द उदोत दानत प्रगट्यो प्रतिमा जोत ॥ ४० ॥

मूढ दशा सवैया।

ज्ञानके लखन हारे विरले जगत् माहीं ज्ञानके लिखनहारे
जगत्में अनेक हैं। भाषे निरपक्ष बैन सज्जन पुरुष कोई दीसन
बहुत जिन्हें बचनकी टेक हैं। चूक परे रिस छात ऐसे जीव बहु

भ्रात और अच्छूक थोरे धरे जो विवेक हैं । ज्ञाता जन थोरे मूढ-
मति बहुतेरे नर जाने नहिं ज्ञान सर कृप कैसे भेक हैं ।

पांचवां अध्याय ।

८२ समुच्चय चतुर्विंशति जिनपूजा

छंद कवित्त—वृषभ अजित संभव अभिनंदन, सुमति पदम
सुपास जिनराय । चंद पुहुप शीतल श्रेयांस नमि, वासपूज्य
पूजित सुरराय ॥ विमल अनंत धरम जस उज्ज्वल, शांति कुंशु
अर मल्लि मनाय । मुनिसुव्रत नमि नेमि पास प्रभु, वर्द्धमान पद
पुष्प चढ़ाय ॥१॥ ओं हीं श्रीवृषभादिवोरान्तचतुर्विंशतिजिनसमूह
अत्र अवतर, अवतर, संवौषट् । अत्र निष्ठ निष्ठ । ठः ठः अत्र मम
सन्निहितो भव भव वषट् ॥

अष्टक—मुनि मनसम उज्ज्वल नीर, प्रासुक गंधभरा । भरि
कनक कटोरी धीर, दीनों धार धरा ॥ चौबीसौ श्रीजिनचंद,
आनंदकंद सही । पदजगत हरत भवफद, पावत मोक्ष मही ॥१॥
ओं हीं श्रीवृषभादिवोरान्तेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय ॥ जलं० ॥
गोशीर कपूर मिलाय, केशरंग भरो । जिन चरनन देत चढ़ाय,
भव आताप हरी ॥ चौबीसौ० ॥ २ ॥ ओं हीं वृषभादि वीरान्तेभ्यो
भवताप विनाशनाय ॥ चंदनं० ॥ तंदुल सित सोमसमान, सुन्दर
अनियारे । मुक्ता फलको उनमान, पुञ्ज धरों प्यारे ॥ चौ० ॥३॥

ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽक्षयपद् प्राप्तये अक्षतान् ॥ वर कंज
कदंब करंड, सुमन सुगंध भरे । जिन अग्र धरौ गुनमंड, काम
कलंक हरे ॥ चौ० ॥ ४ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः काम-
वाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥ मनमोहन मोदक आदि, सुन्दर सद्य बने ।
रस पूरित प्रासुक स्वाद, जजत छुधादि हने ॥ चौ० ॥ ५ ॥ ओं
ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय ॥ नैवेद्यं ॥ तम-
खंडन दोष जगाय, धारों तुम आगे । सब तिमिरमोह छे जाय,
ज्ञानकला जागे ॥ चौ० ॥ ६ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो
मोहान्धकार विनाशनाय ॥ दीपं ॥ दश गंध हुताशनमाहिं, हे प्रभु
खेवत हो । मिस धूम करम जरि जाहि, तुम पद सेवत हों ॥ चौ०
॥ ७ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्योऽष्टकमंदहनाय ॥ धूपं ॥ शुचि
पक्क सरस फल सार, सब ऋतुके ल्यायौ । देखत दूगमनको प्यार,
पूजत सुख पायो ॥ चौ० ॥ ८ ॥ ओं ह्रीं श्रीवृषभादिवीरान्तेभ्यो
मोक्षफलप्राप्तये ॥ फलं नि० ॥ जलफल आठों शुचिसार, ताको
अर्घ करौ । तुमको अरपों भवतार, भवतरि मोक्ष वरों ॥ चौ० ॥
ओं ह्रीं श्रीवृषभादि चतुर्विंशतितीर्थकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घं ॥

जयमाला ।

दोहा—श्रीमत तीर्थनाथ पद, माथ नाथ हितहेत ।

गावों गुणमाला अबै, अजर अमर पद देत ॥ १ ॥

छंद—जय भवतम भंजन जन मन कंजन; रंजन दिन मनि
स्वच्छ करा । शिवमग परकाशक अरिगन नाशक, चौबोसों जिन-
राज वरा ॥ २ ॥

छंद पद्धरी—जय रिषभदेव रिषिगन नमंत । जय अजित

जीत वसु अरि तुरंत । जय समव संभय करत चूर । जय अभि-
 नंदन आनंद पूर ॥ ३ ॥ जय सुमति २ दायक दयाल । जय पद्म
 पद्मद्युति तन रसाल ॥ जय जय सुपास भव पाशनाश । जय चंद
 चंद तन दुति प्रकाश ॥ ४ ॥ जय पुष्पदन्त दुति दंत सेत । जय
 शीतल शीतल गुणनिकेत ॥ जय श्रेयनाथ नुतसहसभुज । जय
 वासव पूजित वासुपुज ॥ ५ ॥ जय विमल विमल पद देनहार ।
 जय जय अनंत गुणगन अपार ॥ जय धर्म धर्म शिवशर्म देत । जय
 शांति शांति पुष्टी करेत ॥ ६ ॥ जब कुंथ कुंथवादिक रखेय ।
 जय अर जिन वसुअर छय करेय ॥ जय मल्लि मल्ल हत मोह
 मल्ल । जय मुनिसुमत व्रत सल्ल दल्ल ॥ ७ ॥ जय नमि नित वासव
 नुत सपेम । जय नेमनाथ वृष चक्रनेम ॥ जय पारसनाथ अनाथ
 नाथ । जय वर्द्धमान शिवनगर साथ ॥ ८ ॥

घन्ता छंद—चौबीस जिनंदा आनंद कन्दा पापनिकंदा सुखकारी ।

तिनपद जुगचंदा उदय अमंदा, वासवचंदा हितधारो ॥ ९ ॥

ओंह्रीं श्रोवृषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो महार्घं निवेपामीति स्वाहा ॥

सोरठा—भुक्तिमुक्ति दातार, चौबीसौ जिनराज वर ।

तिनपद मन वचधार, जो पूजै सो शिव लहै ॥ १० ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पाजलिं क्षिपेत्)

८३ श्रीचंद्रप्रभजिनपूजा ।

चारुचरन आचरन, चरन चितहरन चिह्नचर । चंदचंद्रतन
 चरित, चंदधल चहत चतुर नर ॥ चतुक चंड चक्रचूरि, चारि
 चिद चक्र गुनाकर । चञ्चल चलित सुरेश, चूल नुत चक्र धनु-

रहर ॥ खर अचरहितू तारनतरन, सुनत चहकि चिरनन्द शुचि ।
जिनकंदचरन चरच्यो चहत, चित चकोर नचि रचि रुचि ॥ १ ॥

दोहा—धनुष डेढ़ सौ तुंग तन, महासेन नपनंद ।

मातुलछम्पकडर जये, थापों चंदजिनंद ॥ २ ॥

ओं हों श्रीचंद्रप्रभजिनेंद्र ! अत्र अवतर अवतर । संबौषट ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट ॥

अष्टक—गङ्गाहदनिरमलनीर, हाटकभृङ्गभरा । तुम चरन जजों
वरवीर, मेढो जनमजरा ॥ श्रीचंदनाथदुनि चंद, चरनन चंद लगै
मनवच तन जजत अमन्द, आतमजोति जगै ॥ १ ॥

ॐ हों श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ।
श्रीखण्डकपूर सुचङ्ग, केशरङ्ग भरी । घसि प्रासुकजलके सङ्ग, भव
आताप हरी ॥ श्री० ॐ हों श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय भवातापविनाश-
नाय चन्दनं निर्वपामि । तटुलि लिन सोम समान, सोले अनि-
यारे । दिय पुञ्ज मनोहर आन, तुम पद तर प्यारे ॥ श्री० ॥ ॐ हों
श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान । सुरद्रमके सुमन
सुरङ्ग, गन्धति अलि आवै । तासों पद पूजन चङ्ग, कामविधा जावे
श्री० ॐ हों चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामधाणविध्वंशनाय पुष्पं । नेवज
नानापरकार, इन्द्रियबलकारी । सो लै पद पूजों सार, आकुलता
हारी ॥ श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारागविनाशनाय नैवेद्यं । तम भ-
जत दीप संवार, तुम ढिग धारतु हों । मम तिमिरमोह निरवार,
यह गुन धारतु हों ॥ श्री० ॥ ॐ हों श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्ध-
कारविनाशनाय दीपं । दशगन्धहुताशनमाहि, हे प्रभु सेवतु हों ।
मम दुष्ट करम जरि जांहि, यातै सेवतु हों । श्री० ॐ हों श्रीचन्द्र-

प्रभजिनेद्राय अष्टकर्मदहनाय घूपं । अति उत्तमफल सु मंगाय, तुम
गुन गावतु हों । पूजों तनमन हरषाय, विघन नशावतु हों । श्री०
ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेद्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं । सजि आठो दरब
पुनीत, आठों अङ्ग नमों । पूजों अष्टमजिन मीत, अष्टम अवनि गमों
श्री० । ॐ ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेद्राय अनर्घ्य पद प्राप्तये अर्घ्य ॥

पञ्चकल्याणक ।

छन्द तोटक—कलि पञ्चमचैत सुहात अलो । गरभागम मङ्गल
मोद भली । हरि हर्षित पूजन मातु पिता । हम ध्यावत पावत
शर्मसिता ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं चौत्रकृष्णपञ्चम्यां गर्भमङ्गलप्राप्ताय अर्घ ।
कलि पौष इकादशि जन्म लयो । सब लोक विपै सुखधोक भयो सुर
ईश जजे गिरशीश तबैं । हम पूजन हैं नुत शीश अबै ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं
पौष कृष्णैकादश्यां जन्ममङ्गलप्राप्ताय अर्घ । तप दुद्धर श्रीधर आप
धरा । कलि पौष इग्यारसि पर्व वरा ॥ निज ध्यानविपै लवलीन
भये । धनि सो दिन पूजत विघ्न गये ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैका-
दश्यां निःक्रमणमहोत्सवमण्डिताय अर्घ । वर केवलभानु उद्योत
कियो । तिहुं लोक तणों भ्रम मेट दियो ॥ कलिफाल्गुण सप्तमि इन्द्र
जजे ॥ हम पूजहिं सर्व कलङ्क भजे ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं फाल्गुणकृष्ण
सप्तम्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय अर्घ । सित फाल्गुण सप्तमी मुक्ति
गये ॥ गुणवन्त अनन्त अबाध भये ॥ हरि आय जजे तित मोद-
धरे ॥ हम पूजत ही सब पाप हरे ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं फाल्गुणशुक्लसप्तम्यां
मोक्षमङ्गलमण्डिताय अर्घ ।

जयमाला ।

दोहा—हे मृगांक अंकितचरण, तुम गुण अगम अपार ।

गणधरसे नहिं पार लहिं तौ को वरनत सार ॥१॥

पै तुम भगति हिये मम, प्रेरे अति उमगाय ।

तार्ते गाऊं सुगुण तुम तुमही होउ सहाय ॥२॥

छन्द पद्धति (१६ मात्रा)

जय चन्द्र जनेन्द्र दयानिधान । भवकानन हानन दयप्रधान ॥
जय गरभजनम मङ्गल दिनंद । भवि जीवविकाशन शर्मकंद ॥ ३ ॥
दशलक्षपूर्वकी आयु पाय । मनवांछित सुख भोगे जिनाय ॥ लख
कारण है जगतै उदास । चिन्त्यों अनुप्रेक्षा सुखनिवास ॥ ४ ॥
तित लौकांतिक बोध्यो नियोग । हरि शिविका सजि धरियो अ-
भोग ॥ तापै तुम चढ़ि जिनचन्द्राय । ताछिनकी शोभाको कहाय
॥ ५ ॥ जिन अङ्ग सेत सित चमर ढार । सित छत्र शोस गलगुल-
कहार ॥ सित रतनजड़ित भूषण विविध । सित चन्द्रचरण चरचौं
पवित्र ॥ ६ ॥ सित तन युति नाकाधोश आप । सित शिविका
कांधे धरि सुचाप ॥ सित सुजस सुरेश नरेश सर्व । सित चितमें
चिन्तित जान पर्व ॥ ७ ॥ सित चन्दनगरते निकसि नाथ । सित
वनमें पहुँचौ सकलसाथ ॥ सितशिलाशिरोमणि खच्छछांह । सित
तप तित धास्यो तुम जिनाह ॥ सित पयको पारण परमसार । सित
चन्द्रदत्त दीनों उदार ॥ सित करमें सो पयधार देत । मानों बांधत
भवसिंधुसेत ॥ ११ ॥ मानों सुपुण्यधारा प्रतच्छ । तित अवरज पन
सुर किय ततच्छ ॥ फिर जाय गहन सित तपकरंत । सित केवल
ज्योति जग्यो अनन्त ॥ लहि समवसरण रचना महान । जाके दे-
खत सब पापहान ॥ जहं तरु अशोक शोभै उतंग । सब शोकतनो
चुरै प्रसंग ॥ ११ ॥ सुर सुमनवृष्टि नभतै सुहात । मनु मन्मथ तज

हथियार जात ॥ बानी जिन मुखसों खिरत सार । मनुतत्त्वप्रकाश-
न मुकुर धार ॥१२॥ जहं चोसठ चमर अमर दुरन्त । मनु सुजस
मेघ भरि लगिय तंत । सिंहासन है जहं कमल जुबत मनु शिव-
सरवरको कमलशुक्त ॥१३॥ दुंदुभि जितबाजत मधुर सार । मनु
करमजीतको है नगार ॥ शिर छत्र फिरै त्रय श्वेत वर्ण मनु रतन
तीन त्रयताप हर्ण ॥१४॥ तनप्रभातनो मण्डल सुहात । भवि देख-
त निजभव सात सात ॥ मनु दर्पणद्युति यह जगमगाय । भविजन
भव मुख देखत सुभाय ॥१५॥ इत्यादि विभूति अनेक जान । बा-
हिज वीसत महिमा महान ॥ ताकों वरणत नहिं लहत पार । तौ
अंतरङ्गको कहै सार ॥१६॥ अनअंत गुणनिजुत करि विहार । धर-
मोपदेश दे भव्य तार ॥ फिर जोगनिरोध अघाति हान । सम्मेद
थकी लिय मुक्तिथान ॥१७॥ वृन्दावन बन्दत शीश नाय । तुम
जानत हो मम उर जु भाय ॥ तार्तैका कहों सु बार बार । मनवां-
छित कारज सार सार ॥१८॥

छन्द घसानन्द ।

जय चन्दजिनन्दा आनंदकंदा, भवभयभञ्जन राजै हैं ॥ रागा-
दिकद्वंदा हरि सब फंदा, मुक्तिमांहि थिति साजै हैं ॥१९॥

ॐ ह्रीं श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छंद चौबोला—आठों दरब मिलाय गाय गुण, जो भविजन
जिनचन्द जजै ॥ ताके भवभवके अघ भाजै, मुक्तसार सुख ताहि
सजै ॥२०॥ जमके त्रास मिटै सब ताके, सकल अमंगल दूर जजै ।
वृन्दावन ऐसो लखि पूजत, जातै शिवपुरि राज रजै ॥ २१ ॥

[इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

८४ शान्तिनाथ जिनपूजा ।

या भवकाननमें चतुरानन, पापपनानन घेरि हमेरी । आतम-
जान न मान न ठान न, बान न होन दई सउ मेरो ॥ तामद भानन
आपहि हो, यह छान न आन न आननटेरी । आन गही शरणा-
गतको अब श्रीपतजी पत राखहु मेरी ॥

ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौपट ॥

हिमगिरिगतगंगा-धार अमंग, प्रासुक संग भरि भृंगा ।
जरमरनमृतंगा, नाशि अघंगा, पूजि पदंगा मृदुहिंगा ॥ श्रीशान्ति-
जिनेशानुत शकेशं वृष चक्रेशं चक्रेशं चक्रेशं । हनि अरि चक्रेशं
हे गुनधेशः दयामृतेशं मकेशं ॥ १ ॥ घर बावनचंदन, कदलीनंदन,
घन आनंदन सहित घसों । भवताप निकन्दन, परा नन्दन, बंदि
अमंदन, चरनवसों ॥ श्री० ॥ २ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिने-
न्द्राय भवतापविनाशनाथ चंदनं ॥ हिमकरकरि लज्जत, मलयसु-
सज्जत, अच्छतजज्जत, भरिथारी । दुखदारिद्र गज्जत, सद्पदसज्जत,
भवभय भज्जत, अतिभारी ॥ श्री० ॥ ३ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथ-
जिनेन्द्राय अक्षयपदप्रामये अक्षतं ॥ मंदार सरोजं, कदली जोजं,
पुंज भरोजं, मलयभरं भरि कंचनथारी, तुम ढिग धारी, मदन-
विदारी, धोरधरं ॥ श्री० ॥ ४ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय
कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥ पकवान नवीने, पावन कीने, पटर-
समीने, सुखदाई । मनमोदनहारे, लुधा विदारे, आगे धारे गुन-
गाई ॥ श्री० ॥ ५ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग
विनाशनाथ नैवेद्यं ॥ तुम ज्ञानप्रकाशे, भ्रमतम नाशे, ज्ञेयविकाशे

सुखरासे । दीपक उजियारा यातै धारा, मोहनिवारा, निज भासे ॥
 श्री० ॥ ६ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाश-
 नाय दीपं ॥ चन्दन करपूरं, करि वरचूरं, पावक भूरं माहि जुंरं,
 तसु धूम उड़ावै; नांचत जावै, अलि गुंजावै, मधुरसुरं ॥ श्री० ॥
 ॥ ७ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनार्थं धूपं निर्व-
 पामीति ॥ बादाम खजूरं दाडिम पूरं, निंबुक भूरं, लै आयो ।
 तासों पद जज्जों, शिवफल सज्जों, निजरसरज्जों, उमगायो ॥ श्री०
 ॥ ८ ॥ ओं ह्रीं श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं । वसु
 द्रव्य सवारी तुम ढिग धारी, आनंदकारी, दूगप्यारी । तुम हो
 भवतारी, करुणाधारी, यातै थारी शरनारी ॥ श्री० ॥ ९ ॥ ओं ह्रीं
 श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घं ॥

पञ्चकल्याणक ।

असित सातय भादवं जानिये । गरभमंगल तादिन मानिये ॥
 सचि कियो जननी पद चर्चनं हम करै इत ये पद अर्चनं ॥ १ ॥
 ओं ह्रीं भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां गर्भमंगलमण्डिताय अर्घं नि० ॥ जनम
 जेठ चतुर्दशि श्याम हैं । सकलइन्द्र सुआगत धाम है ॥ गजपुरे
 गज साजि जवै तवै । गिरि जजे इत में जजि हों अबै ॥ २ ॥
 ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां जन्म मंगलप्राप्ताय अर्घं ॥ २ ॥ भव
 शरीर सुभोग असार हैं । इमि विचार तवै तप धार हैं ॥ भ्रमर
 चौदश जेठ सुहावनी । धरमहेत जजों गुन पावनी ॥ २ ॥ ओं ह्रीं ज्येष्ठ
 कृष्ण चतुर्दश्यां निः क्रमहोत्सवमण्डिताय अर्घं ॥ ३ ॥ शुक्लपौष
 दशे सुखराश है । परम केवल ज्ञान प्रकाश है ॥ भवसमुद्र उधारन
 देवकी । हम करै नित मंगल सेवकी ॥ ४ ॥ ओं ह्रीं पौषशुक्ल-

दशम्यां केवलज्ञानप्राप्ताय अर्घ ॥ ४ ॥ असित चौदस जेठ हने
अरी । गिरि समेद थकी शिव-तिय वरी सकल इन्द्र जजै तित
आईके । हम जजौ इत मस्तक नाइके ॥ ५ ॥ ओं ह्रीं ज्येष्ठकृष्ण-
चतुर्दश्यां मोक्षमंगलप्राप्ताय अर्घ ॥ ५ ॥

छन्द - शान्ति शान्तिगुनमंडिते सदा । जाहि ध्यावत सुपंडिते
सदा ॥ मै तिन्हे भगत मंडिते सदा पूजि हों कलुषहंडिते सदा ॥ १ ॥
मोच्छहेत तुमही दयाल हो । हे जिनेश गुनरत्नमाल हो । मै अबे
सुगुनदाम ही धरों । ध्यावते तुरित मुक्ति-ती वरों ॥ २ ॥

छंद पद्वरि (१६ मात्रा)

जय शान्तिनाथ चिद्रूपराज । भवसागरमें अदभुत जहाज ॥
तुम नजि सरवारथसिद्ध धान । सरवारथजुन गजपुर महान ॥ १ ॥
तित जनम लियौ आनंद धार । हरि नतछिन आयो राजद्वार ॥
इदानी जाय प्रसूतथान । तुमको करमें ले हरय मान ॥ २ ॥ हरि
गोद देय सो मोदधार । सिर चमर अमर दारत अपार ॥ ॥ गिरि-
राज जाय तित शिलापांडु । तापै थाप्यौ अभिषेक मांड ॥ २ ॥
नित पंचम उदधितनों सुवार । सुर कर कर करि ल्याये
उदार ॥ तब इन्द्र सहसकर करि अनंद । तुम सिर धारा ढास्यौ
सुनंद ॥ ४ ॥ अघ घघ घघ घघ धुनि होत घोर । भभ भभ भभ
घघ घघ कलश शोर ॥ दूमदूम दूमदूम बाजत मुदंग । नन नन नन
नन नन नूपुरङ्ग ॥ ५ ॥ तन नन नन नन नन तनन तान । घन
घन नन नन घंटा करत ध्वन ॥ ताथेई थेई थेई थेई थेई सुवाल ।
जुं त नाचत नाचत तुमहि भाल ॥ ६ ॥ चट चट चट अटपट नटत
नाट । भट भट भट हट नट शट विराट ॥ इमि नाचत राचत

मगत रंग । सुर लेत जहां आनंद संग ॥७॥ इत्यादि अतुल मंग-
ल सुठाट । तित बन्यौ जहां सुरगिरि विराट पुनि करि नियोग
पितु सदन आय । हरि सौंप्यौ तुम तित वृद्धि थाय ॥ पुनि राजमा-
हिं लहि चक्ररत्न । भोग्यौ छ खंड करि धरम जल ॥ पुनि तप धरि
केवलरिद्धि पाय ॥ भवि जीवनकों शिव मग बताय ॥ शिवपुर
पहुंचे तुम हे जिनेश । गुनमंडित अतुल अनन्त भेष ॥ मैं ध्यावनु
हौं नित शीश नाय । हमरी भवबाधा हरि जिनाय ॥ १० ॥ सेवक
अपनों निज जान जान । करुना करि भौभय भान भान ॥ यह
विघन मूल नरु खंड खंड । चितचिन्तित आनंद मंड मंड ॥ ११ ॥

घत्तानंद छंद (मात्रा ३१) ।

श्रीशान्ति महंता, शिवनियकंता, सुगुन अनंता, भगवन्ता ।
भवभ्रमन हनंता, सौख्य अनंता, दातारं तारनवन्ता ॥ १ ॥ ओं
हीं शान्तिनाथजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपांमीति स्वाहा ॥ १ ॥

छंद रूपक सवैया (मात्रा ३१) ।

शान्तिनाथजिनके पदपंकज, जो भवि पूजै मनवचकाय । जनम
जनमके पातक ताके, ततछिन तजिकै जाय पलाय ॥ मनवांछित
सुख पावै सो नर, बाँचै भगति भाव अति लाय । तातै वृन्दाबन
नित बंझै, जातै शिवपुरराज कराय ॥ १ ॥

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलि क्षिपेत् ।

८५ श्रीपार्श्वनाथपूजा

वर सुरग आनतको विहाय सुमातवामा सुत भये । विस्व-
सेनके पारस जिनसुर चरन, तिनके सुर नये ॥ नव हाथ उन्नत

नन बिराज उरग लच्छन अतिलशं । थापूं तुम्हें जिन आय तिष्ठहु
करम मेरे सब नशे ॥१॥ ओं ह्री श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अव-
तर संवौषट । ओं ह्री श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ॥
ओं ह्री श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्र अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट ।

छन्द नाराच ।

क्षीर सोमके समान अंबुसार लाइये हेमपात्र धारकेसु
आपको चढ़ाइये ॥ पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूं सदा ।
दीजिये निवास मोक्ष, भूलिये नहीं कदा ॥ १ ॥ ओं ह्री श्रीपार्श्व-
नाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा

चन्दनादि केशरादि स्वच्छ गंध लोजिये । आप चर्न चर्च मोह
तापको हनीजिये ॥ पार्श्वनाथदेव सेव आपकी करूं सदा दीजिये
निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ॥ २ ॥ ओं ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र
भवातापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥

फेन चन्दके समान अक्षते मगाइकें । पादके समीप सार पूज-
को रचाइकें । पार्श्वनाथ० ॥ ३ ॥ ओं ह्री श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय
अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा ॥

केवड़ा गुलाब और केतकी चुनाइये । धारचर्नके समीप
कामको नसाइये । पार्श्वनाथ० ॥ ४ ॥ ओं ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥

धेवरादि बावरादि मिष्ट सर्पिमें सने । आप चर्नचर्चते छुधादि
रोगको हने । पार्श्वनाथ० ॥ ५ ॥ ओं ह्री श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

लाय रत्न दीपको सनेह पूरके भरू । वातिका कपूरवारि मोह

ध्यांतको हरू । पार्श्वनाथ० ॥ ६ ॥ ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय
मौहांधकारबिनाशनाथ दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ धूप गंध लेयके
सुअग्नि संग जारिये । तास धूपके सुसंग अष्टकर्म वारिये ॥ पार्श्व-
नाथ० ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाथ धूपं
निर्वपामीति० ॥ खारिकादि चिमेटादि रत्नथालमें धरू । हर्ष-
धारके जजूं सुमोक्ष सुखलकूं वरू ॥ पार्श्वनाथ० ॥ ८ ॥ ॐ ह्रीं
श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति० ॥ नीर
गंध अक्षतं सुपुष्प चारु लीजिये । दीप धूप श्रीफलादि अर्घतें
जजीजिये ॥ पार्श्व० ॥ ९ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्य-
पदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामी० ॥

पंच कल्याणक — चाल छन्द ।

शुभआनत स्वर्ग विहाये । वामा माता उर आये । वैशाखतनी
दुति कारी, हम पूजें विघ्न निवारो ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं वैशाखकृष्ण-
द्वितीयायां गर्भमङ्गलप्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा-
मीति स्वाहा ॥ १ ॥ जनमे त्रिभुवन सुखदाता, एकादशि पौष
विख्याता । श्यामानन अद्भुत राजै । रवि कोटिक तेजसु लाजै ॥
॥ २ ॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीपार्श्व-
नाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ कलि पौष इकादशि
आई, तव बारह भावना भाई । अपने कर लोंच सुकीना । हम
पूजे चर्न जजोना ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याण-
मंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥
कलि नीत चतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई ॥ तब वृष उपदेश
जु कीना; भवि जीवनको सुख दीना ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण-

चतुर्थीदिने केवलज्ञानप्राप्ताय श्रीपार्ष्णाथजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपा-
मोति स्वाहा ॥ ४ ॥ सित श्रावण सातै आई; शिवनारि वरी जिन-
राई । समेदावल हरि माना, हम पूजै मोच्छ कल्याणा ॥ ५ ॥
ऊँ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तमीदिने मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीपार्ष्णाथ-
जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामोति स्वाहा ॥ ५ ॥

जयमाला ।

कविस-पारसनाथ जिनेद्रतने वच पौनभस्त्री जरते सुनपाये ।
कियो सरधान लियो पद आन भये पद्मावती शेष कहाये । नाम-
प्रताप टरे संताप सुभव्यनको शिव शर्म दिखाये । हो विश्वसेनके
नंद भले गुन गावतु हैं तुमरे हरखाये ॥ १ ॥

दोहा — केकीकंठ समान छवि; वपु उत्तंग नव हाथ ।

लच्छन उरग निहार पग, बंदू पारसनाथ ॥ २ ॥

छन्द मोतीदाम ।

रखी नगरी षट् मास अगार । बने चहुं गोपुर शोभ अपार ॥
सुसीट तनी रचना छवि देत । कंगूरनपै लहके बहुकेत ॥ ३ ॥ ब-
नारसकी रचना छवि सार । करी बहु भांति धनेश तयार ॥ तहां
विश्वसेन नरेन्द्र उदार । करै सुख वाम सुदे पटनार ॥ ४ ॥ तज्यो
तुम आनत नाम विमान । भये तिनके घर नंदन आन ॥ तबै पुर
इन्द्र नियोग जु आय । गिरिंद करी विधि न्होन सु जाय ॥ ५ ॥
पिता घर सौंपि गये निज धाम । कुवेर करै वसु जग्म सुकाम ॥
बहै जिन दौज मयङ्क समान । रमै बहु बालक निर्जर आन ॥ ६ ॥
भये जब अष्टम वर्ष कुमार । धरे अणुवृत्त महा सुखकार ॥ पिता
जब आन करी अरदास । करौ तुम व्याह बरौ मम आश ॥ ७ ॥

करूं तब नाहिं कहै जगचन्द । कियो तुम काम कषाय जु मंद ॥
 चढ़े गजराज कुमारन संग । सुदेखत गंगतनी सु तपङ्ग ॥ ८ ॥
 लख्यो इक रंग करै तप घोर । चहुं दिशि अग्नि बले अति जोर ॥
 कहौ जिननाथ अरे सुन भ्रात । करै बहु जोब तनो मत घात ॥ ९ ॥
 भयो तब कोपि कहै कित जीव । जले तब नाग दिखाय सजोब ॥
 लख्यो इह कारन भावन भाय । नये दिव ग्रह ऋषोश्वर आय ॥ १० ॥
 तबै सुर चार प्रकार नियोगि । धरी शिविका निज कंध मनोगि ॥
 कियो वन माहि निवास जिनन्द । धरे व्रत चारित आनंदकंद ॥ ११ ॥
 गहे तहं अष्टमके उपवास । गये धनदत्त तने जु अवास ॥ दियो
 पयदान महासुख सार । भई पण वृष्टि तहां तिहं बार ॥ १२ ॥ गये
 तब कानन माहि दयाल । धस्यो तुम योग सबे अघ टाल ॥ तबै
 वह धूम सुकेत अज्ञान । जयो कमटाचरको सुर आन ॥ १३ ॥ करै
 नभगौन लखे तुम थोर । सुपूरव बैर विचार गहीर ॥ कियो उप-
 सर्ग भयानक घोर । चली यहु तीक्ष्ण पौन भकोर ॥ १४ ॥ रह्यो
 दशहं दिशिमें तप लाय । लगे बहु अग्नि लखी नहिं जाय ॥ सु-
 रुंडनके विन मुण्ड दिखाय । परै जल मूसलधार अथाय ॥ १५ ॥
 तबै पदमावतिकंध धनिंद । गहे जुग आय तहां जिनचन्द ॥ भग्यो
 तब रंक सुदेखत हाल । लह्यो तब केवल ज्ञान विशाल ॥ १६ ॥
 दियो उपदेश महा हितकार । सुभव्यनि बोधि समेद पधार ॥ सु-
 वर्णहमद्र सुकूट प्रतिद्ध । वरो शिवनारि लहो वसुरिद्ध ॥ १७ ॥
 जजूं तुम चर्न दूह कर जोर । प्रभु लखिये अब हो मम ओर ॥
 कहै 'वस्तुधर रत्न' बनाय । जिनेश हमें भव पार लगाय ॥ १८ ॥

प्रज्ञा—जै पारस देवं सुकृतसेव बंदत चर्म सु नागपती ।

कल्लाके धारी पर उपगारी शिवसुखकारी कर्म हती ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥

छन्द—जो पूजे मन लाय भव्य पारस प्रभु नित ही । ताके दुःख सब जाय भीति व्यापै नहिं कितहो ॥ सुख संपति अधिकाय पुत्रमित्रादिक सारे । अनुक्रमते शिव लहै 'रत्न' इमि कहैं पुकारे ॥ २

इत्याशीर्वादः ।

८६ महावीर स्वामी

(पं० रामचरितजी उपाध्याय)

जय महावीर जिनेन्द्र जय, भगवन ! जगत्प्रक्षा करो ।

निज सेवकोंके भव-जनित सन्तापको कृपया हरो ॥

हैं तेजके रचि आप, हम अज्ञान तममें लीन हैं ।

हैं दयासागर आप हम, अति दीन हैं बलहीन हैं ॥ १ ॥

दानी न होगा आप सा, हम सा न अज्ञानी कहीं ।

अवलम्ब केवल हैं हमारे, आप हो दूजा नहीं ॥

भवसिन्धुके भव भ्रमरमें हम डूबते हैं हे प्रभो ।

भटपट सहारा दीजिये, हम ऊबते हैं हे प्रभो ॥ २ ॥

गिरिको अंगूठेसे हिलाया आपने तो क्या किया ॥

यदि इन्द्रके मदको मिटाया आपने तो क्या किया ॥

यदि कमलको गजने हिलाया तो प्रशंसा क्या हुई ।

यदि सिंहने गोदड़ भगाया तो प्रशंसा क्या हुई ॥ २ ॥

अपकारियोंके साथ भी उपकार करते आप थे ।

मनमें न प्रत्युपकारकी कुछ चाह रखते आप थे ॥

बड़वाग्नि वारिधिके हृदयको है जराता नित्य ही ।

पर जलधि अपनाये उसे है क्रोध कुछ करता नहीं ॥४॥

शुभ स्वावलम्बनका सुपथ सबको दिखाया आपने ।

दृढ़ आत्मबलका मर्म भी सबको सिखाया आपने ॥

समता सभीके साथ सब दिन आपकी रहती रही ।

इस हेतु सेवा आपकी निश्छल महो करती रही ॥ ५ ॥

यद्यपि अहिंसा क्रम सभीने श्रेष्ठ मत माना सहो ।

पर वास्तविक उसके विधानोंको कभी जाना नहीं ॥

किस भांति करना चाहिये जगमें अहिंसा धर्मको ।

अतिशय सरल करके दिखाया आपने इस मर्मको ॥६॥

करके कृपा यदि अवतरित हाते न भू पर आप तो ।

मिटता नहीं संसारका त्रयकालमें त्रय ताप तो ॥

जितकाम हो निष्काम हो अरु शांतिके सुखधाम हो ।

योगोश भोगोंसे रहित गुणहीन हो गुणग्राम हो ॥ ७ ॥

जय जय महावीर प्रभो! जगको जगाकर आपने ।

संसारके हिंसा-जनित भयको भगाकर आपने ॥

इस लोकको सुरलोकसे भी परम पावन कर दिया ।

अज्ञान-आकर विश्वको प्रज्ञानका सागर किया ॥८॥*

८७ मेरी भावना ।

(बाबू जुबलकिशोरजी कृत)

जिसने रागद्वेषकामादिक जीते, सब जग जान लिया,

सब जीवोंको मोक्षमार्गका निरूपह हो उपदेश दिया ।

बुद्धि, वीर जिन, हरि, हर, ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो,
भक्ति-भावसे प्रेरित हो यह वित्त उसीमें लीन रहो ॥१॥

विषयोंकी आशा नहीं जिनके, साम्य-भाव धन रखतेहैं,
निज-परके हित साधनमें जो निशदिन तत्पर रहते हैं ॥

स्वार्थत्यागकी कठिन तपस्या बिना खेद जो करते हैं,
ऐसे ज्ञानी साधु जगतके दुखसमूहको हरते हैं ॥ २ ॥

रहे सदा सत्संग उन्हींका, ध्यान उन्हींका नित्य रहे,
उन ही जैसी चर्यामें यह चित्त सदा अनुरक्त रहे ।

नहीं सताऊं किसी जीवको, झूठ कभी नहिं कहा करूं,
परधन-बनिता पर न लुभाऊं, संतोषामृत पिया करूं ॥ ३ ॥

अहंकारका भाव न रखूँ, नहीं किसी पर क्रोध करूं,
देख दूसरोंकी बढ़तीको कभी न ईर्ष्या भाव धरूं ।

रहे भावना ऐसी मेरी, सरल-सत्य-व्यवहार करूं,
बने जहांतक इस जीवनमें औरोंका उपकार करूं ॥ ४ ॥

मैत्रीभाव जगतमें मेरा सब जीवोंसे नित्य रहे,
दीन-दुखी जीवोंपर मेरे उरसे करुणास्रोत बहे ।

दुर्जन-क्रूर-कुमार्गारतों पर क्षोभ नहीं मुझको आवे,
साम्यभाव रखूँ मैं उन पर, ऐसी परिणत हो जावे ॥५॥

गुणोजतोंको देख हृदयमें मेरे प्रेम उमड़ आवे,
बने जहांतक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे ।

होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं, द्रोह न मेरे उर आवे,
गुण ग्रहणका भाव रहे नित, दृष्टि न दोषोंपर जावे ॥६॥

कोई बुरा कहो या अच्छा, लक्ष्मी आवे या जावे,

लाखों वर्षों तक जीऊं या मृत्यु आज ही आजावे ।

अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे,

तो भी न्याय मार्गसे मेरा कभी न पद डिगने पावे ॥७॥

होकर सुखमें मग्न न फूले, दुखमें कभी न घबरावे,

पवत-नदी-श्मशान-भयानक अटवीसे नहिं भय खावे ।

रहे अडोल-अकंप निरन्तर, यह मन, दृढ़तर बन जावे,

इष्टवियोग-अनिष्टयोगमें सहनशीलता दिखलावे ॥८॥

सुखी रहें सब जीव जगतके, कोई कभी न घबरावे,

नेर-पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मंगल गावे ।

घरघर चर्चा रहे धर्मकी, दुष्कृत दुष्कर हो जावें,

ज्ञान-चरित उन्नत कर अपना मनुज-जन्मफल सब पावें ॥९॥

ईति-भोति व्यापे नहिं जगमें वृष्टि समय पर हुआ करे,

धर्मनिष्ठ होकर राजा भी न्याय प्रजाका किया करे ।

रोग मरी दुर्मिक्ष न फैले, प्रजा शांतिसे जिया करे,

परम अहिंसा-धर्म जगतमें, फैल सर्वहित किया करे ॥१०॥

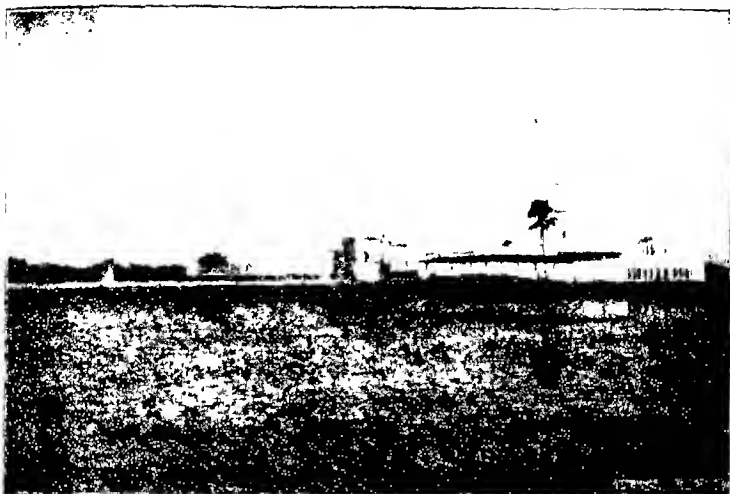
फैले प्रेम परस्पर जगमें मोह दूरपर रहा करे,

अप्रिय कटुक-कठोर शब्द नहिं कोई मुखसे कहा करे ।

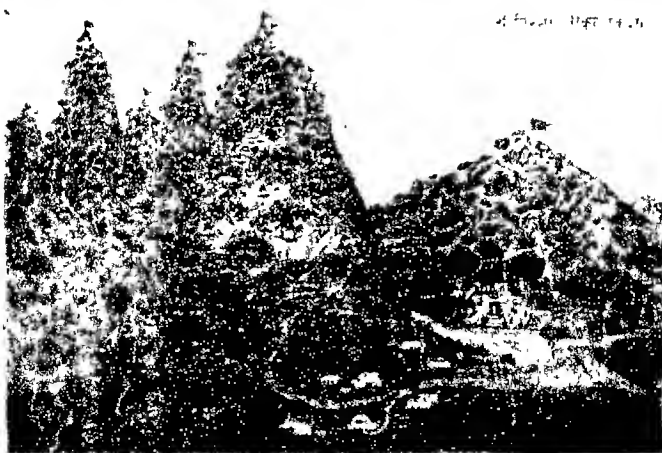
बनकर सब 'युग-वीर' हृदयसे देशोन्नति रत रहा करे,

वस्तुरूप विचार खुशीसे सब दुख-संकट सहा करे ॥११॥





श्रीपावापुरजा



श्रीगिरिनाराजी



काशीनिवासी कविवर वृन्दावनविरचित ८८ अरहंतपासाकेवली ।

दोहा—श्रीमत वीरजिनेशपद, बंदों शीस नवाय । गुरु गौतमके
वरन नमि, नमों शारदा माय ॥ १ ॥ श्रेणिक नृपके पुण्यतैं,
भाषी गणधरदेव । जगतहेत अरहंत यह, नाम 'केवली' सेव
॥ २ ॥ चंदनके पासाविषै, चारों ओर सुजान । एक एक अक्षर
लिखौ, श्रो 'अरहंत' विधान ॥ ३ ॥ तीन बार डारो तबै, करि वर
मंत्र उचार । जो अक्षर पांसा कहै, ताकौ करौ विचार ॥ ४ ॥
तीन मंत्र हैं तासुके, सात सात हो बार । थिर हूँ पांसा ढारियो,
करिकै शुद्ध उद्धार ॥ ५ ॥ जानि शुभाशुभ तासुनै, फल निज उदय-
नियोग । मन प्रसन्न हूँ सुमरियो, प्रभुपद सेवहु जोग ॥ ६ ॥

प्रथममंत्र—ओं ह्रीं श्रीं बाहुबलि लंबवाहु ओं क्षां क्षीं क्षं क्षें क्षे
क्षों क्षः ऊर्द्ध भुजा कुरु कुरु शुभाशुभं कथय कथय भूतभविष्यति-
वर्तमानं दर्शय दर्शय सत्यं ब्रूहि सत्यं ब्रूहि स्वाहा ।

(प्रथम मंत्र सात बार जपना)

दूसरा मंत्र—ओं हः ओं सः ओं क्षः सत्यं वद सत्यं वद स्वाहा ।

(सात बार जपना *)

तीसरा मंत्र ओं ह्रीं श्रीं विश्वमालिनि विश्वप्रकाशिनि अमोघ-
वादिनि सत्यं ब्रूहि सत्यं ब्रूहि राह्यहि राह्यहि विश्वमालिनि स्वाहा ।

ॐ मन एकत्र करि विनयसाहत अपना अनिप्राय विचारकरि श्रीमहत्त
भगवान के नामाक्षरका पांसा तीन बेर ढालना । जो जो वरन पड़ें तिस्रो
वरनका भेद पाके फलका निश्चय करना । जिन मागमें यह बड़ा निमित्त है ।
इसे हमने लिखा है कि अपना वा परमा उपकार होय । (वृन्दावन)

(यह मंत्र भी सात बार जपना)

अथ अकरादि प्रथम प्रकरण ।

अम् । जो परे तीन अकार । तो जानि सुखविस्तार ।
कल्याणमंगल होय । सम्मान वाढ़ै सोय ॥ १ ॥ लक्ष्मी वसै नित
धाम । व्यापारमें बहु दाम । परदेशमें धनलाभ । संग्राममें जय-
लाभ ॥ २ ॥ नृपद्वारमें सम्मान । संकष्ट कटै प्रमान । सब रोग
अरु दुर्भागि । ततकाल जावे भागि ॥ ३ ॥ प्रगटै सकल कल्याण
यामें न संशय जान । यह महा उत्तम अंक । फल अटल जासु
निसंक ॥ ४ ॥

चौपाई छंद ।

अम्भर । दोअकारपर परै रकार । मध्यम फल है सुनो वि-
चार । जो कारज चिंतो मनमाहिं । सो तौ शीघ्र होनको नाहिं ॥ ५ ॥
पूरव पाप उदय है जानि । सोई करत काजकी हानि । तार्ते इष्टदेव
आराधि । कुलदेवीको पूजि सुसाधि ॥ ६ ॥ तासु जजन आराधन
किये । किंचित् होय काज सुनि हिये । मध्यम प्रश्न पत्नौ है यह ।
मति मानो यामें संदेह ॥ ७ ॥

पद्धड़ी छंद ।

अम्भहं । जहँ दोअकारके अंत माहिं । हंकार परै सो शुभ
कहाहिं । धन धान्य समागम लाभ होय । परदेश गयो जो वहै
सोय ॥ ८ ॥ तो मनवांछितकी सिद्धि जान । अरु मित्र बंधुसों प्रीति
मान । तत्काल शत्रुको होय नास । सब विघ्न मिटै अनयास तास
॥ ९ ॥ घरमें प्रगटै मंगलविभूति । तब पुण्यप्रभाव प्रबल अकूत ।
यह उत्तम प्रश्न सुनो पुमान । यों कहत केवली गुननिधान ॥ १० ॥

अअत । जहं दुइ अकार पर हूँ तकार । तहं शुभ फल जानो हे उदार । बहु मित्र मिले भू वख ताहि । अरु पुत्र पौत्र हूँ सदनमाहि ॥११॥ रोगीको रोग विनाश होय क्रूरग्रहको निग्रह भि होय । जो मित्र बंधु परदेश होय, घर आवै अति मन मुदित सोय ॥ १२ ॥ कुलवृद्धि तथा सज्जन महान । तिनसों नित प्रीति बढ़ै सयान । दिन दिन अति लाभ मिलै पुनीत । यह प्रश्न केवली कहत प्रीति ॥ १३ ॥

अरअ । दुइ अकारके मध्य रकार । पांसा परै तासु सुविचार । उत्तम फलकारी यह होत । नित नव मंगल होत उदोत ॥१४॥ पूरव जो धन गयो नसाय । सो सब तोहि मिलैगो आय । राजा करहि बहुत सनमान । बसन भूमि हय देवहि दान ॥१५॥ भ्राता मित्र समागम होहि । सब विधि सदनमहोच्छव तोहि । सकल पापको होय विनाश । भर्मवृद्धि नित करै प्रकाश ॥ १६ ॥

अरर । जो अरर प्रगटै वरन । तो सकल मंगल करन । धन लाभ सूचत येह । दशदिश विमल जस तेह ॥१७॥ जहं जाय वह मतिवत । तहं लहै पूजा संत । हूँ इष्टबंधुमिलाप । उद्यमविषै श्री आप ॥ १८ ॥ जल चोर पावक मरी । ये सकहिं नहिं कछु करी । सब शत्रु कीजे हान । प्रगटै सकल कल्याण ॥ १९ ॥ जिनधरमके परभाव । यह जान हूँ सद्भाव । उत्तम कहत फल अंक । उत्तम गहो निःशंक ॥ २० ॥

अरहं । अरहं परे जो वरन । सौभाग्यसंपतिकरन । तो जो मनोरथ होइ । अनयास पूजै सोय ॥२१॥ कछु क्लेश हूँ अपमाहिं

तसु रंच ही भय नाहिं । निज इष्ट पूजहु जाय । सब विघन जांय नसाय ॥ २२ ॥ मन सोच तजि थिर होहि । आनन्द मङ्गल तोहि । सब सिद्धि ह्वै है काज । अरहं कहत महाराज ॥ २३ ॥

अरत । जब अरत पांसा ढरै । तब सकल सुख विस्तरै । तोहि तिया प्रापति होय । सुत होय पौत्रपि होय ॥ २४ ॥ कुलगोत सब सोभंत । तब भाल तिलक लसंत । जहँ जाहुगे तुम मीत । तहँ लहहु पूजा नीत ॥ २५ ॥ जनमध्य हौ तुम केम । ताराविषे शशि जेम । यह रुचिर प्रश्न सुजान । मनमें धरो प्रभुभ्यान ॥ २६ ॥

अहंअ । जो अहंअ छबि देय । तो सुनहु पूछक भेय । पहिले कलुक दुख होइ । फिर नाश ह्वै है सोय ॥ २७ ॥ धनलाभ दिन दिन बढ़ै । अरु सुजनसंगम चढ़ै । जो काम चिंतहु वृद्ध । सो सकल ह्वै है सिद्ध ॥ २८ ॥

अहर । जब अहर सु दरसाय । तब अरथलाभ कराय । जसलाभ पृथिवीलाभ । यह देख परत सुसाभ (?) ॥ २९ ॥ राजादि बंधूवर्ग । सब करहिं आदर सर्ग । भ्रातादि इष्टमिलाप । धन-धान्य आगम व्याप ॥ ३० ॥ व्यवहार अरु परदेस । सब ओर उत्तम तेस । सब सोच संशय हरहु । शुभ तुमहिं धीरज धरहु ॥ ३१ ॥

अहंहं । जो अहंहं है अंक । सो कहत है फल बंक । दोखे न कारज सिद्ध । यह काज तोर सुबुद्ध ॥ ३२ ॥ धन नाश ह्वै है तोहि । तन ह्वैस पीड़ा होहि । व्यापारमें धनहान । परदेश सिद्धि न जान ॥ ३३ ॥ तिहिहेत कर भविजीव । जिन जजन भजन सदीव । जप दाम होम समाज । तब होइ कछु इक काज ॥ ३४ ॥

अहंत । अक्षर अहंत परै । तब सकल शुभ विस्तरे । कल्याणमंगल धाम । सुन भ्रात मिलहि मुदाम ॥ ३५ ॥ उद्यमविषै धनधान्य । संपतिसमागम मान्य । रनकेविषै सब जीत । तोहि लाभ निश्चय मीत ॥ ३६ ॥ अरु होय बंदीमोच्छ । निरबाध है यह पच्छ । तुव ह्वे मनोरथ सिद्ध । मति मान संशय वृद्ध ॥ ३७ ॥

अतअ । यह अतअ भाषत वरन । कल्याणमंगलकरन । उद्यममें श्रीविस्तरन । सब विघ्नप्रहभयहरन ॥ ३८ ॥ सुनपौत्रलाभ निहार । वांछित मिलै मनहार । दिन आठयें कछु तोहि । कछु श्रेष्ठ भावो होइ ॥ ३९ ॥

अतर । जो अतर अक्षर ढरै । तो सकल मंगल करै । वाजिअ सदन सुनाय । घरमाहिं अनंद बघाय ॥ ४० ॥ प्रियबंधुचिंता होहि । तसु मोद मंगल होहि । धनधान्यसंजुत होय । घर शीघ्र आवै सोय ॥ ४१ ॥ गजवाजि रथआरूढ़ । भूपन वसनजुत प्रूढ़ । संजुत अमित कल्यान । निरभै मिलै भयमान ॥ ४२ ॥

अहंत । अतहं ढरै जो अंक । सो अशुभ कहत निशंक । नहिं लाभ दीखत भाय । धन हाथहूको जाय ॥ ४३ ॥ ह्वै इष्टबंधुवियोग । तियननयसंपतियोग । राजादि चोररु मरो । ह्वै शत्रु सबही घरो ॥ ४४ ॥ निहि विघननाशन हेन । कर देवजजन सुचंत । तिहि पुण्यके परभाव । घर होइ मंगलचाव ॥ ४५ ॥

अतत । जइ अतत आवै वरन । धनलाभ तहं बुधि वरन । संपदा सुखविस्तरन । सब सिद्धि वांछित करन ॥ ४६ ॥ प्रिय इष्ट बंधू मिलन । सब लाभ दिन प्रति दिनन । उद्यम तथा रनथान

तुव धुव विजय बुधिवान ॥ ४७ ॥ वादानुवादमंकार । तुव जीत
होय उदार । यामें न संशय करहु । शुभ जानि घोरज घरहु ॥४८॥

अथ रकारादि द्वितीय प्रकरण ।

रअअ । आदिरकार अकार दुइ, जब ये प्रगटें वर्न । तब
धनसंपतिलाभ बहु, सुजनसमागम कर्न ॥ ४९ ॥ सोना रूपा ताप्र
बहु, वसनाभरन सुरज । प्राप्त होय निधय सकल, चिंतित वित
जुतजल ॥ ५० ॥ अन्तरै न दीखै सुपन, माला सुमन सुजान । हय-
गजरथ आरुढ़ अरु, देवागमन विमान ॥ ५१ ॥

रअर । आदि रकार अकार पुनि, तापर परै रकार । सुनि
पूछक तैं तासु फल, है अभिमतदातार ॥ ५२ ॥ देश प्रजाको लाभ
है, खेती वर व्यापार । धन पावै परदेशमें, घरमें सब सुखसार ॥५३॥
संगर संकट घोरमें, कुलदेवी सुखदाय । करै सहाय प्रसाद तसु,
सब बिधि सिद्धि लहाय ॥ ५४ ॥

रअहं । आदि रकार अकार पर, हं प्रगटै जब आय । भय-
कारी धनहानि यह, क्लेश अशेष कराय ॥५५॥ यह कारज कर्तव्य
नहिं, लाभ नाहिं या माहिं । बांधवमित्र वियोगता, अस यह सगुन
कहाहिं ॥ ५६ ॥ जहं कहूं जाहु विदेश नहं सिद्ध न होवै काज ।
तातैं धिर है कलुक दिन, सुमिरहु श्रोजिनराज ॥ ५७ ॥

रअत । रअत परै पाँसा कहै, मग धन लूटहिं चोर ।
द्रव्यहानि होवहि बहुत, अशुभ फलहिं चहुं ओर ॥ ५८ ॥ नाव
बुझै पावक लगै, रोगरु कष्ट कुजोग । कियो काज विनशै सकल,
अशुभ करमके भोग ॥५९॥ तातैं शोक न कीजिये, भावीगति बल-
वान । धिर है निशदिन सुमिरिये, कृपासिंधुमगवान ॥ ६० ॥

ररअ । ररअ अंक आवै जहां तब ऐसो फल जान । तब चित चंचल चपल अति, सुनि प्रेच्छक मतिमान ॥ ६१ ॥ तैं चाहत अर्थागमन, मूलनाश तसु होइ । राजदण्ड चौराग्नभय, तनदुख तोहि बहोइ ॥ ६२ ॥ तनय तिया बांधवनिषों हैं है तोहि वियोग । अबतैं निसरे वरसमहं, कटहिं सकलदुखभोग ॥ ६३ ॥

ररर । तिहुं रकारको फल सुनो, मनवांछित फलदाय । धरा धान्य धनलाभ तोहि, मिलहि वस्तु सब आया ॥ ६४ ॥ तिया तनय सुन बधू धन, इष्टबंधुसंजोग । कृत उत्तम कल्याण तोहि, मिले सकल संभोग ॥ ६५ ॥ महालाभ उद्यमविषे, सदन तथा परदेश । सुफल काज तुव होय नित, यामें भ्रम नहिं लेश ॥ ६६ ॥

ररहं । दुइ रकारपर हं परै, तब मनवांछित होय । शोभनीक सुखसंपदा, सहज मिलावै सोया ॥ ६७ ॥ मंगल दुंदुभि होइ धुनि, अरथलाभ बडु तोहि । मिलि है वसुधा देश पुर, यह प्रतिभासत मोहि ॥ ६८ ॥ जौन काज तुम चित धरउ, तुरित होइ है तौन भूपनि अति आनन्द करै, तिन प्रति मंगलमौन ॥ ६९ ॥

ररत । ररत वरन यह कहन हैं, सुन पूछक चित लाय । परतियकी अभिलाषतैं, किये अनर्थ उपाय ॥ ७० ॥ अरथनाश तातैं भयो, अरु विह घामाहिं । राजदंड तैंने सहे, यामें संशय नाहिं ॥ ७१ ॥ तातैं परतिय परिहरहु, शुभमारग पग देहु । ब्रह्मचरजजुन प्रभु भजो, नरभक्तको फल लेहु ॥ ७२ ॥

रहंअ । रहंअकार आवै जहां, तहं उत्तम फल जान । वनितापुत्रधनागमन, बंधुसमागम मान ॥ ७३ ॥ अरथलाभ जसलाभ

पुनि, धर्मलाभ हूँ तोहि । रत्न विशेष व्यापारमें, विजय, तुरंतहि होहि ॥ ७३ ॥

रहंर । रहंर आवै जयहिं तय, विषम काज जिय जान ।
उद्यम सुफल न होय कलु, घर बाहर हैरान ॥ ७५ ॥ शत्रु बहुत सुख
कतहुं नहिं; तातैं तजि यह काज । जग सुख निष्फल जानि
जिय, भजो सदा जिनराज ॥ ७६ ॥

रहंर । हंजुग आदिरकार कह, सुनिये पूछनहार । अशुभ
उद्यम फल अशुभ है, जानहु निज उर धारा ॥ ७७ ॥ मात विश्वास करो
हिये, मित्र बंधु जिय जानि । शत्रु होय ये परिनवहिं कराहिं विस्तकी
हानि ॥ ७८ ॥ धनचिन्ता नित करत हौ, सो सुपनेहु नहिं होइ ।
धरम चिन्ति कुल देव जजि, तातैं कलु सुख जोइ ॥ ७९ ॥

रहंत । रहं तासुपर प्रगट न; सुनि फल पूछनहार । याको
फल मैं कहा कहों; सब सुखको दातार ॥ ८० ॥ विद्या लाभ कवि
चता; सुफल लाभ व्यवहार । वनिता सुतको लाभ हूँ, द्रव्यलाभ
व्यापार ॥ ८१ ॥ मित्रबंधु वसनाभरण, सहित समागम होइ ।
चहहु सुखित परिवार सों, कुलदेवीकृत जोइ ॥ ८२ ॥

रतअ । रत अ वरन पांसा कहत, तुव सम्मुख सौभाग ।
अरथागम कल्याणकर, असन सुखद अनुराग ॥ ८३ ॥ मंत्रजंत्र
औषधविधैं, सकल सिद्ध ध्रुव होइ । चित चिन्तित पुत्रादि सुख,
निश्चय पैहैं सोइ ॥ ८४ ॥

रतर । रतर वरन पासा कहत, सुनि पूछक गहि मौन ।
उद्यममें लक्ष्मी वसै, ज्यों पंढरमें पौन ॥ ८५ ॥ तातैं उद्यम करहु तुम,

अरथलाभ तहं होइ । तनय धरनि धरनो मिले, नृप सनमाने
सोय ॥ ८६ ॥ वसन मिले घोड़ा मिले, अनायास हूँ काज । शुभ-
मंगल तोहि सर्वदा, सेयै श्रीजिनराज ॥ ८७ ॥

रतहं । रतहं कहत प्रचारिकै, सुनि पूछक दे कान । प-
हिले कष्ट बहुत सहे, सो अब गये सुजान ॥ ८८ ॥ धनकी चिंता रहत-
चित, सो सब पूरन होहि । वनिता सुत बसनाभरन निश्चल मिलि-
हैं तोहि ॥ ८९ ॥ आधिष्याधि दुख नसहिं सब, चिंता करहु न
कोय । देवधर्म परसाइसों, काज सफल सब होय ॥ ९० ॥

रतत । रतत वरन सुनि पूछक, सकल सुफल तुव काम ।
मनवांछित धनसंपदा, पै हौ अति अभिराम ॥ ९१ ॥ जो कारज चि-
तवत रहौ, अनायास सो होय । मनमें मति संशय करो, धर्मवृद्धि
फल जोय ॥ ९२ ॥ शिवहित चाहत तप धरन, तामहं हूँ है सिद्धि ।
गहो जिनेश्वर कथित तप ज्यों होवै सुखवृद्ध ॥ ९३ ॥

अथ हंकारादि तृतीय प्रकरण ।

हं अअ । हं अअ वर्न परै जहँ आई । तासु सुनो फल है दु-
चिताई । सूचत कष्टरु चित्त विनाश । लोकविपै निरआदरभासं ॥ ९४ ॥
संगरमें नहिं जीन दिखावै । उद्यममें नहिं लाभ लहावै । जाहु जहां
कलु कारज हेनी । सिद्ध न होय तहां तुम सेती ॥ ९५ ॥ त्याग करो
यह कारज यातें । सेवहु श्र जिनधर्मसुधा तैं । धर्म चिता सुखको
नहिं लेखा । श्रीभगवान कहैं जिन देखा ॥ ९६ ॥ रोग निवार अरोग
शरीरं । पुष्ट महा बलपौरुष धीरं । चाहत हो परदेश सिधारो ।
होय मिलाप तहां शुभ सारो ॥ ९७ ॥

हं अर । हं अर भाषत है सुत्र सारा । होय मनोरथ सिद्ध
तुमारा । अर्थ तिया सुदमंगलताई । आनंदसंजुन बांधव भाई ।
॥६८॥ उद्यममें धन प्रापति जानो । देशविदेश जहां मनमानो ।
रोगोको रुज जाय नसाई । बांधवमित्र मिलैं सब आई ॥६९॥ देव
अराधहु भाव लगाई । सो मनवांछिन सिद्ध कराई । उषों बितमूढ
पादपै जानो । त्यों विनधर्म न आनंद पानो ॥१००॥

हं अहं । हं अहंमयि जत्र अकारं । तो सुनि पूछनहार
विवारं । कोमल वित्त तुमार दिखाई । शत्रु सुमित्र गिनो समनाई
॥ १०१ ॥ तासहिं धन आप गंवायौ । कालसुभाव नहीं लख
पायो । है कलिकालकराल पियारे । ते अति साधु सुभाव सुचारे
॥१०२॥ जो कलु पूर्व भयौ धन हान । सो सब तोहि मिले सुखदान
है तुमको नित प्रापति आगे । निश्चय जान अर्थ अचुरागे ॥१०३॥

हं अत । हं अत आय जनावत तातै । मंगल मंजु समा-
जसुवातै । पुत्र सुमित्र समागम होई । देशाराधन लाभ बहोई
॥१०४॥ धनकी चिन्ता करन हौ, शीघ्रहि पैहो सोय । द्रव्य पुत्र
वनिता वसन, सकल प्रापतो होय ॥ १०५ ॥ कुंशव्याधि अब मिट
गई, देव धरम परसाद । सुकल काज नित जानि जिय, भजहु
जिनेसुरपाद ॥ १०६ ॥

हरअ । हरअ आय दिखावत देसो । चिंतित काज सरे
तुव तेसो ॥ धान्यधनादिक लाभ दिखाई । कोरन देश दिशंनर जाई ।
॥ १०७ ॥ भूय करै सन्मान तुम्हारा । देश धरा धन देइ उदारा ॥
प्रीति करै तुमसों सब कोई । यामहं संशय रंच न होई ॥ १०८ ॥

हंरर । हंरर अक्षर भाषत सांचा । तो मनमें उद्वेग उमाचा । वित्त कछु अब छीजइ भाई । पीछे होय सुखी अधिकारि ॥१०६॥ संपत संतत मित्र पियारे । होहि सदा तोहि मंगलकारे ॥ अर्थ बढै घरमें सुखदाई । कीरति देशदिशंतर जाई ॥११०॥ श्री-जिन धर्मप्रभाव विचारो । है सब कारज सिद्ध तुमारो ॥ यामें संशय रच न मानो । सेवहु श्रीजिनराज सयानो ॥ १११ ॥

हंरहं । मध्यरकार जहां छवि देखे । हं जुग आदिरु अन्त परेई ॥ उत्तम लाभ लसै फल ताको । पुत्र विवाह भविष्यति जाको ॥ ११२ ॥ नारि मिलै घर संपत आवै । वैर मिटै हित प्राति जनावै ॥ संगर बाद विवादमंभारी । होय विजय तुव आनंदकारी ॥ ११३ ॥ दीखत है शुभभाग तिहारो । यामें संशय रच न धारो ॥ श्री जिनचन्दपदाम्बुज ध्यावो । ताकरि पूरण पुन्य कमावो ॥११४॥

हंरत । हंरत वर्न बखानत ऐसे । कारज सिद्ध लसै सब जैसे । उद्यममें लछमी चिरलाभं जुद्धरुजून विजै तुम साजं ॥११५॥ लाभ लसै सब ठौर तुमारे । हानि हमें नहिं दीखत प्यारे । किंचित सोच वसै मनमाहीं । तासु हमें कछु संशय नाहीं ॥११६॥ शोध मिटै वह शोच तुमारा । ह्वे घर मङ्गल मंजुल सारा । श्रीजिनधर्म अराधहु जाई । संजम दान करो सुखदाई ॥११७॥

हंहंअ । हं जुग अन्त अकार उचारौ । कारज सिद्ध समस्त तुमारो ॥ धामविषै धन है अधिकारि । पुत्र सुपौत्र बढै सुखदाई ॥११८॥ बांधवमित्रसमागम सूचै । जो परदेश विषै अविषूचौ (?) । संवत एकमंभार पियारे । है लछिलाभ तुमें अधिकारे ॥११९॥ इष्ट

पदांबुज सेवहु जाई । सर्व मनोरथ सिद्ध कराई ॥ मङ्गल प्रश्न हिये
रखि लीजै । श्रीजिनवैनसुधारस पीजै ॥ १२० ॥

हंहर । हं जुग अन्त रकार पुकारै । मंगल मोद समस्त
तुहारै ॥ पुत्रविवाह अवश्यक होऊ । जज्ञ विधान बने कछु सोऊ
॥ १२१ ॥ तासु प्रसाद सु संपति भूरी । है धन धान्य वस्त्र पर-
चूरी ॥ मङ्गलधाम बड़े अधिकारै । जाहु जहां तहं लाभ लहाई
॥ १२२ ॥ देव जजौ जपि दान करीजै । संजम होम सबै विधि
कीजं ॥ पुन्य किये सुख संपति नाना । बालगुपाल सबै यह जाना
॥ १२३ ॥

हंहंहं । हं तिहुं आय परै जब पासा । है तहं मङ्गलम-
न्दिर खासा ॥ सर्व मनोरथ सिद्धि प्रकासौ । अर्थ सुलाम प्रजा-
जुत भासौ ॥ १२४ ॥ भूमि मिलौ रनमें जय पावै । उद्यममें बहु
लच्छि कमावै ॥ बांधव मित्रनसों अति नेहं । रोपत है वरधर्म सु-
गेहं ॥ १२५ ॥ आनन्द सर्व मविष्यति तोही । यों प्रतभासत है
सुनि मोही ॥ कारज सिद्धि समस्त तुमारा । सेवहु धर्म लहो भव
पारा ॥ १२६ ॥

हंहंत । हं जुग अन्ततकार दिखाई । उत्तम लाभ सबै तसु
भाई ॥ चाहत हौ परदेश पधारे । है तहं निद्धि मनोरथ प्यारे
॥ १२७ ॥ खेतो वानिजमें सब ठाई । सर्व फल मनवांछित भाई ॥
श्रीधनधान्य सुकंचन आदी । जे सुख संपति अर्थ अनादी ॥ १२८ ॥
ते सब तोहि मिलै मनमाने । देव गुह्यदमक्ति विधाने ॥ यों सुनि
चित्तबिषे धिर होई । श्रीजिनराज भजो भन खोई ॥ १२९ ॥

हंतअ । हंतअ वरन परै जय पासा । तो सुनि अर्थ प्रतच्छ
प्रकासा ॥ तें चितमें परसंपति चाहै । लोभ बढ़यो ताहि देखत का
है ॥ १३० ॥ तोष कियै धन प्रापति होई, वेद पुरान पुकारत योई ॥
लोभ निवारि करो सब चिंतं । भावि जु होय सो होवहि मिंतं ॥
॥ १३१ ॥ जाय वितीतै जय कछु काला । अर्थ सुलाभ तयै तुव
भाला ॥ यामैं संशय रंच न आनो । भाषत श्रीअरहंत प्रमानो ॥

हंतर । हंतर यों दरशावत आई । तो मनमें परवित्त बसाई ॥
चिंतत है सोई प्रापति होई । ताकरि संपति आनि मिलोई ॥ १३३ ॥
अर्थ समागम कीर्ति अनिया । प्रापति है तोहि सुन्दर विद्या ॥
जो कछु पूरब द्रव्य गंवायौ । सो सब आनि मिले मन भायौ ॥
॥ १३४ ॥ जो तुम कारज चेतहु प्यारे । सो सब होई सिद्धि
तुमारे ॥ यों जिय जानि तजो दुचित्ताई । सेवहु श्रीपरमात्म
जाई ॥ १३५ ॥

हंतहं । हं जुगके मधि होइ तकारं । तासु सुनो फल पूछन
हारं ॥ तो मनमें विपरीत लसो है । चोरि जूथकी ताप बसी है ॥
॥ १३६ ॥ ता करिके दुःख पाप सहै हो । लोकविपै अपकीर्ति
लहै हो ॥ नास भयो जसरास तुमारो । यों लघु सीख सुनो उर
धारो ॥ १३७ ॥ अन्य कछु करतव्य विचारो । तामहं वांछित
सिद्ध तुमारो ॥ अर्थ बढ़ै धन धर्म बढ़ाई । यों दरसावत श्रीगुरु
भाई ॥ १३८ ॥

हंतत । हंतत भाषत उत्तम तोही । जो मन वांछहु होवहि
सोही ॥ मंगल धाम मिले धन धान्यं । जाहु विदेश तहां बहु

माल्यं ॥ १३६ ॥ मंत्र सु जंत्ररु भेष जताहं । सैन्य सुथंभन मोहन
भाई ॥ और जिती जगमें घर विद्या । तोहि मिलै भ्रम त्याग
निषिद्या ॥ १४० ॥

अथ तकारादि चतुर्थ प्रकरण ।

तअअ । जहं तअअ वरन पासा ढरंत । तहं सुनि पूछक जो
फल कहंत ॥ जो करहु देव पूजा पुनोत । तो पैहो अभिमत फल
बिनीत ॥ १४१ ॥ सुन पोत्र सुखद धन धान्य लाहु । यह मिलै
तोहि वांछित उछाहु ॥ व्यापारमाहिं बहु मिले दवं । अरु जून
विजय नै लहै सर्व ॥ १४२ ॥ यामें मति चिन्ता मानु मित्त । निज
इष्ट देव पद भजहु नित्त ॥ विन पुन्य नहीं सुख जगत माहिं ।
जिमि बीज बिना नहिं तरु लगाहिं ॥ १४३ ॥

तअर । जब तअर प्रगट होवे सुजान । तब मध्यम फल जानो
निदान ॥ चित चाहहु चनिता पुरुष आदि । सो आस तजहु सुनि
भेदवादि ॥ १४४ ॥ निजभावीवश ये मिलहि सर्व । परिवार कुटुं-
बादिक सुदर्व ॥ पहिले जो कछु धन भयो हान । सोऊ न मिले
अब ही सयान ॥ १४५ ॥ कछु काल व्यतीत भये समस्त । है
अथ लाभ तुमको प्रशस्त ॥ यह जान हिये निरधारवीर । भजि
श्रीपति पद सब टरे पीर ॥ १४६ ॥

तअहं । तत्ता अकार हंकार आय । हे पूछक तोसों इमि कहाय ।
दिनरात तोहि धनहेत चाह । मनमें यह वर्तत है कि नाह ॥ १४७ ॥
सो पुन्य बिना कहु केम होय । हैं दिन तेरे अति नष्ट जोय ॥ कछु
दिवस बितीत भये प्रमान । धनलाभ होय तोको निदान ॥ १४८ ॥

तातैं जो सुख चाहहु विनीत । तो पुन्यहेत कर जतन मात ॥

जिनराजपदाम्बुजभृंग होय । अनअन्य शरण हूँ सेव सोय ॥

तअत—यह तअत कहत फल प्रगट आय । सुनि पूछक तैं मन मुदित काय ॥ मन वांछित हौ सो होय सिद्ध । परदेशतीर्थ-यात्रा प्रसिद्ध ॥१५०॥ इक मास व्यतीत भये प्रमान । तोहि अर्थ परापत हूँ सुजान । अरु तन निरोगजुत पुष्ट होय । आनंद लहै संशय न कोय ॥ १५१ ॥

तरअ—यह तरअ कहत डंका बजाय । धनचिन्ता तेरे मन बसाय । तैं कीन चाहत परदेश गौन । यह जातहि कारज सिद्ध तौन ॥ १५२ ॥ बहु वस्त्र आभरन अथे आद । तिय तनय लाभ हूँ हे अवाद् ॥ पितु मातु बंधुसों मिलन होय । यह गुरुसेवा फल जान सोय ॥ १५३ ॥ तातैं नित प्रति हे चतुर जीव । सुखकारन सेवो प्रभु सदीव । कल्याणखान भगवान एक । तिनको सुमिरो तजि कुमति टेक ॥ १५४ ॥

तरर—यह तरर प्रकाशत प्रगट मित्त । सुनि पूछक तुव चित दुखित नित्त ॥ तुव घर दग्धि अति ही दिखाय । तातैं नित चाहत धन उपाय ॥ १५५ ॥ निशिवासर चिन्ता यही तोहि । किहि भांति होहि धनलाभ मोहि । वह तीन वरप जब बीत जाय । तब सब सुन्दरफल तोहि मिलाय ॥१५६॥ जो और काज मद धरहु तौन । हूँ लाभ तासुमहं सुजसमौन । तातैं जो सुखकी धरहु चाह । तो नाहिं जिनेसुर सो निवाह ॥ १५७ ॥

तरहं—तरहं अक्षर भाषत प्रतच्छ । कल्याणसंपदा स्वच्छ

लच्छ ॥ सब विघ्न निघ्न पलमाहिं होय । जिन धर्म प्रभाव सुजान
 सोय ॥ १५८ ॥ अरथागम अरु वर पुत्र होय । रनमहं तोहि जीति
 सकैं न कोय । बांधवसह प्रीति बढ़ै अपार । घरमें नहिं कलु
 विग्रह लगार ॥ १५९ ॥ सब पापताप तेरो विलाय । नित धर्म
 बढ़ै आनंददाय । तातैं सुखहित हे चतुरजोव । भगवान चरन
 सेवो सदीव ॥ १६० ॥

तरत—यह तरत कहत फल सुन विनीत । तुत्र मन धनका-
 रन दुखित मीत । बहु दिनते सोव रहत शरीर । मन समाधान
 अब करहु बीर ॥ १६१ ॥ मङ्गलमुदजुत धनलाभ होय । प्रियबंधुस-
 मागम सहज सोय । परदेशगमन जो करहु तत्र । धनलाभ होहि
 सुखदाय जत्र ॥ १६२ ॥ वादानुवादमें विजय जान । हूँ सम्भशिर-
 मणिशशि समान । यह मङ्गलोक शुभ सगुनराज । ते जपि नित
 श्रीजिनमहाराज ॥ १६३ ॥

तहंअ—त वरनपर हं तापर अकार । जब प्रगटै तब सुनिये
 विचार । सब विघ्नमूल सङ्कट नशाय । जहं जाहु तहां वांछिते
 मिलाय ॥ १६४ ॥ धन धान्य वसन गो महिषि घोड । सब मिलहि
 तोहि हितहेत जोड । जात्रा तीर्थ परदेश सार । रनरङ्ग शैल अरु
 उदधिपार ॥ १६५ ॥ जहं जाहु तहां सब सुफलकाज । मनमें संदेह
 न करहु आज । यह पुन्यकल्पतरु फल सुआन । भजि चरणकमल
 करुनानिधान ॥ १६६ ॥

तहंर—त वरनपर हं तापर रकार । ताको फल कटुक सुनो
 विचार । हूँ दुःखक्लेश पुनि अर्थहानि । भयरोगव्याधि उपजै

निदान ॥१६७॥ सुत मित्र वियोग अशुभनियोग । पुनि जैहौ कहु
तहं विपतभोग । तुव सदनमाहिं वरतत कलेश । कलिहारी नारी
कुटिलभेश ॥१६८॥ यह पाप तोहि दुख देत आय । अब तोप गहो
मनवचनकाय । अरहन्तदेवसों करहु प्रीति । जिमि मिले सकल
सुख सहजरीति ॥१६९॥

तहंहं—तत्तापरहं हं ढरै आय । तब सुनि पूछक फल चित्त
लाय । रनजूतविवादविपै कदाप । मति जाहु केवली कहत आप
॥ १७० ॥ तहं गये हानि हूँ विजय नाहिं । है कलेशकठिन निहचै
कहाहिं । यह दैवीदोष लसै सुजान । धर्मार्थवस्तुको करत हान
॥ १७१ ॥ उद्वेग कलह तुव सदनमाहिं । सुन बंधु मित्र अरि सम
लखाहिं । सब पाप उदय यह जानि लेहु । दुख हेत धरमसो करहु
नेहु ॥१७२॥

तहंत—तत मध्य परै हंकार पास । तब मध्यम प्रश्न करे
प्रकाश । जो मनमें बांछा करहु मित्त । नहिं सिद्ध होइ सा कुदिन
कित्त ॥ १७३ ॥ मति खेद करो अघउदय जान । भावोगत अमिट
प्रबल प्रमान । मति मरन चेत जड़बुद्धि त्याग । सुख चहसि तु
करि प्रभुसों सुराग ॥१७४॥

ततअ—जब ततअ बरन प्रगटै अकोप । तब शुभफल कहत
निशान रोप । तोहि महा सौख्यको लाभ होय । धनधान्यसमागम
मिलै सोय ॥१७५॥ राजा दे वसनाभरन घोट । व्यापारमाहिं धन
लाभ पोड । दुहिता विवाह सुतजनम संग । मङ्गल सब तोकहं है
अमङ्ग ॥१७६॥

ततर—यह ततर घरन पासा भनंत । आनन्द सदा ध्रुव
तोहि सन्त । सुत बंधु धरा धनधान्यलाह । परदेश जाहु तहं आत
उछाह ॥१७७॥ बहु मित्रबन्धुसों होय प्रीति । भय शत्रुजनित सब
है वितीत । गो महिष अश्व द्वारे बन्धाय । यामें न मोहि संशय
दिखाय ॥१७८॥

ततहं । ततहं अक्षर तोहि कहत एहु । भो पूछक तू उद्य-
म करेहु । तहं होहि लाभ तोको प्रसिद्धि । चितचिन्तित सब विधि
होय वृद्धि ॥ १७९ ॥ तीरथ हिण्डन पूजन विधान । सब है है तेरे
मनसमान । रोगीको रोग विनाश होय । भोगीको भोग मिलै सु
जोय ॥१८०॥ मनमें मति खेद करो पुमान । तोहि होय सकल क-
ल्याणखान । नित देवधर्म गुरु ग्रन्थ सेव । मनवांछित सुखसंपदा
लेव ॥१८१॥

ततत । तीनों तकार जब उदय होय । तब अकल सकल
फल कहत सोय । मनवांछित कारज सिद्ध जानि । कल्याणकारनी
प्रश्न मानि ॥१८२॥ घर पुत्र पौत्रको जनम होय । धन आगम सुखद
विवाह सोय । पहिले जो अरथ गयो विनास । सो आन मिलै अ-
नयास पास ॥ १८३ ॥ बैरीको बैर मिटै समस्त । तोहि मिलहि
मित्र बांधव प्रशस्त । नित धर्मवृद्धि है हे सयान । सर्वथा जान
संशय न आन ॥१८४॥

कविनामकुलनामादि ।

दोहा—लालविनोदीने रची, संस्कृतवानीमाह ।

वृन्दावन भाषा लिखी, कछु एक ताकी छाह ॥१८५॥

भूल चूक उर छिमा करि, लीजो पण्डित शोध ।

बालबुद्धि मोहि जानिकै, मति कीजो उर कोध ॥१८६॥

श्रोमन्तवीरजिनेशपद, बंदों बारम्बार ।

बिघ्नहरन मंगलकरन, अशरन शरन उदार ॥१८७॥

धरमचंद के नन्दको, वृन्दावन है नाम ।

अग्रवाल गोती जगत, गोइल है सरनाम ॥१८८॥

काशीवासी तासुने, भाषा भाषी एह ।

जिनमतके अनुसार कारि, श्रीजिनवरपदनेह ॥१८९॥

सम्बतसर विक्रमविगत, चन्द रन्ध्र दिग चन्द ।

माघकृष्ण आठें गुरू, पूरन जयतिजिनंद ॥१९०॥ ॥ इति ॥

८६ श्रीसम्मेदशिखरमाहात्म्य

दाहा ।

स्वयंसिद्ध परमात्मा, सहजसिद्ध हैं सार ।

तिनको बंदों भावसों, निश्चय करि निरधार ॥१॥

बैरभाव सब छोड़करि, निजस्व-भावमें लीन ।

होय होय मुकती गये, समझ देख परवीन ॥२॥

सब तीर्थनमें सार है, श्रीसमेदगिरिराज ।

बोस जिनेश्वर और बहु, मोक्ष गये मुनिराज ॥३॥

ताकी कथनी वारता, जिन अगम अनुसार ।

कहता हूं कुछ वचनसों, सुनहु भविकजन सार ॥

इस मध्यलोकमें एक लाख योजनका जम्बूद्वीप है, उसके बीचमें एक सुदर्शन मेरु है, उसकी दक्षिण दिशामें एक भरतनामक क्षेत्र है, उसमें छह खंड हैं उनमें यह आयेखण्ड अधिक प्रसिद्ध है, मगधदेशकी राजगृह नगरीमें एक श्रेणिक नामका राजा अपनी रानी चेलना सहित राज्य करता था ।

राजगृही नगरीके पास विपुलाचल, उदयगिरि, सोनागिरि, रतनागिरि और विहारगिरि नामके पांच पर्वत हैं, विपुलाचल पर्वत-पर श्री १००८ महावीर भगवानका समवसरण आया, वनमालीने राजाके समीप जाकर निवेदन किया कि, महाराज ! विपुलाचल-पर त्रिलोकीनाथ वर्द्धमान भगवानका समवसरण आया है, सुनकर राजा इतना प्रसन्न हुआ कि उसने अपने शरीरपरके सर्व आभूषण उतारकर मालीको दे दिये, और सिंहासनसे उतरकर सान पैड़ (कदम) परवतको ओर चलकर साष्टांग नमस्कार किया और शहरमें घोषणा करा दो कि, महावीर भगवानका समवसरण आया है इसलिये सब लोग दर्शन पूजनके लिये चलो और आप स्वयं भी हाथीपर आरूढ होकर बन्दनाके निमित्त चला, दूरहीसे समवसरण देख हाथीसे उतर पड़ा पश्चात् समीप जाकर भावपूर्वक बन्दना की मनुष्योंके कोठेमें बैठकर भगवान्की दिव्यध्वनि द्वारा धर्मामृतका पान किया, तत्पश्चात् अवसर पाकर हाथ जोड़ खड़ा होकर पूछा, भगवन् ! श्रीऋषभदेव, अजितनाथ आदि तीर्थ-ङ्कर किस क्षेत्रसे मोक्षको प्राप्त हुए हैं और आपका निर्वाण कहाँ-से होगा ? इसके सिवाय पूर्वकालमें जो अनन्तानन्त चौबीसी मोक्ष गई हैं, सो किन २ क्षेत्रोंसे गई हैं, भविष्यमें अनन्तानन्त

तीर्थङ्कर मोक्ष जावेंगे, सो किस क्षेत्रसे जावेंगे ? सो उन तीर्थङ्करोंके मध्यवर्ती समयमें कौन २ मुक्ति गये हैं, चौबीस तीर्थङ्कर जिस क्षेत्रसे मोक्ष जाते हैं, उस क्षेत्रके दर्शनसे क्या फल होता है और आगे ऐसी यात्रा किस २ ने की है, तथा उन्हें क्या २ फल मिले हैं, इन सब प्रश्नोंके उत्तर आप कृपा करके विस्तार पूर्वक कहिये। यह सुनकर भगवान्की दिव्यध्वनि हुई कि, राजा श्रेणिक ! तुमने बहुत अच्छे प्रश्न किये अब तुम उनका उत्तर चित्तको समाधान करके सुनो।

पूर्वकालमें अनन्तानन्त चौबीस तीर्थङ्कर श्रीसम्मेदशिखरपर्व-तपरसे मोक्षको प्राप्त हुए हैं और आगे (भविष्यमें) भी जो अनन्तानन्त चौबीस तीर्थङ्कर होंगे, वे श्रीसम्मेदशिखरसे ही मोक्ष जावेंगे। इसी प्रकार चौबीसों तीर्थङ्करोंका जन्म भी श्रीअयोध्यानगरीमें होता है, और होवेगा परन्तु वर्तमानकालमें केवल २० ही तीर्थङ्कर इस सम्मेदशिखरसे मोक्ष गये हैं, क्योंकि श्रीऋषभदेव कैलास पर्वतसे, वासुपूज्य चम्पापुरसे तथा नेमिनाथ गिरनारसे मोक्ष जा चुके हैं, और हम पावापुरीसे मोक्ष जावेंगे, शेष बीस तीर्थङ्कर सम्मेदशिखरजीसे निर्वाण प्राप्त हुए हैं इसी प्रकारसे वर्तमानकालमें अयोध्यानगरीमें केवल ५ तीर्थङ्करोंका जन्म हुआ है शेष १९ का अन्यान्य नगरियोंमें हुआ है।

यह सुनकर राजा श्रेणिकने पूछा भगवन् !
ऐसा होनेका क्या कारण है एक ही स्थानमें जन्म और एक ही स्थानमें मोक्ष होनेका जो नियम है, उसका भङ्ग क्यों हुआ ?

भगवान् ने उत्तर दिया, कि—राजन् ! वह एक कालका दोष है अनन्तानन्त कोड़ाकोड़ी उत्सर्पिणीकाल व्यतीत होनेपर कोई एक ऐसा ही काल आ जाता है, जिसमें इस नियमका उल्लंघन हो जाता है अर्थात् उसके प्रभावसे अनेक तीर्थङ्करोका जन्म और निर्वाण अन्य २ स्थानोंसे हो जाता है। ऐसे कालको हुंदावसर्पिणी कहते हैं, इस विषयमें तुम कुछ संदेह मत करो यथार्थमें सौवीसों तीर्थङ्करोकी जन्मभूमि अयोध्या है और निर्वाणभूमि श्रीसम्मेशिखरजी ही है।

राजा श्रेणिक—भगवन् ! आपने जिस प्रकार कहा, वही सत्यार्थ है, अब कृपा करके यह बतलाईये कि, श्रीरूपभदेवसे लगाकर आप तकके निर्वाण क्षेत्रोंकी बन्दनाका फल क्या है, और शिखरजीकी यात्रा करके आगे किस २ को क्या २ फल मिले तथा आगे क्या २ मिलेंगे ?

वीरभगवान्—हे राजन् ! कैलास पर्वतसे दस हजार मुनि मोक्षको प्राप्त हुए हैं, और श्रीसम्मेशिखरजीपर बीस टोंकें हैं उनमेंसे सिद्धवरकूटसे श्रीअजितनाथ तीर्थंकर एकअरब अस्सीकरोड़ चोवनलाख एक हजार मुनियोंसहित मोक्ष गये हैं, इस टोंककी बन्दनाका फल बत्तीस करोड़ उपवासके बराबर है, दूसरे धवजदत्त कूटसे संभवनाथ तीर्थंकर नौ कोड़ाकोड़ी बहत्तरलाख ब्यालीस हजार पांचसौ मुनियोंसहित मोक्ष पधारे हैं, इसकूटके दर्शन करनेका फल ब्यालीस लाख उपवास करनेके बराबर है, तीसरे आनन्द कूटसे श्रीअभिनन्दन तीर्थंकर

तीस कोड़ाकोड़ी सत्तर करोड़ सत्तर लाख बियालीस हजार सात सौ मुनियोंकेसहित निर्वाण प्राप्त हुए हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक लाख उपवासके फलके तुल्य है। चौथे **अविचलकूटसे** सुमतिनाथ तीर्थकर एक कोड़ाकोड़ी चौरासी करोड़ बहत्तरलाख इक्कीसी हजार सात सौ मुनियोंसहित मोक्ष पधारे हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके समान है। पांचवें **मोहनकूटसे** पद्मप्रभ तीर्थकर निन्यानवे कोड़ाकाड़ी सत्तानवे करोड़ सत्तासी लाख बियालीस हजार सातसौ मुनिसहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। इस कूटके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके तुल्य है। छठे **प्रभास कूटसे** सुपाश्वेनाथ तीर्थकर चौरासी कोड़ाकोड़ी चौरासी करोड़ बहत्तर लाख सात हजार सात सौ ब्यालीस मुनिसहित मुक्ति गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल बत्तीस कोड़ाकोड़ी उपवासके बराबर है। सातवें **लालितकूटसे** चन्द्रप्रभ तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। इनके सिवाय वहांसे चौरासी अरब बहत्तर करोड़ अस्सीलाख चौरासी हजार पांच सौ पचपन मुनि और भी मुक्ति गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल सोलहलाख उपवासके तुल्य है। आठवें **सुप्रभ कूटसे** श्रीपुरुषदत्त तीर्थकर हजार मुनिसहित मुक्ति पधारे हैं तथा निन्यानवें करोड़ नव्वेलाख सात हजार चार सौ अस्सी मुनि और भी वहांसे मुक्ति गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवासके बराबर है। नववें

विद्युतवर कूटसे शीतलनाथ तीर्थकर एक हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं और भी वहांसे अठारह कोड़ाकोड़ी बियालीस करोड़ बत्तीस लाख बियालीस हजार नौसे पांच मुनियोंने मुक्ति पाई है। इस कूटके दर्शनका फल भी एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। दशवें **संकुल** कूटसे श्रेयांसनाथ तीर्थकर एक हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं और तथा छयानवे कोड़ाकोड़ी छयानवें करोड़ छयानवें लाख नवहजार पांचसौ बियालीस मुनियों और भी वहांसे मुक्ति पाई है। इसकूटके दर्शन करनेका फल भी एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है।

चंपापुरसे वांसुपूज्य तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष पधारे हैं। सम्मेदशिखरके ग्यारहवें **वरिसंवल** कूटसे विमलनाथतीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं। और छह हजार छहसौ तथा सत्तर कोड़ाकोड़ी साठ लाख छह हजार सात सौ बियालीस मुनि और भी मुक्ति गये हैं। इसकूटके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। बारहवें **स्वयंभू** कूटसे अनंतनाथ तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं। इनके सिवाय पचहत्तर हजार, सातसौ तथा छयानवे कोड़ाकोड़ी सत्तर लाख सत्तरहजार सात सौ मुनि और भी मोक्ष गये हैं। इस कूटके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके तुल्य है। तेरहवें **सुदत्तवर** कूटसे धर्मनाथ तीर्थकर आठसौ एक मुनिसहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। तथा इसी कूटसे उन्नीस कोड़ाकोड़ी उन्नीस करोड़ नौ लाख नौ हजार सात सौ पंचानवे मुनि और भी मुक्ति

हुए हैं, दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है, चौदहवें **शान्तिप्रभ** कूटसे श्रीशान्तिनाथ तीर्थकर नौ सौ मुनिसहित मुक्तिधामको गये हैं, तथा इसी कूटसे नौ सौ कोड़ा-कोड़ी छयानवै करौड़ बत्तीस लाख छयानवै हजार सात सौ बियालीस मुनियोंने और भी पंचमगति पाई है। इसके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। पन्द्रहवें **ज्ञानधर** कूटसे कुंधुनाथ तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष पधारे हैं। तथा छयानवै कोड़ाकोड़ी छयानवै करौड़ बत्तीसलाख छयानवै हजार सात सौ ब्यालीस मुनि और भी मोक्षधामको गये हैं। दर्शनकरनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है। सोलहवें **नाटक** कूटसे अरुनाथ तीर्थकर हजार मुनिसहित मोक्ष गये हैं, तथा निन्यानवै करौड़ निन्यानवै लाख निन्यानवै हजार मुनियोंने और भी मुक्ति लक्ष्मी प्राप्त की है। इस कूटके दर्शन करनेका फल छयानवै करौड़ उपवास करनेके बराबर है। सत्रहवें **संवलकट**से श्रीमल्लिनाथ तीर्थकर पांच सौ मुनियोंके सहित मुक्ति गये हैं। तथा छयानवै करौड़ मुनि औरभी वहांसे परमपदको प्राप्त हुए हैं। इसका दर्शन करना एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है, अठारहवें **निर्जर** कूटसे मुनिसुव्रतनाथ तीर्थकर हजार मुनि सहित मुक्त हुए हैं तथा निन्यानवै कोड़ाकोड़ी, सत्तानवै करौड़ नौ लाख नौ सौ निन्यानवै मुनि औरभी वहांसे मुक्त धामको गये हैं। इस टोंकके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके समान है। उन्नीसवें

मित्रधर कूटसे नमिनाथ तीर्थकर हजार मुनिसहित निर्वाण प्राप्त हुए हैं, तथा नौ सौ कोड़ाकोड़ी पैतालिस लाख सात हजार नौ सौ बियालीस मुनि औरभी कमोंसे छूटे हैं। इस टोंकके दर्शनका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है।

गिरनार पर्वतसे श्रोनेमिनाथ तीर्थकर पांच सौ छत्तीस मुनि सहित मोक्ष प्राप्त हुए हैं। तथा बहत्तर करोड़ सात सौ मुनि और भी गिरनार पर्वतसे मुक्त हुए हैं।

सम्मेशशिखरके बोंसवें सुवर्ण भद्रकूटसे श्रोपाश्वनाथ तीर्थकर पांच सौ छत्तीस मुनिसहित परमधामको सिधारे हैं। तथा चौरासी लाख मुनि और भी वहांसे मुक्त गये हैं। इस कूटके दर्शन करनेका फल एक करोड़ उपवास करनेके बराबर है।

इसके पश्चात् श्रोगौतमगणधर बोले, हे राजन् ! ये महावीर भगवान् पावापुरीके पद्मसरोवरमेंसे छत्तीस मुनियोंके सहित मोक्ष जावेंगे। तथा शिखरजीकी जिन्होंने पूर्वकालमें यात्रा की है, उनमेंसे थोड़ेसे नाम मैं कहता हूं। सगर, सागर, मघवा, सनत्कुमार, आनन्द, प्रभसेन, ललितदंत, कुंदसेन, सेनाइत्त, बरदत्त, सोमप्रभ, चारुसेन, आदि इनके सिवाय और भी हजारों राजाओंने यात्राकी है, परन्तु उनमेंसे दर्शन केवल उन्हींको हुए हैं, जो भव्य थे, अभव्योंको दर्शन नहीं मिलते।

श्रेणिक—हे भगवन् ! शिखरजीकी यात्रा करनेका फल जो कुछ आपने कहा, सो तो यथार्थ है परन्तु उससे अधिक तथा सम्पूर्ण फल और क्या है, वह कृपा करके कहो।

गौतमस्वामी—हे राजन् ! शिखरजीकी यात्रा करनेवाला फिर संसारमें अधिक नहीं भटकता । उनचास भव लेकर वह जीव पचासवें भव अवश्य ही सिद्धस्थानमें जाकर अजर अमर अखंड सदा जागती जोत होकर अचल रहता है, यह नियम है । इसके सिवाय यात्रा करनेवाला नरक तिर्यच गतिमें तथा स्त्रीप-र्यायमें भी जन्म नहीं लेता ।

श्रेणिक—यदि ऐसा है, तो भगवन् रावणने शिखरजीकी यात्रा की थी, फिर उसे नरकगति क्यों प्राप्त हुई ?

गौतम ०—रावण शिखरजीकी यात्रा करनेके लिये नहीं किन्तु त्रैलोक्यमंडल हाथीको पकड़नेके लिये मधुवन गया था । इसलिये वह यात्राके फलका भागी न हो सका ।

श्रेणिक—भगवन् ! यदि कोई बिना भावसे शिखरजीकी यात्रा करे, तो उसकी नरक तिर्यच गति छूटे कि नहीं ?

गौतम ०—राजन् ! जिस प्रकारसे बिना भावसे खाई हुई मिश्री मीठी लगती है, और दवाई रोगको शांत करती है, उसी प्रकारसे बिना भावसे की हुई यात्रा भी ऐसा नहीं है कि, फलवती न हो ।

श्रेणिक—भगवन् ! आपने कहा कि, भव्यको यात्रा होती है, परन्तु अभव्यको नहीं होती, सो यह बतलाइये कि, खास शिखरजीमें भीलादिक तथा पृथ्वी जल वनस्पति एकेन्द्रियादिक जीव राशि हैं, वे सब भव्य हैं अथवा अभव्य ?

गौतम०-सम्मेदशिखरपर जितने जीवराशि हैं, वे सब भव्यराशि हैं ।

श्रेणिक-भव्य किसे कहते हैं ?

गौतम०-जिस जीवको जिनेन्द्रके वचनोंमें भ्रम उत्पन्न न हो, उसे भव्य कहते हैं ।

इस प्रकार राजा श्रेणिक श्रीसम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्रका माहात्म्य सुनकर बहुत आनन्दित हुआ और अपनी रानी चेलना सहित यात्राके लिये चला परन्तु ज्यों ही पर्वतके निकट पहुंचा । त्यों ही वहांके निवासो दशलाख व्यन्तर देवोंने चारों ओर घोर अन्धकार कर दिया । धूलवृष्टि, मेघ गर्जन, पाषाणवृष्टि आदि अनेक प्रकारके और भी विघ्न किये तब रानी चेलणाने समझाया नाथ ! आपको यात्रा नहीं होवेगी क्योंकि जिस समय आपने दिगम्बरमुनिराजके गलेमें मरा हुआ सर्प डाला था, उसी समय आपको नरक गतिका यध पड़ चुका है । इसलिये इस पर्यायमें तीर्थराजके दर्शन होना असम्भव है । यह सुनकर राजा अपने कर्म्मोंकी गति जानकर अपने नगरको लौट गया ।

दोहा—सिद्ध क्षेत्र सुप्रसिद्ध है, जिन आगममें सार ।

धर्मदास क्षुल्लक कहै, श्रीसम्मेदगिरि पार ॥ १ ॥

ताकी कथनी वारता, कह गये श्रीमुनिराज ।

अथ ताहीकी वचनिका, यह कोनी निज काज ॥ २ ॥

६० मोहरस स्वरूप ।

भव वन भटकत पथिकजन, हाथी काल कराल । पीछे लागो

ह। दुःखित, पड़ो कूप विकराल ॥ पकड़ शाख वट वृक्षको, लटको
मुंह फैलाय ॥ ऊपर मधु छत्ता लगा, पड़ो बूंद मुंह भाय ॥ निश
दिन दो चूहे लगे, काटत आयू डाल ॥ नीचे अजगर फाड़मुख है
निगोद भव जाल ॥ चार सर्प चारों गती, चारों ओर निहार ॥ है
कुटुम्ब माखी अधिक, चाटत तन हर चार ॥ श्री गुरु विद्याधर
मिले, देख दुःखी भव जीव ॥ हो दयाल ढेरत उसे, मत सह दुःख
अतीव ॥ बून्द मधू है विषय सुख, ताके लालच काज । मानत नहीं
उपदेशको, कर रह्यो आत्म अकाज ॥ आयु डाल कुछ कालमें कट
जावेगी हाय । नीचे पा बहु काल लों, भुगते फल दुःख दाय ॥

६१ लेश्या स्वरूप

माया क्रोधरु लोभ मद है कषाय दुःखदाय, तिनसे रंजित
भाव जो, लेश्या नाम कहाय ॥ पट लेश्या जिनवर कही, कृष्णनील
कापोत ॥ तेज पद्म छट्टी शुक्ल, परिणामहिं ते होत । कठियारे पट
भाव धर लेन काष्ठको भार । वन चाले भूखे हुए, जामन वृक्ष
निहार ॥ कृष्ण वृक्ष काटन चहे, नील जु काटन डाल, लघु डाली
कापोत उर, पीत सब फल डाल । पद्म चहे फल पक्वको, तोड़
खाऊं सार शुक्ल चहे धरती गिरे, लूं पक्के निरधार ॥ जैसी जिसकी
लेश्या, तेसा बांधे कर्म, श्रीसद्गुरु संगति मिले, मनका जावे भर्म ॥

६२ कुदेकादिकी भक्तिका फल

अन्तर बाहर ग्रन्थ नहीं, ज्ञान ध्यान तप लीन । सुगुरु बिन
कुगुरु नमें पड़े नर्क हो दीन ॥ दोष रहित सर्वज्ञ प्रभु, हित उपदे-
शी नाथ । श्री अरहन्त सुदेव हैं, तिनको नमिये माथ ॥ राग दोष

मल कर दुःखी, हैं कुदेव जग रूप, तिनकी वन्दन जो करें, पड़े नक भव कूप ॥ आत्म ज्ञान वैराग्य सुख, दया क्षमा सुत शील । भाव नित्य उज्ज्वल करै, है सुशास्त्र भव कील ॥ राग द्वेष इन्द्री विषय, प्रेरक सर्व कुशास्त्र, तिनको जो वन्दन करें । लहे नक बिट गात्र ॥

६३ भोजन की प्रार्थनाएँ

(प्रातःकालके समय)

परमेश्वरी सुमरण कर हम सब बालक गण नित उठा करें, स्वस्थ होय फिर देव धर्म गुरु, की स्तुति सब किया करें । करना हमें आज क्या क्या है । यह विचार निज काज करें । कायिक शुद्धि किया करके फिर जित दशन स्वाध्याय करें । मौन धार कर तोषित मनसे श्रुधा वेदना उपशम हित, विघ्न कमके क्षयोपशमसे, भोजन प्राप्त करें परिमित । हे जिन हो हित कर यह भोजन तन मन हमरे स्वस्थ रहें । आलस तज कर दीप उमंगसे निज पर हित में मगन रहें ॥

(सन्ध्या समय)

जय श्री महावीर प्रभुको कह, अरु निज कर्त्तव्य पूरण कर, सन्ध्या प्रथम मौन धारण कर भोजन करें शान्त मन कर । परिमित भोजन करें ताकि नहिं आलस अरु दुःस्वप्न दिखें ॥ दीप समय पर प्रभु सुमरण कर सोचें जगें स्व कार्य लखें ॥

६४ शिक्षित माताका पुत्रीको उपदेश

अज्ञ हुई मेरी बेटी परार्थ, सास समुर घर जाना होगा । टेक।

सास ससुर परिजनकी सेवा, पति पूजा चित लाना होगा । आज हुई० ॥ १ ॥ धर्म करमका साधन निशदिन, नारा धर्म निभाना हांगा । आज हुई० ॥ २ ॥ पहिले उठना, पीछे सोना, दिन भर हाथ हिलाना हांगा । आज हुई ॥ ३ ॥ भोजनकी विधि सोच समझ कर, पानी छान वरतना होगा । आज हुई० ॥ ४ ॥ लोभ, मान अरु माया, ममता काधकी आग बुझाना होगा । आज हुई० ॥ ५ ॥ कुछ मर्यादा नहिं विसरना, लाज शर्म मन भाना होगा । आज हुई० ॥ ६ ॥ धन दौलतका गर्व गमाकर, अन धन दान दिलाना होगा । आज हुई० ॥ ७ ॥ वस्त्रा-भूषण गहना गांठा, इनका हठ नहीं करना होगा । आज हुई० ॥ ८ ॥ आमदसे खर्च उठाकर, दुःख निवारण करना होगा । आज हुई० ॥ ९ ॥ शाल रतनको घटमें धरकर पंचाणुव्रत धरना होगा । आज हुई० ॥ १० ॥ क्राधित हाथ पती जो कदाचित्, भाव विनीत बताना होगा । आज हुई० ॥ ११ ॥ विद्या पढ़कर निज हित करना, देव धर्म गुरु लखना होगा । आज हुई० ॥ १२ ॥ धर्म नारिका ग्रन्थनमें, जो ताही धर शिव पाना हांगा । आज हुई० ॥ १३ ॥ बालक को शिक्षा मन धर कर, घर घर मंगल गाना होगा । आज हुई मेरी बेटी पराई सास ससुर घर जाना होगा ॥ १४ ॥

६५ किसका जन्म सफल है ?

चाल गजल (न छोड़ो हमें हम सताये.....)

जो जिनराजसे प्रीति लाये हुये हैं । वो फल जिन्दगीका उठाये हुये हैं ॥ टेर ॥ निरखते जो मूर्त परम वीतरागो । वो

बैराग्यता दिलमें लाये हुये हैं ॥ १ ॥ समझते हैं संसारको झूठा सपना । जो जिनदेवसे लो लगाये हुये हैं ॥ २ ॥ न यां पर खतर है न आगे का डर है । जो निज रूपमें रूप लाये हुये हैं ॥ ३ ॥ जिनेश्वरकी भक्ती हो जिस दिलमें हरदम । वह मुक्तोकी डिगरी लिखाये हुये हैं ॥ ४ ॥ मनुष्य जन्म “बालक” सफल है उन्हींका । जिनागमकी श्रद्धा जो लाये हुये हैं ॥ ५ ॥

१६ जीविक प्रति उपदेश ।

चाल —(लोजो लीजो खबरिया.....)

जिया भक्ती तू कर ले जिनवरकी तेरी करनी सफल हो भव भव की ॥ १ ॥ करनेसे घोर पाप आय नरकमें पड़े । शीत उष्ण भूख प्यास रोगसे सड़े ॥ जिया भक्तो० ॥ १ ॥ प्रपञ्चके रचे तिर्यच योनिको धरे । नाक कानको छिदा बन्धनमें पड़ मरे ॥ जिया भक्तो० ॥ २ ॥ शुभ कर्मके प्रसाद, स्वर्ग मांहि सुर हुवा । परके विभवको देख आप झूरना मुवा ॥ जिया भक्तो० ॥ ३ ॥ अति-पुण्यके प्रभावसे, नरभव रतन लहा । विषयोंके मांहि मत गवाँ तू मानले कहा ॥ जिया भक्तो० ॥ ४ ॥ निज रूाको विचारके नरभव-सफल करो । “बालक” प्रभूकी सीखधार मुक्तिको चरो ॥ ५ ॥ जिया भक्ती तू करले जिनवरकी तेरी करनी सफल हो भव भव की ॥

॥ प्रथम खण्ड समाप्त ॥

दूसरा खण्ड

पाँचवाँ अध्याय

{ १ } दुःख हरण विनती ।

श्रीपति जिनवर करुणा इतनी दुःख हरण तुम्हारा वाता है ।
मत मेरी बार अवार करो मोहि देहु विमल कल्याणा है ॥ टेक ॥
त्रैकाल्यक वस्तु प्रत्यक्ष लखो तुम सों कलु बात न छाना है ।
उर आरत मेरे जो वरने निश्चय सो तुम सब जाना है ॥ अब लोपो
व्यथा मत मौन गहौ नहीं मेरा कहीं ठिकाना है । हो राज विलो-
चन सीच विमोचन में तुम सों हित ठाना है । १ । सब ग्रन्थनमें
निग्रन्थनमें निर्धार यही गणधार कही । जिननायकजी सब लायक
हो सुखदायक क्षायक दान मई ॥ यह बात हमारे कान पड़ी जब
आन तुम्हारी शरण गही । मत मेरी बार अवार करो जिननाथ
सुनो यह बात सही । २ । काहू को भोगमनोग करो काहूको स्वग
विमाना है । काहूको नाम नरेशपती काहूको ऋद्ध निधाना है ॥
अब मो पर क्यों न कृपा करते यह क्या अंधेर जमाना है ॥ इन्साफ
करो मत देर करो सुखवृन्द भजो भगवाना है । ३ । दुःख कर्म मुझे
हेरान किया जब तुम सों आनि पुकारा है । समरत्थ सच्ची विधि
सो तुम हो तुम ही लग दौर हमारा है ॥ खल घायल पालक बालक
क्या नृप नीति यही जगसारा है ॥ तुम नीति निपुण त्रैलोक्यपती

तुम्हरी शरणागत धारा है ॥ ४ ॥ जबसे तुम से पहिचान भई तब से तुम ही को जाना है । तुम्हरे ही शासन का स्वामी हमको शरणा सरधाना है । जिन को तुम्हरो शरणागत है तिनको यमराज डराना है । यह सुयश तुम्हारे सांचे का यश गावत वेद पुराना है ॥ ५ ॥ जिसने तुमसे दिल दर्द कहा तिस का दुःख तुम ने हाना है । अघ छोटा मोटा नाश तुरत सुख दिया तिन्ह मन माना है । पावक से शीतल नीर किया अरु चीर किया अस्माना है । भोजन था जिसके पास नहीं सो किया कुवेर समाना है ॥ ६ ॥ चिंतामणि पारस कल्पतरु सुखदायक यह परधाना है ॥ तुम दरसन के सब दास यही हमरे मन में ठहराना है । तुम भक्तन को सुर इन्द्रपती फिर फिर चक्रवती पद पाना है । क्या बात कहों विस्तार बढ़े वे पावें मुक्ति ठिकाना है । ७ । गति चार चौरासी लाख विषें चिन्मूरति मेरा भटका है । हो दीनबन्धु करुणानिधान अवलों न मिटी वह छटका है ॥ जब योग मिलो शिव साधन को तब विघन कर्मने हटका है । अब बिघ्न हमारा दूर करो सुख देहु निराकुल घटका है । ८ । गज ग्राह ग्रसित उद्धार लिया अरु अंजन तस्कर तारा है । ज्यों सागर गोपद रूप किया मैना का संकट टारा है ॥ ज्यों शूलीसे सिंहासन और बेड़ी को काटि बिडारा है । त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोंको आश तुम्हारा है । ९ । ज्यों फाटक टेकत पांव खुला अरु सर्प सुमन कर डाला है । ज्यों खड्ग कुसुम का माल किया बालकका जहर उतारा है ॥ ज्यों सेठ विमति चक्र चूर पूर अरु लक्ष्मी सुख विस्तारा है । त्यों मेरा संकट दूर करो प्रभु मोंको आश तुम्हारा है । १० । यद्यपि तुम्हरे रागादि नहीं

और सत्य सर्वथा जाना है । चिन्मूरति आप अनन्त गुणी नित
शुद्धि दिशा शिव थाना है ॥ तद् भक्तनको भयभीत हरो सुख देत
तिन्हें जु सुहाना है । वह शक्ति अचिन्त्य तुम्हारेको क्या पावे पार
सयाना है । ११ । दुख खण्डन श्रीसुख मण्डनको तुम्हारा यश
परम प्रमाना है । वरदान दिया यश कोरतको तिहुँ लोक ध्वजा
फहराना है ॥ कमलाकरजी कमलाधरजी करिये कमला अमलाना
है । अब मेरी व्यथा अब लोपो रमापति रंच न वार लगाना है । १२ ।
हो दीनानाथ अनाथ ! हितू जिन दीनानाथ पुकारी है । उदयागत
कर्म विपाक हलाहल मोह व्यथा निरवारी है । तो और आप भव
जीवनको तत्काल व्यथा निरवारी है । वृन्दावन अब ये अर्ज करे
प्रभु आज हमारी बारी है । १३ ।

दोहा—प्रभु तुम दीनानाथ हो, मैं अनादि दुखकंद ।

सुनि सेवककी वीनती, हरो जगत दुख फंद ॥

(२) जिनेन्द्र स्तुति ।

गीता छन्द ।

मंगल सरूपी देव उत्तम तुम शरण्य जिनेशजी । तुम अधम
तारण अधम मम लखि मेट जन्म कलेश जी । टेक । तुम मोह
जीत अजीत इच्छातीत शर्मासृत भरे । रजनाश तुम वरभास दृग
नभ ज्ञेय सब एक उड़चरे ॥ रटरास क्षति अति अमित वीर्य
सुभाव अटल सरूप हो । सब रहित दूषण त्रिजग भूषण अज अमल
चिद्रूप हो । १ । इच्छा बिना भवभाग्य तँ तुम ध्वनि सुहोय निर-
क्षरी । षट द्रव्य गुण पर्यय अखिल युत एक क्षणमें उच्चरी ॥
एकान्त वादी कुमति पक्ष विलिप्त हम ध्वनि मद हरी रंशय तिमिर

हर रविकला भव शस्य कों अमृत भरो ॥ २ ॥ वस्त्राभरण विन
 शांति मुद्रा सकल सुरनर मन हरे । नाशाग्र दृष्टि विकार वर्जित
 निरखि छवि संकट टरे ॥ तुम चरण पंकज नख प्रभा नभ कोटि
 सूर्य प्रभा धरे । देवेन्द्र नाग नरेन्द्र नमत सुमुकुटमणि धुति विस्तरे
 ॥ ३ ॥ अंतर बहिर इत्यादि लक्ष्मी तुम असाधारण लसे । तुम
 जाप पाप कलापनासे ध्यावते शिव थल वसे मैं सेय कुदृग कुबोध
 अब्रत चिरभ्रमो भववन सवे ॥ दुख सहे सर्व प्रकार गिर समसुख
 न सर्पण सम कवे ॥ ४ ॥ पर चाह दाह दहो सदा कबहुं न साम्य
 सुधा चखो । अनुभव अपूरव म्यादु विन नित विषय रस चारो
 भखो ॥ अव बसो मो उर में सदा प्रभु तुम चरण सेवक रहों ।
 वर भक्ति अतिदृढ़ होहु मेरे अन्य विभव नहीं चाहों ॥ ५ ॥ एके-
 न्द्रियादिक अन्तर्गन्धक तक तथा अन्तर घनी । पाये पर्याय अनन्त-
 वार अपूर्व सो नहिं शिव धनी ॥ ससृज भ्रमण तें थकित लखि
 निज दासकी सुन लीजिये । सम्यक द्रश वर ज्ञान चारित पथ
 विहारी कीजिये ॥ ६ ॥

{ ३ } विनती भूकर कृत ।

गीता छन्द

पुलकंत नयन चकोर पक्षी हंसत उर इन्दीवरो । दुबुद्धि
 चकवी विलख बिछुड़ी निवड़ मिथ्या तम हरो ॥ आनंद अम्बुज
 उमग उछरो अखिल आतम निरदले । जिम बदन पूरण चन्द्र निर-
 खत सकल मन वांछित फले ॥ १ ॥ मुझ आज आतम भयो
 पावन आज विघ्न नशाइयो । संसार सागर तीर निवटो अखिल

तत्त्व प्रकाशियो ॥ अब भई कमला किंकरो मुझ उभय भव निर्मल
ठये । दुख जरो दुर्गति वास निवरो आज नव मंगल भयो ॥ २ ॥
मनहरण मूरति हेर प्रभुकी कौन उपमा ल्याइये । मम सकल तन-
के रोम हुलसे हर्ष और न पाइये । कल्याण काल प्रत्यक्ष प्रभुको
लखें जो सुर नर घने । तिस समयकी आनन्द महिमा कहत क्यों
मुखसे वने ॥ ३ ॥ भर नयन निरखे नाथ तुमको और बांछा ना
रहो । मम सब मनोरथ भये पूरण रङ्ग मानो निधि लही । अब
होहु भवभव भक्ति तुम्हरी कृपा ऐसी कीजिये । कर जोर भूधर-
दास विनवे यही वर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥ इति ॥

(४) विनतो भूधरदास कृत ।

अहो जगत भुव देव सुनिये अर्ज हमारी । तुम प्रभु दीन
दयालु मैं दुखिया ससारी ॥ १ ॥ इस भव वनके मांहि काल अनादि
गमायो । भ्रमत चतुर्गति मांहि सुख नहिं दुख बहु पायो ॥ २ ॥ कर्म
महारिपु जोर ये कलकान करेंजी । मन माने दुख देह काहसे नाहिं
डरेजा ॥ ३ ॥ कवहुं इतर निगोद कवहुं कि नर्क दिखावे । सुर
नर पशुगति मांहि बहु विधि नाच नचावे ॥ ४ ॥ प्रभु इनको परसग
भव भव मांहि घुरे जी । जा दुख देख देव तुमसे नाहिं दुरो
जी ॥ ५ ॥ एक जन्मकी बात कहि न सको सब स्वामी । तुम अनन्त
पर्याय जानत अन्तर यामी ॥ ६ ॥ मैं तो एक अनाथ ये मिल दुष्ट
घनेरें कियो बहुत बेहाल सुनिये साहय मेरे ॥ ७ ॥ ज्ञान महानिधि
लूट रङ्ग निबल कर डारो । इनही मो तुम मांहि हे प्रभु अन्तर पारो
॥ ८ ॥ पाप पुण्य मिल दोष पायन बेरी डारी । तन कारागृह मांहि
मूँद दियो दुख भारी ॥ ९ ॥ इनको नेक विगार मैं कुछ नाहिं करोजी

बिन कारण जगबन्धु बहुविधि बैर धरो जी ॥१०॥ अब आयो तुम
पास सुन कर सुयश तुम्हारो । नीति निपुण महाराज कीजे न्याय
हमारो ॥ ११ ॥ दुष्टन देहु निकास साधुनको रख लीजे ॥ बिनवे
भूधरदास हे प्रभु ढोल न कीजे ॥ १२ ॥

(५) विनती नाथूराम जी कृत ।

दोहा—चौबीसो जिन पद कमल, बन्दन करों त्रिकाल ।

करो भवोदधि पार अब, काटो बहु विधि जाल ॥ १ ॥

छन्द ।

ऋषभनाथ ऋषि ईश तुम ऋषि धर्म चलायो । अजित अजित
अरि जीत बसु विधि शिवपद पायो ॥ संभव संभ्रम नाशि बहु
भवि बोधित कीने । अभिनन्दन भगवान् अभिरुचि कर व्रत दीने
॥ ३ ॥ सुमति सुमति वरदान दोजे तुम गुण गाऊं । पद्म- प्रभु
पदपद्म उर धर शीश नवाऊं ॥ ४ ॥ नाथ सुपारस पास राखा
शरण गहोंजी । चन्द्रप्रभू मुखचन्द्र देखत बोध लहोंजी ॥ ५ ॥
पुण्यदन्त महाराज विकसत दन्त तुम्हारें ॥ शीतलशीतल बैन जग
दुःखहरण उचारें ॥ श्रेयान्सनाथ भगवान् श्रेय जगतको कर्ता ।
बासपूज्य पद वास दीजे त्रिभुवन भर्ता ॥ ७ ॥ विमल विमल पद
पाय विमल किये बहु प्राणी । श्रीअनन्त जिनराज गुण अनन्त के
दानी ॥ ८ ॥ धर्मनाथ तुम धर्मतारण तरण जिनेश । शान्तिनाथ
अघ ताप शान्ति करो परमेश ॥ कुंथुनाथ जिनराज कुंथु आदि जिय
पाले । अरह प्रभू अरि नाश बहु भव के अघ टाले ॥१०॥ महिनाथ
क्षण मांहि मोह मल क्षय कीना । मुनिसुव्रत वृत्तसार मुनि गण

को प्रभु दीना ॥ ११ ॥ नमि प्रभुके पद पद्म नवत नशे' अघ भारी ।
नेमि प्रभू तज राज जाय वरी शिव नारी ॥ १२ ॥ पारसवर्ण सरूप
कहु भविष्यण में कीने । वीर वीर विधि नाश ज्ञानादिक गुण
लीने ॥ १३ ॥ चार बीस जिनदेव गुण अनन्त के धारी । करो
विविध पद सेव मैटो व्यथा हमारी ॥ १४ ॥ तुम सम जगमें कौन
ताका शरण गहीजे । यासे मांगो नाथ निज पद सेवा दीजे ॥ १५ ॥

दोहा—नाथूराम जिन भक्त का, दूर करो भव वास ।

जब तक शिव अवसर नहीं, करो चरण का दास ॥

(६) विनती भूदरदास कृत ।

वे गुरु मेरे उर बसो तारण तरण जहाज । वे गुरु मेरे उर बसो ॥
आप तरें पर तार ही ऐसे ऋषिराज । वे गुरु मेरे उर बसो ॥ टेक ॥
मोह महा रिपु जीत के, छोड़ो है घरवार । भये दिगम्बर बन
बसे, आनम शुद्ध विचार ॥ १ ॥ रोग मदन तन ध्यावही, भोग
भुजङ्ग समान । कदली तरु संसार है, इम छोड़े सब जान ॥ २ ॥
रत्नत्रय निज उर धरें, वर निरग्रन्थ त्रिकाल । मारो काम खबीस
को, स्वामी परम दयाल ॥ ३ ॥ धर्म धरें दशलक्षणी भावन भाव
सार । सहें परीषह बीस दो, चारित्र रत्न भण्डार ॥ ४ ॥ ग्रीष्म
ऋतु रवि तेज से सूखे सरवर नीर । शैल शिखर मुनि तप तपें,
ठाड़े अचल शरीर ॥ ५ ॥ पावस रैनि भयावनी बरसै जलधर
धार । तरु तल निवसें साहसी चाले झंझा बयार ॥ ६ ॥ शीत
पड़े रवि मद गले दहे दाहे सब बनराय । ताल तरङ्गिणी तट
विषै, ठाड़े ध्यान लगाय ॥ ७ ॥ इस विधि दुर्द्धर तप तपें, तीनों
काल मंभार । लागे सहज स्वरूप में, तन से ममता टार ॥ ८ ॥

रङ्ग महल में सोवते, कोमल सेज बिछाय । सो अब पश्चिम रैनि
में पोढ़े सम्बर काय ॥ ८ ॥ गज चढ़ चलते गर्व से सेना सज
चतुरङ्ग । निरख निरख भूपद धरे । पालें करुणा अङ्ग ॥ १० ॥
पूर्व भोग न चिन्तवे, आगे वांछा नाहि । चहुं गति के दुख से डरे
सुरति लगी शिव मांहि ॥ ११ ॥ ते गुरु चरण जहां धरे तहं, तहं
तीरथ होय । सो रज मम मस्तक चढ़ी भूधर मांगे सोय ॥ १२ ॥

{ ७ } धारें भाषा

दोहा—श्रीजिनवर चौबीसवर कुनयच्यांत हर भान ।

अमित वीर्यं द्रुग बोध सुख युत तिष्ठो इह धान । १ ।

(परि पुष्पांजलि क्षिपेत्) इति स्थापनम् ।

त्रिभङ्गी छन्द

गिरीश शीश पाण्डु पै सनीश ईश थापियो । महोत्सवो
आनन्द कन्द को सबै तहां किया ॥ हमें सो शक्ति नाहिं व्यक्तदेखि
हेतु आपना । यहां करें जिनेन्द्र चन्द्रकी सु विम्ब थापना । २ ।

सुन्दरी छन्द ।

कनक मणिमय कुम्भ सुहावने । हरि सुक्षीर भरे अति
पावने ॥ हम सुवासित नीर यहीं भरे । जगन् पावन पांव तरे
धरे ॥ २ ॥ ॥ इति कलश स्थापना ॥

गीताका छन्द ।

शुद्धोपयोग समान भ्रम हर परम सौरभ पावनो । आकृष्ट भङ्ग
समूह गङ्ग समुद्रभवो अति पावनो ॥ मणि कनक कुम्भ निशुम्भ
कित्विष विमल शीतल भरि धरो । श्रम स्वेद मल निरवार जिन-
त्रय धार दे पायन परो ॥ ४ ॥ ॥ इति जल धारा ॥

अति मधुर जिन ध्वनि सम सुप्रीणित प्राणि वर्ग स्वभावसों ।
बुध चित्त समहर पित्त नित्त सुमिष्ट इष्ट उछाव सों । तत्काल
इक्षु समुत्थ प्राशुक रत्न कुम्भ विषें भरों ॥ यम त्रास तात
निवार जिन त्रय धार दे पांयन परों ॥ ५ ॥ इति इक्षु रस धारा ॥

निष्ठत क्षिप्त सुवर्ण मद दमनोय ज्यों विधि जैनकी । आयु
प्रदा बल बुद्धिदा रक्षा सु यों जिय सैनकी ॥ तत्काल मंथित क्षीर
उत्थित प्राज्य मणि भारी भरों । दीजे अतुल बल मोहि जिन त्रय
धार दे पांयन परों ॥ इति घृत धारा ॥

शरदाभ्र शुभ्र सुहाटक द्युति सुरशि पावन सोहनो । क्लैव्यक्त
हर बल धरन पूरन पय सकल मन मोहनो ॥ कद उष्ण गोधन तें
समाहृत घट जटित मणि में भरों । दुर्बल दशा मो मेढ जिन त्रय
धार दे पायन परों ॥ ७ ॥ इति दुग्ध धारा ॥

वर विशद जै नाचार्य ज्यों मधुराम्ल कर्कशिता धरै । शुचि
कर रसिक मथन विमथित नेह दोनों अनुसरै ॥ गो दधि सुमणि
भृङ्गार दूरन त्याग्य करि आगे धरें । दुख दोष कोप निवार जिन
त्रय धार दे पायन परों ॥ ८ ॥ इति दधि धारा ॥

दोहो—सर्वौपथी मिलाय के, भरि कञ्चन भृङ्गार ।

यजो चरण त्रय धार दे, तारि तार भवतार ॥ ९ ॥

॥ इति सर्वौपथी धारा ॥

(८) प्रातःकालकी स्तुति ।

चोतराग सर्वज्ञ हितंकर भविजनकी अब पूरो आस ॥

ज्ञानभानुका उदय करो मम मिथ्यातमका हो अब नाश ॥ १ ॥

जीवोंकी हम करुणा पाले' झूठ वचन नहीं कहै कदा ॥

परधन कबहुं न हरहुं स्वामी ब्रह्मवर्य व्रत रहे सदा ॥२॥
 तृष्णा लोभ बढ़ न हमारा तोष सुधा निधि पिया करें ॥
 श्री जिन धर्म हमारा प्यारा तिसकी सेवा किया करें ॥३॥
 दूर भगवे' बुरी रीतियां सुखद रीतिका करें प्रचार ॥
 मेल मिलाप बढ़ावै हमसब धर्मोन्नतिका करें प्रचार ॥ ४ ॥
 सुखदुखमें हम समता धारै रहें अचल जिमि सदा अटल ॥
 न्याय मार्ग को लेश न त्यागे' वृद्धि करें निज आत्मचल ॥५॥
 अष्टकर्म जो दुःख हेतु हैं तिनके छयका करें उपाय ॥
 नाम आपका जपें निरंतर विघ्नशोक सब ही टल जाय ॥६॥
 आत्म शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहीं चढ़े कदा ॥
 विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हूं बढ़े सदा ॥ ७ ॥
 हाथ जोड़ कर शीप नवावे तुमको भविजन खड़े खड़े ॥
 यह सब पूरो आस हमारी चरण शरणमें आन पड़े ॥ ८ ॥

(६) सायंकालकी स्तुति

हे सर्वज्ञ ! ज्योतिमय गुणमणि बालक जनपर करहु दया
 कुमति निशा अंधयारीकारी सत्य ज्ञान रवि छिपा दिया ॥१॥
 क्रोध मान अरु माया तृष्णा यह बटमार फिरे चहुं ओर ॥
 लूट रहे जग जीवनको यह देख अविद्या तमका जोर ॥ २ ॥
 मारग हमको सूझे नांही ज्ञान बिना सब अन्ध भये ।
 घटमें आप विराजो स्वामी बालक जन सब खड़े नये ॥ ३ ॥
 सतपथ दर्शक जनमन हर्षक घट घट अंतरयामी हो ॥
 श्री जिनधर्म हमारा प्यारा तिसके तुम ही स्वामी हो ॥ ४ ॥

घोर विपतमें आन पड़ा हूं मेरा बेरा पार करो ॥

शिक्षाका हो घर घर आदर शिल्पकला संचार करो ॥ ५ ॥

मेलमिलाप बढ़ावे' हम सब द्वेष भावकी घटा घटी ॥

नहीं सतावे' किसी जीवको प्रती क्षीरकी गटागटी ॥ ६ ॥

मातपिता अरु गुरुजनकी हम सेवा निशदिन किया करें' ॥

स्वार्थ तजकर सुखदे' परको आशिश सबकी लिया करें' ॥७॥

आतम शुद्ध हमारा होवे पाप मैल नहिं चढ़े कदा ॥

विद्याकी हो उन्नति हममें धर्म ज्ञान हूं बढ़े सदा ॥८॥

दोऊ कर जोरे वालक ठाढ़े करें प्रार्थना सुनिये दास ॥

सुखसे बीते रैन हमारी जिनमतका हो शीघ्र प्रकाश ॥ ९ ॥

मातपिताकी आज्ञा पाले गुरुकी भक्ति धरें उरमें ॥

रहें सदा हम करतब तत्पर उन्नति कर निज २ पुरमें ॥१०॥

(१०) सङ्कटहरण विनती

हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधानजी । अब मेरी व्यथा क्यों
ना हरो वार क्या लगी ॥ टेक ॥ मालिक हो दो जहानके जिनराज
आप ही । ऐवो हुनूर हमारा कुछ तुम से छिपा नहीं ॥ बेजान में
गुनाह जो मुझ से बन गया सही । ककरी के चोर को कटार
मारिये नहीं ॥ हो दीन० १ ॥ दुख हर्द दिलका आप से जिस ने
कहा सही । मुशकल कहर बहर से लई है भुजा गही ॥ सब वेद
और पुराणमें परमाण है यही । आनन्द कन्द श्रीजिनन्द देव है
तुही ॥ हो दीन० २ ॥ हाथी पै चढ़ी जाती थी सुलोचना सती ।
गंगामें गिराहने गही गज राज की गती ॥ उस वक्तमें पुकार
किया था तुम्हें सती । भयटारके उभार लिया हौ कृपा पती ॥ हो

दीन०३ ॥ पावक प्रचण्ड कुण्डमें उमण्ड जब रहा । सीतासे सत्य
 लेनेको जब रामने कहा ॥ तुम ध्यान धरके जानकी पग धारती
 तहां । तत्काल ही सर स्वच्छ हुआ कमल लहलहा ॥ हो० ॥ जब
 चीर द्रौपदीका दुशासनने था गहा सवरे सभा के लोग कहते थे
 हा हा हा ॥ उस वक्त भीर पीरमें तुमने किया सहा । पड़दा ढका
 सती का सुयश जगत में रहा ॥ हो० ॥ सम्यक्त शुद्ध शीलवन्ति
 चन्दासती । जिस के नजीक लगती थी जाहर रती रती । वेड़ीमें
 पड़ी थी तुमें जब ध्यावती हुती ॥ तब वीरधीर ने हरी दुःख द्वन्द
 की गती ॥ हो० ६ ॥ श्रीपालको सागर बिखे जब सेठ गिराया ।
 उसकी रमां रमने को आया था देहया ॥ उस वक्त के संकट
 सती तुमको जो ध्याया । दुःख द्वन्दफन्द मेटके आनन्द बढ़ाया ॥
 हो० ७ ॥ हरपेण की माता को जब शोक सताया । रथ जैनका तेरा
 चले पीछे से बताया ॥ उस वक्त के अनशन में सती तुमको जो
 ध्याया । चक्रेश हो सुत उसके ने रथ जैन चलाया ॥ हो० ८ ॥
 जब अंजना सतीको हुआ गर्भ उजाला । तब सासु ने कलंक
 लगा घरसे निकाला ॥ बन बर्गके उपसर्गमें सती तुमको चितारा ।
 प्रभु भक्तियुत जानके भय देव निवारा ॥ हो० ९ ॥ सौमा से कहो
 जो तू सती शील विशाला । तो कुम्भमें से काढ़ भला नाग हो
 काला ॥ उस वक्त तुम्हें ध्यायके सती हाथ जो डाला । तत्काल
 ही वो नाग हुआ फूलको माला ॥ हो० १० ॥ जब राज-रोग था
 हुवा श्रीपाल राजको । मैना सती तप आपकी पूजा इलाज को ॥
 तत्काल ही सुन्दर किया श्रीपालराज को । वह राज भोग गया
 मुक्तिराजको ॥ हो० ११ ॥ जब सेठ सुदर्शन को मृषा दाप

लगाया । रानीके कहे भूपने शूली पै चढ़ाया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ
 ने निज ध्यान में ध्याया । शूली से उतार उसको सिंहासन पै
 बिठाया ॥ हो० १२ ॥ जब सेठ सुन्नाजी को बापी में गिराया ।
 ऊपर से दुष्ट था उसे वह मारने आया ॥ उस वक्त तुम्हें सेठने
 दिल अपने में ध्याया । तत्काल ही जंजाल से तब उसको बचाया
 ॥ हो० १२ ॥ एक सेठके घरमें किया दारिद्र ने डेरा । भोजन का
 ठिकाना भी था नहीं सांभ सवेरा ॥ उस वक्त तुम्हें सेठ ने जब
 ध्यान में घेरा । घर उसके तबकर दिया लक्ष्मी का ब्रसेरा ॥ हो०
 १४ ॥ बलि बादमें मुनिराज सों जब पार न पाया । तब रातको
 तलवार ले शठ मारने आया । मुनिराज ने निज ध्यानमें मन लीन
 लगाया । उस वक्त हो परतक्ष तहां देव बचाया ॥ हो० १५ ॥
 जब रामने हनुमन्त को गढ़लङ्क पठाया । सीता की खबर लेनेको
 विफौर सिधायी ॥ मग बीच दो मुनिराज की लख आगमें काया ।
 भटवार मूसलधारसे उपसर्ग बुझाया ॥ हो० २६ ॥ जिननाथ ही
 को माथ नवाना था उदारा । घेरेमें पढ़ा था वह कुम्भकरण
 विचारा ॥ उस वक्त तुम्हें प्रेमसे संकटमें उचारा । रघुवीरने सब
 पीर तहां तुरत निवारा ॥ हो० १७ ॥ रणपाल कुंवर के पड़ी थी
 पांवमें बेरी । उस वक्त तुम्हें ध्यानमें ध्याया था सवेरी । तत्काल
 ही सुकुमार की सब झड़ पड़ी बेरी । तुम राजकुंवरको सभी दुख
 द्वन्द निवेरी ॥ हो० १८ ॥ जब सेठके नन्दन को डसा नाग जु
 कारा । उस वक्त तुम्हें पीरमें धरधीर पुकारा ॥ तत्काल ही उस
 बालका बिषभूर उतारा । वह जाग उठा सोके मानो सेज सकारा
 ॥ हो० १९ ॥ मुनि मानतुङ्गको दर्ई जब भूपने पीरा । तालेमें किया

बन्द भरी लोहे जंजीरा । मुनीशने आदोशको थुत की है गम्भीरा ।
 चक्रेश्वरी तब आनके भट दूर की पोरा ॥ हो० २० ॥ शिव
 कोटने हठता किया समन्तभद्र सो । शिवपिण्डकी बन्दन करो
 संको अमद्र सो ॥ इस वक्त स्वयम्भू रचा गुरु भाव भद्र सो ।
 जिन चन्द्रकी प्रतिमा तहां प्रगटो सुभद्र सो ॥ हो० २१ ॥
 सूवेने तुम्हें आनके फल आम चढ़ाया । मैडक ले चला फूल भरा
 भक्त का भाया ॥ तुम दोनोंको अभिराम स्वर्गधाम बसाया । हम
 आपसे दातारको लाख आज ही पाया ॥ २२ ॥ कपि स्वान सिंह
 नवल अज बैल विचारे । तिर्यंच जिन्हें रखन था बोध चितारे
 इत्यादिको सुरधाम दे शिवधाममें धारे । हम आपसे दातारको
 प्रभु आज निहारे ॥ हो० २३ ॥ तुमहीं अनन्त जन्तु कार भय
 भीड़ निवार । वेदो पुराणमें गुरु गणधरने उच्चार । हम आपकी
 शरणागतिमें आके पुकारा । तुम हो प्रत्यक्ष कल्प वृक्ष इक्षु अहारा
 हो० २४ ॥ प्रभु भक्त व्यक्त जक्त भुक्त मुक्तके दानी । आनन्द कन्द
 वृन्दको हो मुक्तिके दानी । मोहि दान जान दीनबन्धु पातक भानी
 संसार विषय तार तार अन्तर यामी ॥ हो० २५ ॥ करुणा निधान
 बानको अब क्यों न निहारो । दानी अनन्त दानके दाता हो संभारो
 वृष चन्द नन्द वृन्दका उपसर्ग निवारो । संसार विषमक्षारसे प्रभु
 पार उतारो ॥ हो दीनबन्धु श्रीपति करुणा निधानजी । अब मेरी
 व्यथा क्यों न हरो बार क्या लगी ॥ २६ ॥

(११) स्तोत्र भूदरदास कृत

दोहा—कर जिन पूजा अष्ट विधि, भाव भक्ति बहु भाय ।

अब सुरेश परमेश थुति, करत शीश निज नाय ॥ १ ॥

चौपाई ।

प्रभु इस जग समर्थ ना कोय । जासे तुम यश वर्णन होय ।
 चार ज्ञान धारी मुनि थकें । हमसे मन्द कहाकर सकें ॥ २ ॥ यह
 उर जानत निश्चय कीन । जिन महिमा वर्णन हम कीन ॥ पर
 तुम भक्ति थके वाचाल । तिस बस होय गहूं गुण माल ॥ ३ ॥ जय
 तीर्थकर त्रिभुवन धनी । जय चन्द्रोपम चूड़ामणी ॥ जय जय परम
 धाम दातार । कर्म कुलावल चूरण-हार ॥ ४ ॥ जय शिव कामिन
 कन्त महन्त । अतुल अनन्त चतुष्टय वन्त ॥ जय २ आश भरण
 बड़ भाग । तप लक्ष्मीके सुभग सुभाग ॥ जय २ धर्मध्वजा धर
 धीर । स्वर्ग मोक्षदाता वरवीर ॥ जय रत्नत्रय रत्न करण्ड । जय
 जिन तारण तरण तरण्ड ॥ ६ ॥ जय २ समोशरण शृङ्गार । जय
 संशय बन दहन तुषार ॥ जय २ निर्विकार निर्दोष । जय अनन्त
 गुण माणिक कोष ॥ ७ ॥ जय जय ब्रह्मचर्य्य दल साज । काम
 सुभट विजयी भट्टराज ॥ जय जय मोह महा तरु करी । जयजय
 मद कुंजार केहरी ॥ ८ ॥ क्रोध महानल मेघ प्रचण्ड । मान मोह-
 धर दामिन दण्ड ॥ माया बेल धनंजय दाह । लोभ सलिल शोषण
 दिन नाह ॥ ९ ॥ तुम गुण सागर अगम अपार । ज्ञान जहाज न
 पहुँचे पार ॥ तट हो तट पर डोले सोय । कार्य्य सिद्धि तहां ही
 होय । १० ॥ तुम्हारी कीर्त्ति बल बहु बढ़ी । यत्न बिना जग मण्डप
 चढ़ी । और कुदेव सुयश निज चहैं । प्रभु अपने थल हो
 यश लहैं ॥ ११ ॥ जगति जीव घूमैं बिन ज्ञान । कीना मोह महा
 विष पान ॥ तुम सेवा विष नाशक जड़ी । तह मुनि जन मिल
 निश्चय करी ॥ १२ ॥ जन्म जरा मिथ्या मत मूल । जन्म मरण

लागे तहां फूल ॥ सो कबहु बिन भक्ति कुठार । कटै नहीं दुख
फल दातार ॥ १३ ॥ कल्प सरोवर चित्रा बेलि । काम पोरवा नव
निधि मेल ॥ चिन्तामणि पारस पाषाण । पुण्य पदारथ और महान
॥ १४ ॥ ये सब एक जन्म संयोग । किञ्चित सुख दातार नियोग ।
त्रिभुवननाथ तुम्हारी सेव । जन्म २ सुखदायक देव ॥ १५ ॥ तुम
जग बांधव तुम जग तात । अशरण शरण विरद विख्यात ॥ तुम
सब जीवन रक्षापाल । तुम दाता तुम परम दयाल ॥ १६ ॥ तुम
पुनीत तुम पुरुष प्रमान । तुम सम दर्शो तुम सब जान । जयमुनि
यज्ञ पुरुष परमेश ॥ तुम ब्रह्मा तुम विष्णु महेश ॥ १७ ॥ तुम जग
भर्ता तुम जग जान । स्वामि स्वयम्भू तुम अमलान ॥ तुम बिन
तीन काल तिहुं खोय । नाहीं शरण जीवको होय ॥ १८ ॥ इससे
अब करुणानिधि नाथ । तुम सन्मुख हम जोड़ें हाथ ॥ जबलों
निकट होय निर्वाण । जग निवास छूटै दुख दान ॥ १९ ॥ तब लों
तुम चरणाम्बुज बास । हम उर होय यही अरदास ॥ और न कछु
बांछा भगवान । हो दयालु दीजे वरदान ॥ २० ॥

दोहा—इस विधि इन्द्रादिक अमर, कर बहु भक्ति विधान ।

निज कोठे बैठे सकल, प्रभु सन्मुख सुख मान ॥ २१ ॥

जीति कर्म रिपु ये भये, केवल लब्धि निवास ।

सो श्रीपार्श्व प्रभू सदा, करो विघ्न घन नाश ॥

(१२) अरिहन्त परमेष्ठी मंगल ।

बन्दों श्रीअरिहन्त सिद्ध आचार्यजी । उपाध्याय नमि साधु
भवधर आर्यजी । पंच परमपद श्रेष्ठ जागति में ये कहे । इन ही
के सुप्रसाद भव्यजन सुख लहे ॥ लहे लेत ले'यगे सुख मुक्ति

रमणीके सही ॥ अहमेन्द्र इन्द्र नरेन्द्र सुखकी तास उपमा है नहीं ॥
 यासे तिन्होंके एक सौ तिरकाल गुण नित ध्याइये । उर नेम धरके
 पंच पदके पंच मंगल गाइये ॥ १ ॥ सम चतुर संस्थान सुग-
 न्धित तन लसे । एक सहस्र गणि आठ सुलक्षण शुभ बसे ॥ मल
 मूत्र नहीं होय पसेव न होइये । क्षीर वर्ण वर रुधिर अतुल बल
 जोइये ॥ जोइये हितमित बचन सुन्दर रूपका ना पार जी । लख
 वज्र वृषभ नाराच्य सहनन जन्म दश गुण धारजी ॥ सुरभिक्ष
 योजन एक शतलों चार दिश जानिये । छाया विवर्जित चार
 आनन गगण गमन बखानिये ॥ २ ॥ नहीं बढ़े नख केश सकल
 विद्याधनी । प्राणी वाधा रहित सहिज अतिशय बनी ॥ नहिं होय
 उपसर्गाहार कवला नहीं । नेत्र नहीं टमकार ज्ञान गुण दश सही ॥
 सही सब ही जीव केरे भाव मैत्री तहां बसें । सकलार्थ मागधी
 होय भाषा सुनत सब संशय नशें ॥ सब लोक में आनन्द बर्ते भूमि
 दर्पण सम छजे । आकाश निर्मल धान्य सब ही एकठे हो नीपजे
 ॥ ३ ॥ छः ऋतु के फल फूल फले इकबार ही । भू तृण कंटक
 आदि रहित सुखकार हो ॥ मन्द सुगन्धि चले पवन सकल जन
 मन हरै । गंधोदक की वृष्टि गगणसे सुर करें ॥ करें जय जय
 कार मुख से शब्द सुर आकाश में । सुर हेम कमल विहार करते
 धरत पद तल जास में । अष्ट मङ्गल द्रव्य राजय धर्म चक्र चले
 तहां । ये देव कृत गुण जात चौदह जोड़ सब चौतिस यहां ।
 सोहे वृक्ष अशोक शोक हर लेत है । दिव्य ध्वनि सुन जीव मिथ्या
 तज देत हैं ॥ सुरकृत पुष्प सुवृष्टि चमर चौंसट दुरे । भामण्डल
 सुर गगण नाद दुंदुभी करें ॥ करें अपने हेतु को ये क्षत्रत्रय

शिर सोहना ॥ मणि जटित सिंहासन कनकमय लोकत्रय मन
मोहना ॥ ये प्रातिहार्य मिलाय आठों जोड़ गुण व्यालीस जी ।
ये ही जनावत प्रगट तुम को तीन जग के ईशजी ॥ दर्शन ज्ञान
अनन्त विषे षट द्रव्य से । गुण पर्याय अनन्त लखे दृष्टि सर्वके ॥
राजत सुख अनन्तानन्त केवल धनी । अनन्त चतुष्टय जोड़
सकल छालिस गुणी । गणिये सुछालिस गुण विराजित देव
अरिहत सो लखो । गुण और कबलों कहों कैसे बुद्धि थोरी मैं
रखों ॥ इन्द्र गणधर आदि जिन गुण गणत पार न पाइयो । गणि
दोष अष्टादश जिनेश्वर मूल से जु नशाइयो । क्षुधा तृषा मद मोह
जरा चिन्ता टरी । आरति विस्मय रोग शोक निद्रा हरी ॥ स्वेद
खेद भय रोग हनो पुन द्वेषजी । जन्म मरण का दुख नहीं लव-
लेश जो ॥ लवलेश इनका नाहिं यासे मोहि तारण तरणजी ।
भव दुख निवारण सुख कारण मोहि अशरण शरणजी ॥ यासे
सदा ही प्रात उठ छालीस गुण नित ध्याइये । उर नेम धर पद
पञ्च में अरिहन्त मङ्गल गाइये ॥ ७ ॥

(१३) श्रीसिद्ध परमेष्ठी मंगल ।

तिहूँ जग शिरतन बात बलय में जानियो । प्रारम्भ नभ क्षेत्र
तहां उर आनियो ॥ मनुज क्षेत्र सम क्षेत्र महा अद्भुत सही ।
हाटक मणिमय मुक्ति शिला तासम कही ॥ कही तिहूँ जग शीर्ष
ऊपर क्षेत्रके आकार जी । मध्य भाग योजन आठ मोटी अन्त
अनुक्रम ढारजी । तापर विराजत सिद्ध शिव थल काय बिन बिन
रूपजी । लख पूर्व तन से ऊन किंचित आत्मरूप अनूप जी ॥१॥

एक सिद्धके माँहि अनन्ते सिद्ध हैं । राजत गुण समुदाय लिये
निज ऋद्धि हैं ॥ किंचित कायोत्सर्ग और पदमासन । सकल सिद्ध
सम शीर्ष विराजत भासनं ॥ भासना आकार काजौ लखो इक
दृष्टान्त जी । सांचो करो इक मोम को फिर गारालेप धरन्त जी ॥
सुकबाय ताको अग्नि देकर मोम काढ़न ठानिये । पोलारवा में रहै
जैसी सिद्ध आकृति जानिये ॥ २ ॥ पौने सोलह सौ धनु महा
गिनाय जी । बात बलय तन की सुलखो मोटाय जी । पन्द्रह सौ
का भाग देव ताको सही । सब पांच सौ धनुष होय संशय
नहीं ॥ संशय नहीं अवगाहना उत्कृष्ट सिद्धन की लखो । तन
बातकी मोटाई पुनः भाग नव लख का रखो ॥ अवगाहनादि जघन्य
गिनले हाथ साढ़े तीन जी । पुनः मध्य भेद अनेक हैं अवगाहनाके
चीत जी ॥ ३ ॥ मोहनी नामाकर्म महा बलवन्त जी । कीन्हीं
बातिल बुद्धि सकल जग जन्तु जी ॥ ताहि मूल से नाश शुद्ध
सम्पति लही । प्रगटी गुण सम्यक्त्व प्रथम अद्भुत सही ॥ सहोदृण
यह जगतिके दुख नाशने को मूल है । या बिना सब ही अकारथ
वासना बिन फूल है ॥ बिन नीव मन्दिर मूल बिन तरु नीर बिन
सागर यथा । सम्यक्त्व गुण बिन सकल करणी सफल नाहीं
सबथा ॥ ४ ॥ ज्ञानावरणी कर्म दयो सब टार जी । हस्त रेख सम-
लोक अलोक निहार जी ॥ दूजे गुण तब ज्ञान शुद्ध सुप्रगट लहो ।
यासम और न कोइ जगति में गुण कहो ॥ कहो तीजो कर्म नामो
दर्शना वरणी लखो । दीखे नहीं जाके उदय जिमि बख पर ढाकन
रखो ॥ इस कर्मको विध्वंस करके लहो केवल दर्शना । गुण होय
मिटे तब ही वस्तु देखन तर्सना ॥ ५ ॥ अन्तराय बलवान महा

दुःख देत है । जग जीवोंकी शक्ति सभी हर लेत है ॥ याको हति निज वीर्य अनन्त लहाय जी । सो चौथा गुण वीर्य लखो मन ल्याय जी ॥ मन ल्याय तिहुंजग मोहिं जानो नाम कर्म महान हैं । इस कर्म वश जग जीव चहुं गति भटकते हैरान हैं ॥ याको हनो तब ही अमूर्खि भयो आतमराम है । सो मस्त गुण तब होत जगमें बहुर नाही काम है ॥ ६ ॥ आयु कर्म से जोव चहुं गतिमें बसे । बंदीखाने मांह यथा कैदी फंसे ॥ याहि हरत गुण प्रगट होत अवगाहना । एक सिद्ध में सिद्ध अनन्त सम्भावना ॥ सम्भावना जग जीव सब ही गोत्र विधि के वश परे । पद ऊंच नीच लहैं सुबहु विधि दुःख दावानल जरे ॥ इस गोत्र कर्म बिनाशने से भाव सम प्रगटे सदा । सो गुण अगुण लघु होय तब ही ऊंच नीच न रहें कदा ॥ ७ ॥ वेदनी कर्म वशाय जगति के जीव जी । भोगे दुःख अपार अचित सदीव जी ॥ अव्यावाध गुण होइ हरे जब याहिजी । सुख दुःख दोनों रहित नहीं कछु चाह जी ॥ चाह तिहुं जगकाल तिहुंके सुख इकट्ठे कीजिये । तिनसे अनन्तः सुख है एक समय मांहि लहोजिये ॥ यासे तिन्हों के आठ गुण को प्रात उठ नित ध्याइये । उर नेम घर के पंचपद में सिद्ध मंगल गाइये ॥ ८ ॥

(१४) श्री आचार्यपरमेष्ठी मंगल ।

दर्शन मोह विनाश आप दर्शन लहो । सोही दशनाचार भिन्न परसे कहो ॥ स्वपर भेद लख ज्ञान थकी निज लीन जी । सो हो ज्ञानाचार लखो सु प्रवीणजी ॥ प्रवीण निज पद माहिं थिर हो यही चरित्र गुण सही । इच्छा अभ्यन्तर रोक अनसन बाह्य गुण

तप जानहीं ॥ जब कष्ट बहु विधि आवता नहिं टरें यह गुण
वीर्य जी । आचरे' पंचाचार यह गुण लहें बहु धर धीर्य जी ॥ १ ॥
वर्ष अयन ऋतु मास पक्ष आदिक तनी । करे' सदा उपवास लहें
गुण अनसनी ॥ पूर्ण ग्रास बस्तीस अन्न जलके गुणी । लेय तामें
ऊन ऊनोदर सो मुनी ॥ मुनिचर्या निमित्त वनमें व्रत अटपटे धर
चले' । व्रत परि संख्या कहो यह गुण और जनसे ना पले' ॥
कोई रसको तजें कबहुँ सर्व रस तज देत हैं । गुण जान रस
परित्याग सुन्दर महा अद्भुत भजात है ॥ २ ॥ गिरि कन्दर
एकान्त रहत सु मसान मे । धरें ध्यान अनागार लीन निज ज्ञान
में ॥ विव्यक्त शय्यासन सो कहत गुण याहि जी । साहस ऐसा
धार ममत्व सो नाहिं जी ॥ नाहिं तनको तनक सो भी ममत
तिनके उर बसे । पावस समय तरुके तले धरे' ध्यान पातक
सब नसे ॥ हेमन्त सरिता ग्रीष्म गिरि शिर उग्र जो तप करे' ।
गुण लखो काय कलेश येही सकल दुखको परिहरें ॥ ३ ॥
प्रातः धरे' व्रत जेह सम्हाले सांभजीं । कोई लागो दोष लखें
ता मांभ जी ॥ गुरुसे कह सब दोष दण्डको आचरें । प्रायश्चित्त
गुण येह महा सुखको करें ॥ करें मन बच काय सेती देव गुरु
श्रु तिका विनय । अरु पूजनीक पदार्थ तिनकी विनय गुण तप के
गिनय ॥ रोगातिवृत्त या वृद्ध मुनिवर देख बैयावृत धरे' । उन्माद
मद तज लखे' बैयावृत्य गुण तब विस्तरें ॥ ४ ॥ पंच भेद स्वा
ध्याय आप नित ही करें । बोध बंधके हेतु परनको उच्चरें ॥ सो
ही गुण स्वाध्याय सकलमें सारजी । नाशा दृष्टि लगाय झड़े
अनगारजी ॥ अनगार दोनों कर लुभाये' लीन निज आतम विषे ।

गुण यही कायोत्सर्ग कहिये ममत तनसे ना दिखें ॥ ध्यान धर्मरु
 शुक्ल ध्यावे आर्त रौद्र निवार जी । यह ध्यान गुण शिव कर-
 नहारा कम रिपु क्षयकार जी ॥ ५ ॥ क्रोध महारिपु जीति क्षमा
 गुण आदरें । मार्दव गुण अजब होय अष्ट मदको हरें ॥ कूट कपट
 विष नाश होय आर्यव गुणी । झूठ बचन परित्याग सत्य गुण
 लें मुनी ॥ मुनी धोवें लोभ मलको शौच्य गुण तब ही धरें । मन
 का विकार पांच इन्द्री जीति संयम गुण करें ॥ अनसनादिक ठां
 नके तपशील गुण कर निर्मलो । त्याग अन्तर्वाह्य परिग्रह त्याग
 गुण लीनो भलो ॥ ६ ॥ निज पर भिन्न लखाव यही आकिञ्चना ।
 ब्रह्मचर्य त्रिय त्याग सकल विधि से भना ॥ शत्रु मित्र सम
 भाव धरें समता गना । देव गुरु श्रुति बन्दे यह गुण बन्दना ॥
 बन्दन स्तुति देव श्रुति गुरु करें स्तवन गुण धारके । प्रतिक्रमण
 गुणकर निवारें लगे दोष विचारके ॥ पढ़े निज श्रुति पर पढ़ावे
 यही गुण स्वाध्याय जी । कायोत्सर्ग धराय निज पद ध्यान शुद्ध
 लगाय जी ॥ ७ ॥ मन बन्दरको रोक गुप्ति मनकी लहैं । बचन गुप्ति
 गुण काज नहीं चिकथा कहैं ॥ काय गुप्ति तब होय करें तने
 क्षीणजी । निज आतमलवलीन करें पर हीन जी ॥ पर हीन करके
 आप अपनी सम्पदा परखे अक्षय । आचार्य सोई श्रेष्ठ जगमें
 तासु उपमा को रखय ॥ यासे तिन्होंके प्रात उठ छत्तीस गुण नित
 ध्याइये । उर नेमधर पद पञ्चमें आचार्य मङ्गल गाइये ॥ ८ ॥

श्रीआचार्य परमेष्ठी मंगल सम्पूर्णम् ।

(१५) श्रीउपाध्याय परमेश्वरी मंगल

आचाराङ्ग पद सहस्र अठारह जानियो । सूत्र काङ्ग छत्तीस सहस्र पद मानियो ॥ स्थानाङ्ग पद जान सहस्र व्यालिस सदा । समवायाङ्ग इकलाख सहस्र चौंसठ पदा ॥ पदागिन दो लाख ऊपर धर अट्ठाइस सहस्र जी । व्याख्या प्रज्ञप्ति तामें प्रश्नकी है रहस्य जी ॥ पद पांच लाख हजार छप्पन जान ज्ञात्र कथाङ्गके । पद लाख ग्यारह सहस्र सत्तर उपासका ध्यानाङ्ग के ॥१॥ अतः कृता दशाङ्ग लाख तेबीस जी । सहस्र अट्ठाइस जोड़ सकल पद दीस जी । पद गिन बाजाने लाख सहस्र चवाल जी । अनुत्तर उत्पाद दशाङ्ग सम्हाल जी । सम्हाल लाख तिरानवे पद जोड़ सोलै हजार जी । लख लेव प्रश्न व्याकरण माहीं धर्म कथन विचार जी । एक कोड़ि ऊपर धर चौरासी लाख सब गण लीजिये । ये ही सूत्र विपाकके पदका कथन लख लीजिये । २ । येही ग्यारह अङ्ग एकादश गुण कहे । इन सबके पद जोड़ सकल कितने लहे । कोड़ि चार गनि लेहु लाख पन्द्रह रखो । दो सहस्र मिलवाय सकल संख्या लखो ॥ अब उत्पाद पूर्व एक कोड़ि जो पद तनी । पद लाख छानवे गिनो ताके पूर्वको अग्रायनी । पद लाख सत्तर लखो ताके पूर्व वीर्यानुवादजी ॥ लखि अस्ति नास्ति प्रवादके पद साठ लाख मर्याद जी ॥ ३ ॥ पूर्व ज्ञान प्रवाद पञ्चमा जानजी । एक कोड़ि पद माहिं एक पद हनि जी ॥ षष्ठम सत्य प्रवाद पूव पहिचानियो । एक कोड़ि पद पैसु अधिक षट् मानियो ॥ मानियो आत्म प्रवाद पूर्व कोड़ि पद छब्बीस जी । पद पूर्व कर्म प्रवाद

इकसौ असीलाख कहीसजी ॥ गिनलो चौरासी लाख पदका पूर्व
 प्रत्याख्यान जी । विद्यानुवादजु कोड़िकपर लाख दश पद ठान-
 जी ॥ ४ ॥ पूर्व लख कल्याण घाद कहलाय जी । पद गिन कोड़ि
 छब्बीस सकल दरशायजी ॥ प्राणवाद लख पूर्व कोड़ि तेरह पदा
 क्रिया विशाल पद जानि कोड़ि नव सबदा ॥ गिन त्रैलोक विदु-
 सार पूर्व खास जी । पद कोड़ि द्वादश पर धरावे लाख गिनो
 पचास जी ॥ पद पूर्व चौदहके इकट्ठे जोड़ गिन मन ल्यायजी ।
 साढ़े पचानवे कोड़ि ऊपर पांच पद धरवायजी ॥ ५ ॥ एकादश
 लख अङ्ग पूर्व चौदह गने । पद दोनोंके जोड़ सकल इतने भने ॥
 कोड़ि नित्यानवे और लाख पैसठ धरो । सहस्र दोइ पद पांच जोड़
 निश्चय करो ॥ करो गिनती एक पदमें किते अक्षर हैं सही । धर
 अर्ब सोलह कोड़ि चौतिस अरु तिरासी लाख ही ॥ हजार सात-
 सु आठ शत पे गिन अठासी फिर रखो । एक पदके कहे सो लख
 सकल पद इस सम रखो । ६ । अङ्गपूर्वको सकल भयो है ज्ञानजी
 ये ही गुण पच्चीस मुख्य पहिचान जी ॥ सो ही तिहुं जग श्रेष्ठ
 लखो उपकाय जी । पर परिणितसे भिन्न आत्मलव ल्याय जी ॥
 लव ल्याय निज गुण सम्पदामें मग्न निशि दिन ही रहै । भवसिन्धु
 तारण तरण नवका और उपमाको कहि । यासे तिन्होके प्रात उठ
 पच्चीस गुण नित ध्याइये । उर नेम धर पद पञ्चमें उपाध्याय
 मङ्गल गाइये ॥ ७ ॥

(१६) श्रीसाधु परमेष्ठी मंगल ।

मन घब घट कायतनी करुणा धरें । यही अहिंसा व्रत सु

प्रथम गुण आचरें ॥ करें झूठ परित्याग बचन मन काय जी ।
 कृतकारित अनुमोद भङ्ग सब गाय जी ॥ सब गाय अनृत त्याग
 गुण यह सर्व साधुनके लखो । इस ही सुविधिसे त्याग चोरी
 व्रतास्तेय सुनो रखो ॥ चेतन अचेतन नारि तजना भेद सहस्र
 अठार से । सो ही है व्रत ब्रह्मचर्य साधू धरत हर्ष अपार से ॥१॥
 बाह्याभ्यन्तर त्याग परिग्रह का करें । सो ही परिग्रह त्याग महा-
 व्रत आदरे ॥ चलत पन्थ लख शुद्ध हाथ गनि चार जी । ईर्या
 समिति सु व्रतहि दया चित धार जी ॥ चित धार करुणा बचन
 बोलत स्वपर हित मर्याद से । यह व्रत भाषा समिति साधू धरत
 उर अहलादसे ॥ गिन ले छयालिस दोष वर्जित लेत शुद्ध अहार
 जी ॥ सो जान ईषणा समिति सुन्दर व्रत महा सुखकार जी । २ ।
 बस्तु उठावत वार भूमि दूगसे लखें । तैसे भूमि निहार वस्तु
 विधिसे रखें ॥ आदान निक्षेपना समिति या को कहें । धारे श्री-
 मुनिराज महा सुखको लहें ॥ लहें नाहीं जीव बाधा भूमि ऐसी
 देखके । प्रति स्थापन समिति यह मल मूत्र क्षेपे' पेख के ॥ तज
 स्नान बिलेपनादिक नाहिं तन संस्कार जी । तन क्षीण कर स्पर्श
 नेन्द्री शोथ्यणा सविकार जी । ३ । आम्ल मिष्ट कटुकादि स्वादि
 रसना तनो । तजें मुनी रसनेन्द्रिय रोधन तप मनो ॥ सुगन्ध अरु
 दुर्गन्ध विषय नाशा तजें । घ्राणेन्द्रीय निरोध नाम तप तब भजें ॥
 भजें इन्द्रिय रोध चक्षु दृष्टि नाशापर धरे' । युत राग दूगसे निर-
 खवो रूपादि सब ही परिहरे' । नहिं सुने' बचन विकार कर्ता
 कानसे बहिरे भये । यह करण इन्द्रिय रोध तप धर सुने' जिन
 वच रुचि लिये । ४ । तृण कञ्चन अरि मित्र सु महल मसान जी ।

सुख दुःख जीवन मरण लखे जु समान जी । समतावश्यक नाम
यही गुण जान जी ॥ धारे' सो मुनिराज महा सुख खान जी ॥
सुख खान लखा गुण बन्दना है देव श्रुति गुरुकी चहें । इन आदि
बन्दन योग्य पदकी बन्दना कर गुण लहें ॥ स्तुति देव श्रुति गुरु
आदि देकर पूजनीक जु पदतनी । मन वचन तनसे करे' मुनिवर
श्रुति आवश्यक सोभनी ॥ ५ ॥ प्रायश्चित्त ले दोष लगे दूरी करे'
प्रतिक्रमण गुण येह सर्व साधू धरे' ॥ पञ्च भेद स्वाध्याय करे'
नित ही तहां । सो ही गुण स्वाध्याय लहें निज सम्पदा ॥ निज
सम्पदाके अर्थ मुनिवर करे' कायोत्सर्गजी । धर दृष्टि नाशा भुज
लुवाये' ममत्व हन तन वर्ग जी ॥ तृण कण्टकादिक शुद्ध भूपर
अल्प निद्रा ले'य जी । लख रैन पिछली नाम तप यह भूमि शयन
कहेय जी ॥ ६ ॥ उर उज्जवल तन मलिन तजे' स्नान जी । स्नान
त्याग व्रत येह कहो पहिचान जी ॥ मात गर्भसे जन्म समान
स्वरूप जी । सो ही गुण तन वख त्याग सो अनूप जी ॥ अनूप
पंच सेती मुष्टी लु'च कचका करत हैं । और करुणाधार उरकच
लु'च व्रत मुनि धरत हैं ॥ गुण एकवार आहार लघुले' दोष बिन
बिन राग जी । सो एकदा लघु भक्त तप है धरे' मुनि बड़ भाग
जी ॥ ७ ॥ खड़े ले'य आहार पात्र करका करे' । चरे' गाय सम
वृत्य खड़ा गुण सो धरे' ॥ आनन मल संयुक्तसूग आने नहीं ।
करो दंतवन त्याग सुव्रत जानो सही ॥ जानो सही गुण गिन
अट्टाईस सर्व ही साधू लहो । यह श्रेष्ठ तीनों भुवन माहीं तरण
तारणपद कहो ॥ यासे तिन्होके प्रात उठकर गुण अट्टाईस ध्याइये
उरनेम भरकें पंच पदमें साधु मङ्गल गाइये ॥ ८ ॥

छठा अध्याय

१७ बारहमासा सीताजीका ।

सती सीता बिनवे शिरनाथ । नाथ कर कृपा हरो दुःख आय
 ॥ टेक ॥ महीना आसाढ़का आया । जनक गृह जन्म मैंने
 पाया । हरा सुर भ्रातन की दाया । मात-पित को दुख उपजाया
 ॥ दोहा ॥ रथनूपुर विजायार्द्ध पर, ता बनमें सुर जाय । रखा
 लखा सो भूप चन्द्र गति हितसे लिया उठाय । पुत्र कर पाला प्रेम
 बढ़ाय । नाथ कर कृपा करो दुख आय ॥ १ ॥ चढ़े श्रावण मलेच्छ
 भारी । पिता दुख पायो अधिकारी । बुलाये दशरथ हितकारी ।
 राम तिनकी सेना मारी ॥ दोहा ॥ तब रघुपतिको तातने करी
 सगाई मोर । विधिबश खगपति भगड़ा ठानो आने धनुष कठोर ।
 चढ़ा रघुवर परणी गृह ल्याय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥
 २ ॥ भये भादोंमें शुश्रु वैराग । राज रघुवर को देने लाग ॥
 केकई माँगो वर दुर्भाग । भरतको राज लिया तिन मांग ॥ दोहा ॥
 तब पति चले विदेशको धनुषबाण ले हाथ । सङ्ग चले प्रिय लक्ष्मण
 देवर मैं भी चाली साथ ॥ चले दक्षिणको चरण उठाय । नाथ
 कर कृपा हरो दुख आय ॥ ३ ॥ कार दण्डक बन पहुँचे जाय ।
 हना शंबुक लक्षण असि पाय ॥ फेरि मारा खरदूषण धाय ॥ तहां
 मैं हरी लंकपति आय ॥ दोहा— मार जटायू मोहि ले दशमुख
 पहुँचो लङ्का । मित्र भये सुग्रीव राम के हनुमत वीर निशंक ॥ लेन

सुधि पठये श्रीरघुराय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ४ ॥
 मिली कार्तिकमें सुधि मेरी । राम लक्ष्मण लंका घेरी ॥ घोर रण
 भयो बहुत बेरी । लगी बहु मृतकनकी ढेरी ॥ दोहा ॥ तहां लङ्क-
 पतिको हनो दियो विभीषण राज । मोहि साथ ले गृहको आये
 लिया राज रघुराज ॥ भरत तप धरा भये शिव राय ।
 नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ५ ॥ कियो अगहनमें
 गर्भाधान । तबे बंटवायो किमिच्छा दान ॥ कर्म वश
 लोगों गिला ठान । लगाया दूषण मोहि निदान ॥ दोहा ॥ तब पति
 पठयो विपिनमें तीरथका मिसि ठान ॥ बज्रजङ्ग गृह रोवति देखी
 ले गयो बहिन बखान ॥ रखो पुर पुण्डरीकमें जाय । नाथ कर
 कृपा हरो दुख आय ॥ ६ ॥ पूस लवणांकुश जन्मै बाल । बढ़े
 कमसे सो भये विशाल ॥ गये बन क्रीड़ा दोनों लाल । मिले
 नारद बतलायो हाल ॥ दोहा ॥ तब दोनोंकी रिस बढ़ी भये पिता
 पर क्रुद्ध । समझाये सो एक न मानी चले करनको युद्ध ॥ चतु-
 विंश सेना सङ्ग सजाय । नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ७ ॥
 माघमें चले लड़न युग धीर । करे डेरा सरयूके तीर ॥ सुनत आये
 लड़ने रघुवीर । चलाये खेच विविध शर धीर ॥ दोहा ॥ प्रबल
 युद्ध पुत्रन किया हरि बल मुहरा फेर । चक्र चलाया तब लक्ष्मणने
 बिकल भयो सो हेर ॥ बिचारा येही हरि बलराय । नाथ कर कृपा
 हरो दुख आय ॥ ८ ॥ फागमें भामण्डल हनुमान ॥ कही ये सीता
 सुत बलवान् ॥ मिले तब हरिबल आनन्द ठान । अवधमें बाढ़ो
 हर्ष महान् ॥ दोहा ॥ तब सबने बिनती करी सीता लेहु बुलाय ।
 सो खोकार करी रघुवरने सब नृप लाये धाय ॥ मिलनको चलीं

सिया हर्षाय ॥ नाथ कर कृपा हरो दुख आय ॥ ६ ॥ चैत्रमें बोले
 राम रिसाय । धीज बिन लिये न आवो धाय ॥ तबै बोली सीता
 बिलखाय । कहो सो लेहु धीज दुख दाय ॥ दोहा ॥ विष
 लाऊं पावक जलूं करूँ जो आह्वा होय । कही राम पावकमें पैठो
 सीता मानी सोय ॥ दयो तब पावक कुण्ड जलाय । नाथकर
 कृपा हरो दुख आय ॥ १० ॥ जपति बैसाखमें प्रभुका नाम ।
 अग्निमें पैठी रघुवर भाम ॥ शोल महिमासे देव तमाम ।
 अग्निका कीना जल तिस ठाम ॥ दोहा ॥ कमलासन पर जानकी
 बैठारी सुर आय । बढा नीर जल डूबन लागे करते भये
 विलाप ॥ करो रक्षा हम सीता माय । नाथ कर कृपा हरो
 दुख आय ॥ ११ ॥ जेठमें राम मिलन चाले । लूँचि कच सिय
 सन्मुख डाले ॥ लयो दिक्षा अणुव्रत पाले । किया तप दुर्द्धर अघ
 जाले ॥ दोहा ॥ त्रिया लिङ्ग हनि दिव भयो सोलम स्वर्ग प्रतेन्द्र ।
 अनुक्रमसे अब शिवपुर पैहै भाषी एम जिनेन्द्र ॥ कहैं यों दयाराम
 गुण गाय । नाथ कर कृपा हरो दुःख आय ॥ १२ ॥

(१८) बाईस परीषह ।

श्रुधा तृषा हिम उष्ण दंशमंशक दुःखभारी । निरावरण तन
 अरति खेद उपजावत नारी ॥ चर्या आसन शयन दुष्टवायक बध
 बंधन । याचें नहीं अलाम रोग तृण स्पर्श निबन्धन । मलज नित
 मान सन्मान वशप्रज्ञा और अज्ञानकर । दर्शन मलिन बाईस सब
 साधु परीषह जान नर ॥

दोहा—सूत्रपाठ अनुसार ये, कहे परीषह नाम ।

इनके दुख जे मुनि सहैं, तिन प्रति सदा प्रणाम ॥

१ क्षुधापरीषह—अनशन ऊनोदर तप पोषत हैं पक्ष मास दिन बीत गये हैं । जो नहीं बने योग्य भिक्षा विधि सूख अंग सब शिथिल भये हैं ॥ तब तहां दुस्सह भूखकी वेदन सहित साधु नहीं नेक नये हैं । तिनके चरण कमल प्रति प्रति दिन हाथ जोड़ हम सोस नये हैं ॥

२ तृषा परीषह—पराधीन मुनिवरकी भिक्षा पर घर लेयं कहें कछु नाहीं । प्रकृति विरुद्ध पारणा भुंजत बढ़त प्यासको आस तहां ही ॥ ग्रीष्मकाल पित्त अति कोपे लोचन दोय फिरे जब जाहीं । नीर न चहैं तीस से मुनिवर जयवन्तों वरतो जग माहीं ॥

३ शीत परीषह—शीतकाल सब ही जन कम्पै खड़े जहां वन वृक्ष दहे हैं । झंझा वायु वहे वर्षा ऋतु वर्षत बादल झूम रहे हैं ॥ तहां धीर तटिनी तट चौपट ताल पालपर कमं दहे हैं । सहैं सम्हाल शीत की बाधा ते मुनि तारण तरण कहे हैं ॥

४ उष्ण परीषह—भूख प्यास पीड़ उर अन्तर प्रज्वले आंत देह सब दागे । अग्नि स्वरूप धूप ग्रीष्मकी ताती वायु भालसी लागे ॥ तपै पहाड़ ताप तन उपजै कोप पित्त दाहज्वर जागे । इत्यादिक गर्मीकी बाधा सहैं साधु धैर्य नहिं त्यागे ॥

५—दंशमशक परीषह—दंश मशक माखी तनु काटे पीड़े बन पक्षी बहुतेरे । डसें व्याल विषहारे बिच्छू लगे खजुरे आन घनेरे ॥ सिंघ स्याल शुण्डाल सतावे रीछ रोज दुःख देय घनेरे । ऐसे कष्ट सहैं समभावन ते मुनिराज हरो अघ मेरे ।

६ नम्र परीषह—अन्तर विषय वासना वर्त्त बाहिर लोक लाज भय भारी । तातें परम दिगम्बर मुद्रा धर नहिं सके दीन

संसारि । ऐसी दुर्द्धर नग्न परीषद् जीते' साधु शील व्रतधारी ।
निर्विकार बालकवत् निर्भय तिनके पायन धोक हमारी ॥

७ अरति परीषद्—देश कालको कारण लहिके होत अचेन
अनेक प्रकारैं । तब तहां खिन्न होयें जगवासी कलबलाय धिरता-
पन छारैं । ऐसी अरति परीषद् उपजत तहां धीर धैर्य्य उर धारैं ।
ऐसे साधुनके उर अन्तर बसो निरन्तर नाम हमारे ॥

८ स्त्री परीषद्—जे प्रधान केहर को पकड़ै पक्षग पकड़ पान
से चम्पत । जिनकी तनक देख भौ बांकी कोटिन सूर दीनता
जम्पत ॥ ऐसे पुरुष पहाड़ उठावन प्रलय पवन त्रिय वेद पयम्पन ॥
धन्य धन्य ते साधु साहसी मन सुमेरु जिनको नहिं कम्पत ॥

९ चर्या परीषद्—चार हाथ परिमाण निरख पथ चलत दृष्टि
इत उत नहीं ताने' । कोमल पांच कठिन धरती पर धरत धीर
वाधा नहिं माने । नाग तुरङ्ग पालकी चढ़ते ते स्वाद उर याद न
आने'यो मुनिराज सहें चर्या दुःख तब दूढ़ कर्म कुलाचल भानैं ॥

१० आसन परीषद्—गुफा मसान शैल तरु कोटर निचसे'
जहाँ शुद्ध भू हेरे' । परिमित काल रहें निश्चल तन बारबार आसन
नहिं फेरे' ॥ मानुषदेव अचेतन पशु कृत बैठे बिपत आन जब घेरे'
ठौरन तजैं भजैं धिरता पद ते गुरु सदा बसो उर मेरे ॥

११ शयन परीषद्—जे महान् सोनेके महलन सुन्दर सेज सोय
सुख जोवे' । ते अब अचल अङ्ग एकासन कोमल कठिन भूमिपर
सोवे' ॥ पाहन खण्ड कठोर कांकरी गड़त कोर कायर नहीं होवे' ।
ऐसी शयन परीषद् जीतत ते मुनि कर्म कालिमा धोवे' ॥

१२ आक्रोश परीषद्—जगत् जीवयाधन्त चराचर सबके हित

सबको सुखदानी । तिन्हे देख दुर्वचन कहे शठ पाखण्डो ठग यह
अभिमानी । मारो याहि पकड़ पापीको तपसी भेष चोर है छानी ।
ऐसे कुवचन वाण की बिरियां क्षमा ढाल ओढ़ै मुनि ज्ञानी ॥

१३ बध बन्दन परीषह—निरपराध निर्वैर महामुनि तिनको
दुष्ट लोग मिल मारै । कोई खैच खम्मसे बांधे कोई पाचकमें पर-
जारै ॥ तहां कोप नहिं करै कदाचित पूरव कर्म विपाक बिचारै ।
समरथ होय सहै बध बन्धन ते गुरु सदा सहाय हमारे ॥

१४ याचना परीषह—घोर वीर तप करत तपोधन भये क्षीण
सूखी गलबांही । अस्थिचाम अवशेष रहे तनु नसा जाल फलके
जिस मांही ॥ औषधि असन पान इत्यादिक प्राण जांय पर या-
चित नाहीं । दुर्द्धर अयाचिक व्रत धारै करहिं न मलिन धर्म
परछांहीं ॥

१५ अलाभ परीषह—एकबार भोजनकी बिरियां मोन साध
बस्तीमें आवैं । जो नहिं बने योग भिक्षा विधि तो महन्त मन
खेदन लावैं । ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीते तब तप वृद्ध भावना
भावैं । यों अलाभकी कठिन परीषह सहै साधु सोही शिव पावैं ॥

१६ रोग परीषह—घात पित्त कफ श्रोणित चारों थें जब
घटे बढ़े तनु माहीं । रोग संयोग शोक तब उपजत जगत् जीव
कायर हो जाहीं ॥ पसी व्याधि वेदना दारुण सहै सूर उपचार न
चाहीं । आत्मलीन विरक्त देहसे जैन यती निज नेम निवाहीं ॥

१७ तृण स्पर्श परिषह—सूखे तृण और तीक्ष्ण कांटे कठिन
कांकरी पांय बिदारै । रज उड़ आन पड़े लोचनमें तीर फांस तनु
पीर बियागै ॥ तापर पर सहाय नहीं बांछत अपने करसों काढ़

न डारें । यों तृणस्पशं परीषह विजयी ते शुद्ध भव भव शरण हमारे ॥

१८ मल परीषह—यावज्जीव जल न्हीन तजो तिन नग्न रूप बन थान खड़े हैं । चले पसेव धूपकी बिरियां उड़त धूल सब अङ्ग भरे हैं ॥ मलिन देहको देख महा मुनि मलिन भाव उर नाहिं करे हैं । यों मल जनित परीषह जोतैं तिन्हें पाय हम सीस धरे हैं ॥

१९ सत्कार तिरस्कार परीषह—जे महान विद्यानिधिविजयी चिर तपसी गुण अतुल भरे हैं । तिनकी विनय वचन सों अथवा उठ प्रणाम जन नाहिं करे हैं ॥ तौ मुनि तहां खेद नहिं माने' उर मलीनता भाव हरे हैं । ऐसे परम साधुके अहनिशि हाथ जोड़ हम पांय परे हैं ॥

२० प्रज्ञा परीषह—तर्क छन्द व्याकरण कलानिधि आगम अलङ्कार पढ़ जाने' । जाकी सुमति देख परवादी बिलखे होय लाज उर आनै ॥ जैसे सुनत नाद केहरिको बन गयन्द भाजत भय मानै । ऐसी महाबुद्धिके भाजन ये मुनीश मद रञ्ज न ठाने ॥

२१ अज्ञान परिषह—सावधान बर्तै निशि वासर संयम शूर परम बैरागी । पालत गुंति गये दीरघ दिन सकल सङ्ग ममतापर त्यागी ॥ अवधिज्ञान अथवा मनपर्यय केवल ऋद्धि न आजहुं जागी ! यों विकल्प नहिं करें तपोधन सो अज्ञान विजयी बड़ भागी ॥

२२ अदर्शन परीषह—मैं चिरकाल घोर तप कीनो अजहुं ऋद्धि अतिशय नहिं जागे । तप बल सिद्ध होय सब सुनियत सो कलु बात झूठसी लागे ॥ यों कदापि चितमें नहिं चिन्तत समकित शुद्ध शान्तिरस पागे । सोई साधु अदर्शन विजयीताके दर्शनसे अघ भागे ।

किस कर्मके उदयसे कौन्सी परिषद् होती है ।

ज्ञानावरणीतैं दोय प्रज्ञा अज्ञान होय एक महामोह तैं अवर्शन बखानिये, अन्तराय कर्म सेती उपजे अलाभ दुःख सस चारित्र मोहनी केवल जानिये । नग्न निषध्यानारी मान सन्मान गारि याचना भरति सब ग्यारह ठीक ठानिये । एकादश बाकी रही वेदनी उदयसे कही बाईस परीषद् उदय ऐसे उर आनिये ।

अड्डिल छन्द—एकवार इन माहिं एक मुनिके कही । सब उन्नीस उत्कृष्ट उदय आवे सही ॥ आसन शयन विहार दोइ इन माहिकी । शीत उष्णमें एक तीन ये नाहिकी ॥

(१६) बारहमासा मुनिराजजीकी ।

राग मरहटी—मैं बन्दू साधु महन्त बड़े गुणवन्त सभी चित लाके । जिन अधिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ टेक ॥

चित चैतमें व्याकुल रहे काम तन दहे न कछु बन आवे । फूली बनराई देख मोह भ्रम छावे । जब शीतल चले समोर स्वच्छ होनीर भवन सुख भावे । किस तरह योग योगीश्वरसे बन छावे ॥

(भङ)—तिस अवसर श्रोमुनि ज्ञानो, रहैं अचल ध्यानमें ध्यानी । जिन काया लखी पयानी । जग ऋद्ध खाक समजानी ॥ उस समय धीर धर रहैं अमर पद लहैं ध्यान शुभ ध्याके । जिन अधिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ १ ॥

जब आवत है बैसाख होय तृण खाक तापसे जलके । सब करै धाम विश्राम पवन भलभलके ॥ ऋतु गर्मीमें संसार पहिन नर नार बख मलमलके । वे जलसे करते नेह जो हैं जी थलके ॥

(भङ्ग)—जिस समय मुनी महाराजे, तन नग्न शिखर गिरि राजे । प्रभु अचल सिंहासन राजे, कहो क्यों न कर्म दल लाजे । जो घोर महा तप करें मोक्षपद धरै बसे शिव जाके । जिन अधिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ २ ॥

जब पड़े ज्येष्ठमें ज्वाला होय तन काला धूपके मारे । घर बाहर पग नहिं धरे कोई घरवारे ॥ पानीसे छिड़के धाम करै विश्राम सकल नर नारी । धर खसकी टटिया छिपै लूहकी मारी ॥

(भङ्ग)—मुनिराज शिखर गिर ठाढ़े, दिन रैन ऋद्धि अति बाढ़े । अति तृषा रोग भय बाढ़े, तब रहै ध्यानमें गाढ़े ॥ सब सूखे सरबर नीर जलें शरीर रहै समझाके । जिन अधिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ३ ॥

आषाढ़ मेघका जोर बोलते मोर गरजते बादल । चमके बिजली कड़ कड़ पड़े धारा जल ॥ अति उमड़ नदियां नीर गहर गम्भीर भरे जलसे थल । भोगीको ऐसे समय पड़े कैसे कल ॥

(भङ्ग)—उस समय मुनी गुणवन्ते, तरुवट तट ध्यान धरन्ते ॥ अति काटे जीव अरु जन्ते, नहीं उनका सोच करन्ते । वे काटे कर्म डंजीर नहीं दिलगीर रहै शिव पाके । जिन अधिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ४ ॥

श्रावणमें है त्यौहार झूलती नार चढ़ी हिंडौले । वे गावे राग महार पहन नये चोले ॥ जग मोह तिमिर मन बसे सर्व तन कसे धैत भ्रकभोले । उस अवसर श्रीमुनिराज बनत हैं भोले ॥

(भङ्ग)—वे जीतें रिपुसे लरके, कर ज्ञान खड्ग ले करके । शुभ शुक्ल ध्यानको धरके, परफुल्लित केवल बरके ॥ नहीं सहै वो

यमकी नास लहै शिव बास अघात नशाके । जिन अधिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ५ ॥

भादव अधियारी रात सूके ना हाथ घुमड़ रहे बादर । बन मोर पपीहा कोयल बोले दादुर ॥ अति मच्छर भिन भिन करे सांप फुंकरे पुकारे थलवर । बहु सिंह बघेरा गज घूमें बन अन्दर ॥

(भड़)—मुनिराज ध्यान गुण पूरे, तब काटे कर्म अंकुरे । तनु लिपटत कान खजूरे, मधु मक्ष ततइयें भूरे ॥ चिटियोंने बिल तनकरे आप मुनि खड़े हाथ लटका के । जिन अधिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ६ ॥

आश्विनमें वर्षा गई समय नहिं रही दशहरा आया । नहिं रही वृष्टि अरु कामदेव लहराया ॥ कामी नर करें किलोल बनावे डोल करें मन भाया । है धन्य साधु जिन आतम ध्यान लगाया ॥

(भड़)—बसु याम योगमें भीने, मुनि अष्ट कर्म क्षय कीने । उपदेश सबनको दीने, भविजनको नित्य नवीने ॥ हैं धन्य धन्य मुनिराज ज्ञानके ताज नमूँ शिर नाके । जिन अधिर लखा संसार बसे बन जाके ॥ ७ ॥

कार्तिकमें आया शीत भई विपरीत अधिक शरदाई । संसारी खेले जुआ कर्म दुखदाई ॥ जग नर नारीका मेल मिथुन सुख केल करे मन भाई । शीतल ऋतु कामी जनको है सुखदाई ॥

(भड़)—जब कामी काम कमावे, मुनिराज ध्यान शुभ ध्यावे । सरवर तट ध्यान लगावे, सो मोक्ष भवन सुख पावे ॥ सुनि महिमा अपरम्पार न पावे पार कोई नर गाके । जिन ॥ ८ ॥

अगहनमें टपके शीत यहो जगरोत सेज मन भावे । अति

शीतल चलै समीर देह थरावे ॥ ऋङ्गार करे' कामिनी रूप रसठनी
साम्हने आवे । उस समय कुमति बन सबका मन ललचावे ॥

(भङ्ग)—योगीश्वर ध्यान धरे हैं, सरिताके निकट खरे हैं
कहां ओले अधिक परे हैं, मुनि कर्मका नाश करे हैं । जब पड़े
बर्फ घनघोर करे' नहीं शोर जयी दृढ़ताके । जिन० ॥ ८ ॥

यह पौष महीना भला शीतमें घुला काँप्ती काया । वे घन्य
गुरु जिन इस ऋतु ध्यान लगाया ॥ घरबारी घरमें छिपे बख
तन लिपे रहे जौड़ाया । तज बख दिगम्बर हो मुनि ध्यान लगाया ॥

(भङ्ग)—जलके तट जग सुखदाई, महिमा सागर मुनिराई ।
धर धीर खड़े हैं भाई निज आत्मसे लवलाई ॥ है यह संसार
असार वे तारणहार सकल बसुधाके जिन० ॥ १० ॥

है माघ वसन्त वसन्त नार अरु कन्य युगल सुख पाते । वे
पहिने बख वसन्त फिरें मदमाते ॥ जब चढ़े मयनकी शयन पड़े
नहीं चैन कुमति उपजाते । है बड़े धीर जन बहुधा वे ढिग जाते ॥

(भङ्ग)—तिस समय जु हैं मुनि ज्ञानी, जिन काया लखी
पयानी । भवि दूबत बोधे प्रानी, जिन ये वसन्त जिय जानी ॥
चेतन सो खेले' होरी ज्ञान पिचकारी योग जल लाके । जिन०

जब लगे महीना फाग करे' अनुराग सभी नरनारी । लै फिरे
फे'टमें गुलाल कर पिचकारी ॥ जब श्रोमुनिवर गुणज्ञान अवल
धर ध्यान करे' तप भारी । कर शील सुधारस कर्मन ऊपर डारी ॥

(भङ्ग)—कीर्ति कुमकुमें बनावे', कर्मसे फाग रचाव । जो
बारहमासा गावे', सो अजर अमर पद पावे' ॥ यह भाखें जिया-
लाल धर्म गुणमाल योग दर्शाके । जिन अधिर लखा ॥ १२ ॥

(२०) बाईस परीषह ।

(रत्नचन्द्र कृत सवेया इकतीसा)

क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण दंशमशकादि नग्न, अरति, व खो, चर्या, निषद्या बखानिये । शय्या, आक्रोश, बधबधन, त्रदलस ही याचना, अलाम, रोग, तृणस्पर्श जानिये । मलस्पर्श सत्कार तिरस्कार प्रज्ञा कही एकबीस अज्ञान यह अनुमानिये । अदर्शन सहित ये बाईस परीषह भेद भिन्न २ कहूँ अन भूप उर आनिये ॥

१ क्षुधा परीषह पाश्चमास उपवास ठानत श्रीमुनिराई । धारै अति दूढ़ ध्यान क्षुधा सहै अधिकाई ॥ सूके गल और बांही तन पिंजर हो जाई । तब भी चिगते नाहीं बन्द तिनके पाई ॥

२ तृषा परीषह—लागे प्यास अपार ग्रीष्म ऋतुके मांही कौपै उर अति पित्त सूके बंट तहां ही ॥ ध्यान सुअमृत सींच तीक्ष्ण तृषा निवारै । चलै चित्त तिन नांहि तिन पद हम सिर धारै ॥

३ शीत परीषह—शीतकालके मांहि जगजन कपै सोई । तर-वर कानन मांहि हिम सो सूखें जोई ॥ बहेजुभका चाह सर सरिता तट टाढ़े । बाधा सहै अपार ते मुनि ध्यानहिं माढ़े ॥

४ उष्ण परीषह—ग्रीष्म ताप प्रचण्ड मारुत अग्नि समाना । सूखें सरवर नीर दुःखको नाहि प्रमाना ॥ सैल शिखर मुनि ध्यान धारै कर्म नसावै । सहै परिषह उष्ण तिनके हम गुन गावै ॥

५ दंशमशक परीषह—दंशमशक अहि व्याल पीड तनु बहु-तेरे । मृगपति भल्लक स्याल वृश्चिका और गुहेरे ॥ सहत कष्ट इमिघोर लौ निज आतमलागी । दंशमशक इहि भांति जीतत ते बड़भागी ॥

६ नग्न परीषद्—लोकलाज सब छाड़ बिहरत नग्न महीपै ।
धरै दिगम्बर रूप हिये विकार न हीप ॥ शील सवत ढूढ़ लीन
ध्यावत ते शिवनारी । निर्भय बाल समान तिन प्रति धोक हमारी

७ अरति परीषद्—उपजे काल जु आई जो कहुं देश मभारा
तो जगवासी जीव विकल्प करे अपारा ॥ धीरज तजहिं न साधते
परमात्म ध्यावै । विजई अरित परीष वे गुरु शिवपद पावै ॥

८ स्त्री परीषद्—(छन्दहरी गोता) जे शूर पन्नगको गहैं कर
पकर मृगपतिको रहैं । वक्र भौंह बिलोकि जिनकी कोटि योधा
भय गहैं ॥ रूप सुन्दर जोषिता युत करति क्रीड़ा मन रमें । ते
साधु निश्चल कनक नग सम तिनहिके हम पद नमें ॥

९ चर्या परीषद्—चार कर सोधत सुपथ ते दृष्टि इत उत
नहिं करे । महा कोमल पाद जिनके कठिन धरती पर धरे ॥
चढ़ते ते यह नाग शिवका तासु याद न लावहीं । सहैं चर्या
दुःख वह गुरु तिनहि हम सिर नावहीं ॥

१० निषद्या परीषद्—शैल सीस समान कानन गुफा मध्य
बसे तदा । तहां आन उपजहिं कष्ट कौनहुं कर्म योगनते सदा ।
मनुष्य सुर पशु अरु अचेतन विपत आन सतावही । ठौर तज
नहिं भजे ही धिर पद निषद विजयी कहाव ही ॥

११ शय्या परीषद्—हेम महलन चित्रसारी सेज कोमल
सोवते । विकट बनमें एकले है कठिन भुव तज जोवते ॥ गड़त
पाहन खण्ड अति ही तासुको कायर नहीं । ऐसी परीषद् सयन
जीतन नमो तिनके पद तहीं ।

१२ आक्रोश परीषद्—जगत् जन मुनि देखिके तिन दुर बचन

माथे कुधी । पाखण्डी ठग अति है जु तस्कर मारिये यह दुरबुधी ॥
बचन ऐसे सुनत जिनके क्षमा ढाल जु ओढ़ हों । तिनहीं के हम
पद सुपरसहिं मान मद जे छोड़ हों ॥

१३ बधबन्धन परीषह—गहें समता भाव सब सों दुष्ट मिल
मारें जिन्हें । बांधई पुनि खम्भ सों ते अग्निमें जारें तिन्हें ॥ करति
कोप कदाचि नाहीं पूर्व कर्म विचार हों । सहें बध बन्धन परीषह
ते सकल अघटारहीं ॥

१४ याचना परीषह—रोग कषट्ठुं जो आनि उपजै तन सकल
दुरबल भयो । नसाजाल जु रुधिर सूखे अस्थि चाम सु रहिगयो ॥
सहें धीर जु कष्ट वे मुनि महा दुर्द्धर व्रत धरें ॥ असन भेषज
पान आदिक याचना कभु ना करें ॥

१५ अलाभ परीषह—एक बार अहार बिरियां मौनले बस्ती-
धसें ॥ जो मिले नहिं योग भिक्षा तौ न खेद हिये लसें ॥ भ्रमत
बहु दिन बीत जाई भावना भावे खरे । सो अलाभ परीष विजयी
ते सु शिवरमनी बरे ॥

१६ रोग परीषह (पञ्चरी छन्द) तन वात पित्त कफ रक्त
आदि । बाढें तन जब बहु लहि विषाद ॥ ते सहें वेदना मुनि
अगाध । आतम सुलीन मैं नमो साध ॥

१७ तृणस्पर्श परीषह—तीक्ष्ण कांटे कंकर अपार । सुखे तृण
तिनके पद विदार ॥ रज उड़ि लोचनमें परहि आय । काढ़ै न, न
चाहें पर सहाय ॥

१८ मल परीषह—जल हौन तजो जावत सु एष । पुनि चले
अङ्गमें बहु पसेव ॥ उठि कै जु धूल लिपटै सुअङ्ग । तिनके सुभाव
बरते अमङ्ग ॥

१६ सत्कार तिरस्कार परीषद्—जो विद्या निधि बिजई महान,
चिर तपसी गुनको नहिं प्रमान ॥ नहिं करहिं विनय तिनकी जु
कोय । तो विकल्प उर आनें न सोय ॥

२० प्रज्ञा परीषद् (हरिगोता छन्द) तर्क छन्द जु व्याकरण
गुन कला आगम सब पढ़े । देखि जाकी सुमतिवादी विलष लज्यों
में बढ़े ॥ सुनत जैसे नाद केहर बन गयन्द जु भाजही । महा मुनि
इमि प्रज्ञा भाजन रञ्ज मद नहि छाजही ॥

२१ अज्ञान परीषद्—करो दीर्घ काल बहु तप कष्ट नानाविधि
सहो । तीन गुप्ति सम्हार निश दिन चित्त इत उत नहिं बहो ॥
अबध मनपर्य्यय जु केवल ज्ञान अज हूं नहि जगे । तजै इहि विधि
साधु विकल्प ते सुनिज आत्म पगे ॥

२२ अदर्शन परीषद्—काल बहु व्रत नेम पाले सावधान रहे
सदा । होय तप सो सिद्ध शिवकी झूठ सो लागे कदा ॥ यह भाव
मुनि उरमें न आने परम समता धारहीं । सो आदर्श परीष बिजई
सकल कम निवारहीं ॥

२३ परीषद् उदय—ज्ञानावर्णोंके उदय प्रज्ञा व अज्ञान गुग्म
दर्शना वर्ण त आदर्शन बखानिये । अन्तरायके प्रकाश उपजै अलाभ
जांस बरनो चारित्र मोह सातों ठीक ठानिये ॥ नग्न निष दारति
ह्योक्रोस याचना सत्कार तिरस्कार जु एकादश जानिये । एकादश
बाकी रही वेदनी उदयसे कही बार्हस परीषद् सब ऐसी भांति
मानिये ॥ अडिह—एकबार इन मांहि एक मुनिकै कही । सब
उन्नीस उत्कृष्ट उदय आवे सही । आसन सयन चिहार दोह इन
मांहिने । शीत उष्णमें एक तीन ये नाहिने ॥

(२१) कारहमासा राजकुल ।

राग मरहटी (झड़ी)

मैं लूंगी श्रीअरहन्त सिद्ध भगवन्त साधु सिद्धान्त चारका
सरना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना ॥ टेक ॥

आषाढ़ मास (झड़ी)

सखि आया आषाढ़ घन घोर मोर चहुं ओर मचा रहे शोर इन्हे
समझावो । मेरे प्रीतम की तुम पवन परीक्षा लावो । हैं कहां मेरे
भरतार कहां गिरनार महाव्रत धार बसे किस बनमें । क्यों बांध
मोड़ दिया तोड़ क्या सोची मनमें ॥

(भर्वटै)—जा जारे पपैया जारे प्रीतमको दे समझारे । रही
नौ भव संग तुम्हारे, क्यों छोड़ दई मझधारे ॥

(झड़ी)—क्यों बिना दोष भये रोष नहीं सन्तोष यहो अफसोस
बात नहिं बूझी । दिये जादों छप्पन कोड़ छोड़ क्या सूझी । मोहि
राखो शरण मंझार मेरे भर्तार करो उद्धार क्यों दे गये झुरना ।
निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना ॥

श्रावण मास (झड़ी)

सखि श्रावण संबर करे समन्दर भरे दिगम्बर धरे क्या
करिये । मेरे जी में ऐसी आवे महाव्रत धरिये । सब तजूँ हार
शृंगार तजूँ संसार क्यों भव मंझार मैं जी भरमाऊँ । क्या परा-
धीन तिरियाका जन्म नहिं पाऊँ ॥

(भर्वटै) सब सुन लो राज दुलारी । दुख पड़ गया हम पर
भारी । तुम तज दो प्रीति हमारी कर दो संयम की तयारी ।

(झड़ी)—अब आगया पावस काल करो मत टाल भरे सब

ताल महा जल बरसे । बिन परसे श्रीभगवन्त मेरा जी तरसे ।
मैं तज दई तीज सलौन पलट गई पौन मेरा है कौन मुझे जग
तरना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना ॥

भादों मास (भड़ी)

सखि भादों भरे तलाव मेरे चितचाव करूंगी उछाव से
सोलहकारण । करूँ दसलक्षण के व्रत से पाप निवारण । करूँ
रोट तीज उपवास पञ्चमी अकास अष्टमी खास निशल्य मनाऊँ ।
तपकर सुगन्ध दशमी को कर्म जलाऊँ ॥

(भर्षट्टे)—सखि दुद्धर रसकी बारा । तजिहार चार पर-
कारा । करूँ उग्र उग्र तप सारा । ज्यों होय मेरा निस्तारा ।

(भड़ी)—मैं रत्नत्रय व्रत धरूँ चतुर्दशी करूँ जगत् से तिरूँ
करूँ पखवाड़ा । मैं सब से क्षिमाऊँ दोष तजूँ सब राड़ा । मैं
सातों तत्व विचार कि गाऊँ मल्हार तजा संसार तौ फिर क्या
करना । निर्नेम नेम बिन हमें जगत् क्या करना ॥

आसोज मास (भड़ी)

सखि आगया मास कुवार लो भूषण तार मुझे गिरतार का
दे दो आज्ञा । मेरे पाणिपात्र आहारकी है परतिज्ञा । लो तार ये
चूड़ामणी रतनकी कणी सुनों सब जनी खोल दो बैनी । मुझको
अवश्य परभातहि दीक्षा लैनी ॥

(भर्षट्टे)—मेरे हेतु कमण्डल लावो । एक पीछी नई मंगावो
मेरा मत ना जो भरमावो । मम सूते कर्म जगावो ॥

(भड़ी)—हैं जगमें असाता कर्म बड़ा वेशर्म मोहके भरमसे
धर्म न सूझै । इसके वश अपना हित कल्याण न बूझै । जहाँ मृग

तृष्णाकी धूर वहां पानी दूर भटकना भूर कहां जल भरना ।
निर्नेम नेम बिन हमें जगत क्या करना ।

कार्तिक मास (भङ्गी)

सखि कार्तिक काल अनन्त श्रीअरहन्तकी सन्त महन्तने आज्ञा
पाली । धर योग यत्न भव भोगकी तृष्णा टाली । सजे चौदह
गुण अस्थान खपर पहचान तजे रु मक्कान महल दिवाली । लगा
उन्हें मिष्ट जिन धर्म अमावस काली ॥

(भर्वटै)—उन केवल ज्ञान उपाया । जगका अन्धेर मिटाया ।
जिसमें सब विश्व समाया । तन धन सब अधिर बताया ॥

(भङ्गी)—हैं अधिर जगत सम्बन्ध अरी मतिमन्द जगत्का
अन्ध है धुन्ध पसारा । मेरे प्रीतमने सत जानके जगत् बिसारा ।
मैं उनके चरणकी चेरी तू आज्ञा दे मा मेरी । है मुझे एक दिन
मरना । निर्नेम नेम० ॥

अगहन मास (भङ्गी)

सखि अगहन ऐसी घड़ी उदय में पड़ी मैं रह गई खड़ी दरस
नहिं पाये । मैंने सुकृत के दिन विरथा योंही गँवाये ।

नहीं मिले हमारे पिया न जप तप किया न संयम लिया ।
अटक रही जगमें । पड़ी काल अनादिसे पापकी बेड़ी पगमें ॥

(भर्वटै)—मत भरियो मांग हमारी । मेरे शीलको लागे
गारी । मत डारो अञ्जन प्यारी । मैं योगन तुम संसारी ॥

(भङ्गी)—हुये कन्त हमारे जती मैं उनकी सती पलट गई
रती तो धर्म नहिं खण्डू । मैं अपने पिताके वंशको कैसे भंडू ।
मैं मण्डा शील सिङ्गार अरी नथ तार गये भर्त्सारके संग आभरना
निर्नेम नेम बिन० ॥

पौष मास (ऋषी)

सखि लगा महीना पोह ये माया मोह जगतसे द्रोह र प्रीत करावै । हरे ज्ञानावरणी ज्ञान अदर्शन छावै । पर द्रव्यसे ममता हरे तो पूरी परं जु सम्बर करै तो अन्तर टूटै । अस ऊंच नीच कुल नामकी संज्ञा छूटै ॥

(ऋर्वट्टे)—क्यों ओछी उमर धरावै । क्यों सम्पतिको बिल गावै । क्यों पराधीन दुःख पावै । जो संयममें चित लावै ॥

(ऋडी)—सखि क्यों कहलावै दीन क्यों हो छवि छीन क्यों विद्याहीन मलीन कहावै । क्यों नारि नपुंसक जन्मे कर्म नचावै । वे तजै शील शृङ्गार रलै संसार जिने दरकार नरकमें पड़ना । निर्न०

माघ मास (ऋषी)

सखि आगया माह बसन्त हमारे कन्त भये अरहन्त वो केवल-ज्ञानी । उन महिमा शील कुशोलकी ऐसे बखानी । दिये सेठ सुदर्शन सूल भई मखतूल वहां बरसे फूल हुई जयबाणी वे मुक्ति गये अरु भई फलङ्कित राणी ॥

(ऋर्वट्टे)—कीचकने मन ललचाया । द्रुपदोपर भाव धराया । उसे भोमने मार गिराया । उन किया जैसा फल पाया ॥

(ऋडी)—फिर गह्वा दुर्योधन चीर हुई दिलगीर जुड़ गई भीर लाज अति आवै । गये पाण्डु जुयेमें हार न पार बसावै । भये परगट शासन बीर हरी सब पीर बन्धाई धीर पकर लिये चरना । निर्नम नेम बिन० ॥

फागुन मास (ऋषी)

सखि आया फाग बड़ भाग तो होरी त्याग अदांही लाग कै

मैनासुन्दर । हरा श्रीपालका कुष्ट कठोर उदम्बर । दिया धवल
सेठने डार उदधिकी धार तो होगये पार वे उस हो पलमें । अरु
जापरणी गुणमाल न डूबे जलमें ॥

(भर्वट्टे)—मिली रैन मंजूषा प्यारी । जिन ध्वजा शील की
धारी । परी सेठ पै मार करारी । गया नकमें पापाचारी ॥

(भड्डी)—तुम लखो द्रोपदी सती दोष नहिं रती कहें दुर्मती
पक्षके बन्धन । हुआ धातकी खण्ड जरूर शील इस खण्डन । उन
फूटे घड़े मंभार दिया जल डाल तो वे आधार धमा जल भर
ना । निनेम नेम बिन० ॥

वैश्र मास (भड्डी)

सखि चेत्रमें विन्ता करे न कारज सरे शीलसे टरे कर्मकी
रेखा । मैंने शीलसे भीलको होता जगत् गुरु देखा । सखी शीलमें
सुलसां तिरो सुतारा फिरी खलासी करी श्रीरघुनन्दन । अरु मिली
शील परताप पवनसे अञ्जन ॥

(भर्वट्टे)—रावणने कुमत उपाई । फिर गया विभीषण
भाई । छिनमें जा लंक गमाई । कुछ भी नहिं पार बसाई ॥

(भड्डी)—सीता सती अग्निमें पड़ी तो उस ही घड़ी वह
शीतल पड़ी चढ़ी जल धारा । खिल गये कमल भये गगनमें जय
जल कारा । पद पूजे इन्द्र धरेन्द्र भाई शीतेन्द्र श्रीब्रजेन्द्रने ऐसा
बरना । निनेम नेम बिन० ॥

बैशाख मास (भड्डी)

सखी आई बैशाखी भेष लई में देख ये ऊरध रेख पड़ी मेरे
करमें । मेरा हुआ जन्म यु हीं उग्रसेनके घरमें । नहिं लिखा करम

मैं भोग पडा है जोग करो मत सोग जाऊं गिरनारी । है मात पिता अरु भ्रातसे क्षमा हमारी ॥

(भवैटै)—मैं पुण्य प्रताप तुम्हारे । घर भोगे भोग अपारे । जो विधिके अड्डे हमारे । नहिं टरै किसीके टारे ॥

(भड्डी)—मेरो सखी सहेली बीर न हो दिलगीर धरो बित धीर मैं क्षमा कराऊं । मैं कुलको तुम्हारे कबहुं न दाग लगाऊं । वह ले आहा उठ खडी थी मङ्गल घड़ी बनमें जा पड़ी सुगुरुके चरना । निर्नेम नेम बिन० ॥

जेठ मास (भड्डी)

अजी पड़े जेठकी धूप खड़े सब भूप वह कन्या रूप सती बड़ भागन । कर सिद्धनको प्रणाम किया जग त्यागन । अजि त्यागे सब संसार चूड़ियां तार कमण्डलु धार के लई पिछोटी । अरु पहर के साड़ी स्वेत उपाटी बोटी ॥

(भवैटै)—उन महाउग्र तप कीना । फिर अच्युतेन्द्र पद लीना । है धन्य उन्हींका जोना । नहिं विषयनमें चित दीना ॥

(भड्डी)—अजी त्रिया वेद मिट गया पाप कट गया पुण्यचढ़ गया बढ़ा पुरुषारथ । करे धर्म अरथ फल भोग रुचे परमारथ, वो स्वर्ग सम्पदा भुक्ति जायगी मुक्ति जैनकी उक्तिमें निश्चय धरना । निर्नेम नेम० ॥

जो पढ़े इसे नर नारि बड़े परिवार सब संसारमें महिमा पावै । सुन सतियन शील कथान विघ्न मिट जावै । नहिं रहै सुहागिन दुखी होय सब सुखी मिटे बेरुपी करै पति आदर । वे होय जगत् मैं महा सतियोंकी चादर ॥

(भवटें)—मैं मानुष कुलमें आया । अरु जाति यती कह-
लाया । है कर्म उदयकी माया । बिन संयम जन्म गवाया ॥

(भड्डी)—ग्राम संवत् कविवंश नाम—

है दिल्ली नगर सुवास वतन है खास फाल्गुन मास अठाहीं
आठैं । हौं उनके नित कल्याण छपाकर बाटैं । अजी विक्रम अश्व
उनोस पे धर पैतीस श्रीजगदीशका ले लो शरणा । कहै दास नेन-
सुख दोष पै दृष्टि न धरना । मैं लूंगी श्रोअरहन्त सिद्ध भगवन्त
साधु सिद्धान्तचार का सरना । निर्नेम नेम बिन० ॥ १३ ॥

(२२) बारह भावना

(मैयालाल कृत)

चौपाई—पंच परम गुरु बन्दन करूं । मन बव भाव सहित
उर धरूं । बारह भावना पावन जान । भाऊ आत्म गुण पहि-
चान ॥१॥ थिर नहीं दीखे नयनो वस्त । देहादिक अरु रूप समस्त
थिर बिन नेह कौनसे करूं । अधिर देख ममता परिहरूं ॥ २ ॥
अशरण तोहि शरण नहीं कोय । तीन लोकमें दूग धर जोय ॥
कोई न तेरी राखन हार । कर्म बसे चेतन निरधार ॥ ३ ॥ अरु
संसार भावना येह । पर द्रव्यनसे कैसे नेह ॥ तू चेतन वे जड़
सर्वग । तारें तजो परायो संग ॥४॥ जोव अकेला फिरे त्रिकाल ।
ऊरध मध्य भवन पाताल ॥ दूजा कोई न तेरे साथ । सदा
अकेला भ्रमे अनाथ ॥ ५ ॥ भिन्न सदा पुद्गलसे रहे । मर्म
बुद्धिसे जड़ता गहे ॥ वे रूपी पुद्गलके लब्ध । तू बिन्मू रति
सहा अवन्ध ॥ ६ ॥ अशुचि देख देहादिक अङ्ग । कौन कुबस्तु
लगी तो संग ॥ अस्ति चाम रुधिरादिक गेह । मल मूत्रनि लख

तजो स्नेह ॥७॥ आश्रव परसे कीजे प्रीति । ताते बंध पड़े विपरीत ॥
 पुद्गल तोहि अपन यो नाहि । तू चेतन यह जड़ सब आहि ॥८॥
 सम्बर परको रोकन भाव । सुख होवेको यही उपाय ॥ आवे नहीं
 नये जहां कर्म । पिछले रुक प्रगटे निज धर्म ॥ ९ ॥ थिति पूर्ण है
 खिर खिर जाय । निर्जर भाव अधिक अधिकाय ॥ निर्मल होय चिदा-
 नंद आप । मिटे सहज परसंग मिलाप ॥१०॥ लोक मांहि तेरी कछु
 नाहि । लोक अन्य तू अन्य लखाहि ॥ वह सब षट द्रव्यनका धाम ।
 तू चिन्मूरति आतमराम ॥११॥ दुर्लभ परको रोकन भाव । सो तो
 दुर्लभ है सुन राव । जो तेरे हैं ज्ञान अनन्त । सो नहिं दुर्लभ सुनो
 महन्त ॥ १२ ॥ धर्म स्वभाव आप ही जान । आप स्वभाव धर्म
 सोई मान ॥ जब वह धर्म प्रगट तोहि होइ । तब परमात्म पद लख
 सोइ ॥ १३ ॥ ये ही बारह भावन सार । तीर्थकर भावें निर्धार ।
 होय विराग महाव्रत लेय । तब भव भ्रमण जलांजलि देय ॥१४॥
 भैया भावो भाव अनूप । भावत होय तुरत शिव भूप । सुख अनन्त
 बिलसो निशि दीश । इम भावो स्वामी जगदीश ॥ १५ ॥
 दोहा—प्रथम अधिर अशरण जगत्, कहेअन्य अशुचान ।

आश्रव संबर निर्जरा, लोक बोध तुम भान ॥ १६ ॥

(२३) बारह भावना भूधरदास कृत ।

दोहा—राजा राणा छत्रपति, हथियनके असवार । मरणा सब
 को एक दिन, अपनी अपनी वार ॥१॥ दल बल देवी देवता, मात
 पिता परिवार । मरती विरियां जीव को, कोई न राखनहार ॥२॥
 दाम बिना निर्धन दुःखी, तृष्णा बश धनधान । कहीं न सुख

संसारमें, सब जग देखो छान ॥ ३ ॥ आप अकेला अघतरे, मरे
अकेला होय । यूँ कबहुँ इस जीवका, साथी सगा न कोय ॥ ४ ॥
जहां देह अपनी नहीं, तहां न अपना कोय । पर संपति पर प्रगट्ये,
पर हैं परिजन लोय ॥ ५ ॥ दिपे चाम चादर मढ़ी, हाड़ पीजरा
देह । भीतर या सम जगतमें, और नहीं धिन गेह ॥ ६ ॥

सोरठा—मोह मोदके जोर, जगवासी घूमैं सदा । कर्म चोर
चहुँ ओर, सरबस लूटे' सुध नहीं ॥ ७ ॥ सत्गुरु देय जगाय, मोहि
नींद जब उपशमै । तब कुछ बने उपाय, कर्म चोर आवत रुकै ॥ ८ ॥

दोहा—ज्ञान दीप तप तेल भर, घर सोधैं भ्रम छोर । या
विधि बिन निकसे नहीं, बैठे पूर्व चोर ॥ ९ ॥ पंचमहाव्रत संवरण,
सुमति पंच परकार । प्रबल पञ्च इन्द्री विजय, धार निर्जरा सार
॥ १० ॥ चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान । तामें जीव
अनादिसे, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥ ११ ॥ याचे सुर तर देय सुख,
चिन्तन चिन्ता गेन । बिन याचे बिन चिन्तवे, धर्म सकल सुख
देन ॥ १२ ॥ धन कन कंचन राज सुख, सबै सुलभ कर जान ।
दुर्लभ है संसारमें एक यथार्थ ज्ञान ॥ १३ ॥ सम्पूर्ण ॥

{२४} बारह भावना कुधजनदास कृत

गीता छन्द—जेती जगतमें वस्तु तेतीं अधिर पर्ययते सदा ।
परणामन राखन नाहिं समरथ इन्द्रचक्री मुनि कदा ॥ तन धन
यौवन सुत नारी पर कर जान दामिन दमकसा । ममता न कीजे
धारि समता मानि जलमें नमकसा ॥ १ ॥ चेतन अचेतन परिग्रह
सब हुआ अपनी तिथि लहैं । सो रहैं आप करार माफिक अधिक

राखे ना रहे ॥ अब शरण काकी लेयगा जब इन्द्र नाही रहत हैं ।
 शरण तो इक धर्म आत्म जाहि मुनिजन गहत हैं ॥ २ ॥ सुर नर
 नरक पशु सकल हेरे कर्म चरे बन रहे । सुख शाश्वता नहीं
 भासता सब विपतिमें अति सन रहे ॥ दुःख मानसी तो देवगतिमें
 नारकी दुःख हो भरे । तिर्यंच मनुज वियोग रोगी शोक संकटमें
 जरे ॥ ३ ॥ क्यों भूलता शठ फूलता है देख पर कर थोकको ॥
 लाया कहां ले जायगा क्या फौज भूषण रोक को । जन्मन मरण
 तुम्ह एकले को काल केता होहेगा । संग अरु नहीं लगे तेरे सीख
 मेरी सुन भगा ॥ ४ ॥ इन्द्रीनसे जाना न जावे तू चिदानन्द अलक्ष
 है । स्व सम्बेदन करत अनुभव हेत तब प्रत्यक्ष है । तन अन्य जन
 जानो सरूपी तू अरूपी सत्य है । कर भेद ज्ञान सो ध्यान धर निज
 और बात असत्य है ॥ ५ ॥ भया देख राचा फिरे नाचा रूप सुन्दर
 तन लिया । मल मूत्र भाड़ा भरा गाढ़ा तू न जाने भ्रम गया ॥
 क्यों सूग नाही लेत आतुर क्यों न चातुरता धरे । तोहि काल
 गटके नाहि अटके छोड़ तुम्हको गिर परे ॥ ६ ॥ कोई खरा अरु कोई
 बुरा नाही वस्तु विविधि स्वभाव है । तू वृथा विकल्प ठान उरमें
 करत राग उपाव है ॥ यूँ भाव आश्रव बनत तू ही द्रव्य आश्रव
 सुन कथा । तुम्ह हेतु ते पुद्गल करम बन निमित्त हो देते व्यथा
 ॥ ७ ॥ तनभोग जगत् सरूप लख हर भविक गुर शरणा लिया ।
 सुन धर्म धारा भर्म गारा हर्ष रुचि सन्मुख भया । इन्द्रो अनिन्द्रो
 दाधि लीनी त्रस स्थावर बस तजा । तब कर्म आश्रव द्वार रोके
 ध्यान निजमें जा सजा ॥ ८ ॥ तज शल्य तीनो बरत लीनों बाह्य
 भ्यन्तर तप तपा । उपसर्ग सुरनर जड़ पशु कृत सहा निज आत्म

जपा ॥ तब कर्म रस बन होन लागे द्रव्य भावन निर्जरा । सबकां
हर के मोक्ष घरके रहत चेतन ऊजरा ॥ ८ ॥ बिच लोकनन्तालोक
माहीं लोक में द्रव सब भरा । सब भिन्न भिन्न अनादि रचना
निमित्त कारणकी करा ॥ जिन देव भासा तिन प्रकाशा मर्म नाशा
सुन गिरा । सुर मनुष तिर्यंच नारकी है ऊर्ध्व मध्य अधोधरा ॥
॥ १० ॥ अनन्त काल निगोद अटका निकस थावर तन धरा ।
भूषारि तेज बयार ब्रह्म के वे इन्द्रिय त्रस अवतारा ॥ फिर हो ते -
इन्द्री वा चौ इन्द्री पंचेन्द्री मन बिना बना । मन युत मनुष गति
होना दुर्लभ ज्ञान अति दुर्लभ घना ॥ ११ ॥ न्हाना धोना तीर्थ
जाना धर्म नाही जप जपा । नग्न रहना धर्म नाही धर्म नाही तप
तपा ॥ बर धर्म निज आत्म स्वभावा ताहि बिन सब निष्फला ।
बुध जन धर्म निज धार लीना तिन ही कीना सब भला ॥ १२ ॥
दोहा । अधिर शरण संसार है, एकत्व अनित्यहि जान ।

अशुचि आश्रम संवरा, निर्जन लोग बखान ॥ १३ ॥

बोध औ दुर्लभ धर्म ये, बारह भावन जान ।

इनको ध्यावे जो सदा, क्यों न लहै निर्वाण ॥ १४ ॥

॥ इति बारह भावना बुधजन कृत सम्पूर्णः ॥

(२५) बारह भावनारत्नचन्द्रजीकृत

सवेया ॥ ३१ ॥

भीम उपभोग जे कहे हैं संसार रूप रमाधन पुत्र ओकलत्र
आदि जानिये ॥ ज्यूं ही जल बुद बुद प्रत्यक्ष है लखाव तनु विद्युत्
बलत्कार स्थिर न रहानिये । त्यूं ही जग अधिर विलास को
असार जान धिर नहीं दीसे सो अनादि अनुमानिये ॥ यह जो

विचारे सो अनित्य अनुप्राक्षा कह प्रथम ही भेद जिनराज जो
बखानिये ॥ १ ॥ निजेंन अरण्य माहिं ग्रहे मृग सिंह धाय शरण
न दीसे अशरण ताहि कहिये । हरिहरादि चक्रवर्त्ति पद्यूं अथिर
गिनो जन्म मरण सा अनादि ही ते लहिये ॥ याहीको विचारिय
असार संसार जान एक अवलंब जिन धर्म ताहि गहिये । दूढ़ता
हिये धार निज आत्माको कर विचार तजके विकार सब निश्चल
हो रहिये ॥ २ ॥ कर्मकाण्ड दाही थकी आत्म भ्रमण करे नट
जैसी नाटक अनन्तकाल करे है । पिता हू ते पुत्र होय जनक होय
सुत हूँते स्वामी हूँते दास भ्रत्य स्वामी पद धरे हैं । माता हू ते
त्रिया होय कामिनी ते माय होय भवबन मांहि जीव यूँही संसरे
है ॥ ३ ॥ भ्रमूँ जो एकाकी सदा देखिये अनन्तकाल एकाकी जन्म
मृत्यु बहु दुख सहो हैं । रोगन ग्रसों हैं एकै पाप फल भुंजे घनो
एकै शोकवन्तको उदुती नाहीं सहो हैं । स्वजन न तात मात साथी
नहिं कोय यह रत्नत्रय साथी निज ताहि नहिं गहो हैं । एकै यह
आत्म ध्यावे एकै तपसा करावे होय शुद्ध भावे तव मुक्ति पद
लहो है ॥ ४ ॥ आत्म है अन्य और पुद्गल हूँ अन्य लखो आत्म मात
तात पुत्र त्रिया सब जानरे । जैसे निशि माहिं तरहूपै खग भैल
होय प्रात उड़ जाय ठौर ठौर तिमि आनरे ॥ तैसे बिनाशीक यह
सकल पदार्थ हैं हाट मध्य जन अनेक होय भेले आनरे । इन हूँते
काज कलु सरैनेगो नाहीं भैया अनित्यानुप्रेक्षरूप यह पहचानरे
॥ ५ ॥ त्वचा पल अस्तनसाजाल मल मूत्र धाम शुक्ल मल रुधिर
कुधातु सप्तमई है । ऐसो तन अशुचि अनेक दुर्गन्ध भरो धबै नव-
द्वार तामें मूढ़ मत धई है । ऐसी यह देह ताहि लखके उदास रहो

मानो जीव एक शुद्ध बुद्ध परणई है । अशुचि अनुपेक्षा यह धारै
जो इसी ही भांति तज के बिकार तिन मुक्ति रमालई है ॥६॥

चौपाई ।

आश्रव अनुपेक्षा हिय धारं । सत्तावन आश्रवके द्वारं ॥ कर्मा-
श्रम पैसारजु होय । ताको भेद कहूं अब सोय ॥ मिथ्या अविरत
योग कषाय । यह सत्तावन भेद लखाय ॥ बंधो फिरे इनके बश
जोव । भवसागरमें रुले सदीव ॥ विकल्प रहित ध्यान जब होय ।
शुभआश्रव की कारण सोय । कर्म शत्रु को कर संहार । तब पावै
पञ्चम गति सार ॥७॥ आश्रवको निरोध जो ठान । सोई सम्बर
कहैं बखान ॥ सम्बर कर सुनिर्जरा होय । सो है दृश्य परकारहि
जोय ॥ इक स्वयमेव निर्जरा पेख । दूजी निर्जरा तपहि विशेष ॥८॥
पूर्व सकल अवस्था कही । संवर कर जो निर्जरा सही ॥ सोय
निर्जरा दो परकार । सविपाकी अविपाकी सार ॥ सविपाकी सब
जीवन होय । अविपाकी मुनिवर के जोय ॥ तपके बल कर मुनि
भोगाय । सोई भाव निर्जरा आय ॥ बंधे कर्म छुटे जिह घरी ।
सोई दृश्य निर्जरा खरी ॥९॥ अधो मध्य अरु ऊरध जान । लोक-
त्रय यह कहे बखान ॥ चौदह राजू सबे उतङ्ग । वात त्रय बेढे सर
बङ्ग ॥ घनाकार राजू गण ईस । कहे तीन सै तैतालीस ॥ अधो-
लोक चौकूटो जान । मध्य लोक झालरी समान ॥ ऊरध लोक
मृदङ्गाकार । पुरुषाकार त्रिलोक निहार ॥ ऐसो निज घर लखे जु
कोय । सो लोकानुप्रेक्ष यह होय ॥१०॥ दुर्लभ ज्ञान चतुर्गति
माहिं । भ्रमत भ्रमत मानुष गति पाहिं ॥ जैसे जन्म दरिद्री कोय ।
मिलो रत्न निधि ताको सोय ॥ त्यूं मिलियो यह नर परयाय ।

आप्यंक्षण्ड ऊंच कुल पाय ॥ आयु पूर्ण पचइन्द्रा भोग । मन्द
कषाय धर्म संयोग ॥ यह दुर्लभ है या जग मांहि । इन बिन मिले
मुक्तपद नाहिं ॥ ऐसो भावना भावे सार । दुर्लभ अनुप्रेक्षा सु
विचार ॥ ११ ॥ पाले धर्म यत्न कर जोय । शिव मन्दिर ते लहै जु
सोय ॥ धर्म भेद दश विधि निर्धार । उत्तम क्षमा पुन मार्दव सार
आर्जव सत्य शौच पुन जान । सञ्जम तप त्यागहि पहिचान ॥
आकिञ्चन ब्रह्मचर्य्य गनेव । यह दश भेद कहे जिनदेव ॥ धर्महिते
तीर्थकर गतो । धर्महि ते होवे सुरपती ॥ धर्मही ते चक्रेश्वर जान
धर्मही ते हरि प्रतिहरि भान ॥ धर्मही ते मनोज अवतार ॥ धर्म ही
ते हो भवदधिपार ॥ रत्नचन्द्र यह करे बखान । धर्म ही ते पावै
निर्बान ॥ इति ॥

(२६) वैराग्य भावना ।

दोहा—बीज राग फल भोगवे, ज्यों किसान जग मांहि ।

त्यों चक्री सुख ह्वे मगन, धर्म विसारे नाहिं ॥

योगीरासा वा नरेन्द्र छन्द ।

इस विधि राज्य करै नरनायक भोगे पुण्य विशाल । सुख
सागर में मग्न निरन्तर जात न जानो काल ॥ एक दिवस शुभकर्म
योगसे क्षेमंकर मुनि बंदे । देखे श्रीगुरुके पद पङ्कज लोचन अलि
आनन्दे ॥ १ ॥ तीन प्रदक्षिणा दे शिर नायो कर पूजा स्तुति कीनी ।
साधु समीप विनय कर बैठो चरणोंमें दृष्टि दीनी ॥ गुरु उपदेशो
धर्म शिरोमणि सुन राजा वैरागो । राज्यरमा बनतादिक जो रस
सो सब नोरस लागो ॥ २ ॥ मुनि सूरज कथनी किरणावलि लगत
भर्म बुधि भागी । भव तन भोग स्वरूप विचारो परम धर्म अनुरागी ॥

या संसार महावन भीतर भर्मत छोर न आवे । जन्मन मरन जरायो
 दाहे जीव महा दुःख पावे ॥३॥ कबहुं कि जाय नर्क पद भुजे
 छेदन भेदन भारी । कबहुं कि पशु पर्याय धरे तहां बध बन्धन भय
 कारी ॥ सुरगतिमें परि सम्मति देखे राम उदय दुख होई । मानुष
 योनि अनेक बिपति मय सर्व सुखी नहीं कोई ॥ ४ ॥ कोई १६
 वियोगी बिलखे कोई अनिष्ट संयोगी । कोई दीन दरिद्री दीखे कोई
 तनका रोगी ॥ किस ही घर कलिहारी नारी के बैरी सम भाई ।
 किस हीके दुख बाहर दीखे किसही उर दुचिदाई ॥ ५ ॥ कोई
 पुत्र बिना नित भूरे होय मरे तब रोवै । छोटी सन्ततिसे दुख
 उपजे क्यों प्राणी सुख सोवै ॥ पुण्य उदय जिनके तिनको भी
 नाहि सदा सुख साता । यह जग वास यथार्थ दीखे सबही हैं
 दुःख दाता ॥६॥ जो संसार विषे सुख होते तीर्थकर क्यों त्यागे ।
 काहेको शिव साधन करते संयमसे अनुरागे । देह अपावन अधिर
 घिनावनी इसमें सार न कोई । सागरके जलसे शुचि कीजौ तोभी
 शुद्धि न होई ॥ ७ ॥ सस कुधातु भरी मलमूत्र चम लपेटो सोहै ।
 अन्तर देखत या सम जगमें और अपावनको है ॥ नव मल द्वार
 श्रवै निश वासर नाम लिये घिन आवे । व्याधि उपाधि अनेक
 जहां तहां कौन सुधी सुख पावे ॥ ८ ॥ पोषत तो दुख दोष करे
 अति सोचत सुख उपजावे । दुर्जन देह स्वभाव बराबर मूरख
 प्रीति बढावे ॥ राचन योग्य स्वरूप न याको बिरचन योग्य नहीं
 हैं । यह तन पाय महातप कीजौ इसमें सार यही है ॥ ९ ॥ भोग
 बुरे भवरोग बढावे बैरी हैं जग जीके । वे रस होय विपाक समय
 अति सेवत लागे नीके ॥ बज्र अग्नि विषसे विषधरसे हैं अधिक

दुखदाई । धर्म रत्नको खोर प्रबल अति दुर्गति पन्थ सहदाई ॥१०॥
मोह उदय सह जीव अहानी भोग भले कर जाने । ज्यों कोई जन
खाय धतूरा सब सो सब कञ्चन माने ॥ ज्यों ज्यों भोग संयोग
मनोहर मन बाँछित जन पावे । तृष्णा नागिन त्यों त्यों ऋके लहर
लोभ विष लावे ॥११॥ मैं चक्रो पद पाय निरन्तर भोगै भोग घनेरे ॥
तो भी तनक भये ना पूरण भोग मनोरथ मेरे । राज समाज महा
अघ कारण धैर बढ़ावन हारा । वेश्या सम लक्ष्मी अति चञ्चल
इसका कौन पत्यारा ॥१२॥ मोह महा रिपु बैर विचारे जग जीव
सङ्कट डारे । घर कारागर बनिता बेड़ो परजन है रखवारे ॥ सम्य
ग्दर्शन ज्ञान चरण तप ये जियको हितकारी । ये ही सार असार
और सब यह चक्री जिय धारी ॥१३॥ छोड़े चौदह रत्न नबोनिधि
और छोड़े सङ्ग साथी । कोड़ी अठारह घोड़े छोड़े चौरासी लख
हाथी ॥ इत्यादिक सम्पति बहु तेरी जीर्ण व्रणवत त्यागी । नीति
विचार नियोगी सुतको राज्य दिया बड़ भागी ॥ १४ ॥ होइ
निस्सल्य अनेक नृपति संग भूषण बसन उतारै । श्रीगुरु चरण
धरी जिन मुद्रा पञ्च महाव्रत धारे ॥ धन्य यह समझ सुबुद्धि
जगोत्तम धन्य यह धैर्यधारी । ऐसी सम्पति छोड़ बसै बन तिन
पद धोक हमारी ॥१५॥

दोहा—परिग्रह पोट उतार सब, लीनो चारित्र पंथ ।

निज स्वभाव में स्थिर भये, बज्र नामि निर्ग्रन्थ ॥

(२७) समाधिमरण ।

(कवि दानतराय कृत)

गौतम स्वामी बन्दो नामी मरण समाधि भला है । मैं कब

पाऊं निसदिन ध्याऊं गाऊं बचन कला है ॥ देव धरम गुरु प्रीति
महा दूढ़ सात व्यसन नहीं जाने । त्यागि बाइस अमक्ष संयमी बारह
व्रत नित ठाने ॥१॥ चक्की उखरी चूलि बुहारी पानी व्रत न विराधे ।
बनिज करे पर द्रव्य हरे नहिं छहो करम इमि साधे ॥ पूजा शास्त्र
गुरुनकी सेवा संयम तप चहुं दानी । पर उपकारी अल्प अहारी
सामायक विधि ज्ञानी ॥ २ ॥ जाप जपे तिहुं योग धरे दूग तनकी
ममता टारै । अन्त समय वैराग्य सम्हारे ध्यान समाधि विचारै ॥
आग लगे अरु नाब डुबे जय धर्म विघन जब आवे । चार प्रकार
अहार त्यागिके मन्त्र सु मनमें ध्यावे ॥३॥ रोग असाध्य जहाँ बहु
देखे कारण और निहारै । वात बड़ी है जो बनि आवे भार भवन को
डारे ॥ जो न बने तो घरमें रह करि सबसों होय निराला । मात
पिता सुत त्रियको सोंपै निज परिग्रह इहि काला ॥४॥ कछु चैत्या-
लय कछु श्रावक जन कछु दुखिया धन देई । क्षमा क्षमा सबहो सों
कहिके मनकी शल्य हनेई ॥ शत्रुन सों मिलि निज कर जोरे मैं बहु
करी है बुराई । तुमसे प्रीतम को दुख दीने ते सब बकसो भाई ॥५॥
धन धरती जो मुख सो मांगे सो सब दे संतोषे । छहो कायके प्राणी,
ऊपर करुणा भाव विशेषे ॥ ऊँच नीच घर बैठ जगह इक कछु
भोजन कछु पेंले । दूधा धारी क्रम क्रम तजिके छाछ अहार पहेले
॥ ६ ॥ छाछ त्यागिके पानी राखे पानी तजि संधारा । भूमिमांहि
फिर आसन माढ़े साधर्मिं ढिग प्यारा ॥ जब तुम जानो यह न जपै
है तब जिनबाणी पढ़िये । यों कहि मौन लियो सन्यासी पंच परम
पद गहिये ॥७॥ चौ आराधन मनमें ब्यावे बारह भावन भावे । दश
लक्षण मन धर्म विचारै रत्नत्रय मन लावे ॥ पैतस सोलह षट पन

चौ दुइ इक बरम विचारे । काया तेरी दुखकी ढेरी ज्ञान मई तू
सारे ॥ ८ ॥ अजर अमर निज गुण सो पूरे परमानन्द सुभावे ।
आमन्द कन्द चिदानन्द साहब तीन जगतपति ध्यावे ॥ क्षुधा तृषा-
दिक होइ परीषह सहै भाव सम राखे । अतीचार पांचो सब त्यागे
ज्ञान सुधारस चाखे ॥ ९ ॥ हाड़ मांस सब सूखि जाय जब धरम
लीन तन त्यागे । अदभुत पुण्य उपाय सुरगमें सेज उठे ज्यों जागे ।
तहं तैं आबे शिषपद पावे बिलसे सुख अनन्तो । दानत यह गति
होय हमारी जैन धरम जयवन्तो ॥ १० ॥

(२८) अठारहनाते लिख्यते ।

(प्रीयुत कुन्दनलाल कृत)

कोई किसीका सगा नहीं भूँठी सब नातेदारी । अठारह नाते
हुए हैं एक जन्मही मैं जारी ॥ टेक ॥ मालवदेश उज्जैन शहरमें
सेठ सुदत्त वसें भारी, वसन्ततलिका बेसवा जिन्होंने निज घरमें
डारी । रोग सहित जब भई बेसवा सेठि अरुचि चितमें धारी,
गर्भवतीको महलसे छिनमें कर दीनी उनने न्यारी ॥

शेर—निरादर हो गणिका वहां से घर अपने आई है । खड़ी
दिलगीर हो सोचें पड़ी कैसी तबाही है ॥ जने लड़का और लड़की
जोड़ले ऐसी भाई है । जुदे इनको करूं घरसे जमी मेरी रिहाई है ॥
सुतडारा उत्तरदिशि माहीं तनुजा दक्षिणदिशि डारी । अठारह नाते
हुए हैं एक जन्मही मैं जारी ॥ १ ॥ प्रयागवासी बनजारेकी लड़की
पर जा नजर पड़ी । उठा गोदमें नाम कमला जा रक्खा बिसी घड़ी ॥
दूजे बनजारे सुभद्रकी लड़के पर जा दृष्टि पड़ी । उठा गोदमें नाम
धनदेव रक्खा परवरिस करी ॥ ले लड़का अरु लड़की दोनों वे

अपने घर आए हैं । परवरिस पा बड़े हुये व्याहने योग्य पाए हैं ॥
 बनी दुलहिन कमला दुलहा धनदेव भाई हैं । मिला संयोग जु
 ऐसा बहिन भाई विवाहे हैं ॥ भोग भोगवें भाई बहिन मिलि
 विधना तेरी बलिहारी । अठारह नाते हुये हैं एक जन्मही में जारी
 ॥ २ ॥ समय पाय व्योपार हेत धनदेव गया उज्जैन नगर । देव
 योगसे भई निज मातासे दो चार नजर ॥ अनर्थ ऐसा हुआ
 किया विभचार जु दोनोंने मिलकर । भेद न जाना भोगने भोग
 लगे माता सुत जु ॥ कई दिन तक वहां धनदेवको गणिका
 रमाया में । रोग संयोग जुग ऐसा वरुण इक लाल जाया है ।
 कहीं कमलाने यह सब भेद मुनिवर सेनी पाया है । पालना भूलता
 चालक वरुण जहँ पर बताया है । पहुंची सो उज्जैन नगर जहँ
 रचना देखी संसारो । अठारह नाते हुये हैं एक जन्मही में जारी
 ॥ ३ ॥ हाय हाय सो करै अरे विधना तूने कीनी क्वारी । होतै
 ही से मुझे क्यों नहिं तूने गर्दन मारी ॥ क्या कहके अब झुलाऊं
 इस वीरनको बता विधातारी । छै नाते हैं मेरे इस बालकसे सुन
 महतारी ॥ प्रथम तो पुत्र है मेरा जु मुझ भरतार से उपजा । तनुज
 धनदेव भाईका लगा जिससे भतीजा है ॥ मेरी तेरी एक है माता
 जगा इस रीतिसे भ्राता है । मेरे मालिकका लघु भाई लगा देवरका
 नाता है ॥ माता मेरीका तू देवर चचा इस तरह होता है । सौतेके
 पुत्रका तू पुत्र इस नातेसे पोता है ॥ छहनातेकर विरन झुलाऊं
 कथा करी जाहर सारी । अठारह नाते हुए हैं एक जन्म ही में
 जारी ॥ ४ ॥ गणिका पतिसे हुआ पिता जिसलघु भाई मुझ चाचा
 है । चचा पिता सो सगा धनदेव लगा मो दादा है ॥ मेरा मालिक

हुआ धनदेव जिसने मुझे व्याहा है । मेरी तेरी है मात एक जिससे लगता तु भाया है ॥ वेश्या सौत है मैं हूँ धनदेव पुत्र मेरा है । मैं गणिकासुत वधू गनिकापति यों लगा ससुरा है ॥ कहे धनदेवसे नाते जताया मेव सारा है । सुना अहवाल घबराके शब्द हाहा पुकारा है ॥ देखा जगका हाल हुए कैसे कैसे अखर जकारी । अठारह नाते हुए हैं एक जन्मही मैं जारी ॥ ५ ॥ प्रथम पैदा किया मुझको इस नाते महतारी हैं । मेरे भाईकी स्त्री है जिस करके मुझ भावी है । पिता मुझ धनदेव है जिसकी माता तू दावी है ॥ सौत भी है वह जु मेरे मालिककी प्रिय प्यारी हैं ॥ सौत पुत्र वधू गणिका सो मेरी भी वधू जाहिर । मैं उसके पुत्रकी स्त्री लगी मेरी सासू सरासर । कहे नाते अठारह अंतमें एक सुगुरु सीख है । छुटा जगजालसे यहां कर्म शत्रुका बड़ा डर है । कुंदन ऐसे अनर्थ माया विधना जगमें विस्तारी । अठारह नाते हुए हैं एक जन्म ही मैं जारी ॥ ६ ॥ * इति *

(२६) अठारह नाते की कथा

मालवदेश उज्जयनीविषे राजा विश्वसैन तहां सुदक्ष नाम श्रेष्ठी वसे सो सोलह कोटिको धनी, सो वसन्ततिलका नाम वेश्यापर आशक्त होय ताहि अने घरमें राखी, सो गर्भवती भई, जब रोगसहित देह भई, तब घरमें से काढ़ि दई बहुरि वसन्ततिलका दुखी हो कर अने घर आई सो उसके गर्भमें एक पुत्र और एक पुत्री साथही जुगल उत्पन्न होने के कारण खेद विम्वन हुई

तब क्रोधित हो कर तिन दोऊ बालकनको जुदे २ कम्बलमें लपेटि पुत्रीको तो दक्षिण द्वारपर डाली सो प्रयागनिवासी बनजारे ने लेकर अपनी स्त्रीको सौंपा कमलानाम धरा, अरु पुत्रको उत्तर द्वारपर डाला सो साकेतपुरेके एक सुभद्र बनजारेने अपनी स्त्री सुव्रताको दिया और धनदेव नाम धरा बहुरि पूर्वोपार्जित कर्मके वशतैं धनदेव और कमलाके साथ विवाह हुआ स्त्री भरतार हुए, पाछे धनदेव व्यापार करने वास्ते उज्जयनी नगरो गया तहां बसन्ततिलका वेश्यासों लुब्ध भया तब ताके संयोगतैं बसन्ततिलकाके पुत्र भया वरुण नाम धरा, उधर एक दिन कमला ने निमित्तज्ञानो मुनिसे इसकी कुशल बार्ता पूछी सो मुनिने पूर्वभवसों लेकर वर्तमान तक सकल वृत्तान्त कहा ।

इनका पूर्वभव वर्णन ।

इसी उज्जयनी नगरोविषै सोमशर्मा नाम ब्राह्मण ताक काश्यपो नाम स्त्री तिनकेँ अग्निभूत सोमभूत नामके दोय पुत्रसो दोनों कहीं तैं पढ़ कर आवैं थे, मार्गमें जिनदत्तमुनिको ताकों माता जो जिनमती नाम अर्जिकाकूँ शरीर समाधान पूछता देखा और जिनमद्रनामा मुनिकों सुमद्रानामा अर्जिका पुत्रकी स्त्री थी सो शरीर समाधान पूछती देखी तहां दोनों भाई ने हास्य करी कि तरुणकेँ तौ वृद्धस्त्री और वृद्धकेँ तरुणी स्त्री, विधाता ने अच्छी विपरीति रचना करी सो हांस्यके पापतैं सोमशर्मा तौ बसन्त-तिलका वेश्या हुई बहुरि अग्निभूत दोनो भाई मरि करि बसन्त-तिलकाकेँ पुत्र पुत्री जुगल हुये तिनने कमला अरु धनदेव नाम

पाये बहुरि काश्यपी ब्राह्मणीका जीव धनदेवके संयोग तै वरुण नाम पुत्र भया इस प्रकार पूर्वभवका उज्जयनी नगरीविषै सकल वृतान्त सुनने से कमला को पहिले जन्म का जातीस्मरण हुआ तब वह बसन्ततिलकाके घर गई तहां वरुण पालनेमें झूठै था सो ताको कहती भई कि हे बालक ! तेरे साथ मेरे छे नाते हैं सो सुन

१ प्रथम तो मेरा भरतार जो धनदेव ताके संयोगतै तू पैदा भया सो मेरा भी (सौतेला) पुत्र है—२ दूजे धनदेव मेरा भाई है ताका तू पुत्र तातै मेरा भतीजा भी है ।—३ तीजे तेरी माता बसन्ततिलका सो ही मेरी माता है तिस तै सहोदर भी है—४ चौथे तू मेरे भरतार धनदेवका छोटा भाई तिसकारण मेरा देवर भी है—५ पांचवें धनदेव मेरी माता बसन्ततिलकाका भरतार है तातै धनदेव मेरा पिता भया ताका तू छोटा भाई तातै मेरा चाचा भी है—६ छठयें मैं बसन्ततिलकाकी सौतिन तातै धनदेव मेरा पुत्र ताका तू पुत्र तातै तू मेरा पोता भी है ।

इस प्रकार वरुणके साथ छह नाते कहतो हती सो बसन्त-तिलका तहां आई और कमलाको बोली कि तू कौन है सो मेरे पुत्रसों इस प्रकार छे नाते सुनावै है ? तब कमला बोली तेरे साथ भी मेरे छह नाते हैं सो सुन—

१ प्रथम तो तू मेरी माता है क्योंकि धनदेवके साथ तेरे ही उदरसे युगल उपजी हूं—२ दूजे धनदेव मेरा भाई ताकी तू ली तातै मेरी भौजाई भी है—तीजे तू मेरी माता ताका भर्तार धनदेव मेरा पिता भया ताकी तू माता तातै मेरी दादी भी है—४ चौथे मेरा भरतार धनदेव ताको तू ली तातै मेरी सौतिन

भी है—५ पांचवें धनदेव तेरा पुत्र सो मेरा भी पुत्र ताको तू
 लो तातैं मेरी पुत्रबधू भी है—६ छठें मैं धनदेवकी ली तू
 धनदेवकी माता सो मेरी सासू भी है ।—इस प्रकार वेश्या छे
 नाते सुनकर चित्तमें बिचारने लगी त्यो ही तहां धनदेव आया
 ताकों देखि कमला बोली कि तुम्हारे साथ भी मेरे छह नाते हैं
 सो सुनो—१ प्रथम तो तूं और मैं इसी वेश्याके उदर सों जुगल
 छपजे सो मेरा भाई है—२ दूजे तेरा मेरा विवाह भया सो मेरा
 पति भी है—३ तीजे बसन्ततिलका मेरी माता ताका तू भरतार
 तातैं मेरा पिता भी है—४ चौथे बरुण तेरा छोटा भाई सो मेरा
 काका भया ताका तू पिता सो काकाका पिता सो मेरा दादा भी
 भया—५ पांचवें मैं बसन्ततिलकाकी सौति अरु तू मेरा
 सौतिनि पुत्र तातैं तू मेरा भी पुत्र है—६ छठे तू मेरा भरतार
 तातैं तेरी माता बसन्ततिलका मेरी सासु भई और सासु के तुम
 भरतार तातैं मेरे ससुर भी भये ।

इस प्रकार एक ही जन्ममें इन प्राणियोंके परस्पर अठारह
 नाते भये ताको उदाहरण (दृष्टांत) कहा कि इस भांति इस संसार
 की विचित्र विडंबना है इसमें कुछ सन्देह नहीं ।

इस प्रकार अठारह नातेका व्योरा समाप्त ।

(३०) चौबीस तोर्थकरीके चिन्ह ।

१ ऋषभनाथके बैल २ अजित नाथके हांथी ३ संभवनाथके
 घोड़ा ४ अभिनन्दन नाथके बन्दर ५ सुमति नाथके चकवा ६ पद्म
 प्रभके कमल ७ सुपार्श्वनाथके सांघिया ८ चन्द्रप्रभके चन्द्रमा
 ९ पुष्पदन्तके नाकू १० शीतलनाथके कल्पवृक्ष ११ श्रेयांसनाथ

के गेंडा १२ बांसुपूज्यके भेंसा १३ विमलनाथके सुअर १४ अनंत
नाथके सेही १५ धर्मनाथके बज्रदण्ड १६ शान्तिनाथके हिरण
१७ कुन्धनाथके बकरा १८ अरहनाथके मच्छी १९ मल्लिनाथके
कलश २० मुनिसुव्रतनाथके कछवा २१ नमिनाथके कमल २२
नेमिनाथके शंख २३ पार्श्वनाथके सर्प २४ महावीरके सिंह ।

(३१) बारह चक्रवर्ती ।

भरतचक्री, २ सगरचक्री, ३ मधवाचक्री ४ सनत्कुमारचक्री
५ शान्तिनाथचक्री (तीर्थंकर), ६ कुन्धनाथचक्री, (तीर्थंकर), ७
अरनाथकी (तीर्थंकर), ८ सम्भूमचक्री, ९ पदमचक्री वा महापद्म
१० हरिवेणचक्री, ११ जयचक्री, १२ ब्रह्मदत्तचक्री ।

(३२) नव नारायण ।

१ त्रिपृष्ठ, २ द्विपृष्ठ, ३ स्वयंभू, ४ पुरुषोत्तम, ५ पुरुषसिंह,
६ पुण्डरीक, ७ दत्त ८ लक्ष्मण, ९ कृष्ण ।

(३३) नव प्रतिनारायण ।

१ अश्वघ्रीव, २ तारक, ३ मेरू, ४ मधु (मधुकैटभ) ५
निशुंभ, ६ बली, ७ प्रह्लाद, ८ रावण, ९ जरासंध ।

(३४) बलभद्र

१ अचल, २ विजय, ३ भद्र, ४ सुप्रभ ५ सुदर्शन, ६ आनंद,
७ नंदन (नंद), ८ पद्म (रामचन्द्र), ९ राम (बलभद्र) ।

(३५) नव नारद ।

१ भीम, २ महाभीम, ३ रुद्र, ४ महारुद्र, ५ काल, ६ महा-
काल ७ दुर्मुख, ८ नरकमुख, ९ अधोमुख ।

[३६] ग्यारह रुद्र ।

१ भीमबली २ जितशत्रु ३ रुद्र ४ विश्वानल ५ सुप्रतिष्ठ ६ अचल
७ पुण्डरीक ८ अजितधर, ९ जितनाभि, १० पीठ, ११ सात्यकी

(३७) चौबीस कामदेव ।

१ बाहुबली, २ अमिततेज, ३ श्रीधर ४ दशभद्र, ५ प्रसेनजित्,
६ चंद्रवर्ण, ७ अग्निमुक्ति, ८ सनत्कुमार (चक्रवर्ती) ९ बत्सराज,
१० कनकप्रभ, ११ सेधवर्ण, १२ शान्तिनाथ (तीर्थंकर), १३ कुंथु
नाथ (तीर्थंकर), १५ विजयराम, १६ श्रीचंद्र, १७ राजा नल, १८
हनुमान्, १९ बलराजा, २० वसुदेव, २१ प्रद्युम्न, २२ नागकुमार,
२३ श्रीपाल, २४ जंबूस्थामी ।

[३८] चौदह कुलकर

१ प्रतिश्रुति, २ सन्मति, ३ क्षेमंकर, ४ क्षेमधर, ५ सीमंकर,
६ सीमधर, ७ विमलवाहन, ८ चक्षुष्मान् ९ यशस्वी, १० अमि-
चंद्र, ११ कंदाम्ब, १२ मरुदेव, १३ प्रसेनजित् १४ नाभिराजा ।

(३९) बारह प्रसिद्ध पुरुष

१ नाभि, २ श्रेयांस, ३ बाहुबली, ४ भरत, ५ रामचन्द्र, ६

नोट—तीर्थंकर, चक्रवर्ती, नारायण, प्रतिनारायण बलभद्र यह चारों
बलाका पुरुष कहाते हैं तथा नारद, रुद्र, कामदेव, कुलकर, और तीर्थंकरोंके
मातापिता १६९ पुरुष पुरुष कहाते हैं ।

हनुमान्, ७ सीता, ८ रावण, ९ कृष्ण, १० महादेव, ११ भीम, १२ पार्श्वनाथ ।

(४०) विदेहक्षेत्रके २० विद्यमान तीर्थंकर ।

१ सीमन्धर, २ युगमंधर, ३ बाहु, ४ सुबाहु, ५ सुजात, ६ स्वयंप्रभ, ७ वृषभानन, ८ अतन्तवीर्य, ९ सुरप्रभ, १० विशालकीर्ति, ११ बज्रधर, १२ चंद्रानन, १३ चन्द्रबाहु, १४ भुजंगम, १५ ईश्वर, १६ नेमप्रभ (नमि), १७ वीरसेन, १८ महाभद्र, १९ देवयश, २० अजितवीर्य ।

(४१) भूतकालकी चौबीसी

१ श्रीनिर्वाण, २ सागर, ३ महासिंधु, ४ विमलप्रभ, ५ शोधर, ६ सुदत्त, ७ अमलप्रभ, ८ उद्धर, ९ अंगिर, १० सन्मति, ११ सिंधुनाथ, १२ कुसुमांजलि, १३ शिवगण, १४ उत्साह, १५ ज्ञानेश्वर, १६ परमेश्वर, १७ विमलेश्वर, १८ यशोधर, १९ कृष्णमति, २० ज्ञानमति, २१ शुद्धमति, २२ श्रीभद्र, २३ अतिक्रान्त, २४ शांति ।

४२ भविष्यकी चौबीसी ।

१ श्रीमहापद्म, २ सुरदेव, ३ सुपार्श्व, ४ स्वयंप्रभ, ५ सर्वात्मभू, ६ श्रीदेव, ७ कुलपुत्रदेव, ८ उदकदेव, ९ प्रोष्ठिलदेव, १० जयकीर्ति, ११ मुनिसुव्रत, १२ अरह (अमर) १३ निष्पाप, १४ निःकषाय, १५ विपुल, १६ निर्मल, १७ चित्रगुप्त, १८ समाधिगुप्त, १९ स्वयंभू, २० अनिवृत्त, २१ जयनाथ, २२ श्रीविमल, २३ देवपाल, २४ अनन्तवीर्य ।

(४३) गुणस्थान

१ मिथ्यात्व, २ सासादन, ३ मिश्र, ४ अविरत सम्यक्त्व, ५ देशव्रत, ६ प्रमत्त, ७ अप्रमत्त, ८ अपूर्वकरण, ९ अनिवृत्तिकरण, १० सूक्ष्मसांपराय, ११ उपशांतकषाय वा उपशांतमोह, १२ क्षीण कषाय वा क्षीणमोह, १३ संयोगकेवली, १४ अयोगकेवली ।

(४४) शीलहकारण भावना

१ दर्शनविशुद्धि, २ विनयसंपन्नता, ३ शीलव्रतेष्वनतिवार, ४ अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, ५ संवेग, ६ शक्तिस्त्याग, ७ तप ८ साधु-समाधि, ९ वेद्यावृत्य, १० अर्हद्भक्ति, ११ आचार्यभक्ति, १२ बहुश्रुतभक्ति, १३ प्रवचनभक्ति, १४ आवश्यकपरिहाणी, १५ मा. - प्रभावना, १६ प्रवचनवात्सल्य ।

(४५) श्रावकोंके उत्तरगुण ।

१ लज्जावंत, २ दयावंत, ३ प्रसन्नता, ४ प्रतीतिचन्त, ५ पर-द्रोषाच्छादन, ६ परोपकारी, ७ सौम्यदृष्टि, ८ गुणग्राही, ९ मिष्ट-वादी, १० दीर्घविचारी, ११ दानवंत, १२ शोलवंत, १३ कृतज्ञ, १४ तत्त्वज्ञ, १५ धर्मज्ञ, १६ मिथ्यात्व रहित, १७ संतोषवंत १८ स्याद्वाद भाषी, १९ अभक्ष्यत्यागी, २० षट्कमेप्रवीण २१ ।

(४६) श्रावककी ५३ क्रिया ।

८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, १ समताभाव, ११ प्रतिमा, ४ दान, ३ रत्नत्रय, जल छाणन क्रिया, १ रात्रिभोजन त्याग और दिनमें अन्नादिक भोजन शोधकर खाना अर्थात् छाननी कर देकर भालकर खाना ।

श्रावकके ८ मूलगुण—५ उदंबर । ३ मकार ।

१२ व्रत—५ अणुव्रत, ३ गुणव्रत, ४ शिक्षाव्रत ।

५ अगुणव्रत—१ अहिंसा अणुव्रत, २ सत्याणुव्रत, ३ परस्त्री त्याग अणुव्रत, ४ (अचौर्य) चोरी त्याग अणुव्रत, ५ परिग्रहप्रमाण अणुव्रत ।

३ गुणव्रत—१ दिग्व्रत २ देशव्रत, ३ अनर्थदंडत्याग ।

४ शिक्षाव्रत—३ सामायिक, २ प्रोषधोपवास, ३ अतिथि-संविभाग, भोगोपभोगपरिमाण ।

१२ तप

आचार्यके ३६ गुणोंमें लिखे हैं । इनके भी वही नाम । श्रावकोंके अणुव्रत कम परीषहवाले ।

११ प्रतिमा—दर्शनप्रतिमा, व्रत, सामायिक, प्रोषधोपवास, सवित्तत्याग, रात्रिभुक्ति त्याग, ब्रह्मचर्य, आरम्भ त्याग, परिग्रहत्याग, अनुमति, त्याग, उद्दिष्ट त्याग ।

चारदान-आहारदान, औषधदान, शास्त्रदान, अभयदान

३-रत्नत्रय-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र्य ।

दातारके २१ गुण-८ नवधाभक्ति, ७ गुण ५ आभूषण । यह २१ गुण दातारके हैं अर्थात् दान देनेवाले दातामें यह २१ गुण होने चाहिये ।

नवधाभक्ति-पात्रको देख बुलाना, उच्चासनपर बैठाना,

चरण धोना, चरणोदक मस्तकपर चढ़ाना, पूजा करना, मन शुद्ध रखना, विनयरूप बोलना, शरीर शुद्ध रखना शुद्ध आहार देना ।

दातारके सात गुण—श्रद्धावान्, शक्तिवान्, अलोभी, दयावान्, भक्तिवान्, क्षमावान् और विवेकवान् ।

दाताके पांच भूषण—आनन्दपूर्वक देवे, आदरपूर्वक देवे प्रिय बचन कहकर देवे, निर्मल भाव रखे, जन्म सफल माने ।

दाताके पांच दूषण—बिलम्बसे देवे, विमुख होकर देवे, दुर्वचन कहकर देवे, निरादर करके देवे, देकर पछतावे ।

(४७) ग्यारह प्रतिमाओंका सामान्य स्वरूप ।

प्रथम पंच परमेष्ठि पद, जिन आगम अनुसार, श्रावकप्रतिमा एक दश, कष्ट भविजन हितकार ॥ १ ॥ सर्वैया ३१ ॥ श्रद्धाकर व्रत पाले सामयिक दोष टालै, पौसौ मांठ सचित कौं त्यागैलौ घटायकै रात्रिभुक्त परिहरै, ब्रह्मचर्य नित धरै, आरम्भको त्याग करै मन बच कायकै । परिग्रह काज टारै अघ अनुमत छारै, स्वनिमित्त कृत टारै असत बनायकै । सब एकादश येह प्रतिमा जु शर्म गेह, धारै देशव्रती उर हरष बढ़ायकै ।

दर्शन प्रतिमा

अष्ट मूलगुण संग्रह करै, विशुन अभक्ष्य सबै परिहरै ॥

युत अष्टांग शुद्ध सम्यक्त, धरहिं प्रतिज्ञा दर्शन रक्त ॥ १ ॥

व्रत प्रतिमा स्वरूप

अणुव्रतपन अतिचार विहीन, धारह जो पुन गुणव्रत तीन,
शिक्षाव्रत संजुत जो सोय; व्रत प्रतिमा धर श्रावक होय ॥२॥

सामायक प्रतिमा स्वरूप- गीतका छंद-सब जियन में समभाव धर शुभ भावना संयममहीं, दुरध्यान आरत रौद्र तज कर त्रिविध काल प्रमाणहीं । परमेष्ठि पन जिन वचन निज वृष बिम्ब जिन जिनग्रह तनी, बंदन त्रिकाल करह सुजानहु भव्य सामायक धनी ॥ ३ ॥

प्रोषध प्रतिमा स्वरूप- (पद्धरी छंद —
वर मध्यम जघन्य त्रिविध धरेय, प्रोषध विधि युत निजबल प्रमेय, प्रति मास चार पवो मभार, जानहु सो प्रोषध नियम धार ॥ ४ ॥

सचित्तत्याग प्रतिमा स्वरूप-चौपाई—
जो परि हरै हरीं सब चीज, पत्र प्रवाल-कंद फल-बीज,
अरु अप्रासुक जल भी सोय, सचित्त त्याग प्रतिमा धर होय
रात्रिभुक्त्याग प्रतिमा स्वरूप-अडिह छंद—
मन बच तन कृत कारित अनुमोदै सही, नवविध मैथुन दिवस माहिं जो वर्ज हो । अरु चतुविध आहार निशा माहो तजै, रात्रिभुक्ति परित्याग प्रतिमा सो सजै ॥ ६ ॥

ब्रह्मचर्याप्रतिमा स्वरूप—चौपाई—
पूर्व उक्त मैथुन नव भेद, सब प्रकार तजै निरखेय,
नारि कथादिक भी परिहरे ब्रह्मचर्य प्रतिमा सो धरे ॥ ७ ॥

आरंभ त्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई—
जो कछु अल्प बहुत अघ काज, ग्रह संबंधी सो सब त्याज,
निरारम्भ वहे वृष रत रहै, सो जिय अष्टमो प्रतिमा वहै ॥ ८ ॥

परिग्रहत्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई

बख्ख मात्र रख परिग्रह अन्य, त्याग करै जो व्रतसंपन्न,
तापे पुनः मूर्छा परहरै, नवमी प्रतिमा सो भवि धरै ॥८॥

अनुमतत्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई

जो प्रमाण अघमय उपदेश, देय नहीं परको लवलेस, ॥
अरु तसु अनुमोदन भी तजै, सोही दशमी प्रतिमा सजै ॥१०॥

उद्दिष्टत्याग प्रतिमा स्वरूप—चौपाई—

ग्यारम थान भेद हैं दोय, इक छुल्लक इक ऐलक सोय,
खण्ड बख्खधर प्रथम सुजान, युन कोपीनहि दुतिय प्रछान ॥११॥
ए ग्रह त्याग मुनिन ढि'ंग रहैं, वा मठ, मन्दिरमें निबसहैं,
उत्तर उदण्ड उचित आहार, करहि शुद्ध अंत्रायन बार ॥
दोहा—इम सब प्रतिमा एकदश दौल देशव्रत यान,

ग्रहै अनुक्रम मूल सह, पालै भवि सुखदान ॥

(४८) श्रावकोंके १७ नियम ।

१ भोजन, २ अचित्त वस्तु, ३ गृह, ४ संग्राम, ५ दिशागमन, ६
औषधिविलेपन, ७ तांबूल, ८ पुष्पसुगन्ध, ९ नाच, १० गीतश्रवण
११ स्नान, १२ ब्रह्मचर्य, १३ आभूषण, १४ वस्त्र १५ शय्या, १६
औषध खानी, १७ घोड़ा बैलादिककी सवारी । ❀

❀ नोट—प्रतिदिन जिन २ चीजोंकी जरूरत हो उसका प्रमाद करे कि भ्राज
यह करूंगा ; शेषका प्रतिदिन त्याग करे ।

(४६) सात व्यसनका त्याग ।

जूवा, मांस, मदिरा, गणिका, शिकार चोरी परस्त्री ।

(५०) बाईस अभक्ष्यका त्याग ।

पांच उदम्बर—१ उदम्बर (गूलर), २ कटूम्बर, ३ बड़फल,
४ पीपलफल, ५ पाकर फल (पिलखन फल) ।

तीन मकार—१ मांस, २ मधु, ३ मदिरा ।

शेष १४ अभक्ष्य—ओला, विदल, रात्रि भोजन,
बहुबीजा, बैंगन, कन्दमूल, बगैर जाना फल, अचार, बिष, माटी,
बरफ, तुच्छ फल, चलित रस, माखन ।

(५१) श्रावकके षट् कर्म ।

देव पूजा, गुरुसेवा, स्वध्याय, संयम, तप, दान यह छह
कर्म प्रत्येक श्रावकको करना चाहिये ।

(५२) दशलक्षणा धर्म ।

उत्तम क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग
आकिंचन, ब्रह्मचर्य ।

(५३) लघु अभिषेक पाठ ।

श्रीमज्जिनैन्द्रमभिवन्द्यजगत्त्रयेशं स्याद्वादनायकमनन्तचतुष्टयार्हम् ।

श्रीमूलसंघसुदृशां सुकृते कहेतु जैनैर्द्रव्यव्यविधिरेष महाभ्यधायि ॥

(इस श्लोकको पढ़कर जिनचरणोंमें पुष्पांजलि छोड़नी चाहिये)

श्रीमन्मन्दरसुन्दरे शुचिजलैर्धौते सदर्भाक्षतैः

पीठेमुत्तिकरंनिधाय, रचितं त्वपादपस्रस्त्रजः

इन्द्रोऽहंनिजभूषणार्थकमिदं यद्वोपवीतं दधे ।

मुद्राकङ्कणशेखरान्यपि तथा जैनाभिषेकोत्सवे ॥

(इस श्लोकको पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको यज्ञोपवीत तथा नाना प्रकारके सुन्दर आभूषण धारण करना चाहिये ।)

सौगन्धसंगतमधुव्रतहंकृतेन, सौवर्ण्यमानमिव गंधमनिधमादौ ।
आरोपयामि बिबुधेश्वरवृन्दवन्द्य पादारविन्दमभिवन्द्य जिनोत्तमानां
इसे पढ़कर अभिषेक करनेवालोंको अङ्गमें चन्दनके नवतिलक करना चाहिये ।

ये सन्ति केचिदिह दिव्यकुलप्रसूता नागाः प्रभूतबलदपयुता
विवोधाः । संरक्षणार्थममृतेन शुभेन तेषां प्रक्षालयामि पुरतः
स्नपनस्य भूमिम् ॥

(इसको पढ़कर अभिषेकके लिये भूमिका प्रज्ञालन करे)

क्षीरार्णवस्य पयसां शुचिभिः प्रवाहैः, प्रक्षालितं सुखरैर्यदने-
कवारम् । अत्युद्यमुद्यतमहं जिनपादपीठं प्रक्षालयामि भवसंभव
तापहारि ॥

(जिस सिंहासन पर विराजमान करके अभिषेक करना हो उसका प्रज्ञालन करे
श्रीशारदासुमुखनिर्गतवाजवर्णं श्रीमङ्गलोकवरसर्वजनस्य नित्यं ।
श्रीमत्स्वयं क्षयतयस्य विनाशविघ्नं श्रीकारवर्णं लिखितं जिन-
भद्रपीठे ।

(इस श्लोकको पढ़कर पीठपर श्रीकार लिखना चाहिये ।)

इन्द्राग्निदंष्टधरनैऋतपाशपाणि वायूत्तरेशशशिमौलिफणीन्द्रचन्द्राः ।
आगत्य यूयमिहसानुचराः सचिन्हाः स्वं स्वं प्रतीच्छत बलिं
जिनपाभिषेके ॥

(श्रीच लिखे संज्ञाओंको पढ़कर क्रमसे दश दिक्पालोंके लिये अर्घ्य दगाओ)

१ ॐ आँ कौँ ह्रीँ इन्द्र आगच्छ आगच्छ इन्द्राय स्वाहा ।

- २ ॐ आँ कौं ह्रीं अग्ने आगच्छ आगच्छ अग्नये स्वाहा ।
- ३ ॐ आँ कौं ह्रीं यम आगच्छ आगच्छ यमाय स्वाहा ।
- ४ ॐ आँ कौं ह्रीं नैऋत आगच्छ आगच्छ नैऋताय स्वाहा ।
- ५ ॐ आँ कौं ह्रीं वरुण आगच्छ आगच्छ वरुणाय स्वाहा ।
- ६ ॐ आँ कौं ह्रीं पवन आगच्छ आगच्छ पवनाय स्वाहा ।
- ७ ॐ आँ कौं ह्रीं कुबेर आगच्छ आगच्छ कुबेराय स्वाहा ।
- ८ ॐ आँ कौं ह्रीं ऐशान आगच्छ आगच्छ ऐशानाय स्वाहा ।
- ९ ॐ आँ कौं ह्रीं धरणीन्द्र आगच्छ आगच्छ धरणीन्द्राय स्वाहा ।
- १० ॐ आँ कौं ह्रीं सोम आगच्छ आगच्छ सोमाय स्वाहा ।

इति दिक्पाल मन्त्रः ।

दध्युज्वलाक्षतमनोहरपुष्पदीपः पात्रार्पितं प्रतिदिनं महता-
दरेण । त्रैलोक्यमङ्गलसुखानलकामतह मारार्तिकं तवविभोरवता-
रयामि ॥ [दधि अक्षत पुष्प और दीप रकाबीमें लेकर मङ्गलपाठ
तथा अनेक बादित्रोंके साथ त्रैलोक्यनाथकी आरतो उतारनी
चाहिये ।]

यः पांडुकामलशिलागतमादिदेवमस्नापयन्सुरवराः सुरशैल-
मूर्ध्नि । कल्याणमिप्सुरहमक्षततोय पुष्पैः संभावयामि पुरण्व
तदोयविम्बम् ॥

जल अक्षत पुष्प क्षेपकर श्रोकार लिखित पीठपर जिनबिम्बको स्थापना
करना चाहिये ।

सत्पद्मवार्चितमुखान्कलधौतरूप्य ताम्रारकूटघटितान्ययसासु-
पूर्णान् । संवाह्यतामिव गतांश्चतुरः समुद्रान् संस्थापयामि कल-
शान् जिनवेदिकान्ते ।

जलपूरति सुन्दर पत्तोंसे ढके हुए सुवर्णादि धातुके चार कलश वेदोंके कोनोंमें स्थापन करना चाहिये ।

आभिः पुण्याभिरद्भिः परिमलबहुले नामुना चन्दनेन,
श्रीदूक्पेयैरमीमिः शुचिसदलचये रुद्रमैरेभिरुद्भैः ।
हृद्यैरेभिर्निवेद्यै मखभवनमिमैदोषयद्भिः प्रदीपैः
धूपैः प्रायोभिरेभिः पृथुभिरपि फलैरेभिरीशं यजामि ॥

(इस मंत्र गर्भित श्लोकको पढ़कर यजामि शब्दके पूर्ण होते होते अर्घ्य चढ़ा देना चाहिये ।)

दूरावनम्रसुरनाथकिरीटकोटी संलग्नरत्नकिरणच्छविधूसराडिम् ।
प्रस्वेदतापमलमुक्तमपि प्रकृष्टै भक्त्या जलैर्जिनपति बहुधा मिषिञ्चै ॥
(इसे पढ़कर जिन प्रतिमापर जलके कलशसे धारा छोड़नी चाहिये)
उत्कृष्टवर्णनवहेमरसाभिराम देहप्रभावलयसङ्गमलुप्तदीप्तिम् । धारां ।
घृतस्य शुभगन्धगुणानुमेयां बन्देऽहंतां सुरमिसंस्नपनोप युक्ताम् ॥
(इस श्लोकको पढ़कर घृतके कलशके स्नपन करना चाहिये ॥)

सम्पूर्णशारदशशाङ्कुमरीचिजालस्यन्दैरिवात्मयशसामिव सुप्रवा
हैः । क्षीरौर्जिनः शुचितरैरभिषिच्यमाणाः सम्पादयन्तुमम विस्त-
समीहितानि ॥

(इस श्लोकको पढ़कर दुग्धके कलशसे अभिषेक करना चाहिये)
दुग्धाब्धिबीचिपयसंचितफेनराशिपांडुत्वकान्तिमवधारयतामतीव
दध्नागताजिनपतेप्रतिमांसुधारासम्पद्यतांसपदि वाञ्छितसिद्धयेव ॥
(इस श्लोकको पढ़कर दधिके कलशसे अभिषेक करना चाहिये)
भक्त्या ललाटतटदेशनिवेशितोच्चैः हस्तैश्च्युताः सुरवराः सुर-

मर्त्यनाथः । तत्कालपीलितमहेक्षु रसस्यधारा सद्यः पुनातु जिन-
बिम्ब गतैव युष्मान् ॥

(इस श्लोकको पढ़कर इक्षुरसके कलशसे अभिषेक करना चाहिये)
संस्थापितस्य घृतदुग्धदधीक्षु वाहैः सर्वाभिरोषधिभिरहंतमुज्ज्व
लाभिः । उद्धतितस्य विदधाम्यभिषेकमेला कालेयकुङ्कुमरसोत्क
टवारिपूरैः ॥

(इसको पढ़कर सर्वोषधीके कलशसे अभिषेक करना चाहिये ।)
द्रव्यैरनल्पघनसारचतुः समाद्यै रामोदवासित्समस्त दिगान्तरात्
मिश्रीकृतेनपयसा जिनपुङ्गवानां त्र लोक्षपावनमहं स्नपनं करोमि ॥

(इस श्लोकको पढ़कर केसर कस्तूरी कर्पूरादिसे बनाये हुये
सुगन्धित जलसे श्रपन करना चाहिये ।)

इष्टैर्मनोरथशतैरिवभव्यपु सां पूर्णैः सुवर्णकलशैर्निखिलैवसानैः ।
संसारसागरविलांघनहेतुसेतुमाप्लावयेत्त्रिभुवनैकपति जिनेन्द्रम् ॥

(इसे पढ़कर बचे हुये सम्पूर्ण कलशोंसे अभिषेक करना चाहिये ।)

मुक्ति श्रोवनिताकरोदमिदं पुण्याङ्कुरोत्पादकम् ।

नागेन्द्रत्रिदशेन्द्रचक्रपदवीराज्याभिषेकोदकम् ॥

सम्यग्ज्ञानचरित्रदर्शनलता संवृद्धिसम्पादकम् ।

कीर्तिश्रीजयसाधकं तवजिन ! स्नानस्य गन्धोदकम् ॥

(इस श्लोकको पढ़कर अपने अङ्गमें गन्धोदक लगाना चाहिये ।)

इति श्री लघुभिषेक विधिः समाप्तः ॥

५४ विनय पाठ ।

इहि विधि ठाड़ो होयके प्रथम पढ़े जो पाठ ॥ धन्य जिनेश्वर

देव तुम नाशे कर्म जु आठ ॥ १ ॥ अनंत चतुष्टयके धनी तुमहा
 हों शिरताज ॥ मुक्ति बंधूके कंथ तुम तीन भुवनके राज ॥ २ ॥
 तिहुं जगकी पीड़ा हरण भवदधि शोषनहार ॥ ज्ञायक हों तुम
 विश्वके शिव सुखके करतार ॥ ३ ॥ हरता अघ अंधियारके करता
 धर्म प्रकाश ॥ थिरता पद दातार हो । धरता निजगुण रास ॥ ४ ॥
 धर्मामृत उर जल धसों ज्ञान भानु तुम रूप । तुमरे चरण शरोजको
 नाबत तिहुं जग भूप ॥ ५ ॥ मैं बंदों जिनदेवकों कर अतिनिरमल
 भाव ॥ कर्म बंधके छेदने और न कोई उपाय ॥ ६ ॥ भविजनकों
 भवि कूपतैं तुमहो काढ़नहार ॥ दीनदयाल अनाथ पति आतम
 गुण भंडार ॥ ७ ॥ विदानंद निमेल कियौ धोय कर्म रज मेल ॥
 सरल करी या जगतमें भविजनको शिव गैल ॥ ८ ॥ तुम पद पङ्कज
 पूजतैं विघ्न रोग टर जाय ॥ शत्रु मित्रताको धरें विष निर-
 विषता थाय ॥ ९ ॥ चक्रो खग धर इन्द्र पद मिलैं आपतैं आप ॥
 अनुक्रम कर शिव पद लहै नेम सकल हन पाप ॥ १० ॥ तुम बिन
 मैं व्याकुल भयो जैसे जल विन मीन ॥ जन्म जरा मेरी हरो करो
 मोह स्वाधीन ॥ ११ ॥ पतित बहुत पावन किये गिनती कौन
 करेव ॥ अञ्जनसे तारे कुधो सु जय जय २ जिनदेव ॥ १२ ॥ थकी
 नाच भवि दधि विषें तुम प्रभु पार करेय ॥ खेवटिया तुम हो
 प्रभू सो जय जय २ जिनदेव ॥ १३ ॥ राग सहित जगमेंरुले मिले
 सरागी देव ॥ वीतराग मैटो अबै मैटो राग कुटेव ॥ १४ ॥ कित
 निगोद कित नारकी किय तिर्यञ्च अज्ञान ॥ आज धन्य मानुष
 भयो पायो जिनवर धान ॥ १५ ॥ तुमको पूजैं सुरपती अहिपति
 नरपति देव ॥ धन्य भाग मेरो भयो करन लगो तुम सेव ॥ १६ ॥

अशरणके तुम शरण हो निराधार आधार ॥ मैं डूबत भबसिन्धुमें
खेओ लगायो पार ॥ १७ ॥ इन्द्रादिक गणपति थकी तुम बिन्ती
भगवान ॥ दिनती अपनी टारि कै कीजे ओप समान ॥ १८ ॥
तुमरी नेक सुदृष्टमें जग उतरत है पार ॥ हाहा डूबौ जात हों नेक
निहार निकार ॥ १९ ॥ जोमें कहाहुं और सों तो न मिटे उर
भार ॥ मेरी तो मोसो बनी तारैं करत पुकार ॥ २० ॥ बन्दौ
पाचौं परमगुरु सुरगुरु बन्दत जास ॥ विघन हरन मङ्गल करन
पूरत परम प्रकाश ॥ २१ ॥ चौबोसौं जित पद नमों नमों सारदा
माय ॥ शिवमग साधक साधु नमि रचों पाठ सुखदाय ॥ २२ ॥

(५५) देवशास्त्रगुरुकी भाषा पूजा ।

प्रथमदेव अरहन्त सु श्रुतसिद्धान्तजू । गुरु निरग्रन्थ महन्त
मुक्तिपुरपन्थजू ॥ तीन रतन जगमाहि सो ये भवि ध्याइये ।
तिनकी भक्तिप्रसाद परमपद पाइये ॥ १ ॥

दोहा-पूजों पद अरहन्तके, पूजों गुरुपद सार ।

पूजों देवी सरस्वती, नितप्रति अष्टप्रकार ।

ओं ह्रीं देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर २ संवौषट् । अत्र
तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

गोता छंद ।

सुरपति उद्यम नरनाथ तिनकर, बन्दनीक सु पदप्रभा ।

अति शोभनीकसुवरण उज्जल, देख छवि मोहित सभा ॥

घर नीर क्षीर समुद्रघटभरि, अग्र तसु बहुविधि नखूँ ।

अरहन्तश्रुतसिद्धांतगुरु निरग्रन्थ नितपूजा रखूँ ॥ १ ॥

दोहा—मलिनबस्तु हर लेत सब, जलस्वभाव मलछीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ १ ॥

ओ हों देवशास्त्रगुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय ॥ अलं ।

जे त्रिजग उदरमँभार प्रानी, तपत अति दुद्धर खरे ।

तिन अहितहरन सुबचन जिनके, परम शीतलता भरे ॥

तसु भ्रमरलोमित घ्राण पावन सरस चन्दन घसि सचूँ ॥ अ० ॥

दोहा—चन्दन शीतलता करै, तपतबस्तु परवीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ २ ॥

ओं हों देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दन ।

यह भवसमुद्र अपार तारणके निमित्त सुविधि ठई ।

अति दृढ़ परमपावन जथारथ, भक्ति वर नौका सही ॥

उज्जल अखण्डित सालि तन्दुल, पु'जधरि त्रयगुण जचूँ । अ०

दोहा—तंदुल सालि सुगंधि अति, परम अखंडित बीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ३ ॥

ओं हों देवशास्त्रगुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

दोहा—विविधभांति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन ।

तासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ४ ॥

ॐ हों देवशास्त्रगुरुभ्यः कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं ॥

अति सबल मद कंदर्प जाको, क्षुध्रा उरग अमान हे ।

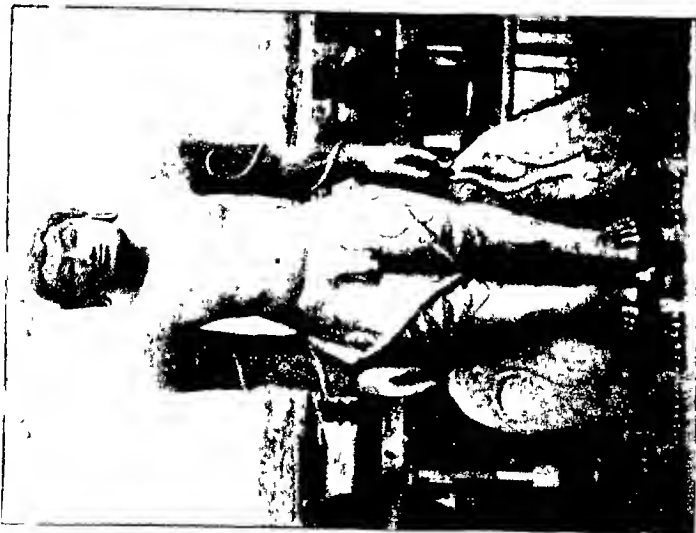
दुस्सह भयानक तासु नाशनको सु गरुड़ समान है ।

उत्तम छहों रस युक्त नित नैवेद्य करि घृतमँ पचूँ ॥ अ० ६ ॥

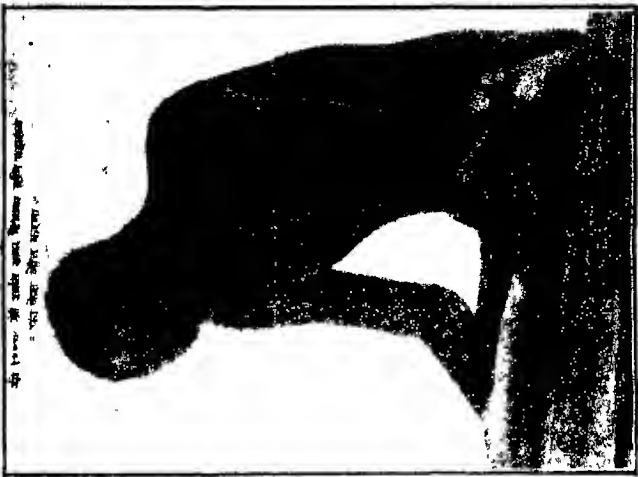
ॐ हों देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोग विनाशाय चरुं ॥

जे त्रिजग उद्यम नाश कीने मोहतिमिर महाबलो ।

तिहि कर्मघाती हानदीप प्रकाशजोति प्रभावलो ॥



શ્રીવાદુર્લજી, શ્રવણવેલગોલા ।



શ્રી ૧૦૬ મુનિ શાન્તિસાગરજી ।



श्रीमुनि शान्तिसागरजी

श्रीमुनि सूर्यसागरजी

श्रीमुनि अनंतसागरजी

इह भांति दीप प्रजाल कंचनके सुभाजनमें खचूं । अ० ।

दोहा—स्वपर प्रकाशक जोति अति, दीपक तमकरि हीन ।

जासों पूजों परमपद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥

जो कर्म-ईंधन दहन अग्निसमूह सम उद्धत लसे ।

घर धूप तासु सुगन्धिताकरि सकल परिमलता हसे ॥

इह भांति धूप चढ़ाय नित भवज्वलनमांहीं नहिं पचूं । अ० ।

दोहा—अग्निमाहिं परिमल दहन, चंदनादि गुणलोचन ।

जासों पूजों परम पद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं ॥

लोचन सुरसना घ्राण उर, उत्साहके करतार हैं ।

मोपै न उपमा जाय वरणी, सकल फलगुणसार हैं ॥

सो फल चढ़ावत अर्थ पूरन, परम अप्रतरस सचूं ॥ अ० ॥

दोहा—जे प्रधान फल फलविषै, पंचकरण-रसलीन ।

जासों पूजों परम पद, देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूं ।

घर धूप निरमल फल विविध, बहु जनमके पातक हरूं ॥

इहभांति अर्घ चढ़ाय नित भवि, करत शिवपङ्कति मचूं । अ०

दोहा—घसुविधि अर्घ सँजोयके, अति उछाह मन कीन ।

जासों पूजों परमपद देव शास्त्र गुरु तीन ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥

अथ अन्नमांसा

देवशास्त्रगुरु रतन शुभ, तीव्र रतन करतार ।

भिन्न भिन्न कहुँ आरती, अल्प सुगुण विस्तार ॥ १ ॥

चक्रकर्मकी त्रैलोक्य प्रकृति नाशि । जीते अष्टादशदोषराशि ।

जे परम सुगुण हैं अनंत धीर । कहवतकेछयालिस गुण गँभोर ॥ २ ॥

शुभ समवशरणशोभा अपार ! शत इन्द्र नमत कर शीस धार

देवाधिदेव अरहंत देव । बन्दो मनवचन करि सु सेव ॥ ३ ॥

जिनकी धुनि है ओंकाररूप । निरक्षरमय महिमा अनूप ।

दश अष्ट महा भाषा समेत । लघु भाषा सात शतक सुचेत ॥ ४ ॥

सो स्यादवादमय सप्त भङ्ग । गणधर गूँथे बारह सुअङ्ग ।

रविशशि न हरै सो तम हराय । सो शास्त्र नमों बहु प्रीति ल्याय ।

गुरु आचारज उवभाय साधु । तन नगन ^तस्त्रय निधि अगाध ।

संसारदेह बैराग धार । निरवांक्षि तपै शिवपद निहार ॥ ६ ॥

गुण छत्तिस पच्चिस आठवीस । भवतारन तरन जिहाज ईस

गुरुकी महिमा वरनी न जाय । गुरु नाम जपों मन वचनकाय ॥ ७ ॥

सोरठा—बीजे शक्ति प्रमान, शक्ति बिना सरधा धरै ।

‘द्यानत’ सरधावान, अजर अमर पद भोगबै ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं देवशास्त्रगुरुभ्यो महार्घ्यं निर्बपामीति स्वाहा ।

(५६) वासतीर्थंकर पूजा भाषा ।

द्वीप अढ़ाई मेरु पन, अब तीर्थंकर बीस ।

तिन सबकी पूजा करूँ मनवच तन धरि शीस ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थंकरा ! अत्र अवतर अतवर ।

तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

इन्द्रफणीन्द्रनरेन्द्रबन्ध, पद निर्मलधारी । शोमनीक संसार,

सारगुण हैं अविकारी ।

क्षीरोदधिसम नीरसों (हो) पूजों तृषा निवार ॥

सीमन्धर जिन आदि दे, बीस विदेह मँभार ॥

श्री जिनराज हो, भव तारण तरण जिहाज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशनाय जलं ॥

(इस पूजामें यदि बीस पुञ्ज करना हो तो इस प्रकार मन्त्र बोलना चाहिये ।)

ॐ ह्रीं सीमन्धरगुग्मंधर-बाहु-सुबाहु-सुजात-स्वयंप्रभ-ऋषभा-
नन अनन्तवीर्य्य-सूरप्रभ-विशालकीर्ति-बज्रधर-चन्द्रानन-चन्द्रबाहु-
भुंजगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र-देवयशाऽजितवीर्य्येति-
विंशतिविद्यमानतीर्थकरेभ्यो जन्ममृत्युविनाशाय जलं ॥ १ ॥

तीन लोकके जीव, पाप आताप सताये । तिनकों साता दाता,
शीतल वचन सुहाये ॥ यावन चन्दनसों जजूं (३), भ्रमनतपन
निरवार । सीमं ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो भवातापविनाशनाय चन्दनं ॥

यह संसार अपार, महासागर जिनस्वामी ।

तातैं तारे बड़ी भक्ति-नौका जग नामी ॥

तंदुल अमल सुगंधसों (हो) पूजों तुम गुणसार । सीमं० ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥

भविक-सरोज-विकाश, निंदितमहर रविसे हो ।

जतिश्रावकआचार कथनको, तुम्ही बड़ेहो ॥

फूलसुवास अनेकसों (हो), पूजों मदन प्रहार । सीमं० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो कामबाणविध्वंसनायपुष्पं ॥

कामनाग विषधाम,—नाशको गरुड़ कहे हो ।

क्षुधा महादवज्वाल, तासुको मेघ लहे हो ॥
 नेवज बहुघृत मिष्टसों (हो), पूजों भूख घिडार । सीमं० ॥ ५ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनायनैवेद्यं ॥
 उद्यम होन न देत, सब जगमाहिं भस्यो हैं ।
 मोह महातम घोर, नाश परकाश कस्यो है ॥
 पूजों दीप प्रकाशसों (हो) ज्ञानज्योतिकरतार । सीमं० ॥ ६ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोहान्धकारविनाशनायनैवेद्यं
 कर्म आठ सब काठ, भार विस्तार निहारा ।
 ध्यान अगनि कर प्रगट, सरब कीनों निरवारा ॥
 धूप अनूपम खेबतें (हो), दुःख जलै निरधार । सीमं० ॥ ७ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्योऽष्टकर्मविध्वंसनाय, धूपनि० ॥
 मिथ्यावादी दुष्ट, लोभहंकार भरे हैं ।
 सबको छिनमें जीत, जैनके मेर खरे हैं ।
 फल अति उत्तमसों जजों (हो), वांछित फल दातार सी० ॥ ८ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं ॥
 जल फल आठों दर्ब, अरघ कर प्रीत धरी हैं ।
 गणधर इन्द्रनिहंतै, थुति पूरी न करी हैं ।
 'द्यानत' सेवक जानके (हो), जगतें लेहु निकार । सीमं० ॥ ९ ॥
 ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्योऽनर्घपदप्राप्तये अर्घनि०
 अथ जयमाला आरतो ।
 सोरठा-ज्ञानसुधाकर चन्द, भविकखेतहित मेघ हो ।
 भ्रमतमभान अमन्द, तिर्थकर बीसों नमों ॥ १ ॥
 सीमन्धर सीमन्धर स्वामी । जुगमन्धर जुगमन्धर नामी ।

बाहु बाहु जिन जगजन तारे । करम सुबाहु बाहुबलदारे ॥१॥
जात सुजात केवलज्ञान । स्वयंप्रभू प्रभु स्वयं प्रधान । ऋषमानन
ऋषि भानन दोष । अनंत वीरज वीरजकोष ॥२॥ सौरीप्रभ सौरी-
गुणमाल । सुगुण विशाल विशाल दयाल ॥ बज्रधार भवगिरि-
चञ्जर हैं । चन्द्रानन चन्द्रानन वर हैं ॥ ३ ॥ भद्रबाहु भद्रनिके
करता । श्रीभुजङ्ग भुजङ्गम भरता । ईश्वर सबके ईश्वर छाजे ।
नेमिप्रभू जस नेमि विराजें ॥ ४ ॥ वीरसेन वीरं जग जाने ।
महाभद्र महाभद्र बखानै । नमों जसोधर जसधरकारी । नमों
अजितवीरज बलधारी ॥ ५ ॥ धनुष पांचसै काय विराजै । आयु
कोड़िपूरब सब छाजै । समवशरण शोभित जिनराजा । भवजल-
तारनतरन जिहाजा ॥६॥ सम्यक रत्नत्रयनिधि दानी । लोकालोक-
प्रकाशक ज्ञानी । शत इन्द्रनिकरि वन्दित सोहैं । सुरनर पशु
सबके मन मोहैं ॥७॥

दोहा—तुमको पूजै बन्दना, करै धन्य नर सोय ।

‘ज्ञानत’ सरधा मन धरै, सो भी धरमो होय ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं विद्यमानविंशतितीर्थकरेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ विद्यमान बीस तीर्थकरोका अर्थ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकेश्वरसुदीपसुधूपफलाघकैः ।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनराजमहं यजे ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं सीमंधरयुग्मंधरबाहुसुबाहुसंजातस्वयंप्रभञ्जभानन-
अनन्तवीर्यसूरप्रभविशालकीर्तिवज्रधरचन्द्राननचन्द्रबाहुभुजंगमईश्व-
रनेमिप्रभवीरसेनमहाभद्रदेवयशअजितवीर्येतिविंशतिविद्यमानतीर्थ-
करेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

(५७) अकृत्रिम चैत्यालयोंका अर्थ ।

कृत्याऽकृत्रिमचारुचैत्यनिलयान्नित्यं त्रिलोकीनतान् । वन्दे
भावनव्यन्तरान्यु तिवरान्कल्पामरान्सर्वगान् । सद्गन्धाक्षतपुष्पदाम
चरुकेदीपैश्च धूपैः फलैर्नौराद्यैश्च यजे प्रणम्य शिरसा दुष्कर्मणां
शान्तये ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धीजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं ।
वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु । यावन्ति
चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिन पुद्गवानाम् ॥ १ ॥

अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणां वनभवनगतानां दिव्य-
वैमानिकानाम् । इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां जिनवरनि-
लयानां भावतोऽहं स्मरामि ॥ २ ॥

जम्बूधातकिपुष्करार्द्धवसुधाक्षेत्रत्रयं ये भवाश्चन्द्राम्भोजशि-
खण्डिकण्ठकनकप्रावाङ्मुनाभाजिनः । सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षण-
धरा दग्धाष्टकमेन्धना भूतानागतवर्त्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो
नमः ॥ ३ ॥ श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बूवृक्षो
वृक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचिके कुण्डले मानुषाङ्के । ईष्वकारेऽ
अनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे
भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥ ४ ॥ द्वौ कुन्देन्दुतुषा- रहा
रघवलौ द्वाविन्दीनीलप्रभौ द्वौ बन्धूकुसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ चप्रिय
ङ्गुप्रभौ । शेषाः षोडशजन्ममृत्युरहिताः सन्तसहेमप्रभास्तेसंज्ञान-
दिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं त्रिलाकसम्बन्धअकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घं निर्वपामि ॥

इच्छामिमंते-चेष्ट्यमस्ति काओत्तगो काओ तस्सालोचैओ अह-

लीय तिरियलोय उद्दल्लोयम्म किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिनचेइ-
याणि ताणि सव्वाणि । तीसुविलोएसु भवणवासियबाणचित्तरजो
तसियकलपवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गन्धेण
दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुव्वेण दिव्वेण चुणणेण दिव्वेण वासेण ।
दिव्वेण ह्माणेण णिच्चकालं अच्छंति पुज्जंति वंदंति णमस्संति ।
अहमवि इह संतो तत्थ संताइ णिच्चकालं अच्छेमि पुज्जेमि
वन्दामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइग-
मणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

(इत्याशोर्वादः । परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

अथ पौर्वाहिकमाध्याह्निकअपराणिदेववन्दनायां पूर्वाचार्यानु
क्रमेणसकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं श्रीपञ्चमहागुरु-
भक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् । (कायोत्सर्गं करना और नोचे लिखे
मंत्रका नौ बार जाप करना)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयसीयाणं, णमो
उवम्भायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ताव कायं पावकम्मं
दुच्चरियं वोस्मरामि ।

॥ आठवाँ अध्याय ॥

{ ५८ } सिद्धपूजा ।

ऊर्द्धवा घोरयुतं सबिन्दुसपरं ब्रह्मस्वरावेष्टितं वर्गापूरितदि-
ग्गताम्बुजदलं तत्सन्धितत्त्वान्वितम् । अन्तःपत्रतटेष्वनाहत-
युतं ह्रींकारसवेष्टितं देवं ध्यायति यः स मुक्तिसुभगो बैरीभक्त-

ण्ठीरवः ॥ ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् अत्र
अवतर अवतर । सर्वौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र
मम सान्निहितो भव भव वषट् ।

निरस्तकर्मसम्बन्धं सूक्ष्मं नित्यं निरामयम् ।

वन्देऽहं परमात्मानममूत्र मनुपदवम् ॥ १ ॥

(सिद्धयन्त्रकी स्थापना)

सिद्धौ निवासमनुगं परमात्मगम्यं हीनादिभावरहितं भववीत
कायम् । रेवापगारवसरो-यमुनोदभवानां नीरय्यजे कलशगैर्वर-
सिद्धचक्रम् ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने
जन्ममृत्युविनाशनाय जलं ॥

आनन्दकन्दजनकं घनकर्ममुक्तं सम्यक्त्वशर्मगरिमं जनना-
तिवीतम् । सौरम्यवासितभृशं हरिचन्दनानां गन्धैर्यजे परिमलै-
र्वरसिद्धचक्रम् ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने
संसारतापविनाशनाय चन्दनं । सर्वावगाहनगुणं सुसमाधिनिष्ठं
सिद्धं स्वरूपनिपुणं कमलं विशालम् । सौगन्ध्यशालिवनशालि-
वराक्षतानां पुज्जैर्यजे शशिनिर्भैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ३ ॥ ओं ह्रीं
सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् । नित्यं
स्वदेहपरिमाणमनादिसंज्ञं द्रव्यानपेक्षममृतं मरणाद्यतीतम् । मन्दा-
रकुन्दकमलादिवनस्पतीनां पुष्पैर्यजे शुभतमैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंस-
नाय पुष्पं । ऊर्ध्वस्वभावगमनं सुमनोव्यपेतं ब्रह्मादिबीजसहितं
गगनावभासम् । क्षीरान्नसाज्यवटके रसपूर्णगर्भे—नित्यं यजे

चरुवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपर-
मेष्ठिने क्षुधारोगविध्वंसनाय नैवेद्यं ॥
आतङ्कशोकभयरोगमदप्रशान्तं निर्द्वन्द्वभावघरणं महिमानिवेशम् ।
कर्पूवर्तिबहुभिः कनकाचदातैर्दीपैर्यजे रुचिवरैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिनेमोहान्धकारविनाशायदीपं
पश्यन्समस्तभुवनयुगपन्नितान्तं त्रैकाल्यवस्तुविषये निविडप्रक्षी-
पम् । सद्द्वयगन्धघनसारविमिश्रितानां धूपैर्यजे परिमलैर्वरसिद्ध-
चक्रम् ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्क-
दहनाय धूपं । सिद्धसुरादिपतियक्षनरेन्द्रचक्रैः ध्येयं शिवं
सकलभयजनैः सुबन्धम् । नारिङ्गपुङ्गकदलीफलनारिकेलैः सोऽहं
यजे वरफलैर्वरसिद्धचक्रम् ॥ ८ ॥ ओं ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये
सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलं । गन्ध्याढ्यं सुपयो मधु-
व्रतगणैः सङ्गं वरं चन्दनं पृष्णपौघं विमलं सदक्षतचयं रम्यं
चरुं दीपकम् । धूपं गन्धयुतं ददामि विविधं श्रेष्ठं फलं लब्धये
सिद्धानां युगपत्क्रमाय विमलं सोनोत्तरं वाञ्छितम् ॥ ९ ॥ ओं
ह्रीं सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं । ज्ञानोपयोगविमलं
विशदात्मरूपं सूक्ष्मस्वभावपरमं यदनन्तवीर्यम् । कर्मौघकक्षदहनं
सुखशस्यबीजं बन्दे सदा निरुपमं वरसिद्धचक्रम् ॥ १० ॥ ओं ह्रीं
सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने महार्घ्यं । त्रैलोक्येश्वर-
चन्दनीयचरणाः प्रापुः श्रियं शाश्वतीं यानाराध्य निरुद्धचण्ड-
मनसः सन्तोऽपि तीर्थङ्कराः । सत्यसम्यक्त्वविबोधवीर्यं
विशदाऽव्याबाधतायैर्गुणैर्गुणैस्तानिहतोष्टवीमि सततं सि-
द्धान् विशुद्धोदयान् ॥ ११ ॥ (पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्)

अथ जयमाला ।

विराग सनातन शान्त निरंश । निरामय निर्भय निर्मल हंस ॥
 सुधाम विबोधनिधान विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥१॥
 विदूरितसंस्तुतभाव निरङ्ग । समामृतपूरित देव विसङ्ग ॥
 अवन्ध कषायविहीन विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ २ ॥
 निवारितदुष्कृतकर्मविपास । सदामलकेवलकेलनिवास ॥
 भवोदधिपारग शान्त विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥३॥
 अनन्तसुखामृतसागर धीर । कलङ्क रजोमलभूरिसमीर ॥
 विखण्डितकाम बिराम विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥४॥
 विकारविवर्जित तर्जितशोक । विबोधसुनेत्रविलोकित्रिलोक ॥
 विहार बिराव विरङ्ग विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥ ५ ॥
 रजोमल खेदविमुक्त विगात्र । निरन्तर नित्य सुखामृतपात्र ॥
 सुदर्शनराजित नाथ विमोह । प्रसीद ब्रिसुद्ध सुसिद्धसमूह ॥६॥
 नरामरवन्धित निर्मलभाव । अतन्तमुनीश्वरपूज्य बिहाव ॥
 सदोदय विश्वमहेश विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥७॥
 विदंभ वितृष्ण विदोष चिन्त्र । परापर शङ्कर सार वितन्द्र ॥
 विकोप विरूप विशङ्क विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥८॥
 जरामरणोज्झित वीतविहार । विचिन्तित निर्मल निरहङ्कार ॥
 अचिन्त्यचरित्र विदपै विमोह । प्रसीद विशुद्ध सुसिद्धसमूह ॥९॥
 विवर्ण विगंध विमान विलोभ । विमाया विकाय विशब्द विशोभ ॥
 अनाकुल केवल सर्व विमोह । प्रसिद्ध विशुद्ध सुसिद्ध समूह ॥१०॥
 असमयसमयसारं वारुचैतन्यचिन्हं । परपरणतिमुक्तं पद्मनंदोद्भवन्द्यम्
 निखिलगुणनिकेतं सिद्धचक्रं विशुद्धं स्मरति नमति यो वा स्तौति
 सोऽभ्येति मुक्तिम् ॥ ११ ॥

ओंहीं सिद्धपरमेष्ठिभ्यो महार्घ्यं निर्बपामीति स्वाहा ॥
अविनाशी अविकार परम रसधाम हो । समाधान सर्वज्ञ सहज
अभिराम हो ॥ शुद्धबोध अविरुद्ध अनादि अनंत हो । जगतशिरो-
मणि सिद्ध सदा जयवंत हो ॥ १ ॥ ध्यानअगनि कर कर्म कलङ्क
सबे दहे । नित्य निरञ्जनदेव सरूपी हो रहे ॥ श्वायकके आकार
ममत्वनिवारिके । सो परमात्म सिद्ध नमूँ सिरनायकै ॥ २ ॥

दोहा—अविचलज्ञानप्रकाशतै, गुण अनन्तकी खान ।

ध्यान धरै सो पाइये परम सिद्ध भगवान ॥ ३ ॥

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

सिद्धपूजाका भाषाष्टक ।

निजमनोमणिभाजनभारया, समरसैकसुधार सधारया,
सकलबोधकलारमणीयकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ १ जलम् ॥
सहजकर्मकलङ् कविनाशनैरमलभावसुभाषितचन्दनैः । अनु-
पमानगुणावलिनायकं, सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ २ ॥ चन्दनम् ।
सहजभावसुनिर्मलतन्दुलैः सकलदोषविशालविशोधनैः । अनु-
परोधसुबोधविनायकं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ३ ॥ अक्षतान ।

समयसारसुपुष्पसुमालया सहजकर्मकरेण विशोधया । पर-
मयोगबलेन वशीकृतं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ४ ॥ पुष्पम् ।

अकृतबोधसुदिव्यनैवेद्यकैर्विहितजातजरामरणांतकैः । निरव-
धिप्रचुरात्मगुणालयं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ५ ॥ नैवेद्यम् ॥

सहजरत्नरुचिप्रतिदीपकै रुचिविभूतितमः प्रविनाशनैः । निर-
वधिस्वविकाशविकाशनैः सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ६ ॥ दीपम्

निजगुणाक्षयरूपसुधूपनैः स्वगुणघातिमलप्रविनाशनैः । विश-

दबोधसुदीघं सुखात्मकं सहजसिद्धमहं पारपूजये ॥ ७ ॥ धूपम् ।

परमभावफलावलि सम्पदा सहजभावकुभावविशोधया । निज-
गुणाऽऽफुटतास्मनिर'जनं सहजसिद्धमहं परिपूजये ॥ ८ ॥ फलम् ।

नेत्रोन्मीलिविकाशभावनिवहैरत्यन्तबोधाय वे

वार्गन्धाक्षतपुष्पदामचरुकैः सन्दीपधूपैः फलैः ।

यश्चिन्तामणिशुद्धभावपरमज्ञानात्मकैरर्चयेत्

सिद्धं स्वादुमगाधबोधमवलं संवर्चयामो वयम् ॥ ९ अर्घम्

(६०) सोलहकारणका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनहेतुमहं यजे ॥ १ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं ।

(६१) दशलक्षणाधमका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीप सु धूपफलार्घकैः ।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जिनधर्ममहं यजे ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अहंमुख कमलसतोत्तमक्षमामाहं वाजं वसत्यशौचसंय-
मतपस्त्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्यदशलक्षणिकधर्मभ्यो अर्घ ।

(६२) रत्नत्रयका अर्घ ।

उदकचन्दनतन्दुलपुष्पकैश्चरुसुदीपसुधूपफलार्घकैः ।

धवलमङ्गलगानरवाकुले जिनगृहे जितनाथमहं यजे ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय त्रयोदश-
प्रकारसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वापामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

(६३) सोलह कारण पूजा

अङ्गि—सोलहकारण भाय तीर्थकर जे भये । हरषे इन्द्र अपार मेरुपे ले गये ॥ पूजा करि निज धन्य लख्यौ बहु चावसौ । हमहू षोडशकारण भावै भावसौ ॥१॥

ओं हीं दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणानि ! अत्रावतर अवतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितोभव भव वषट् ।

चौपाई—कंचनभारी निरमल नीर । पूजौं जिनवर गुणगंभीर ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परम गुरु हो ॥

दर्शविशुद्धि भावना भाय । सोलह तीर्थकर पदपाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ १ ॥

ॐ हीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो जन्ममृत्युविनाशाय जलं ।

चंदन घसौं कपूर मिलाय, पूजौं श्रीजिनवरके पाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥२॥

ॐ हीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः चन्दनं० ।

तन्दुल घबल सुगन्ध अनूप, । पूजौं जिनवर तिहुँ जगभूप ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ३ ॥

ओं हीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ।

फूल सुगन्ध मधुपगुंजार । पूजौं जिनवर जगदाधार ।

परमगुरु हो जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ ४ ॥

ओं हीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यः कामवण विश्वसनायपुष्पं॥

सदनेवज बहुविध पकवान । पूजौं श्रीजिनवर गुणखान

परमगुरु हो, जब जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यश्च धारोगविनाशनाय नैवेद्य

दीपकजोति तिमर छयकार । पूजूं श्रीजिन केषलधार ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं दर्शन विशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दोषं ॥

अगर कपूर गन्ध शुभ खेय । श्रीजिनवर आगे महकेय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं ॥

श्रीफल आदि बहुत फलसार । पूजौं जिन बांछितदातार ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्शवि० ८ ॥

ओं ह्रीं दर्शन विशुद्धयादिषोडशकारणेभ्यो मोक्षफलप्राप्ताये फलं

जल फल आठों दरब चढ़ाय । 'द्यानत' वरत करों मनलाय ।

परमगुरु हो, जय जय नाथ परमगुरु हो ॥ दर्श० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं दर्शनविशुद्धयादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—षोडशकारण गुण करै, हरै चतुरगतिवास ।

पाप पुण्य सब नाशकै, ज्ञान भान परकास ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा ।

दर्शविशुद्ध धरै जो कोई । ताको आवागमन न होई ॥

विनय महा धारै जो प्राणी । शिवबनिताकी सखी बखानी ॥ २ ॥

शील सदा दिढ़ जो नर पालें । सो ओरनकी आपद टालें ॥

ज्ञानाभ्यास करै मनमाहीं । ताकै मोहमहातम नाहीं ॥ ३ ॥

जो संवेगभाव विस्तारै । सुरगमुक्तिपद आप निहारै ॥

दान देय मन हरष विशेषे । इह भव जस परभवसुखदेखे ॥ ४ ॥

जो तप तपै खपै अभिलाषा । चुरै करमशिखर गुरु भाषा ॥
 साधुसमाधि सदा मन लावै । तिहुँ जगभोग भोगि शिव जावै ॥५॥
 निशादिन बयावृत्य करैया । सो निहचै भवनीर तिरैया ॥
 जो अरिहन्तभगति मन आनै । सो जन बिषय कषाय न जानै ॥६॥
 जो आचारजभगति करै हैं । सो निर्मल आचार धरै हैं ॥
 बहुश्रुतबन्तभगति जो करई । सो नर सम्पूर्ण श्रुत धरई ॥७॥
 प्रवचनभगति करै जो ज्ञाता । लहै ज्ञान परमानन्द दाता ॥
 पट् आवश्यक काल जो साधै । सो ही रतनत्रय आराधै ८ ॥
 धरमप्रभाव करै जे ज्ञानी । तिन शिवमार्ग रीति पिछानी ॥
 बात्सलअङ्ग सदा जो ध्यावै । सो तीर्थंकर पदवी पावै ॥ ९ ॥
 दोहा—एही सोलह भावना, सहित धरै व्रत जोय ।

देवइन्द्रनरवन्धपद, 'द्यान्त' शिवपद होय ॥ १० ॥

ओं ह्रीं दशैनविशुद्धयादिषां शकारणेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ॥

{६४} अथ दशलक्षणधर्मपूजा ।

अडिल—उत्तम क्षिमा मारदव आरजव भाव हैं । सत्य शौच
 सज्जम तप त्याग उपाव हैं ॥ आकिञ्चन ब्रह्मवरज धरम दश सार
 हैं । चहुँ गतिदुखतैं काढ़ि मुक्त करतार हैं ॥ १ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्रावतर अवतर ! संवौषट् ।
 अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

सोरठा—हेमाचलकी धार, मुनिचित सम शीतल सुरभ ।

भबआताप निवार, दश लच्छन पूजों सदा ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मां जल' निर्वपामि ॥ १ ॥

चन्दन केशर गार, होय सुवास दशों दिशा । भवआ० ॥

ओं ह्रीं उत्तमादिदशलक्षणधर्माय चन्दनं निर्वपामि ॥ २ ॥

अमल अखण्डित सार, तन्दुल चन्द्र समान शुभ ॥ भवआ० ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षतान निर्वपामि ॥ ३ ॥

फूल अनेक प्रकार, महकै ऊरधलोक लों । भवआ० ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय पुष्पं निर्वपामि ॥ ४ ॥

नेबज बिबिध प्रकार, उत्तम पटरससंजुतं ॥ भवआ० ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय नैवेद्यं निर्वपामि ॥

वाति कपूर सुधार, दीपकजोति सुहावनी ॥ भवआ० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय दीपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

अगर धूप विस्तार, फैले सवं सुगन्धता ॥ भवआ० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय धूपं निर्वपामि ॥ ६ ॥

फलकी जाति अपार, घ्राण नयन मनमोहने ॥ भवआ० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय फलं निर्वपामि ॥ ८ ॥

आठों दरब संभार 'द्यानत' अधिक उछाह सों ॥ भवआ० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्मायाभ्यं निर्वपामि ॥ ९ ॥

अंग पूजा ।

सोरठा—पीडै दुष्ट अनेक, बांध मार बहुबिधि करै ।

धरिये क्षिमा चिवेक, कोप न कीजे पीतमा ॥ १ ॥

चौपाई मिश्रित गीताङ्गन्द ।

उत्तम छिमा गहो रे माई । इहभव जस परभव सुखदाई ॥

गाली सुनि मन खेद न आनो । गुनको औगुन कहै अयानो ॥

कहि है अयानो वस्तु छीने, बांध मार बहुबिधि करे । घरतैं

निकारै तन विदारै, बैर जो न तहां धरै ॥ जे करम पूरब किये
छोटे, सहै क्यों नहिं जीयरा । अति क्रोध अगनि बुझाय प्राणी,
साम्य जल ले सोयरा ॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमाधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मान महाविषरूप करहिं नीचगति जगत में । कोमल सुधा
अनूप, सुख पावै प्राणी सदा ॥ २ ॥ उत्तम मादेवगुन मन माना ।
मान करनको कौन ठिकाना ॥ वस्यो निगोदमाहिं तैं आया ।
दमरो रुं'कन भाग विकाया ॥ रुं'कन विकाया भागबशतैं, देव
इकइन्द्री भया । उत्तम मुआ चण्डाल हूआ, भूप कीड़ोंमें गया ।
जीतव्य जोबन धनगुमान, चहा करै जलबुदबुदा । करि बिनय
बहुगुन बड़े जनकी, ज्ञानका पावै उदा ॥

ओं ह्रीं उत्तममादेवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

कपट न कीजै कोय, चोरनके पुर ना बसै । सरल सुभावो होय
ताके घर बहु सम्पदा ॥ ३ ॥ उत्तमआर्जव रीति बखानी । रंचक दगा
बहुत दुखदानी ॥ मनमें हो सो बचन उचरिये । बचन होय सो
तनसों करिये ॥ करिये सरल तिहुँ जोग अपने, देख निमल आरसी
मुख करै जैसा लखै तैसा, कपट प्रीति अँगारसी ॥ नहि लहै
लछमी अधिक छलकरि, करमबंध विसेखता । भय त्यागि दूध
बिलाय पीवै, आपदा नहिं देखता ।

ओं ह्रीं उत्तमाज्ञेवधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ३ ॥

धरि हिरदै सन्तोष, करहु तपस्या देहसों । शौच सदा निरदोष,
धरम बढ़ो संसारमें ॥ उत्तम शौच सर्व जग जाना । लोभ पापको
बाप बखाना ॥ आसाफांस महा दुखदानी । सुख पावै सन्तोषी

प्राणी ॥ प्राणी सदा शुचि शीलजपतप, ज्ञान ध्यान प्रभावतै । नित
गंगजमुन समुद्र न्हाये, अशुचिदोष सुभावतै ॥ ऊपर अमल मल
भरयो भोतर, कौन विध घट शुचि कहै ॥ बहु देह मैलो सगुन-
थैली, शौचगुन साधू लहै ॥

ओं ह्रीं उत्तमशौचधर्मा'गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥
कठिन बचन मत बोल, परनिन्दा अरु झूठ तज । सांच जवाहर
खोल, सतबादी जगमें सुखी ॥ ५ ॥ उत्तम सत्य वरत पालोजे ।
परविश्वास घात नहिं कीजे । सांचे झूठे मानुष देखे । आपनपूत
स्वपासन पेखे ॥ पेखे तिहायत पुरुष सांचेको, दरब सब दीजिये ।
मुनिराज श्रावककी प्रतिष्ठा, सांचगुन लख लीजिये । ऊंचे सिंहा-
सन बैठ वसुनप, धरमका भूपति भया । बसु झूठसेती नरक
पहुंचा सुगममें नारद गया ॥

ओं ह्रीं उत्तमसत्यधर्मा'गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ५ ॥
काय छहों प्रतिपाल, पंचेन्द्री मन वश करो । संयम रतन संभाल,
विषयचोर बहु फिरत हैं ॥ ६ ॥ उत्तम सजम गहु मन मेरे । भवभव
के भाजौं अघ तेरे । सुरग नरक पशुगतिमें नाहीं । आलसहरन करन
सुख ठाहीं ॥ ठाहीं पृथो जल आग मारत, रुख बस करना धरो ।
सपरसन रसना घान नेना, कान मन सब वश करो ॥ जिस बिना
नहिं जिनराज सीर्ष, तू खल्यो जगकीचमें । इक घरी मत विसरो
करो नित, आव जममुख बीचमें ॥

ओं ह्रीं उत्तमसंयमधर्मा'गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ६ ॥
तप चाहै सुरराय, करम शिखरको बज्र है । द्वादशविधि सुखदाय,
क्यों न करे निज सकति सम ॥ ७ ॥ उत्तम तपःसधर्मा' ॥ बखाना ।

करमशिखरको बज्र समाना ॥ बस्यो अनादिनिगोदमभारा । भूमि-
विकलत्रय पशुतन धारा ॥ धारा मनुष तन महादुर्लभ; सुकुल
आयु निरोगता ॥ श्रीजैनवानी तत्त्वज्ञानां भई विषमपयोगता ॥
अति महा दुरलभ त्याग विषय, कषाय जो तप आवरै । नरभय-
अनूपम फनकघरपर, मणिमयी कलसा धरै ॥

ओं ह्रीं उत्तमतपधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

दान चार परकार, चार संघको दीजिये । धन विजुली उनहार
नरभव लाहौ लीजिये ॥८॥ उत्तमत्याग कह्यो जगसारा । औषधि
शास्त्र अभय आहारा ॥ निहचै रागद्वेष निरवारै । ज्ञाता, दोनों दान
संभारै ॥ दोनों संभारै कूपजलसम, दरब घरमें परिनया । निज
हाथ दीजे साथ लोजे, छाया खोया बह गया ॥ धनि साध शास्त्र
अभयदिवया, त्याग राग विरोधको ॥ बिन दान श्रावक साध
दोनों, लहै नहीं बोधको ॥८॥

ओं ह्रीं उत्तमत्यागधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

परिग्रह चौबीस भेद, त्याग करे मुनिराजजी । तिसनाभाव
उछेद, घटती जान घटाइये ॥९॥ उत्तम आकिंचन गुण जानौ ।
परिग्रहचिन्ता दुख ही मानो ॥ फांस तनकसी तनमें सालै । चाह
लंगोटीको दुख भालै ॥ भालै न समता सुख कभी नर बिना मुनि
मुद्रा धरै । धनि नगनपर तन—नगन ठाढ़े, सुर असुर पायन परै ॥
घरमांहि तिसना जो घटावै, कवि नहीं संसारसौं । बहु धन बुराह
भला कहिये, लीन पर उपकारसौं ॥९॥

ओं ह्रीं उत्तमाकिञ्चन्यधर्माङ्गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

शोलबाड़ि नौ राज, ग्रहभाव अंतर लखो । करि दोनों अग्नि

लाख करहु सफल नरभव सदा ॥१०॥ उत्तम ब्रह्मचर्य मन आँनौ ।
माता बहिन सुता पहिचानौ ॥ सहै दानवरपा बहु सुरै । टिकै न
नैन दान लखि कुरै ॥ कुरै त्रियाके अशुचितनमें, कामरोगी रति
करै । बहु मृतक सड़हि, मसान मांही, काक ज्यों चोंचें भरै ।
संसारमें विषवेल नारी, तज गये जोगीश्वरा । 'द्यानत' धरमदशपैड़ि
चढ़िके, शिवमहलमे पग धरा ॥१०॥

ओं ह्रीं उत्तमब्रह्मचर्यधर्मा गाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥१०॥

अथ जयमाला ।

दोहा—दशलच्छन बंदों सदा, मनवांछित फलदाय ।

कहाँ आरती भारती, हमपर होहु सहाय ॥ १ ॥

धेसरी छंद ।

उत्तम छिमां जहां मन होई । अंतरबाहर शत्रु न कोई ॥ उत्तममार्दव
विनय प्रकासे । नाना भेद ज्ञान सब भासे ॥ २ ॥ उत्तमआर्जव
कपट मिटावे । दुरगति त्याग सुगति उपजावे ॥ उत्तमशौच
लोम परिहारी । संतोषी गुनरतनभंडारी ॥ ३ ॥ उत्तमसत्यवचन
मुख बोलै । सो प्राणी संसार न डोलै । उत्तमसंयम पाले
ज्ञाता । नरभव सफल करै ले साता ॥ ४ ॥ उत्तमतप निरवांछित
पाले । सो नर करम शत्रुको टालै । उत्तमत्याग करे जो कोई ।
भोगभूमि-सुर-शिवसुख होई ॥५॥ उत्तमआकिंचनव्रत धारै । परम
समाधिदशा बिसतारै ॥ उत्तमब्रह्मचर्य मन लावे । नरसुरसहित
मुक्तिफल पावे ॥ ६ ॥ दोहा—करै करमकी निरजरा, भवपीजरा
विनाशि । अजर अमरपदकों लहै, 'द्यानत' सुखकी राशि ॥७॥

ओं ह्रीं उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यशौचसंयमतप त्यागा-
किंचन ब्रह्मचर्यदशलक्षणधर्माय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥

(६५) पंचमेरु पूजा ।

गीताछंद—तीर्थङ्करोंके न्दवनजलतैं, भये तीरथ सर्वदा ।
तातैं प्रदच्छन देत सुरगन, पंचमेरुनकी सदा ॥ दो जलधिःदाईदीप
में सब, गनतमूल बिराजहीं । पूजों असी जिनधाम प्रतिमा, होहि
सुख, दुख भाजही ॥ १ ॥

ओं ह्रीं—पञ्चमेरुसम्बन्धिचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह !
अत्रावतरावतर । संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः अत्र ममसन्नि
हितो भव भव वषट् ।

चौपाई (१५ मात्रा)

अथाष्टक—

सीतलमिष्टसुवास मिलाय । जलसों पूजों श्री जिनराय ॥ महासुख
होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों मेरु असी जिन धाम । सब
प्रतिमाको करों प्रनाम महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ १ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धी जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जलं
जल केसर करपूर मिलाय । गंधसों पूजों श्रीजिनराय ॥

महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः चन्दनं
अमल अखण्ड सुगन्ध सुहाय । अच्छदसों पूजों जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थबिम्बेभ्यो अक्षतान् नि० ॥
वरन अनेक रहे महकाय, फूलनसों पूजों जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः । पुष्पं
मनवांछित बहु तुरत बनाय । वरुसों पूजों श्री जिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय ॥ पांचों० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । नेवेद्यं
तमहर उज्जल जोति जगाय । दीपसों पूजों श्री जिनराय ।

महासुख होय देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । दीपं
खेऊं अगर परिमल अधिकाय । धूपसों पूजों श्रीजिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । धूपं
सुरस सुवर्ण सुगन्ध सुभाय फलसों पूजों श्रीजिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ॥ पांचों० ॥ ८ ॥

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजितचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः । फलं
आठ दरबमय अन्न बनाय । 'द्यानत' पूजों श्रीजिनराय ।

महासुख होय, देखे नाथ परम सुख होय ।

ओं ह्रीं पञ्चमेरुसम्बन्धीजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो । अर्घ्यं

अथ जयमाला

सोरठा—प्रथम सुदर्शन स्वामि, विजय अचल मन्दिर कहा ।

विद्य नमाली नाम, पंचमेरु जगमें प्रगट ॥ १ ॥

वेसरी छन्द ।

प्रथम सुदर्शन मेरु बिराजे । भद्रसाल वन भूपर छाजे ।

चैत्यालय चारों सुखकारी । मनवचतन वंदना हमारी ॥ २ ॥

ऊपरपंच शतक पर सोहै । नन्दनवन देखत मन मोहै ॥ चै० ३ ॥

साढ़े बासठ सहस उंचाई । वन सुमनस शोभै अधिकाई ॥चै०४॥
 ऊंचा जोजन सहस छतीसं । पांडुकवन सोहै गिरिसीसं ॥चै०५॥
 चारों मेरु समान बखानो । भूपर भद्रसाल चहुं जानो ॥
 चैत्यालय सोलह सुखकारी । मनवचतन बंदना हमारी ॥चै० ६॥
 ऊंचे पांच शतकपर भाखें । चारों नन्दनवन अभिलाखें ॥ चै० ७॥
 साढ़े पचपन सहस उतंगा । वन सौमनस चार बहुरंगा ॥ चै० ८॥
 उच्च अट्टाईस सहस बताये । पाँडुक चारों नवन शुभगाये ॥चै०९॥
 सुरनर चारन बंदन आवै । सो शोभा हम किम मुख गावें ॥
 चैत्यालय अस्सी सुखकारी । मनवचतन बन्दना हमारी ॥चै०१०॥
 दोहा—पञ्चमेरुकी आरती, पढ़े सुनै जो कोय ।

‘द्यानत’ फल जानै प्रभू तुरत महासुख होय ॥ ११ ॥

ओं ह्रीं पचमेरुसम्बन्धिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्य अर्घ्यं ।

(६६) अथ रत्नत्रयपूजा ।

दोहा—चहुं गतिफनिविषहरनमणि, दुखपावक जलधार ।

शिवसुखसदासरोवरो, सम्यकत्रयी निहार ॥ १ ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रय ! अत्रावतरावतर । संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ।

ठः ठः अत्र मम सन्निहितं भव भव । वषट् ।

सोरठा—क्षीरोदधि उनहार, उज्जल जल अति सोहना ।

जनमरोग निरवार, सम्यकरत्नत्रय भजों ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय जन्मरोगविनाशाय जलं निर्व० ॥ १ ॥

चन्दन केसर गार, परिमल महा सुरंग मय । जन्मरो० ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय भवातापविनाशनाय चन्दनं ॥ २ ॥

तंदुल अमल विचार, वासमती सुखदासके । जन्मरो०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥ ३ ॥

महकै फूल अपार, अलि गुजै ज्यों थुति करै । जन्मरो० ॥०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं ॥ ४ ॥

लाडू बहु विस्तार, चीकन मिष्ट सुगन्धयुत । जन्मरो० ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय क्षुधारोगविनाशाय नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीपतरनमय सार, जोत प्रकाशै जगतमें । जन्मरो० ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥

धूप सुवास विचार, चन्दन अगर कपूरकी । जन्मरो० ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामि ॥७॥

फल शोभा अधिकार, लोंग छुहारे जायफल । जन्मरो० ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामि ॥८॥

आठदरव निरधार, उत्तमसों उत्तम लिये । जन्मरो०

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं ॥ ९ ॥

सम्यकदरसनबान, व्रत शिवमग तीनों मयी ।

पार उतारन जान, 'द्यानत' पूजौ व्रतसहित ॥ १० ॥

ओं ह्रीं सम्यग्रत्नत्रयाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामि ।

(६७) दर्शनपूजा ।

बोहा—सिद्ध अष्टगुणमय प्रगट, मुक्तजीवसोपान ।

जिह्वाधिन ज्ञानचरित अफल, सम्यक्दर्श प्रधान ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शन । अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितं भव भव वषट् ।

सोरठा—नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै मल क्षय करै ।

सम्यकदर्शनसार, आठ अंग पूजौं सदा ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥

जल केसर घनसार, ताप हरै सीतल करै । सम्यकद० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा ।

अक्षत अनूप निहार, दारिद्र नाशे सुख करै । सम्यक० ॥ ३ ॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अक्षतान निर्वपामीति स्वाहा

पहुप सुवास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यकद० ॥ ४ ॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४॥

नेवज विविधप्रकार, छुधा हरै धिरता करै । सम्यकद० ॥ ५ ॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

दीपज्योति तमहार घटपट परकाशै महा । सम्यकद० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय दीपं निर्वपामिति स्वाहा ॥६॥

धूप घानसुखकार, रोग विघन जड़ता हरै । सम्यकद० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ७ ॥

श्रीफलआदि विधार निहचै सुरशिव फल करै । सम्यकद० ॥८॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय फलं निर्वपामीति स्वाहा ॥८॥

जल गन्धाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । सम्यकद० ॥९॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसम्यग्दर्शनाय अर्घ्यं निर्वपामीति ॥ ९ ॥

अथमाला

दोहा—आपआप निहचै लखै तत्त्वप्रीति व्योहार ।

रहितदोष पञ्चीस हैं, सहित अष्ट गुन सार ॥१॥

चौपाईमिभित गीता छंद

सम्यकदरसन रतन गहीजे । जिनबचमें सन्देह न कीजे ।

इहभव विभवचाह दुखदानी । परभवभोग सहै मत प्रानी ॥

प्रानी गिलान न करि अशुचि लखि, धरमगुरुप्रभु परखिये ।

परदोष ढकिये धरम डिगतेको सुधिर कर हरखिये ।

चहुसंघको वात्सल्य कीजे, धरमकी परभावना ।

गुन आठसों गुन आठ लहिके, इहां फेर न आवना ॥२॥

ओं ह्रीं अष्टाङ्गसहितपञ्चविंशतिदोषरहिताय सम्यग्दर्शनाय
पूर्णाङ्ग्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥ २ ॥

(६८) ज्ञानपूजा ।

दोहा—पंचभैद जाके प्रगट, ज्ञेयप्रकाशन भान ।

मोह तपन हर चन्द्रमा, सोई सम्यकज्ञान ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञान ! अत्र अवतर अवतर । सगौपट्
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट्
सोरठा—नीर सुगन्ध अपार, त्रिपा हरै मल छय करै ।

सम्यकज्ञान विचार; आठ भेद पूजौं सदा ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥
जलकेसर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यकज्ञा० ॥ २ ॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥
अछत अनुप निहार, दारिद नाशे सुख भरै । सम्यग्ज्ञा० ॥३॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥
पहुपसुवास उदार, खेद हरे मन शुचि करै । सम्यकज्ञा० ॥४॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥
नेवज विविध प्रकार, लुधा हरै धिरता करै । सम्यकज्ञा० ॥५॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

दीपज्योतिर्महार, घटपट परकाशे महा । सम्यक्ज्ञा० ॥६॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा ॥६॥

घपघ्नानसुखकार, रोग विघन जड़ता हरे । सम्यक्ज्ञा० ॥७॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ॥७॥

श्रीफल आदि विधार निहचे सुरशिवफल करै । सम्यक्ज्ञा० ॥८॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय फलं निर्वपामीमि स्वाहा० ॥८॥

जल गंधाक्षत चारु, दीप धूप फल फूल चरु । सम्यक्ज्ञा० ॥९॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥९॥

अथ जयमाला

दोहा—आप आप जानै नियत, ग्रंथपठन व्योहार ।

संशय विभ्रम मोह विन, अष्टअङ्ग गुणकार ॥१॥

चौपाई मिश्रित गीताछन्द

सम्यक्ज्ञान रतन मन भाया । आगम तीजा नैन बताया ।

अक्षर शुद्ध अरथ पहिचानौ । अच्छर अरथ उभय संग जानौ ॥

जानौं सुकालपठन जिनागम, नाम गुरु न छिपाइये ।

तपरीति गहि बहु मान देकै, विनयगुन चित लाइये ॥

ए आठ भेद करम उछेदक, ज्ञानदर्पन देखना ।

इस ज्ञानहीसों भरत सीम्हा, और सब पटपेखना ॥३॥

ओं ह्रीं अष्टविधसम्यग्ज्ञानाय पूर्णाङ्ग्यं निर्वपामीति स्वाहा ॥२॥

(६६) चारित्र पूजा ।

विषयरोग औषध महा, द्रवकषायजलधार ।

तीर्थकर जाकौं धरै, सम्यक्चारितसार ॥१॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्र ! अत्र अवतर अवतर । संवौ
षट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । उः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्
सोरठा—नीर सुगंध अपार, त्रिषा हरै भल छय करै ।

सम्यक्चारित्र सार, तेरहविधि पूजौ सदा ॥१॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय जलं निर्वपामि० ।
जल केसर घनसार, ताप हरै शीतल करै । सम्यक्चा० ॥२॥ ओं
ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा । अछल
अनूप निहार, दारिद नाशै सुख भरै । सम्यक्चा० ॥३॥ ओं ह्रीं
त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा । पुहपसु
वास उदार, खेद हरै मन शुचि करै । सम्यक्चा० ॥४॥ ओं ह्रीं त्रयो
दशविधसम्यक्चारित्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा । नेवज चिविध
प्रकार, धुधा हरै धिरता करै । सम्यक् ॥५॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा ।
दीपज्योति तमहार, घटपट परकाशै महा । सम्यक्चा० ॥ ६ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविध सम्यक् चारित्राय दीपं निर्वपामि० ।

धूप घान सुखकार, रोग विघन जड़ता हर । सम्यक्चा० ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

श्रीफलआदि बिथार, निहचै सुरशिवफल करै । सम्यक्चा० ॥८॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जल गंधाक्षत चारु दीप धूप फल फूल चरु । सम्यक्चा० ॥ ९ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधसम्यक्चारित्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

जयमाला ।

आप आप धिर नियत नय, तपसंजम व्योहार ।

स्वपर दया दोनों लिये, तेरहविध दुखहार ॥१॥

चौपाई मिश्रित गोता छंद ।

सम्यक्चारित रतन सँभालो । पांच पाप तजिकै व्रत पालो ।
पंचसमिति त्रय गुपति गहीजै । नरभव सफल करहु तन छोडै ॥
छीजै सदा तनकों जतन यह एक संजम पालिये ।
बहु कल्यो नरकनिगोदमांहीं, कषायविषयनि टालिये ॥
शुभ करमजोग सुघाट आया पार हो दिन जात है ।
'द्यानत' धरमकी नाव बैठो, शिवपुरी कुशलात है ॥ २ ॥

ओं ह्रीं त्रयोदशविधिसम्यक्चारित्र्याय महार्घ्य ।

अथ समुच्चय जयमाला ।

दोहा—सम्यक्दर्शन ज्ञान व्रत, इन बिन मुक्त न होय ।

अंध पंगु अरु आलसी, जुदे जले दब लोय ॥ १ ॥

चौपाई १६ मात्रा ।

तापे ध्यान सुधिर बन आवे । ताके करम बंध कट जावे ॥
तासों शिवतिय प्रीति बढावे । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥२॥
ताकों बहु गतिके दुख नाहीं । सो न परे भवसागरमांहीं ॥ जनम-
जरामृतु दोष मिटावे । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥३॥ सोई दश-
लच्छनको साधै । सो सोलहकारण आराधै ॥ सो परमात्म पद
उपजावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥४॥ सोई शक्रचक्र पदलेई ।
तीनलोकके सुख बिलसेई ॥ सो रागादिक भाव बहावै । जो सम्य
करतनत्रय ध्यावै ॥५॥ सोई लोकालोक निहारे । परमानंददशा वि
सतारै ॥ आप तिरै औरन तिरवावै । जो सम्यकरतनत्रय ध्यावै ॥६॥
दोहा—एकस्वरूपप्रकाश निज, वचन कह्यो नहिं जाय ।

तीन भेद व्योहार सब, द्यानतको सुखदाय ॥७॥

ओं ह्रीं सम्यक्चारित्र्याय महार्घ्य निर्वापामीति स्वाहा ।

(७०) श्रीनन्दीश्वर पूजा ।

अडिह—सरब परबमें बड़ो अठार्ह परब है । नंदीश्वर सुर जाहिं लेय वसु दरब है ॥ हमें सकति सो नाहिं इहां करि थापना । पूजों जिनगृह प्रतिमा है हित आपना ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ।
अत्र अवतर अवतर । संवौषट्, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव । वषट् ।

कंचनमणिमय भृगार, तीरथनीरभरा ।

तिहुं धार दयो निरवार, जामन मरन जरा ॥

नंदीश्वर श्रीजिनधाम, बावन पुंज करों ।

वसु दिन प्रतिमा अभिराम, आनदभाव धरों ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे द्विपञ्चासज्जि-
नालयस्थजिनप्रतिमाभ्यो (इतना मंत्र प्रत्येक अष्टकके अंतमें बोलना
चाहिये) जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्बपामोति स्वाहा ॥१॥

भवतपहर शोतलवास, सो चंदननाहीं ।

प्रभु यह गुन कीजे सांच, आयो तुम ठाहीं ॥नंदी०॥

ओ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे भवाताप विनाशनाय चंदनं ॥२॥

उत्तम अक्षत जिनराज, पुंज धरे सोहें ॥

सब जीते अक्षसमाज; तुम सम अरुको हैं ॥ नंदी० ॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् ॥३॥

तुम कामविनाशक देव, ध्याऊं फूलनसौं ।

लहिं शील लच्छमी एव, कूटें सुलनसौं ॥नंदी०॥

ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे कामवाण विध्वंसनाय पुष्पं ॥ ४ ॥
 नेवज इन्द्रियबलकार, सो तुमने चूरा ।
 चरु तुम ढिग सोहै सार, अचरज है पूरा ॥ नन्दी० ॥
 ओं ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे क्षुधारोगविनाशनाय नेत्रेद्यं ॥ ५ ॥
 दीपककी ज्योति प्रकाश, तुम तनमांहिं लसै ॥
 टूट करमनकी राश, ज्ञानकणी दरसै ॥ नन्दी० ॥
 ओं ह्रीं श्री नदीश्वर द्वीपे मोहान्धकार विनाशनाय दीपं ॥ ६ ॥
 कृष्णागरुधूपसुवास दशदिशिनारि बरै ।
 अति हरषभाव परकाश, मानों नृत्य करै ॥ नन्दी० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीनदीश्वरद्वीपे अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥
 बहुबिधफल ले तिहुंकाल, आनंद राचत हैं ।
 तुम शिवफल देहु दयाल, तो हम जाचत हैं ॥ नन्दी० ॥
 ॐ ह्रीं श्रीनन्दीश्वरद्वीपे मोक्षफलप्राप्तये फलं ॥ ८ ॥
 यह अरघ कियो निज हेत, तुमको अरपत हों ।
 'द्यानत' कीनो, शिवखेत, भूप समरपत हों ॥
 ॐ ह्रीं श्रीनदीश्वरद्वीपे अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ॥ ९ ॥
 अथ जयमाला ।

दोहा—कार्तिक फागुन साढ़के, अंत आठ दिनमाहि ।

नदीसुर सुर जात हैं, हम पूजै इह ठांहिं ॥ १ ॥
 एकसौ त्रैसठ कोड़ि जोजनमहा । लाख चौरासिया एक दिशमें
 लहा ॥ आठमों द्वीपे नदीश्वरं भास्वरं । भौन बावण प्रतिमा
 नमो सुखकरं ॥ २ ॥ चारदिशि चार अंजनगिरी राजहीं । सहस्र
 चौरासिया एकदिश छाजहीं । ढोलसम गोल ऊपर तले सुंदरं ।

भौन० ॥ ३ ॥ एक एक चार दिशि चार शुभ बावरी । एक एक लाख जोजन अमल जलभरी ॥ चहुंदिशा चार वन लाखजोजन वरं ॥ भौन० ॥ ४ ॥ सोल वापीनमधि सोल गिरि दधिमुख । सहस दश महा जोजन लखत ही सुखं ॥ बावरीकोंन दो माहिं दो रतिकरं । भौन० ॥ ५ ॥ शैल बत्तोस एक सहस जोजन कहे । चार सोलै मिले सर्व बावन लहे ॥ एक एक सीसपर एक जिन-मंदिरं । भौन० ॥ ६ ॥ बिंब अठ एकसौ रतनमई सोह ही । देव-देवी सरव नयनमन मोह ही ॥ पांचसै धनुष तन पद्मआसनपरं । भौन० ॥ ७ ॥ लाल नख मुख नयन स्याम अरु स्वेत हैं । स्यामरंग भोंह सिर केश छबि देत हैं ॥ वचन बोलत मनो हंसत कालुष-हरं ॥ भौन० ८ ॥ कोटशशि भानदुति तेज छिप जात हैं । महा-वैराग परिणाम ठहरात हैं ॥ बयन नहिं कहैं लखि होत सम्यक-धरं । भौन० ॥ ९ ॥

सोरठा—नंदीश्वर जिनधाम, प्रतिमा महिमाको कहे ॥

‘द्यानत’ लोनों नाम, यही भगति सब सुख करे ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं श्रोनंदीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणे दिपञ्चाशज्जि-
नालयस्यजिनप्रमिमाभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

(७१) निर्वर्णाक्षेत्रपूजा ।

परम पूज्य चौबीस, जिहँ जिहँ थानक शिव गये ।

सिद्ध भूमि निशदीस, मनबचतन पूजा करौं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अयतरत
अवतरत । संवौषट् । अत्र तिष्ठत तिष्ठत, ठः ठः अत्र मम सन्नि-
हितानि भवत । वषट् ।

गीता छंद ।

शुचि क्षीर दधि सप्त नीर निरमल, कनकभारीमें भरौ ।

संसारपार उतार स्वामी, जोरकर विनती करौ ॥

सम्मेदगिरि गिरनार च'पा, पावापुरी कैलासको

पूजो सदा चौबीसजिननिर्वाण भूमिनिवासको ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो जलं ॥ १ ॥

केशर कपूर सुगंध चंदन सलिल शीतलं विस्तरौ ।

भवपापको संताप मेटो, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो चंदनं ॥ २ ॥

मोतीसमान अखंड तंदुल, अमल आनंदधरि तरौ ।

औगुन हरौ गुन करौ हमको, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे०

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षतान्

शुभफूलरास सुवासवासित, खेद सब मनके हरौ ।

दुखधाम काम विनाश मेरो, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो पुष्पं ॥ ४ ॥

नेवज अनेक प्रकार जोग मनोग धरि भय परिहरौ ।

यह भूखदूखन टार प्रभुजी, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो नैवेद्यं ॥ ५ ॥

दीपक प्रकाश उजास उज्जल, तिमिरसेती नहिं डरौ ।

संशयविमोहविभरम—तमहर, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो दीपं ॥ ६ ॥

शुभ धूप परम अनूप पावन, भाव पावन आचरौ ।

सब करमपुंज जलाय दीजे, जोर कर विनती करौ ॥ सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो धूपं ॥७॥

बहु फल मँगाय चढ़ाय उत्तम, चारगतिसों निरवरो ।

निहचे मुक्तफल देहु मौकों, जोर कर विनती करौं ॥सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यः फलं ॥८॥

जल गंध अच्छत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं ।

‘द्यानत’ करो निरभय जगतते, जोर कर विनती करौं ॥सम्मे० ॥

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ॥९॥

अथ जयमाला ।

सोरठा—श्रीचौबीस जिनेश, गिरिकैलाशादिक नमों ।

तीरथ महाप्रदेश महापुरुष निरवाणतें ॥१॥

चौपाई १६ मात्रा ।

नमों रिपभ कैलासपहारं । नेमिनाथ गिरनार निहारं ॥ वासु-
पूज्य चंपापुर बंदौं । सनमति पावापुर अभिनंदौं ॥२॥ बंदौं अजित
अजितपददाता । बंदौं संभवभवदुखघाता ॥ बंदौं अभिनंदन गण
नायक । बंदौं सुमति सुमतिके दायक ॥३॥ बंदौं पदम मुक्तप-
दमाकर । बंदौं सुपार्श आशपासाहर ॥ बंदौं चंदाप्रभ प्रभुचंदा-
बंदौं सुविधि सुविधि निधि कंदा ॥४॥ बंदौं शीतल अघ तप
शीतल । बंदौं श्रियांस श्रियांस महीतल ॥ बंदौं विमल विमल
उपयोगी । बंदौं अनंत अनंत सुखभोगी ॥५॥ बंदौं धर्म धर्म
बिसतारा । बंदौं शांति शांतिमनधारा ॥ बंदौं कुंथु कुंथु रख-
वाल । बंदौं अरि अरहर गुणमालं ॥ ६ ॥ बंदौं महि काममल
चूरन । बंदौं मुनिसुव्रतव्रतपूरन । बंदौं नमि जिन नमित सुरा
सुर । बंदौं पार्श्व पास भ्रमजगहर ॥७॥ बीसों सिद्धभूमि जा ऊपर

सिखर सम्मेद महागिरि भूपर ॥ एकबार बंदे जो कोई । ताहि नरक पशुगति नहिं होई ॥८॥ नरगति नृप सुर शक्र कहावै । तिहुं जग भोग भोगि शिव पावै ॥ विघन विनाशक मंगलकारी । गुण बिलास बंदो नरनारी ॥ ८ ॥

घटा—जो तीरथ जावे पाप मिटावै, ध्यावै गावै भगति करे । ताको जस कहिये संपति लहिये, गिरिके गुणको बुध उचरै ॥१०॥
ॐ ह्रीं वतुर्विशतितीर्थकरनिर्वाणक्षेत्रेभ्यो अर्घ्यं ।

{ ७२ } देवपूजा ।

दोहा—प्रभु तुम राजा जगतके, हमें देय दुख मोह ।

तुम पद पूजा करत हूँ, हमपै करुं ना होहि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितपद्मत्वारिषट्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-
भगवन् अत्र अवतरअवतर । संवौषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः ।
अत्र मम सन्निहितो भव भव ! वषट् ।

छंद विभंगी ।

बहु तृषा सतायो, अति दुख पायो तुमपै आयो जल लायो ।
उत्तम गंगाजल, शुचि अति शीतल, प्राशुक निर्मल, गुन गायो ॥
प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।
यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै, दया धरो, ॥१॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितपद्मत्वारिषट्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र-
भगवद्भ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।
अघतपत निरंतर, अगनि पठंतर, मो उर अंतर, खेद करयौ ।
ले बावन चंदन दाहनिकंदत, तुमपदबंधन, हरष धरयौ ॥ प्रभु० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेभ्यो वन्दनं
औगुन दुखदाता, कह्यो न जाता, मोहि असाता, बहुत करै ।

तंदुल गुनमंडित, अमल अखंडित, पूजत पंडित प्रीति धरै ॥ प्र० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित अक्षतान ।

सुरनर पशुको दल, काम महाबल, बात कहत छल, मोहि लिया ।

ताकेशरलाऊं फूल चढ़ाऊं, भगति बढ़ाऊं, खोल हिया ॥ प्रभु०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित पुष्पं ।

सब दोषनमाहीं, जासम नाहीं, भूख सदा हो, मो लागै ।

सद घेवर बावर, लाडू बहु धर, थार कनक भर तुम आगै ॥ प्र०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित नैवेद्यं० ॥

अज्ञान महातम, छाय रह्यो मम, ज्ञान ढक्यो हम दुख पावै ।

तम मेटनहारा, तेज अपारा, दीप सँभारा, जस गावै ॥ प्रभु०

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित दीपं ॥

इह कर्म महावन, भूल रह्यो जन, शिवमारग नहिं पावत हैं ।

कृष्णागरधूपं, अमल अनूपं, सिद्धस्वरूपं, ध्यावत हैं ॥

प्रभु अंतरजामी, त्रिभुवननामी, सबके स्वामी, दोष हरो ।

यह अरज सुनीजै, ढील न कीजै, न्याय करीजै दया धरो ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित धूपं० ॥

सबतैं जोरावर, अंतराय अरि, सुफल विघ्न करि डारत हैं । फल

पुंज विविध भर, नयनमनोहर, श्रीजिनवरपद धारत हैं ॥ प्रभु० ॥

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित फलं० ॥

आठौं दुखदानो, आठनिशानी, तुम ढिग आनी, निवारन हो ।

दीनन निस्तारन, अधमउधारन, 'द्यानत' तारन, कारन हो ॥ प्रभु०

ॐ ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहित अर्घ ।

अथ जयमाला ।

दोहा—गुण अनैतको कहि सकै, छियालीस जिनराय ।

प्रगट सुगुन गिनती कहूँ, तुमहो होहु सहाय ॥१॥

एक ज्ञान केवल जिनस्वामी । दो आगम अध्यातम नामी ॥
तीन काल विधि परगट जानी । चार अनंत चतुष्टय ज्ञानी ॥२॥
पंच परावर्तन परकासी । छहों दरबगुनपरजयभासी ॥ सात भग-
वानी परकाशक । आठों कर्म महारिपु नाशक ॥३॥ नव तत्त्वनकै
भाखनहारे । दशलच्छनसौं भविजन तारे । ग्यारह प्रतिमाके उप-
देशी । बारह सभा सुखी अकलेशी ॥४॥ तेरहिविधि चारितके दाता
चौदह मारगनाके ज्ञाता ॥ पंद्रह भेद प्रमाद निवारी । सोलह भा-
वन फल अविकारी ॥५॥ तारै सत्रह अङ्क भरत भुव । ठारै थान
दान दाता तुव ॥ भाव उनीस जु कहे प्रथम गुन । बीस अंकगण
धरजीकी धुन ॥६॥ इकइस सर्व घात विधि जानै । बाइस बंध
नवम गुन थाने ॥ तेइस निधि अरु रतन नरेश्वर । सो पूजै चौ-
वीस जिनेश्वर ॥७॥ नाश पचीस कषाय करी हैं । देशघाति छब्बीस
हरी हैं ॥ तत्व दरब सत्ताइस देखे । मति विज्ञान अठाईस पेखे ॥८॥
उनतिस अंक मनुष सब जानै । तीस कुलाचल सर्व वखाने ॥
इकतिस पटल सुधर्म निहारे । बत्तिस दोष समाइक टारे ॥९॥
तेतिस सागर सुखकर आये । चोतिस भेद अलब्धि बताये ॥पैंतिस
अच्छर जप सुखदाई । छत्तिस कारन रीति मिटाई ॥१०॥ सैंतिस
मग कहि ग्यारह गुनमें । अड़तिस पद लहि नरक अपुनमें । उन-
तालीस उदीरन तेरम । चालिस भवन इंद्र पूजै नम ॥११॥ इक-

तालीस भेद आराधन । उदै बियालीस तीर्थकर मन ॥ तैतालीस
बंध हाता नहिं, द्वार चवालिस नर चौथे महिं ॥१२॥ पैतालीस
पल्यके अच्छर छियालीस विन दोष मुनीश्वर । नरक उदै न
छियालिस मुनि धुनि प्रकृति छियालिस नाश दशमगुन ॥ १३ ॥
छियालीस धन राजु सात भुव । अङ्क छियालीस सरसो कहि कुव ।
भेद छियालीस अन्तर तपवर । छियालीस पूरन गुन जिनवर ॥१४॥
अडिल्ल—मिथ्या तपन निवारन चन्द समान हो मोहितिमिर
वारनको कारन भान हो ॥ काल कषाय मिटावन मेघ मुनीश
हो 'धानत' सम्यकरतनत्रय गुनईश हो ॥१५॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहितषट् चत्वारिंशद्गुणसहितश्रीजिनेन्द्र
भवद्भ्यो पूर्णाऽर्घं निर्वपामि ॥ इति श्रीदेव पूजा समाप्त ।

[७३] सरस्वती पूजा ।

दोहा—जनम जरा मृतु छय करै, हरे कुनय जड़ रीति ।

भवसागरसो ले तिरै, पूजै जिनवचप्रीति ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीबाग्वादिनी ! अत्र अवतर
अवतर । संवोषट् अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो
भव भव । वषट् ।

विभंगी ।

छीरोदधि गङ्गा, विमल तरंगा, सलिल अमङ्गा, सुखगङ्गा ।

भरि कंचन भारी, धार निकारी, तृषा निवारी, हित चङ्गा ॥

तीर्थकरकी धुनि, गनधरने सुनि, अङ्ग रचे चुनि, ज्ञानमई ।

सो जिनवरवानी, शिवसुखदानी, त्रिभुवन मानी, पूज्य भई ॥१॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै जलं निर्वपामि ।

करपूर मंगाया, चन्दन आया, केशर लाया, रङ्ग भरी ।

शारदपद बंदों, मन अभिनंदों, पापनिकंदों दाह हरी ॥तीर्थ० ॥२॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वती देव्यै जलं निर्वपामि ।

सुखदास कमोदं, धारकमोदं, अतिअनुमोदं, चंदसमं ।

बहुभक्ति बढ़ाई, कीरति गाई, होहु सहाई, मातामं ॥तीर्थ० ॥३॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षतान् निर्वपामि ।३।

बहुफूलसुवासं, विमलप्रकाशं, आनंदरासं, लाय धरै ।

मम काम मिटायौ, शील बढ़ायौ, सुख उपजायौ, दोष हरै ॥तीर्थ०

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै पुष्पं निर्वपामि ॥४॥

पकवान बनाया, बहुघृत लाया, सब विध भाया, मिष्ट महा ।

पूजूं थुति गाऊं, प्रीति बढ़ाऊं, क्षुधा नशाऊं, हर्ष लहा ॥तीर्थ०

ओं ह्रीं जिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै नैवेद्यं निर्वपामी ॥६॥

करि दीपक ज्योतं, तमछय होतं, ज्योति उदोतं, तुमहिं चढ़ै ।

तुम हो परकाशक, भ्रमविनाशक, हम घट भासक, ज्ञान बढ़ै ॥ती०

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दीपं निर्वपामि ॥६॥

शुभगंध दशोंकर, पावकमें धर, धूप मनोहर, खेवत हैं ।

सब पाप जलावै, पुण्य कमावै, दास कहावै खेवत हैं ॥तीर्थ०॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै धूपं निर्वपामि ॥७॥

बादाम छुहारी, लोंग सुपारी, श्रीफल भारी, ल्यावत हैं ।

मनवांछित दाता मेठ असाता, तुम गुन माता, ध्यावत हैं ॥तीर्थ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै फलं निर्वपामि ॥८॥

नयननसुखकारी, मृदुगुनधारी, उज्ज्वलभारी, मोद धरै ।

शुभगंधसम्भारा, वसन निहारा, तुमतर धारा, ज्ञान करै ॥
 तीर्थकरकी धुनि, गणधरने सुनि अंग रचे चुनि, ज्ञानमई ।
 सो जिनवरवानो, शिवसुखदानो, त्रिभुवनमानो, पूज्य भई ॥

ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै वल्लं निर्वपामि ॥८॥

जलचंदन अच्छत, फूल चरु चत, दीप धूप अति, फल लावै ।
 पूजाको ठानत, जो तुम जानत, सो नर“द्यानत”सुख पावै ॥तीर्थ॥
 ओं ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अर्घ्यं निर्वपामि ॥१०॥

अथ जयमाला ।

सोरठा—ओङ्कार धुनिसार, द्वादशांग वाणी विमल ।

नमो भक्ति उर धार, ज्ञान करै जड़ता हरै ॥

वेसरी छन्द—पहला आचारांग वखानो । पद अष्टादश सहस्र
 प्रमानो । दूजा सूत्रकृत अमिलाष । पद छत्तीस सहस्र गुरु
 भाष ॥ १ ॥ तीजा ठाना अंग सुजानं । सहस्र बियालिस पद-
 सरधानं ॥ चौथो समवायांग निहारं । चौसठ सहस्र लाख
 इकधारं ॥ २ ॥ पंचम व्याख्याप्रगपति दर्शं । दोय लाख आठ-
 इस सहस्र छठा ज्ञातृकथा बिसतारं । पांचलाख छप्पन हजारं
 ॥ ३ ॥ सतम उपासकाध्ययनंगं । सत्तर सहस्र ग्यारलख भंगं ।
 अष्टम अंतकृतदस ईसं । सहस्र अठाइस लाख तेईसं ॥ ४ ॥ नवम
 अनुत्तरदस सुविशालं । लाख बानवै सहस्र चवालं । दशम
 प्रश्नव्याकरण विचारं । लाख तिरानवै सोल हजारं ॥ ५ ॥
 ग्यारम सूत्रविपाक सु भाखं । एक कोड़ चौरासी लाख । चार
 कोड़ि अरु पंद्रह लाख । दो हजार सब पद गुरुशाखं ॥ ६ ॥
 द्वादश दृष्टिवाद पनभेदं । इकसौ आठ कोड़ि पन वेदं ॥ अड़सठ

लाख सहस छप्पन हैं । सहित पंचपद मिथ्या हन हैं ॥ ७ ॥ एक
सौ बारह कोड़ि बखानो । लाख तिरासो ऊपर जानो ॥ ठावन
सहस पंच अधिकाने । द्वादश अंग सर्व पद माने ॥ ८ ॥
कोड़ि इकावन आठहि लाख । सहस चुरासी छहसौ भाख
साढे इकीस शिलोक बताये । एक एक पदके ये गाये ॥ ९ ॥

ग्रन्था—जा बानीके ज्ञानमें, सूझे लोक अलोक ।

‘धानत’ जग जयवत हो, सदा देत हों धोक ॥ इत्याशीर्वादः ॥

{ ७४ } गुरुपूजा ।

दोहा—चहुंगति दुखसागरविपै, तारनतरनजिहाज ।

रतनत्रयनिधि नगन तन, धन्य महा मुनिराज ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुसमूह ! अत्रावतराव-
तर संवौषट । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो
भव भव । वषट् ।

शुचि नीर निरमल छीरदधिसम, सुगुरु चरन चढ़ाइया ।

तिहुं धार तिहुं गतिद्वार स्वामी, अति उछाह बढ़ाइया ॥

भवभोगतनवैराग्य धार, निहार शिव तप तपत हैं ।

तिहुं जगतनाथ अराध साधु सु पूज नित गुणजपत है ॥ १ ॥

ओं ह्रीं श्रीआचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो जलं नि०

करपूर चंदन सलिलसौं घसि सुगुरुपद पूजा करौं ।

सब पाप ताप मिटाय स्वामी, धरम शीतल बिस्तरौं ॥

भव भोगतन वैराग धार निहार, शिवतप तपत हैं ।

तिहुं जगतनाथ अराध साधुसु, पूज नितगुन जपत हैं ॥ २ ॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो चन्दनं नि०
 भिनवा कमोद सुवास उज्जल, सुगुरुपातर धरत हैं ।
 गुनधार औगुनहार स्वामी, बंदना हम करत हैं ॥ भव भो० ॥३॥
 ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्
 शुभफूलराशप्रकाश परिमल, सुगुरुपांयनि परत हों ।
 निरवार मोर उपाधि स्वामी, शील दृढ़ उर धरत हों । भव०॥४॥

ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः पुष्पं ।
 पकवान मिष्ट सलोम सुंदर, सुगुरु पांयन प्रीतिसौं ।
 कर क्षुधारोग विनाश स्वामी, सुथिर कीजे रीतिसौं ॥भव०॥५॥
 ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यः नैवेद्यं ।
 दीपक उदीत सजोत जगमग, सुगुरुपद पूजों सदा ।
 तमनाश ज्ञानउजास स्वामी मोहि मोह न हो कदा । भव० ॥६॥

ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो दीपं ।
 बहु अगर आदि सुगंध खेऊं सुगुण पद पझहिं खरे ।
 दुख पुंज काट जलाय स्वामी गुण अछय चितमें धरे ॥ भव०७॥
 ओं ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि०
 भर थार पूर बदाम बहुविधि, सुगुरु क्रम आगे धरों ।
 मंगल महाफल करो स्वामी, जोर कर बिनती करों ॥ भव०॥८॥
 ॐ ह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०
 जल गंध अक्षत फूल नेवज, दीप धूप फलावली ।

‘धानत’ सुगुरुपद देहु स्वामी, हमहिं तार उतावली ॥ भव० ॥९॥
 ओंह्रीं आचार्योपाध्यायसर्वसाधुगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

अथ जयमाला ।

दोहा—कनककामिनी-विषयवश, दीसै सब संसार ।

त्यागी वै रागीमहा, साधु सुगुनभंडार ॥ १ ॥

तीन घाटि नव कोड़ सब, बंदो सीस नवाय ।

गुन तिन अट्ठाईस लों, कहूँ आरती गाय ॥ २ ॥

बेसरो छंद ।

एक दया पालै मुनिराजा, रागदोष द्वै हरन पर' । तीनों लोक
प्रगट सब देखै, चारों आराधननिकर' ॥ पंच महाव्रत दुद्धर धारे,
छहो दरब जानै सुहित' । सप्तभंगवानी मन लावै, पावै आठ
रिद्ध उचित' ॥ ३ ॥ नवो पदारथ विधिसों भाखै, बन्द दशों
चूरन शरन' । ग्यारह शंकर जानै मानै, उत्तम बारह वृत धरन' ।
तेरह भेद काठिया चूरे, चौदह गुनथाणक लखिय' । महाप्रमाद
पंचदश नाशे, सोलकपाय सबै नखिय' ॥ ४ ॥ वधादिक सत्रह
सुतर लाखा, ठारह जन्म न मरन मुन' । एक समय उनईस परी-
षह, बीस प्ररूपनिमें निपुन' ॥ भाव उदीक इकीसों जानै, बाइस
अभख न त्याग करे' । अहिमन्दिर तेईसों बंदै, इन्द्र सुरग
चौबीस बर' ॥ ५ ॥ पच्चीसों भावन नित भावै, छह सौ अंग
उपंग पढै' । सत्ताइसों विषय विनाशै, अट्ठाईसों गुण सु बढै' ॥
शीतसमय सर चौपटवासी, ग्रीष्मगिरिसम जोग धरै' । वर्षा
वृक्ष तरै थिर ठाढ़े आठ करम हनि सिद्ध बरै' ॥ ६ ॥
दोहा—कहो कहाँ लो भेद मैं, बुध थोरी गुन भूर ।

हेमराज, सेवक हृदय, भक्ति करौ भरपूर ॥ ७ ॥

ओं ह्रीं आचार्योंपाध्यायसर्वसाधु गुरुभ्यो नमः ।

(७५) मक्खसीपार्श्वनाथ पूजा । :

दोहा—श्रीपारस परमेसजी, शिखर शीर्ष शिवधार ।

यहां पूजता भावसे, थापतकर त्रयवार ॥

ओं ह्रीं श्रीमक्खसीपार्श्वजिनेभ्यो अत्रवत्रवतरः सम्बोषटाहननं ।
अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ अत्र मम सन्नहितो भव भव वषट्
सन्धीसकरणं ॥

अथाष्टकं-अष्टपदी छन्द ।

लै निर्मल नीर सुछान, प्राशुक ताहि करों । मन वच तन कर घर
आन, तुम ढिग धार धरों ॥ श्रीमक्खसी पारसनाथ, मन वच ध्या-
वत हों ॥ मम जन्म जरामृत्यु नाश, तुम गुणगावत हों ॥ ओं ह्रीं
श्री मक्खसीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रभ्यो जलं ॥१॥ प्रिय चन्दन सार
सुवास, केशर नाहि मिले । मैं पूजूं चरणहुलास मनमें आनंदले ।
श्री मक्खसी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों ॥ मम मोहा ताप
विनाश, तुम गुण गावत हों ॥ सुगंधं ॥ तन्दुल उज्ज्वल अति आन,
तुम ढिग पूज्य धरों । मुक्ताफलके उन्मान, लेकर पूज करों ॥
श्रीमक्खसी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों । संसार वास निर्बार,
तुम गुण गावत हों ॥ अक्षतं ॥३॥ ले सुमन विविधिके एव, पूजों
तुम चरणा । हो काम विनाशक देव, काम व्यथा हरणा ॥
श्रीमक्खसीपारसनाथ, मन वच ध्यावत हों । मन बच तन सुद्ध
लगाय, तुम गुण गावत हों ॥ पुष्पं ॥४॥ सज्जथाल सु नेवजधार,
उज्ज्वल तुरत किया लाडू मेवा अधिकार, देखत हर्ष दिया ॥
श्रीमक्खसी पारसनाथ, मन वच पूज करों । मम कुशा रोग निर्बार,

चरणों चित्त धरों ॥ नैवेद्य ॥५॥ अति उज्ज्वल ज्योति जगाय,
पूजत तुम चरणा । मम मोहांधरे नशाय आयो तुम शरणा ॥
श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों । तुम ही त्रिभुवनके
नाथ तुम गुण गावत हों ॥ दीपं ॥ ६ ॥

वर धूप दशांग वनाय, सार सुगंध सही अति हर्ष भाव उर ल्याय
अग्नि मंभार दही ॥ श्री मक्सी पारसनाथ मनवच ध्यावत हो,
वसु कमहि कीजे क्षार, तुम गुण गावत हों ॥ धूपं ॥ ७ ॥ बादाम
छुहारे दाख, पिस्ता धोय धरों । ले आम अनार सुपक, शुचिकर
पूज करों ॥ श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों । शिवफल
दीजे भगवान्, तुम गुण गावत हों ॥ फलं ॥८॥ जल आदिक
द्रव्य मिलाय, वसुविधि अर्घ किया । धर साज रकेवी ल्याय, ना-
चत हर्ष हिया । श्रीमक्सी पारसनाथ, मन वच ध्यावत हों । तुम
भव्योंको शिव साथ, तुम गुण गावत हों ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

दोहा—जल गंधाक्षत पुष्प सो नेचज ल्यायके । दीप धूप
फल लेकर अर्घ बनायके ॥ नाचों गाय वजाय हर्ष उर धारकर ।
पूरण अर्घ चढ़ाय सु जयजयकार कर ॥ पूर्णार्घ ॥ १० ॥

जयमाला ।

दोहा—जयजयजय जिनरायजी, श्रीपारसपरमेश ।

गुण अनन्त तुम मांहि प्रभु, पर कछु गाऊं लेश ॥१॥

श्रीन्नानारस नगरी महान । सुरपुर समान जानो सुथान ।
तहां विश्वसेन नामा सुभूप । बामादेवी रानी अनूप ॥२॥

आये तसु गर्भविषे सुदेव । वैशाखवदी दोइज स्वयमेव ।
माताको सेबे शची आन । आज्ञा तिनकी धर शीश मान ॥३॥

पुनः जन्म भया आनन्दकार । एकादशि पौष बदी विचार ।
 तब इन्द्र आय आनन्द धार । जन्माभिषेक कीनो सुसार ॥४॥
 शतवर्ष तनी तुम आयु जान । कुवरावय तीस बरस प्रमाण ।
 नव हाथ तुंग राजत शरीर । तन हरित वरण सोहै सुधीर ॥५॥
 तुम उरग चिन्ह बर उरग सोई । तुम राजऋद्धि भुगती न कोई ।
 तप धारा फिर आनन्द पाय । एकादशि पौष बदी सुहाय ॥६॥
 फिर कर्म घातिया चार नाश । वर केवल ज्ञान भयो प्रकाश ॥
 वधि चैत्र चौथि बेला प्रभात । हरि समोसरण रचियो विख्यात ७
 नाना रचना देखन सुयोग । दर्शनको आवत भव्य लोग ॥ सावन
 सुदि सप्तमि दिन सुधारि । तब विधि अघातिया नाश चारि ॥८॥
 शिव थान लयो वसुकर्म नाशि । पद सिद्ध भयो आनन्द राशि ॥
 तुम्हरी प्रतिमा मक्खसी मभार । थापी भविजन आनन्दकार ॥९॥
 तहां जुरत बहुत भवि जीव आय । कर भक्तिभावसे शीश नाय ॥
 अतिशय अनेक तहां होत जान । यह अतिशय क्षेत्रमयो महाना ॥१०॥
 तहां आय भव्य पूजा रचात । कोई स्तुति पढ़ते भांति भांति ॥
 कोई गावत गान कला विशाल । स्वरताल सहित सुन्दर रसाल ॥
 कोई नाचत मन आनन्द पाय । तन थेई थेई थेई ध्वनि कराय ॥
 छम छम नूपर बाजत अनूप । अति नटत नाट सुन्दर सरूप ॥१२॥
 द्रुम द्रुम द्रुमता वाजत मृदङ्ग । सननन सारङ्गी बजति संग ॥
 भननन नन भल्लरि बजे सोई । घननन घननन ध्वनि घण्ट होई ॥
 १३॥ इस विधि भवि जीव करें अनन्द । लहै पुण्यबंध करें
 पाप मन्द ॥ हम भी बन्दन कीनो अवार । सुदि पौष पञ्चमी
 शुक्रवार ॥१४॥ मन देखत क्षेत्र बड़ी प्रयोगः । जुरामल पूजन कीनी

सुलोग ॥ जहमाल गाय आनन्द पाय । जय जय श्रीपारस जगति
राय ॥१४॥ घत्ता—जय पार्थ्व जिनेशं नुतनाकेशं चक्रधरेशं
ध्यावतहैं । मन वच आराधे भव्य समाधेते सुरशिवफल पावतहैं ॥

॥ इत्याशीर्वादः ॥

(७६) श्री गिरिनारक्षेत्र पूजा ।

दोहा—बन्दो नेमि जिनेश पद; नेम धर्म दातार । नेम धुरन्धर
परमगुरु, भविजन सुख कर्तार । १। जिनवाणीको प्रणमिकर, गुरु
गणधर उरधार । सिद्धक्षेत्र पूजा रचों, सब जीवन हितकार ॥२॥
उर्जर्यत गिरिनाम तस, कहो जगत विख्यात । गिरिनारी तासे
कहत, देखत मन हर्षात ॥३॥

अङ्गिल—गिरि सुउन्नत सुमगाकार है । पंचकूट उतंग सुधार हैं ॥
बन मनोहर शिला सुहावनी । लखत सुन्दर मनको भावनी ॥४॥
और कूट अनेक बने तहां । सिद्धथान सुअति सुन्दर जहां ॥
देखि भविजन मन हर्षावते । सकल जन बन्दनको आवते ॥५॥

विमंगी छन्द

तहां नेम कुमारा जप तप धारा कर्म बिदारा शिव पाई ।
मुनि कोटि बहत्तर सात शतक धर ता गिरि ऊपर सुखदाई ॥
भये शिवपुरघासो गुणके राशी विधिर्यित नाशी ऋद्धि धरा ।
तिनके गुण गाऊं पूज रचाऊं मन हषाऊं सिद्धि करा ॥
दोहा—ऐसो क्षेत्र महान, तिहि पूजत मन बच काय ।

स्थापन त्रय चारिकर, तिष्ठ तिष्ठ इत आय ॥

ओं ह्रीं श्रीगिरिनारि सिद्धक्षेत्रेभ्यो ॥ अत्र अत्र वतरः संबोध-

टाहानन' । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापन' ॥ अत्र ममसन्निहितो
भव भव वषट् संधीसकरणं ।

अथाष्टकं ।

लेकर नीरसुक्षोरसमान महा सुखदान सुप्रासुक भाई ।
दे त्रय धार जजों चरणा हरना मम जन्मजरा दुखदाई ॥
नेमपती तज राजमती भये बालयती तहांसे शिवपाई ।
कोड़ि बहसरि सातसौ सिद्ध मुनीश भये सुजजों हरपाई ॥

ओं ह्रीं श्रीगिरिनारि सिद्धक्षेत्रेभ्यो । जलं ॥ १ ॥

चन्दनगारि मिलाय सुगंध सु ल्याय कटोरीमें धरना । मोह महातप
मैटन काज सु चर्चेतु हों तुम्हरे चरणा । नेमपती ॥ सुगंध ॥ २ ॥
अक्षत उज्ज्वल ल्याय धरों तहां पुंज करो मनको हर्पाई ।
देउ अक्षयपद प्रभुकरुणाकरफेर न याभव बास कराई ॥ नेम० अक्षतं
फूल गुलाब चमेली वेल कदंब सुचंपक तीर सुल्याई । प्राशुक
पुष्प लवंग चढाय सुगाय प्रभू गुण काम नशाई ॥ नेमपती ॥ पुष्पं
॥ ४ ॥ नेवज नव्य करों भर थाल सुकंवन भाजनमें धर भाई । मिष्ट
मनोहर क्षेपत हों यह रोग क्षुधा हरियो जिनराई ॥ नेम० नैवेद्य ॥ ५ ॥
दीप बनाय धरों मणिका अथवा गृत वाति कपूर जलाई । नृत्य
करोंकर आरति ले मम मोह महातम जाय पलाई ॥ नेम० दीप ॥ ६ ॥
धूप दशांग सुगंध मई कर खेबहु अग्नि मझार सुहाई । लेकर अर्ज
सुनो जिनजी मम कर्म महावन देउ जराई ॥ नेमपती ॥ धूप ॥ ७ ॥ ले
फल सार सुगंधमई रसनाद्वद नेत्रनको सुखदाई । क्षेपत हों तुम्हरे
चरणा प्रभु देहु हमें शिवकी ठकुराई ॥ नेमपती ॥ फल ॥ ले बसु द्रव्य
सु अर्घ्य करों धरयाल सुमध्य महाहर्पाई । पूजत हों तुम्हरे चरणा

हरिये बसु कर्म बली दुःखदाई ॥ नेमपती० अर्घ ॥

बोहा—पूजत हों बसु द्रव्य ले, सिद्धक्षेत्र सुखदाय ।

निजहित हेतु सुहावनो, पूर्ण अर्घ चढ़ाय ॥ पूर्णार्घ ॥१०॥

पंच कल्याणकाव ।

कार्तिक सुदिकी छठि जानो । गर्भागम तादिन मानो ॥

उत इन्द्र जजे उस थानी । इत पूजत हम हर्षानो ॥

ॐ ह्रीं कार्तिक सुदि छठि गर्भमंगल प्राप्तेभ्योः अर्घ ॥१॥

श्रावण सुदि छठि सुखकारी । तब जन्ममहोत्सव धारी ॥

सुरराजगिरि अन्हवाई । हम पूजत इत सुख पाई ॥

ओं ह्रीं श्रावण सुदी छठी जन्ममंगल धारणेभ्यो ॥ अर्घ ॥२॥

सित सावनकी छठि प्यारो । तादिन प्रभु दिक्षाधारी ॥

तप घोर बीर तहां करना । हम पूजत तिनके चरणा ॥

ओं ह्रीं सावन सुदि छठि दिक्षा धारणेभ्यो ॥ अर्घ ॥३॥

एकम सुदि अश्विन मासा ॥ तब केवलज्ञान प्रकाशा ॥

हरि समवशरण तब कीना । हम पूजत इत सुख लीना ।

ओं ह्रीं अश्विन सुदि एकम केवलकल्याणप्राप्ताय ॥ अर्घ ॥४॥

सित अष्टमि मास अषाढा । तब योग प्रभूने छाँड़ा ॥

जिन लई मोक्ष ठकुराई । इन पूजत चरणा भाई ॥

ओं ह्रीं अषाढ सुदि अष्टमी मोक्षमङ्गलप्राप्ताय ॥ अर्घ ॥५॥

अडिह—कोड़ि बहसरि सप्त सेकड़ा जानिये ॥ मुनिवर मुक्ति गये

तहाँसे सुप्रमाणिये ॥ पूजों तिनके चरण सु मनवचकायके । बसु

विधि द्रव्य मिलाय सुगाय बजायके ॥ पूर्णार्घ ॥

जयमाला ।

दोहा—सिद्धक्षेत्र जग उच्च थल, सब जीवन सुखदाय ।

कहाँ तास जयमालका, सुनते पाप नशाय ॥८॥

पदवी छह ।

जय सिद्धक्षेत्र तीरथ महान । गिरिनारि सु गिरि उन्नत बखान ॥

तहां भूनागढ़ है नगर सार । सौराष्ट्र देशके मध्यसार ॥२॥

जब भूनागढ़से चले सोई । समभूमि कोस वर तोन होई ॥

दरवाजेसे चल कोस आध । एक नदी बहत हैं जल अगाध ॥३॥

पवंत उत्तर दक्षिण सुदोय । मध्य नदी बहति उज्ज्वल सुतोय

ता नदी मध्य कई कुण्ड जान । दोनों तट मंदिर बने मान ॥४॥

तहां बैरागी वैष्णव रहांय । भिक्षा कारण तीरथ करांय ॥

इक कोस तहां यह मचो ख्याल । आगे एक वरनदी नाल ॥५॥

तहां श्रावकजन करतेस्नान । धो द्रव्य चलत आगे सुजान ॥

फिर गृणीकुंड इक नाम जान । तहां वैरागिनके बने थान ॥६॥

वैष्णव तीर्थ जहां रचो सोई । विष्णू पूजत आनन्द होई ॥

आगे चल डेढ़ सु कोस जाव । फिर छोटे पर्वतको चढ़ाव ॥७॥

तहां बंधो पैरकारी सुजान । चल तीन कोश आगे प्रमाण ॥

तहां तीन कुण्ड सोहैं महान । श्रीजिनके युग मंदिर बखान ॥८॥

दिगाम्बरके जिनके सुथान । श्वेताम्बरके बहुते प्रमाण ॥

जहां बनी धर्मशाला सुजोय । जलकुण्ड तहां निर्मल सुतोय ॥९॥

फिर आगे पर्वतपर चढ़ाव । चढ़ प्रथम कूटको चले जाव ॥

तहां दर्शवकर आगे सुजाय । तहां द्वितिय टोंकका दर्श पाय ॥१०॥

तहां नेमनाथके स्वरण जान । फिर है उतार भारी महान ॥

तहां चढ़कर पञ्चमटोंक जाय । अति कठिन चढ़ाव तहां लखाय ॥११॥

श्रीनेमनाथका मुक्ति धान । देखत नयनों अति हर्षमान ॥
 एक बिम्ब चरणयुग तहां जान । भवि करत बन्दना हर्ष ठाना ॥१२॥
 कोई करते जय जय भक्ति लाय । कोई स्तुति पढ़ते तहां बनाय ॥
 तुम त्रिभुवन पति त्रैलोक्य पाल । मम दुःख दूर कीजे दयाल ॥१३॥
 तुम राज ऋद्धि भुगती न कोई । यह अधिरूप संसार जोई ॥
 तज मातपिता घर कुटुम्बद्वार । तज राजमतीसो सती नार ॥१४॥
 द्वादश भावन भाई निदान । पशुबन्दि छोड़ दे अभय दान ॥
 दोसाबनमें दिक्षा सुधार । तप कर तहां कर्म किये सुधार ॥ १५ ॥
 ताही बन केवल ऋद्धि पाय । इन्द्रादिक पूजे चरण आय ॥
 तहां समोशरणरचियो विशाल । मणिपञ्च वर्णकर अति रसाल ॥१६॥
 तहां वेदी कोट सभा अनूप । दरवाजे भूमि बनी सुरूप ॥
 बसु प्रातिहार्य छत्रादि सार । वर द्वादश सभा बनी अपार ॥१७॥
 करके विहार देशों मभार । भवि जीव करे भवसिन्धु पार ॥
 पुन टोंक पञ्चमीको सुजाय । शिव धान लहो आनन्द पाय ॥१८॥
 सो पूजनीक वह धान जान । बंदत जन तिनके पाप हान ॥
 तहांसे सुबहत्तर कोड़ि और । मुनि सात शतक सब कहे जोर ॥१९॥
 उस पर्वतसे शिवनाथ पाय । सब भूमि पूजने योग्य थाय ॥
 तहां देश देशके भव्य आय । बन्दन कर बहु आनन्द पाय ॥२०॥
 पूजन कर कीनो पाप नाश । बहु पुण्य बन्ध कीनो प्रकाश ॥
 यह ऐसा क्षेत्र महान जान । हम बन्दना कीनी हर्ष ठान ॥२१॥
 उनईस शतक उनतीस जान । सम्बत अष्टमि सित फाग मान ॥
 सब सङ्ग सहित बन्दन कराय । पूजा कीनी आनन्द पाय ॥२२॥
 सब दुःख दूर कीजे दयाल । कहें बन्ध छपा कीजे छपाल ॥

मैं अल्प बुद्धि जयमाल गाय । भवि जीव शुद्ध जैकी बनाय ॥२३॥
 तुम क्या विशाला सब क्षितिपाला तुम गुणमाला करठधरी ।
 ते भव्य विशाला तज जग जाला नागत भाला मुक्तिवरी ।

इत्याशीर्वादः ॥

(७७) सोनागिरि सिद्धक्षेत्र पूजा ।

अबिल्ल छन्द ।

जम्बूद्वीप मभार भरत क्षेत्र सुकहों । आर्यखण्ड सुजान भद्र
 देशे लहो ॥ सुवर्णगिरि अभिराम सुपर्वत है तहां । पञ्चकोडि अरु
 अर्द्ध गये मुनि शिव जहां ॥१॥

दोहा—सोनागिरिके शीशपर, बहुत जिनालयु जान ।

चन्द्रप्रभू जिन आदिदे, पूजों सब भगवान ॥२॥

ओं ह्रीं अत्रवत्रवतरः संवोषटाहाननं । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
 स्थापनं ॥ अत्र ममऽसन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं

सारंग छंद—पदमद्रहको नीर ल्याय गंगासे भरके । कनक कटोरी
 माहि हेम थारनमें धरके । सोनागिरिके शीश भूमि निर्वाण सुहाई
 पंचकोडि अरु अर्द्ध मुक्ति पहुंचे मुनिराई ॥ चन्द्रप्रभु जिन आदि सकल
 जिनवर पद पूजो । स्वर्ग मुक्ति फल पाय जाय अविचल पद हूजो ॥

दोहा—सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराय ।

तिनपद धारा तीन दे, तृपा हरणके काज ॥

ऊँ ह्रीं श्रीसोनागिरि निर्वाणक्षेत्रेभ्यो ॥ जलं ॥१॥

केसर आदि कपूर मिले मलयागिरि चन्दन । परमल अधिषी
 तास और सब दाह निकन्दन ॥ सोनागिरिके शीशपर, जेते सब
 जिनराज । ते सुगन्ध कर पूजिये, दाह निकन्दन काज । सुगन्ध ॥२॥

तन्दुल धवल सुगन्ध ल्याय जल धोय पक्षारो । अक्षय पदके
हेतु पुंज द्वादश तहां धारो । सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिन
राज । तिन पद पूजा कीजिये, अक्षय पदके काज ॥ अक्षतं ॥ ३ ॥

बेला और गुलाब मालतो कमल मंगाये । पारिजातके पुष्प
ल्याय जिन चरण चढ़ाये ॥ सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिन
राज । ते सब पूजों पुष्प ले, मदन विनाशन काज ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥

विंजन जो जगमांहि खांडघृत माहि पकाये । मीठे तुरत बनाय
हेम थारी भर ल्याये ॥ सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराज ।
ते पूजों नैवेद्य ले, श्रुधा हरणके काज ॥ नैवेद्यं ॥ ५ ॥

मणिमग दीप प्रजाल धरौ पंकति भरधारो । जिन मन्दिर तम
हार करहु दर्शन नरनारी । सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिन-
राज । करों दीपले आरती, ज्ञान प्रकाशन काज ॥ दीपं ॥ ६ ॥

दशविधि धूप अनूप अरि न भोजनमें डालों । जाकी धूप सुगन्ध
रहे भर सर्व दिशालों । सोनागिरिके शीशपर, जेते सब जिनराज
धूप कुम्भ आगे धरों, कर्म दहनके काज ॥ ७ ॥

उत्तम फल जग मांहि बहुत मीठे अरु पाके । अमित अनार
अचार आदि अमृत रस छाके । सोनागिरिके शीशपर, जेते सब
जिनराज । उत्तम फल तिन ले मिलो, कर्म विनाशन काज ॥ फलं ८ ॥

दोहा—जल आदिक बसु द्रव्य अघ करके धर नाचो । बाजे
बहुत बजाय पाठ पढ़के मुख सांचो । सोनागिरिके शीशपर जेते सब,
जिनराज । ते हम पूजे अर्घ ले । मुक्ति रमणके काज ॥ अर्घं ॥ ९ ॥

अष्टिल छन्द ।

श्री जिनवरकी भक्ति सो जे नर करत हैं । फल बांटा कुल

नाहिं प्रेम उर धरत हैं ॥ ज्यों जगमाहिं किसानसु खेतीको करें ।
नाज काज जिय जान सु शुभ आपहि भरे ॥ ऐसे पूजादान भक्ति
वश कीजिये । सुख सम्पति गति मुक्ति सहज पा लीजिये
॥ पूर्णार्घ ॥ १० ॥

अब जयमाला ।

दोहा—सोनागिरिके शीसपर, जिन मन्दिर अभिराम ।

तिन गुणकी जयमालिका, वर्णत आशाराम ॥ १ ॥

फदरी छंद ।

गिरि नोचे जिन मन्दिर सुचार । ते यतिन रचे शोभा अपार ।
तिनके अति दीरघ चौक जान । तिनमें यात्रीभ्रेलों सुआन ॥ २ ॥
गुमठी छज्जे शोभित अनूप । ध्वज पंकित सोहैं विविधरूप ।
बसु प्रातिहार्य तहां धरे आन । सब मंगल द्रव्यिनकी सुखान ॥ ३ ॥
दरबाजोंपर कलशा निहार । करजोर सुजय जय ध्वनि उचार ।
इक मन्दिरमें यतिराजमान । आचार्य विजयकीर्ती सुजान ॥ ४ ॥
तिन शिष्य भागीरथ विबुध नाम । जिनराज भक्ति नहिं और काम ॥
अब पर्वतको चढ़ चलो जान । दरवाजो तहां इक शोभमान ॥ ५ ॥
तिस ऊपर जिन प्रतिमा निहार । तिन बंदि पूज आगे सिधार ।
वहां दुःखित भुखितको देत दान । याचकजन जहां हैं अप्रमाण ६
आगे जिन मन्दिर दुहं ओर । जिन गान होत वाजिन्न शोर ।
माली बहु ठाढ़े चौक पौर । ले हार कल्गी तहां देत दौर ॥ ७ ॥
जिन यात्री तिनके हाथ मांहि । वस्त्रशीस रीक तहां देत जाहिं ।
दरवाजो तहां दूजो विशाल । तहां क्षेत्रपाल दोड ओर लाल ॥ ८ ॥
दरवाजे भीतर चौक माहिं । जिन भवन रचे प्राचीन आहिं ।

तिनकी महिमा बरणी न जाय । दो कुंड सजलकर अति सुहाय ॥
 जिन मन्दिरकी वेदी विशाल । दरवाजो तीनों बहु सुहाल ।
 ता दरवाजेपर द्वारपाल । ले लकुट खड़े अरु हाथ माल ॥ १० ॥
 जे दुर्जनको नहिं जान देय । ते निन्दकको ना दरश देय ॥
 चल चन्द्रप्रभूके चौकमाहिं । दालाने तहां चौतर्फ आयं ॥ ११ ॥
 तहां मध्य सभामंडप निहार । तिसकी रचना नाना प्रकार ।
 तहां चन्द्रप्रभूके दरशपाय । फल जात लहो नरजन्म आय ॥ १२ ॥
 प्रतिमा विशाल तहां हाथ सात । कायोत्सर्ग मुद्रा सुहात ।
 बंदे पूजें तहां देय दान । जननृत्य भजनकर मधुरगान ॥ १३ ॥
 ताथेई थेई थेई बाजत सितार । मृदंग वीन मुहचंग सार ।
 तिनकी ध्वनि सुनि भवि होत प्रेम । जयकार करत नाचत सुपम ॥
 ते स्तुतिकर फिर नाय शीस । भवि चल मनो कर कर्म स्वीस ।
 यह सोनागिरि रचना अपार । बरणन करको कवि लहै पार ॥ १५ ॥
 अति तनक बुद्धि आशासुपाय । बस भक्ति कही इतनी सुगाय ।
 मैं मन्दबुद्धि किम लहो पार । बुद्धिवान चूक लीजो सुधार ॥ १६ ॥
 दोहा—सोनागिरि जय मालिका, लघुमति कही बनाय ।

पढ़े सुने जो प्रीतिसे, सो नर शिवपुर जाय ॥ १७ ॥

इत्याशीर्वादः ।

(७८) रविव्रतपूजा ।

अष्टि ।

यह भवजन हितकार, सु रविव्रत जिन कही । करहु भव्य-
 जन लोग, सुमन देके सही ॥ पूजो पार्श्व जिनैन्द्र त्रियोग लगाय-

के । मिटे सकल सन्ताप मिले निध आपके ॥ माँत सागर इक
सेठ कथा ग्रन्थन कही । उनहीने यह पूजा कर आनन्द लही ॥
ताते रविवृत्त सार, सो भविजन कीजिये । सुख सम्पति सन्तान,
अतुल निध लीजिये । दोहा—प्रणमो पार्श्व जिनेशको, हाथजोड़
शिर नाथ । परभव सुखके कारने, पूजा करूँ बनाय । एतवार
वृत्तके दिना एही पूजन ठान । ता फल सुरग सम्पति लहै, निश्चय
लीजे मान ॥

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अत्र अचतर अवतर तिष्ठ २
ठ: ठ: अत्र मम सन्निहितो ।

अष्टक ।

उज्जल जल भरके अति लायो रतन कटोरन माहीं । धार
देत अति हर्ष बढ़ावत जन्म जरा मिट जाहीं ॥ पारसनाथ जिने
श्वर पूजों रविवृत्तके दिन भाई । सुख सम्पत्ति बहु होय तुरत ही
आनन्द मंगलदाई ॥ ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु
घिनाशनाथ जलं निर्वपामोति स्वाहा ॥ मलयागिरि केशर अति
सुन्दर कुमकुम रंग बनाई । धार देत जिन चरनन आगे भवेआ-
ताप नसाई । पारसनाथ० । सुगन्ध । मोती सम अति उज्जल
तन्दुल ल्यावो नीर पखारो । अक्षय पदके हेतु भावसो श्री जिन-
वर दिग धारो । पारस० । अक्षतं । केला अर मचकुन्द बमेली
पारजातके ल्यावो । चुन चुन श्री जिन अग्र चढ़ाऊ मनवान्छित
फल पावो । पारस० । पुष्पं । बाबर फेनी गोजा आदिक घृतमें
लेत पकाई । कञ्चन थार मनोहर भरके चरनन देत चढ़ाई । पारस० ।
नवेद्यं । मनमय दीप रतनमय लेकर जगमग जोत जगाई । जिनके

आगे भारती करिके मोह तिमिर नस जाई । पारस० । दीप ।
 चूरनकर मलयागिरि चन्दन धूप दशाङ्ग बनाई तट पाषकमें स्नेह
 भावसों कर्म नाश हो जाई । पारस० । धूप श्रीफल आदि बदाम
 सुपारी भांति भांतिके लावो । श्रीजिनचरण चढ़ाय हरस कर तात
 शिवफल पावो । पारस० । फलं । जल गन्धादिक अष्ट द्रव ले
 अर्घ बनावो भाई । नाघत गाघत हर्ष भाव सो कञ्चन धार मराई ।
 पारस० । अर्घ । गीतका छन्द । मन वचन काय विशुद्ध करके
 पार्श्वनाथ सु पूजिये । जल आदि अर्घ बनाय भविजन भक्तिवन्त
 सुहृजिये । पूज्य पारसनाथ जिनवर सकल सुख दातारजी । जे
 करत हैं नरनार पूजा लहत सुख अपार जी । पूर्णार्घ ।

दोहा—यह जगमें विख्यात हैं, पारसनाथ महान ।

जिनगुनकी जयमालका भाषा करों बखान ॥

पद्वरी छंद

जय जब प्रणमो श्री पार्श्वदेव । इन्द्रादिक तिनकी करत
 सेव । जय जय सु बनारस जन्म लीन्ह । तिहुं लोक विषे उद्योत
 कीन । १ । जय जिनके पितु श्री विश्वसेन । तिनके घर भए सुख
 चैन पेन । जय बामादेवी मात जान । तिनके उपजे पारस महान
 । २ । जय तीन लोक आनन्द देन । भविजानके दाता भये हैं पेन ।
 जय जिनने प्रभुका शरण लीन । तिनकी सहाय प्रभुजी सो कीन
 । ३ । जय नाग नागनी भये अधीन । प्रभु चरनन लाग रहे प्रवीन ।
 तजके सो देह स्वर्गे सुजाय । धरनेन्द्र पदमावति भये आय । ४ ।
 जे बोर अंजना अधम जान । चोरी तज प्रभुको धरो ध्यान । जे
 मतिसागर इक सेठ जान । जिन रविमृत पूजा करी ठान । तिनके

सुत थे परदेश माहि । जिन अशुभ कर्म काटे सु ताहि । ६ । जे
 रचिवृत पूजान करी सेठ । ताफलकर सबसे भई भेट । जिन जिन
 ने प्रभुका शरण लीन । तिन रिद्धिसिद्धि पाई नवीन । ७ । जे
 रचिवृत पूजा करहिं जेय । ते सुख्य अनन्तानन्त लेय । धरनेन्द्र
 पद्मवति हुय सहाय । प्रभु भक्ति जान ततकाल जाय । ८ । पूजा
 विधान इहि विध रचाय । मन वचन काय तीनों लगाय । जो
 भक्तिभाव जैमाल गाय । सोही सुख सम्पति अनुल पाय । ९ ।
 बाजात मृदंग वीनादि सार । गावत नाचत नाना प्रकार । तन
 नन नन नन ताल देत । सन नन नन सुर भर सु लेत । १० । ता
 थेई थेई थेई पग धरत जाय । छम छम छम छम घुघरू बजाय ।
 जे करहिं विरत इहि भांत भात । ते लहहिं सुख्य शिवपुर सुजात ।
 ११ । दोहा । रचिवृत पूजा पार्श्वकी, करे भवक जन कोय ।
 सुख सम्पति इहि भव लहै, तुरत सुरग पद होय । अडिल्ल—रवि
 वृत पार्श्व जेनेन्द्र पूज्य भव मन धरै । भव भवके आताप सकल
 छिनमे टर ॥ होय सुरेन्द्र नरेन्द्र आदि पदवो लहै । सुख सम्पति
 सन्तान अटल लक्ष्मी रहै ॥ फेर सर्व विध पाय भक्ति प्रभु अनुसरै
 नाना विध सुख भोग बहुरि शिव त्रियवरै ॥

इत्यादि आशीर्वादः ।

उत्तमोत्तम जैनग्रंथोंके मिलनेका पता—

जिनवाणी प्रचारक कार्यालय, ६७४८

बड़ाबाजार, कलकत्ता ।

१ नवौं अध्याय १

७६ पावापुर सिद्धक्षेत्र पूजा ।

बोहा—जिहि पावापुर छिति अवति, हम सन्मत जगदीश ।
 भये सिद्ध शुभ पानसो, जजों नाय निज शीश ॥ ॐ ह्रीं श्री पावा-
 पुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्र अवतर अवतर । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
 स्थापनं । अत्रममसन्निहितो भवमव वषट् सन्निधीकरणं परिपुष्पा-
 ज्जलिं क्षिपेत् । अथ अष्टक ॥ गीतका छंद ॥ शुचि सलिल शीतौ
 कलिल रीतौ श्रमन चीतो लै जिसो । भर कनक क्कारी त्रगद हारीदै
 त्रिधारी जित तृषौ ॥ वरपद्म वन भर पद्मसरवर जहिर पावा
 ग्रामही । शिश धाम सन्मत स्वामि पायो जजों सो सुख दाम ही ॥
 ओं ह्रीं श्रीपावापुर क्षेत्रे वीरनाथ जिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाश-
 नाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ जलं ॥ भव भ्रमत २ अशर्म तपकी
 तपन कर तप ताईयो । तसु वलय कंदन मलय चंदन उदय संग
 विस ल्याइयो ॥ वरपद्य ॥ सुगंधं । तन्दुल नवीने खण्ड लीने लै
 महीने ऊजरे । मणि कुन्दइन्दु तुषार-द्युत जित कण रकावीमें धरे
 ॥ वरपद्य ॥ अक्षतं ॥ मकरंद लोभन सुमन शोभन सुरभ चोभन
 लेयजी । मद समर हरवर अमर तरके घान दूग हरवेयजी ॥ वर-
 पद्य ॥ पुष्पं ॥ नैवेद्यं ॥ णवन क्षुधामिटाघनेको सेव्य भावन युत
 किया । रस मिष्ट पूरत इष्ट सूरत लेयकर प्रभु हित हिया । वरपद्य
 ॥ नैवेद्यं ॥ तम अह नाशक स्वपर भाशक ज्ञेयपरकाशक सही ।

हिमपात्रमें धर मौल्य विनवर द्योत धर मणि दीपही ॥ वरपद्म० ॥
 दीप । आमोदकारी वस्तु सारी बिध दुचारी जारनी ! तसु तूष
 कर कर धूप लै दश दिश सुरभ विस्तारनी ॥ वरपद्म ॥ धूप ॥
 फल भक्त पक्ष सुचक्र सोहन सुक जनमन मोहने । वर रस पुरत
 लव तुरत मधु रत लेय कर अति सोहने । वरपद्म० ॥ फल ॥ अल
 गंध आदि मिलाय वसु विध धार स्वर्ण भरायके । मन प्रमुदभाव
 उपाय कर लै आय अर्घ बनायके ॥ वरपद्म० अर्घ ॥

अथ जयमाला

दोहा—चरम तीर्थ करतार श्री, वर्द्धमान जगपाल । कल मल दल
 विध विकल हुय, गाऊं तिन जयमाल ॥१॥ पदरि छन्द ॥ जय
 जय सुवीर जिन मुक्ति धान । पावापुर बन सर शोभवान ॥ जे
 शित असाढ़ छठ स्वर्गधाम । तजपुष्पोत्तर सु विमान ठान ॥१॥
 कुंडलपुर सिद्धारथ नृपेश । आये त्रिशला जननी उरेश ॥ शित
 चैत्र त्रयोदश युत त्रिह्वान । जन्में तम अक्ष निवार मान ॥२॥ पूर्वान्ह
 धवल चतुर्दश दिनेश । किय नहुन कनकगिरि शिरसरेश । वयवर्ष
 तीस पक्ष कुमर काल । सुख द्रव्य भोग भुगते विशाल ॥३॥ मारगशिर
 अलि दशमी पवित्र । चढ़ चंद्रप्रभुशिवका विचित्र ॥ चल पुरसे सिद्धन
 शीश नाय । धारो संयम पर शम्भदाय ॥ ४ ॥ गत वर्ष दुदश कर
 तप विधान । दिन शित वैशाख दशै महान । रिजुकुला सरिता तट
 स्व सोध । उपजायी जिनवर चरम बोध ॥ ५ ॥ तबही हरि आझा
 शिर चढ़ाय । रचियो कमवाधित धनद राय । चतु संघ प्रभूत
 गौतम गनेश । युत तीस वरष विहरे जिनेश ॥ ६ ॥ भवि जीवन
 देशन विविध देत । आये वर पावानम सेत ॥ कार्तिक अलि अन्तिम

दिवस ईश । व्युत्सर्गासन विध अघतिपीश ॥ ७ ॥ ई अकल
 अमल एक समय माहिं । पंचम गति निवेशे श्री जिनाह ॥ तब
 सुरपति जिन रवि अस्त जान । आये जु तुरत स्व स्व विमान
 ॥ ८ ॥ कर वपु अरवा धुति-विधिध मांत । लै विविध द्रव्य परमल
 विख्यात ॥ तब ही अगनींद्र नवाय शोश । संस्कार देह श्री त्रि-
 जगदीश ॥ ९ ॥ कर भस्म बंदना स्व स्व महीय । निवसे प्रभु गुन
 चितवन स्वहीय । पुर नर मुनि गनपति आय आय । बंदी सोरज
 सिर ल्याय ल्याय ॥ १० ॥ तबहींसे सो दिन पूज्यमान । पूजत
 जिनग्रह जन हर्ष मान । मैं पुन पुन तिस भुवि शोश धार । बंदो
 तिन गणधर हृद भफार ॥ ११ ॥ जिनहीका अब भो तोर्थ एह ।
 वर्णत दायक अति शर्म गेह ॥ अरु दुषम रहे अवसान ताहि । वतैं
 गौमय धित हर सदाहि ॥ १२ ॥ छन्द ॥ श्री सन्मत जिन अंघ्रि
 पञ्चजो युग जजै भव्य जो मन वच काय । ताके जन्म जन्म सांतत
 अघ जावहिं एक छिन मांहि पलाय । धनधान्यादि शर्म इन्द्रीजन
 लहे सो शर्म अतेन्द्रा पाय । अजर अमर अविनाशी शिव थल
 वर्णी दौल रहैं धिर थाय ॥ इत्यादि आशीर्वादः ॥

८० चंपापुर सिद्धक्षेत्र पूजा ।

॥ दोहा ॥ उतसत्र किय पनवार जहं, सुरगन युत हरि आय ।
 जजौ सुयल वसपूज्य सुत, चम्पापुर हर्षाय ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री
 चंपापुर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्रावतरावतर संवीषद् इत्याह्वाननं
 ॥ १ ॥ अत्र तिष्ठतिष्ठ ठः ठः स्थापनं ॥ २ ॥ अत्र मम सज्जितौ
 भव भव बभूव सन्निधीकरणं परिपुष्पांजलिं क्षिपेत् ॥

अष्टक ॥ वासु नदीवर पूजनकी ॥

सम अमिय विगत त्रस वारि, लै हिम कुंभ भरा । लख सु-
खद त्रिगद हस्तार दे त्रय धार धरा ॥ श्री वासुपूज्य जिनराय,
निवृत्त थान प्रिया । चम्पापुर थल सुखदाय, पूजो हर्ष दिया ॥
ओं ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो जन्मजरा मृत्यु विनाशनाय ।
जलं ॥ काश्मीर नीर मधगार, प्रीति पवित्र खरी । शीतलचन्दन
सङ्गसार, लै भव तापहरी ॥ श्री वासुपूज्य० ॥ सुगंधं ॥ २ ॥
मणिद्युत समखंड विहीन, तंदुल लै नीके, सौरभ युत नववरवीन
शाल महा नीके ॥ श्री वासुपूज्य० । अक्षतं ॥ ३ ॥ अलि लुभन शुभन
दग घ्राण, सुमन सुरन द्रुमके । लौवाहिम भर्जुनवान, सुमन
दमन कुमके ॥ श्री वासुपूज्य० ॥ पुष्पं ॥ ४ ॥ रस पुरत तुरत
पकवान, पक्व यथोक्त घृती । क्षुध गदमद प्रदमन जान, लै विध
युक्तकृती । श्रीवासु० ॥ दीपं ॥ ६ ॥ वर परमल द्रव्य अनूप, शोध
पवित्र करी । तसु चूरण कर कर धूप, लै विध कजहरी ॥ श्रीवा-
सु० ॥ ७ ॥ धूपं ॥ फल पक्क मधुररस चान, प्रासुक बहुविधके ।
लख सुखद रसन दूग घान, लै प्रद पद सिधके ॥ श्रीवासु० ॥ ८ ॥
फलं ॥ जल फल वसु द्रव्य मिलाय, लै भर हिमयारी ॥ वसु
अंग धरा पर ल्याय, प्रमुद रव चित्तधारी ॥ श्रीवासु० ॥ अर्घं ॥
अथ जयमाल ॥ दोहा ॥ भये द्वादशम तोर्यपति, चंपापुर शुभ थान ।
तिन गुणकी जयमाल कछु, कहों श्रवण सुखदान पदरिछन्द ॥
जय जय श्री चंपापुर सो धाम । जहां राजत नृप वसुपुञ्ज नाम ॥
जन पौन पत्यसे धर्महीन । भवभ्रमन दुःखमय लख प्रवीन ॥ १ ॥
उर करुणा घर सो तम बिहार । उपजे किरुणाबलि घर अपार ॥

श्रीवासपूज्य तिन तने वाल । द्वादशम तीर्थकर्ता विसाल ॥ २ ॥
 भवभोग देह सचिरत होय । वय वाल माहिं ही नाथ सोय ॥
 सिद्धन नम महं घृत भार लीन । तप द्वादशविध उग्रोग्र कीन ॥
 तह लोह सप्तत्रय आयु येह । दशप्रकृति पूर्व ही क्षय करेह ॥
 श्रीणीजु क्षपक आलूढ होय । गुण नवम भाग नव माहिं सोय
 ॥ ४ ॥ सोलह बसु एक एक षट् इकेय । एक एक एक इम इन
 क्रम सहेय ॥ पुन दशम थान एक लोभटार । द्वादशमथान
 सोलह विडार ॥ ५ ॥ द्वे अतिम चतुष्टय युक्त स्वाम । पायों सब
 सुखद संयोग ठाम ॥ तह काल त्रिगोचर सर्व गेय । युगपत
 हि समय एक महि लखेय ॥ ६ ॥ कछु काल दुविध वृष
 अमिय वृष्टि । कर पोषे भव भवि धान्य श्रष्टि ॥ एक मास आयु
 अवशेष जान । जिन योगनकी सुप्रवर्त हान ॥ ७ ॥ ताही थल तृति-
 शित ध्यान ध्याय । चतुदशम थान निवसे जिनाय ॥ तह दुचरम
 समय मभार ईश । प्रकृति जु बहत्तर तिनहि पीश ॥ ८ ॥ तेरहको
 चरम समय मभार । करके श्री जगतेश्वर प्रहार ॥ अष्टमि अवनी
 एक समय मद्ध । निवसे पाकर निज अवल रिद्ध ॥ ९ ॥ युत गुण
 वसु प्रमुख अमित गुणेश । है रहे सदाही इमहिं वेश ॥ तबहीसे
 मों थानक पवित्र । त्रैलोक्य पूज्य गायो विचित्र । मैं तसु रज
 निज मस्तक लगाय । बन्दौ पुन पुन भुवि शोशनाय ॥ ताही पद
 चाँछा उर मभार । धर अन्य चाह बुद्धी विडार ॥ ११ ॥

दोहा—श्री चंपापुर जो पुरुष, पूजै मनवच काय ।

वरणी “दौल” सो पायही, सुख संपति अधिकाय ॥

इत्यादि आशीर्वादः ॥

८१ जन्मकल्याणक पूजा ।

दोहा—दोष अठारह रहित प्रभु, सहित सुगुण छयालीस ।

तिन सबकी पूजा कहों, आय तिष्ठ जगदीश ॥१॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट् चत्वारिंशदगुणसहित श्रीमद्-
अर्हत्परमेष्ठिन् ! अत्र अवतर ! संवोषद् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ । ठः
ठः । अत्रममसन्निहितो भव भव वषट् ।

अष्टक ।

(ध्यानतरायकृत मन्दीरवर दीपाष्टककी चाल ।)

शुचिक्षीरउदधिको नीर, हाटक भृंगभरा । तुमपदपूजों गुणधीर,
मेटो जन्मजरा ॥ हरि मेरु सुदर्शन जाय, जिनवर न्हौन करें ।
हम पूजै इनगुण गाय, मंगल मोद धरें ॥ १ ॥

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहित षट् चत्वारिंशदगुणसहित श्रीमद्-
अर्हत्परमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल' निर्वपामीति
स्वाहा । १ । केसर घनसार मिलाय, शीत सुगंध घनी । जुगचरनन
चर्चों ल्याय, भवभातापहनी । हरि मेरु सुगंध । अक्षत मोती उन
हार, स्वेत सुगन्ध भरे । पाऊं अक्षयपद् सार, ले तुम भेंट धरे ॥
हरि मेरु अक्षितं । वेल्हा जूही गुलाब, सुमन अनेक भरे । तुम भेंट
धरों जिनराज, काम कल'क हरे ॥ हरि मेरु पुष्पं । फैनी गोभा
पकवान, सुंदर ले ताजे । तुम अग्र धरों गुण खान, रोग झुझा
भाजे ॥ हरि मेरु नैवेद्य । कंचन मय दीपक धार, तुम आगे लाऊं
मम तिमिर मोह छयकार, केवल पद् पाऊं ॥ हरि मेरु दीपं ।
कृष्णागरु तमर कपूर, चूर सुगंध करों । तुम आगे खेबत मूर,

वसुविध कर्म हरो ॥ हरि मेरु० धूपं । श्रोफल अंगूर अनार, खारक
थार भरों । तुम चरन चढ़ाऊं सार, ताफल मुक्ति वरों ॥ हरि मेरु०
फलं । जल आदिक आठ अदोष, तिनका अर्घं करो । तुम पद
पूजों गुण कोष, पूरन पद सुधरों ॥ हरि मेरु० अर्घं ।

आरती जोगीरासा ।

जन्मसमय उच्छव करनेको, इन्द्र शवी युत धायो । तिहको
कछु वरणन करवेको, मेरो मन उमगायो ॥ बुधिजन मोंको दोष
न दीजो, थोरो बुद्धि भुलायो । साधू दोष क्षमै सब हीके, मेरी करो
सहायो ॥ १ ॥

(छंद कामिनी—मोहन—मात्रा २०)

जन्म जिनराजको जबहि निज जानियों । इन्द्र धरनिन्द्र सुर
सकल अकुलानियों ॥ देव देवाङ्गना चलि'य जयकारतीं । शचिय
सुरपति सहित करति जिन आरतीं ॥ २ ॥ साजि गजराज हरि
लक्ष जोजन तनो । बदन शत बदन प्रति दन्त बसु सोहनो ॥ सजल
भरि पूर सरदन्त प्रति धारती । शचिय सुरपति सहित, करति
जिन आरती ॥ ३ ॥ सरहिं सर पंच दुय एक कमलिनि बनी । तासु
प्रति कमल पञ्चीस शोभा घनी ॥ कमल दल एकसो आठ विसता-
रतीं । शचिय सुरपति सहित करत जिन आरतीं ॥ ४ ॥ दलहिं दल
अप्सरा नाचहीं भावसों । करहिं सङ्गीत जयकार सुर चावसों ॥
तगड़दा तगड़ थई करत पग धारतीं । शचिय सुरपति स० ॥ ५ ॥
तासु करि बैठि हरि सकल परिवारसों । देहि परदक्षिणा जिनहि
जयकारसों ॥ आनि कर शचिय जिन नाथ उर धारतीं । शचिय

सुरपति स० ॥६॥ आनि पांडुकशिला पूर्व मुख थाप जिन । करहिं
अभिषेक उच्छाहसो अधिक तिन ॥ देखि प्रभु बदन छवि कोटि
रवि वारती । शचियं सुरपति सहित कर० ॥ ७ ॥ जोजनह आठ
गम्भीर कलशा बने । चारि चौड़ाई मुख एक जोजन तने ॥ सहस
अरु आठ भरि कलश शिर ढारतीं । शचियं सुरपति सहि० ॥८॥
छत्र मणि खचित ईशान करतारहीं । सनत माहेंद्र दोऊ चमर
शिर ढारहीं ॥ देव देवीय 'पुष्पांजलिय' ढारतीं । शचिय सुरपति
सहित करत जिन० ॥ ९ ॥ जलसु चन्दन पुहप शालि चरु ले
धरों । दीप अरु धूप फल अर्घ पूजा करों ॥ पिंडिका और नीरां-
जना वारतीं । शचियं सुरपति सहित कर० ॥१०॥ कियो शृंगार
सब अंग सामानसों । आनि मातहिं दियो बहुरि जिनराजकों ॥
तृपत नहिं होत द्रुग रूप नीहारतीं । शचियं सुरपति सहित करत
जिन आर० ॥ ११ ॥ ताल मिरदंग धुनि सत सुर बाजहीं । नृत्य
तांडव करत इन्द्र अति छाजहीं ॥ करत उच्छाहसों निजसु पद
धारती । शचियं सुरपति सहित कर० ॥१२॥ भव्य जन आय जिन
जन्म उत्सव करै । आपने जन्मके सकल पातिक हरै ॥ भक्ति
गुरुदेवकी पार उत्तारतीं । शचिय सुरपति साहत करहिं जिन
आरतीं ॥१३॥

घत्ता—जिनवर पद पूजा भावसु हृजा, पूरण चित आनन्द भया ।
जयवन्त सु हृजौ आसा पूजो, लाल विनोदी भाल नया ।

ओं ह्रीं अष्टादशदोषरहित पद चत्वारिंशद्गुणसहित श्रीमद्-
ऽहर्त्परमेष्ठिने पूर्णार्घ निर्वपामीति स्वाहा ।

चौपाई—मंगल गर्भ समयमें जोय । मंगल भयो जन्ममें जोय ।

मंगल दीक्षा धारत जोय । मंगल ज्ञान प्राप्तिमें जोय ॥ मङ्गल मोक्ष
मगनमें जोय । इन्द्रन कीनों हर्षित होय । जाचूँ बार बार हौँ
सोय । हे प्रभु ! दीजे मङ्गल मोय ।

इत्याशीर्वादः (पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

(८२) श्री सम्मेदशिखरपूजाविधान

दोहा—सिद्धक्षेत्र तीरथ परम, है उत्कृष्ट सु थान ॥ शिखर
सम्मेद सदा नमौ, होय पापकी हान ॥१॥ अगनित मुनि जहँ तें
गए, लोक शिखरके तीर । तिनके पद पंकज नमौ, नासै भवकी
पीर ॥२॥ अडिल छन्द—है वह उज्जल क्षेत्र सु अति निर्मल सही,
परम पुनीत सुठौर महा गुनकी महो ॥ सकल सिद्धि दातार
महा रमनीक है । वंदौ निज सुख हेत अचल पद देत है ॥३॥
सोरठा—शिखर सम्मेद महान, जगमें तीर्थ प्रधान है ॥ महिमा
अद्भुत जान, अल्पमती में किम कहो ॥ ४ ॥ पद्धरी छन्द—सरस
उन्नत क्षेत्र प्रधान है । अति सु उज्जल तीर्थ महान है । करहि
भक्तिसो जे गुन गाइकै । बरहि शिव सुरनर सुख पायकै ॥ ५ ॥
अडिल छन्द—सुर हरि नरपति आदि सुजिन बन्दन करै । भवसा-
गर तै तिरे नहीं भवदधि परै ॥ सुफल होय जो जन्म सु जे
दर्शन करै । जन्म जन्मके पाप सकल छिनमें टरै ॥ ६ ॥ पद्धरी
छन्द—श्री तीर्थकर जिनवर सु बीस । अरु मुनि असंख्य सब
गुनन ईस ॥ पहुंचे जहँ थे केवल सुधाम । तिन सबकों अब मेरी
प्रणाम ॥ ७ ॥ गीतका छन्द—सम्मेद गढ़ है तीर्थ भारी सबनको
उज्ज्वल करे । चिरकालके जे कर्म लागे दरस ते छिनमें टरै ॥ है

परम पावन पुन्य दाइक अतुल महिमा जानिए । है अनूप सरूप
गिरिवर तासु पूजा ठानिए ॥ ८ ॥ दोहा—श्रीसम्मेद शिखिर
महा, पूजों मनघचकाय ॥ हरत चतुरगति दुःख कौ, मन वांछित
फल दाय ॥ उँहीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अत्रावतराव-
तर संवौषट् इत्याह्वाननम् परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् उँ हीं श्री
सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्परि
पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । ओंहीं श्री सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अत्रमम
सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ।

अष्टकं ।

अडिह छन्द—क्षीरोदधि सम नीर सु उज्जल लीजिये ।
कनक कलस में भरकें धारा दीजिये ॥ पूजौं शिखिर सम्मेद सुमन
वचकाय जू । नरकादिक दुःख टरै अचल पद पाय जू ॥ उँहीं श्री
सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं ।
पयसौं घिस मलयागिर चन्दन ल्याइये । केसर आदि कपूर सुगंध
मिलाइये ॥ पूजौ शिखिर० चन्दनं । तंदुल धवल सु उज्जवल खासे
धोयके । हेम वरनके थार भरौं शुचिहोय कै ॥ पूजौं शिखिर० ।
सम्मेदशिखिर सिद्धक्षेत्रेभ्यो अक्षय पदप्राप्ताय अक्षतं ॥ ३ ॥ फूल
सुगंध सु ल्याय हरष सौ आन चढ़ायौ । रोग शोक मिट जाय
मदन सब दूर पलायौ ॥ पूजौं० पुष्पं ॥ षट् रस कर नैवेद्य कनक
थारी भर ल्यायो ॥ क्षुधा निवारण हेतु सु पूजौ मन हरषायौ
॥ पूजौ शिखिर० नैवेद्यं ॥ लेकर मणिमय दीप सुज्योति उद्योत
हो । पूजत होत स्वज्ञान मोह तम नाश हो ॥ पूजौं शिखिर० ।
दीपं ॥ ६ ॥ दस विधि धूप अनूप अग्नि में खेवड़ं । अष्ट कर्मकौ

नाश होत सुख पावहु ॥ पूजौं शिखर० धूपं ॥ केला लोंग सुपारो
श्रीफल ल्याइये । फल चढ़ाय मन वांछित फल सु पाइये ॥ पूजौं
शिखर० । फलं ॥८॥ जल गंधाक्षित फूल सु नेवज लीजिये ।
दीप धूप फल लै कर अर्घ चढ़ाइये ॥ पूजौं शिखर० । अर्घ ।

पक्षरी छन्द—श्री बीस तीर्थंकर हैं जिनेन्द्र । अरु हैं असंख्य
बहुते मुनेन्द्र ॥ तिनकीं कर जोर करों प्रणाम । तिनको पूजो तज
सकल काम ॥ ओं ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्रोभ्यो अनर्घपद
प्राप्ताय अर्घ ॥ ढारजोगी रायसा-श्रीसम्मेदशिखर गिर उन्नत शोभा
अधिक प्रमानों । विंशति तिहपरकूट मनोहर अद्भुत रचना जानो ॥
श्री तीर्थंकर बीस तहांसे शिवपुर पहुंचे जाई । तिनके पद पंकज
युग पूजौ प्रत्येक अर्घ चढ़ाई । ओं ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षे-
त्रोभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥१॥ प्रथम सिद्धवर कूट मनोहर
आनन्द मंगल दाई । अजित प्रभू जहंते शिव पहुंचे पूजो मनवच-
काई ॥ कोड़ि जु अस्सी एक अर्घ मुनि चौवन लाख सुगाई ।
कमे काट निर्वाण पधारे तिनको अर्घ चढ़ाई । ॐ ह्रीं श्रीसम्मेद-
शिखर सिद्धकूटते श्री अजितनाथ जिनेन्द्रादि एक अर्घ अस्सी
कोड़ि चौवन लाख मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रोभ्यो अर्घनिर्व
पामीति स्वाहा ॥२॥ धवल कूट सो नाम दूसरो है सबको सुख-
दाई । संभव प्रभु सो मुक्ति पधारे पाप तिमिर मिटि जाई । धव-
लदत्त हैं आदि मुनीश्वर नव कोड़ाकोड़ि जानो । लक्ष बहसर
सहस बयालिस पंच शतक रिष मानौ ॥ कर्म नाशकर अमरपुरी
गण बंदौ सीस नवाई । तिनके पद युग जजौ भावसों हरष हरष
चितलाई ॥ ओं ह्रीं श्री सम्मेदशिखर धवल कूटत संभवनाथ

जिनेन्द्रादि मुनि नव कोड़ाकोड़ि बहत्तर लाख ब्यालिस हजार
पांचसे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रभ्यो अर्घं ॥३॥ चौपाई ॥
आनन्द कूट महा सुखदाय । प्रभु अभिनन्दन शिवपुर जाय ।
कोड़ाकोड़ि बहत्तर जानौ । सत्तर कोड़ि लाख छत्तीस मानौ ॥
सहस ब्यालीस शतकजु सात । कहैं जिनागम मैं इस भांत
ये ऋष कर्म काट शिव गये, तिनके पद युग पूजत भये ॥ ॐ ह्रीं
श्री आनन्दकूटतैं अभिनन्दननाथ जिनेन्द्रादि मुनि बहत्तर कोड़ा-
कोड़ि अरु सत्तर कोड़ि छत्तीस लाख ब्यालीस हजार सातसैं
मुनि सिद्धपद प्राप्ताय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥ ४ ॥ अडिल
छन्द—अवचल चौथो कूट महा सुख धामजी । जहं ते सुमति
जिनेश गये निर्वाणजी ॥ कोड़ाकोड़ो एक मुनीश्वर जानिये ।
कोड़ि चौरासी लाख बहत्तर मानिये ॥ सहस इक्यासी और
सातसे गाइये । कर्म काट शिव गये तिन्हें सिर नाइये ॥ सो
थानिक मैं पूजो मन बच काय जू । पाप दूर हो जाय अवचल पद
पाय जू ॥ ॐ ह्रीं श्री अविचल कूटतैं श्री सुमति जिनेन्द्रादि मुनि
एक कोड़ाकोड़ि चौरासी कोड़ि बहत्तर लाख इक्यासी हजार सात
सैं मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रभ्यो अर्घं ॥५॥ अडिल छन्द ।
मोहन कूट महान परम सुन्दर कहौ । पद्मप्रभु जिनराय जहां
शिव पद लहौ ॥ कोड़ि निन्यानवे लाख सतासी जानिये । सहस
तेतालिस और मुनीश्वर मानिये ॥ कहैं जवाहरदास सुदोष
कर जोरके । अविनाशी पद देउ कर्मने खोयकें ॥ ॐ ह्रीं
श्री मोहनकूटतैं श्री पद्मप्रभु मुनि निन्यानवे कोड़ि सतासी
लाख तेतालीस हजार सातसैं सताउन मुनि निर्वाण पद प्राप्ताय

सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ ६ ॥ सोरठा—कूट प्रभात महान ।
 सुंदर जग मणि मोहिनौ । श्री सुपार्श्व भगवान्, मुक्ति गये
 भय नाश कर । कोड़ाकोड़ी उनचास, कोड़ि चौरासी जानिये ।
 लाख बहत्तर जान, सात सहस अरु सात सै । और कहे व्यालीस
 जंह ते मुनि मुक्ती गये । तिनको नमों नितसीस दास जवाहर
 जोरकर ॥ ॐ ह्रीं प्रभास कूटतैं श्री पार्श्व-नाथ जिनेन्द्रादि
 मुनि उनचास कोड़ाकोड़ी बहत्तर लाख सात हजार सातसै
 व्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ ७ ॥
 दोहा—पावन परम उतंग है, ललित कूट है नाम ॥ चन्द्र प्रभु
 मुक्ती गये, बंदों आठो याम ॥ नवसै अरु बसु जानियो, चौरासी
 रिषि मान । कोड़ि बहत्तर रिषि कहे, असी लाख परवान ।
 ललित कूट तै शिष्य गये बंदो शीश नवाय । तिन पद पूजों भाव
 सो, जिन हित अर्घ चढ़ाय ॥ ॐ ह्रीं ललितकूट तैं चन्द्रप्रभु
 जिनेन्द्रादि मुनि नव सै चौरासी अर्घ बहत्तर कोड़ अस्सी लाख
 चौरासी हजार पांचसै पचवन मुनि सिद्धपद प्राप्ताय अर्घ निर्वपामि
 स्वाहा ॥ ८ ॥ पद्धरी छन्द—सुबरनभद्र सो कूट जान । जहां पुष्प
 दन्तको मुक्त थान ॥ मुनि कोड़ाकोड़ी कहै जु भाख । अरु कहै
 निन्यानवे चार लाख ॥ १ ॥ सौ सात सतक मुनि कहे सात ।
 ऋषि असी और कहे बिख्यात । मुनि मुक्ति गये बसु कर्म
 काट । बंदौकरजोर नवाय माथ ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं श्रीसूप्रभकूटतैं पुष्पदंत
 जिनेन्द्रादि मुनि एक कोड़ाकोड़ी निन्यानवे लाख सात हजार
 चार सै अस्सीमुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घं ॥ ९ ॥
 सुन्दरी छन्द—सुभग विद्युतकूट सु जानिये । परम अद्भुतता

परमानिये ॥ गये शिवपुर शीतलनाथजी । नमहुं तिन पद करि
 धरि माथ जी ॥ मुनि बसु कोड़ाकोड़ी प्रमानिये और जो
 लाख व्यालिस जानिये ॥ कहे और जु लाख बत्तीस जू । सहस
 व्यालिस कहे यतीश जू ॥ और तहंसै नौसै पांच सु जानिये ।
 गये मुनि शिवपुरको और जु मानिये ॥ [करहिं पूजा जे मन-
 लायकें । धरहिं जन्म न भवमें आयकें ॥ ॐ ह्रीं सुभग विद्युत-
 कूटते श्री शीतलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि अष्ट कोड़ाकोड़ी व्यालीस
 लाख बत्तीस हजार नौसै पांच मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रे-
 भ्यो अर्घ ॥१०॥ ढार योगीरासा—कूटजु संकुल परम मनोहर
 श्रीयांस जिनराई । कर्म नाश कर अमर पुरी गये, बन्दो शीश न-
 वाई ॥ कोड़ा कोड़जु है क्ष्यानवै, क्ष्यानवै, कोड़ प्रमानौ ॥ लाख
 क्ष्यानवै साढे नवसै, इकसठ मुनीश्वर जानो । ताऊपर व्यालीस
 कहे हैं श्री मुनिके गुन गादै । विविध योग कर जो कोई पूजे
 सहजानंद पद पावै ॥ ॐ ह्रीं संकुल कूटते श्रीयांसनाथ जिनेन्द्रादि
 मुनि क्ष्यानवै कोड़ाकोड़ी क्ष्यानवै कोड़ क्ष्यानवै लाख साढे नौ
 हजार व्यालीस मुनि सिद्ध पद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥११॥
 कुसुमलता छन्द—श्री मुनि संकुल कूट परम सुंदर सुखदाई ।
 विमलनाथ भगवान जहां पंचम गति पाई ॥ सात शतक
 मुनि ओर व्यालिस जानियै । सत्तर कोड़ सात लाख हजार छ
 मानिये ॥ दोहा—अष्ट कर्मको नाश कर, मुनि अष्टम क्षिति पाय
 तिनको में बंदन करों, जन्ममरण दुख जाय ॥ ॐ ह्रीं श्री संकुल-
 कूटते श्री विमलनाथ जिनेन्द्रादि मुनि सत्तर कोड़ सात लाख छ
 हजार सातसै व्यालीस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ

॥ १२ ॥ अडिल्ल—कूट स्वयंप्रभु नाम परम सुंदर कहौ । प्रभु अनंत जिननाथ जहां शिवपद लहौ ॥ मुनि जु कोड़ाकोड़ी क्ष्यानवे जानिये । सत्तर कोड़ जु सत्तर लाख बखानिये ॥ सत्तर सहस जु और सात से गाइये । मुक्ति गये मुनि तिन पद शीश नवाईये ॥ कहे जवाहरदास सुनौ मन लायकं । गिरवरकों नित पूजौ मन हरपायकं ॥ ॐ ह्रीं स्वयंभू कूटत श्री अनंतनाथ जिनेन्द्रादि मुनि क्ष्यानवे कोड़ाकोड़ी सत्तर लाख सात हजार सातसे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १३ ॥ चौपाई—कूट सुदत्त महा शुभ जानों । श्री जिनधर्मनाथकों थानों ॥ मुनिजु कौड़ाकोड़ उनतीस । और कहे ऋषि कोड़ उनीस ॥ नव्वे नौ लाख जु सहस सु जानों । सात शतक पंचानव मानों ॥ मोक्ष गये वसु कर्मन चूर । दिवस रैन तुमहीं भरपूर ॥ ओं ह्रीं सुदत्त कूटते श्री धर्मनाथ जिनेन्द्रादि मुनि उनतीस कोड़ाकोड़ी उनीस कोड़ नव्वे लाख नौ हजार सातसे पंचानवे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ १४ ॥ है प्रभासी कूट सुंदर अति पवित्र सो जानिये । शांतिनाथ जिनेन्द्र जहाँते परम धाम प्रमानिये । ओं ह्रीं प्रभास कूटते श्री शांतिनाथ जिनेन्द्रादि मुनि नौ कोड़ाकोड़ी नौ लाख नौ हजार नौसै निन्यानवे मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १५ ॥ गीताका छन्द—ज्ञानधर शुभ कूट सुन्दर परम मनको मोहनो । जंहते श्री प्रभुकुं थु स्वामी गये शिवपुरको गनो ॥ कोड़ाकोड़ी क्ष्यानवे मुनि कोड़ि क्ष्यानवे जानिये । लाख बत्तीस सहस क्ष्यानवे अरु सौ सात प्रमानिये ॥ दोहा—और कहे व्यालीस जो सुमरो हिये मभार ।

जिनवर पूजौ भाव सौ, कर भवदधि तै 'पार ॥ ओं ह्रीं ज्ञानधर-
 कूटतै श्रीकुण्ठनाथ स्वामी और क्ष्यानवे कोड़ाकोड़ी मुनि क्ष्यान-
 वे कोड़ि बत्तीस लाख क्ष्यानवे हजार अरु सातसौ व्यालीस
 मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १६ ॥ दोहा—कूट
 जु नाटक परम शुभ, शोभा अपरंपार । जहंतै अरह जिनेन्द्रजी
 पहुँचे मुक्त मभार । कोड़ि निन्यानवै जानि मुनि, लाख निन्या-
 नवै और । कहे सहस्र निन्यानवै, बन्दौकर जुग जोर ॥ अष्ट
 कर्मको नाश कर, अविनाशी पद पाय ॥ ते गुरु मम हृदये बसौ,
 भव दधिपार लगाय ॥ ओं ह्रीं नाटक कूटतै श्री अरहनाथ जिने-
 न्द्रादि मुनि निन्यानवै कोड़ि निन्यानवै लाख निन्यानवै हजार
 मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्ध क्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १७ ॥ अडिल छन्द—
 कूट संवल परम पवित्र जू ॥ गये शिवपुर मल्लि जिनेश जू ॥ मुनि
 जु क्ष्यानवै कोड़ि प्रमानिये । पद जिनेश्वर हृदये मानिये ॥ ओं ह्रीं
 संवल कूटतै श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्रादि क्ष्यानवै कोड़ाकोड़ी मुनि
 सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ १८ ॥ ढार परमादीकी
 चालमे—मुनिसुव्रत जिनराज सदा आनन्दके दाई । सुन्दर निर्जर
 कूट जहां तै शिवपुर पाई ॥ निन्यानवै कोड़ाकोड़ कहे मुनि
 कोड़ संतावन । नौ लाख जोर मुनेन्द्र कहे नौसे निन्यानव ।
 सोरठा—कमेनाश ऋषिराज, पंचमगतिके सुख लहे । तारन
 तरन जिहाज मो दुख दूर करौ सकल ॥ ओं ह्रीं श्री निर्जर कूटतै
 श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्रादि मुनि निन्यानवै कोड़ा कोड़ी
 सन्तावन कोड़ नौ लाख नौ शतक निन्यानवै मुनि सिद्ध प्राप्ताय
 अर्घ । ढार जोगीरासा—एह मित्रधर कूट मनोहर सुन्दर

अतिछबछाई । श्री नमो जिनेश्वर मुक्ति जहांतैं शिवपुर पहुंचे
जाई ॥ नौसे कोड़ा कोड़ी मुनीश्वर एक अर्घ अर्घि जानौ । लाख
सैतालिस सात सहस अरु नौसे व्यालीस मानौ । दोहा—बसु
कर्मनको नाशकर, अविनाशी पद पाय । पूजौ चरन सरोज ज्यों,
मनवांछित फल पाय ॥ ओं ह्रीं श्री मित्रधर कूटतैं श्री नमि-
नाथ जिनेन्द्रादि मुनि नौसे कोड़ाकोड़ी एक अर्घ सैतालिस लाख
सात हजार नौसे व्यालिस मुनि सिद्धपद प्राप्ताय सिद्ध क्षेत्रेभ्यो
अर्घ ॥ २० ॥ दोहा—सुवर्ण भद्र जु कूटतैं, श्री प्रभु पारसनाथ ।
जहंतैं शिवपुरको गये, नमो जोड़ि जुग हाथ ॥ ओं ह्रीं सुवर्ण-
भद्र कूटतैं श्री पार्श्वनाथ स्वामी सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो
अर्घ निर्वपामीति स्वाहा ॥ २१ ॥ याविधि बीस जिनेन्द्रके, बीसौ
शिखर महान ॥ और असंख्य मुनि सहजही, पहुंचे शिवपुर
थान । ओं ह्रीं श्री बीस कूट सहित अनंत मुनि सिद्धपद प्राप्ताय
सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ २२ ॥ ढार कार्तिककी—प्राणी आदीश्वर
महाराजजी, अष्टापद शिव थान हो । बांसपूज जिनराजजी चंपा-
पुर शिवपद जान हो ॥ प्राणी पूजौ अर्घ चढ़ायके, इह नाशे भय-
भीत हो । प्राणी पूजौ मनवचकायके ॥ ओं ह्रीं श्री ऋषभनाथ
कैलाश गिरते श्री महावीरस्वामी पावापुर तैं श्री बांसुपूज्य चंपा-
पुर तैं नेमिनाथ गिरिनारतैं सिद्धक्षेत्रेभ्यो अर्घ ॥ २३ ॥ दोहा—सिद्ध
क्षेत्र जे और हैं, भरत क्षेत्रके मांहि ॥ और जु अतिशय क्षेत्र हैं,
कहे जिनागम मांहि । तिनकौ नाम जु लेतहो, पाप दूर होजाय ।
ते सब पूजौ अर्घ ले, भव भवकू सुखदाय । ओं ह्रीं भरतक्षेत्र
अतिशय क्षेत्रेभ्यो अर्घ । सोरठा—दीप अढ़ाई मेरु सिद्ध क्षेत्र जे

और हैं । पूजों अर्घ चढ़ाय भव भवके अघ नाश है ॥

ओं ह्रीं अढ़ाई द्वीप सम्बंधी सिद्धक्षेत्रेभ्यो अघ ॥२४॥

अथ जयमाला ।

चौपाई—मन मोहन तीरथ शुभ जानौ । पावन परम सुक्षेत्र
प्रमानौ ॥ उनतिस शिखिर अनूपम सोहैं । देखत ताहि सुरासुर
मोहे । दोहा—तीरथ परम सुहावनौ, शिखिर सम्मेद विशाल ॥
कहत अल्प बुध उक्तसो, सुखदायक जयमाल ॥२॥ चौपाई—सिद्ध
क्षेत्र तीरथ सुखदाई । बन्दत पाप दूर हो जाई । शिखर शीसपर
कूट मनोश । कहे बीस अतिशय संयोग ॥३॥ प्रथम सिद्ध शुभ
कूट सुनाम । अजितनाथ को मुक्ति सु धाम ॥ कूट तनौ दर्शन
फल कहो । कोड़ बत्तीस उपास फल लहौ ॥४॥ दूजो धवल कूट
है नाम । सम्भव प्रभु जहते निर्वाण ॥ कूट दरश फल प्रोषध मानौ ।
लाख ब्यालिस कहै बखानौ ॥५॥ आनन्द कूट महा सुखदाई । जहं
तैं अभिनन्दन शिव जाई ॥ कूट तनौ बन्दन इम जानौ । लाख
उपास तनौ फल मानौ ॥६॥ अवचल कूट महासुख वेस । मुक्ति
गये जहं सुमत जिनेश ॥ कूट भाव धर पूजै कोई । एक कोड़
प्रोषध फल होई ॥७॥ मोहन कूट मनोहर जान । पद्म प्रभु जहं त
निर्वाण ॥ कूट पुन्य फल लहै सुजान । कोड़ उपवास कहै भगवान
॥८॥ मनमोहन शुभ कूट प्रभासा । मुक्ति गये जहंते श्रोयांसा ॥
पूजै कूट महा फल सोई । कोड़ बत्तीस उपवास फल होई ॥९॥
चन्द्र प्रभु कौ मुक्ति सु धामा । परम विशाल ललित घट नामा ॥
दर्शन कूट तनौ इम जानौ । प्रोषध सौला लाख बखानो ॥१०॥
सुप्रम कूट महासुखदाई । जहंते पुष्पदंत शिव जाई ॥ पूजै कूट

महा फल होय । कोड़ उपास कहौ जिनदेव ॥११॥ सो विघ्न तवर
कूट महान । मोक्ष गये शीतल धर ध्यान ॥ पूजै त्रिविध योग कर
कोई । कोड़ उपास तनौ फल होई ॥१२॥ संकुल कूट महा शुभ
जानौ । जंह तैं श्रीयांस भगवानौ ॥ कूट तनौ अब दर्शन सुनौ ।
कोड़ उपास जिनेश्वर भनौ ॥१३॥ संकुल कूट परम सुखदाई ।
विमल जिनेश जहां शिव जाई ॥ मनवच दर्श करै जो कोई । कोड़
उपास तनौ फल होई ॥१४॥ कूट स्वयंप्रभ सुभगसु ठाम । गये
अनंत अमरपुर धाम ॥ एही कूट कोई दर्शन करै । कोड़ उपवास
तनौ फल धरै ॥१५॥ हैं सुदत्तवर कूट महान । जंह तैं धर्मनाथ
निर्वाण ॥ परम विशाल कूट है सोई । कोड़ उपवास दश फल होई
॥१६॥ परम विशाल कूट शुभ कहौ । शांति प्रभू जंह तैं शिव
लहौ ॥ कूट तनौ दर्शन है सोई । एक कोड़ प्रोषध फल होई ॥१७॥
परम ज्ञानधर है शुभ कूट । शिवपुर कुंथु गये अघ छूट ॥ इनकों
पूजे दोई कर जोर । फल उपवास कहौ इक कोड़ ॥१८॥ नाटक
कूट महा शुभ जान । जंह तैं अरह मोक्ष भगवान ॥ दर्शन करै कूटको
जोई । ध्यानवै कोड़ उपास फल होई ॥१९॥ संवल कूट महि
जिनराय । जंह तैं मोक्ष गये निज काय ॥ कूट दश फल कहौ
जिनेश । कोड़ एक प्रोषध फल वेस ॥२०॥ निर्जर कूट महा सुख
दाई । मुनिसुव्रत जंह तैं शिव जाई ॥ कूट तनौ दर्शन है सोई ।
एक कोड़ प्रोषध फल होई ॥ २१ ॥ कूट मित्र धरतै नमि मोक्ष ।
पूजत आयः सुरासुर जक्ष ॥ कूट तनौ फल है सुखदाई । कोड़
उपास कहौ जिनराई ॥२२॥ श्रीप्रभु पार्श्वनाथ जिनराज । दुरगति
तैं घूटे महाराज ॥ सुवर्णभद्र कूटकोनाम । जंह तैं मोक्ष गये

जिन धाम ॥२३॥ तीन लोक हित करत अनूप । मंगल मय जगमें
 सिद्धू प ॥ चिंतामणी स्वर वृक्ष समान । रिद्ध सिद्ध मङ्गल सुख
 दान ॥२४॥ पार्श्व और काम सुर धेन । नाना विध आनन्दको देन ।
 व्याध विकार जाहिं सब भाज । मन चितैं पूरे सब काज ॥२५॥
 भवदधि रोग विनाशक होई । जो पद जगमें और न कोई ॥ नि-
 र्मल परम धाम उत्कृष्ट । बन्दत पाप भजै अरु दुष्ट ॥२६॥ जो नर
 ध्यावत पुन्य कमाय । जश गावत ऐ कर्म नशाय ॥ करै अनादि
 कर्मके पाप । भजै सकल छिनमें सन्ताप ॥२७॥ सुर नर इन्द्र
 फणिन्द्र जू सबै । और खगेन्द्र महेन्द्र जु नमै ॥ नित सुर सुरी
 करै उच्चार । नाचत गावत विविध प्रकार ॥२८॥ बहु विध भक्त
 करै मन लाय । विविध प्रकार वाजिं वजाय ॥२९॥ द्रुम द्रुम
 द्रुम बाजै मृदङ्ग । घन घन घंट बजै मुह चङ्ग । भन भन भनिया
 करै उच्चार । सरसारंगी धुन उच्चार ॥ ३० ॥ मुरली बोन बजे
 घन मिष्ट । पट हांतुरी स्वरान्वत पुष्ट ॥ नित सुरगण धित गावत
 सार । सुरगण नाचत बहुत प्रकार ॥३१॥ भननन भननन नूपुर
 तान । तननन तननन टोरत तान । ता थेई थेई थेई थेई थेई चाल ।
 सुर नाचत निज नाचत भाल ॥३२॥ गावत नाचत नाना रङ्ग । लेत
 जहां शुभ आनंद सङ्ग ॥ नित प्रति सुर जहां बन्दे जाय ॥ नाना
 विध मङ्गल को गाय ॥३३॥ आनन्द धुन सुन मोर जु सोय ।
 प्रापत व्रतकी अति ही होय ॥ तातैं हमकू हैं सुख सोई । गिरवर
 बंदो कर धर दोई ॥३४॥ मारुत मन्द सुगन्ध चलेय । गंधो दूक
 तहां बरषै सोय ॥ जियकी जात विरोध न होई । गिरवर बंदे कर
 धर दोई ॥३५॥ ज्ञान चरित तपसा धन होई । निज अनुमौकौ

ध्यान धरेई ॥ शिव मंदिरको धारै सोई । गिरवर बंदै कर धर
 दोई ॥३६॥ जो भव बन्दे एक जु वार । नरक निगोद पशू गति टार ॥
 सुर शिवपदकूँ पावै सोय । गिरवर बंदै कर धर दोय ॥३७॥ ता
 की महिमा अगम अपार । गणधर कबहुँ न पावै पार ॥ तुम अद्भुत
 मैं मतिकर हीन । कहो भक्त वसु केवल लीन ॥३८॥ घसा—श्री
 सिद्ध क्षेत्र अति सुख देत ॥ सेवतु नासौ विघ्न हरा ॥ अरु कर्म
 बिनाशे सुख पयासै केवल भासै सुख करा ॥ ३९ ॥ ओं ह्रीं
 सम्मेदशिखिर सिद्धपद प्राप्ताय सिद्धक्षेत्रेभ्यो महाधर्म । दोहा—
 शिखरसम्मेद पूजो सदा । ममवच तन कर नारि ॥ सुर शिवके जे
 फल लहै, कहते दास जवारि ॥४०॥ इत्यादि आशीर्वादः ।

{ ८३ } दीपमालिका विधान ।

श्री महावीर पूजा (कवि मनरङ्गजी)

गोता छंद ।

शुभनगर कुण्डलपुर सिद्धार्थरायके त्रिशलातिया ॥ तजि पुष्प
 उत्तर तासु कुक्ष्या वीर जिन जन्मन लिया ॥ कर सात उन्नत कनक
 सा तनु बंशवर इक्ष्वाक है ॥ द्वे अधिक सत्तरि वरस आउष सिंह
 चिन्ह भला कहै ॥१॥

छंदमालिनी—सो जिनवीर दयानिधिके जुग पाद पुनीत पुनीत
 करेंगे । जावत मोक्ष न होय हमें शुभ तावत थापन रोज करेंगे ।
 आय बिराजहु नाथ इहां हम पूजिके पुण्य भण्डार भरेंगे । ॐ ह्रीं
 श्रीबीरनाथ जिनेन्द्राय पुष्पांजलि क्षिपेत् ॥ पुष्पोंको घालीमें डाले ।
 कनक कूँभसु वारि भरायके । विमल भाषत्रिशुद्ध लगायके ॥ कर

अष्टक छंद इतबिलंब ।

मदेव जिनेश्वर वीरके । चरण पूजत नाशक पीरके ॐ ह्रीं श्रीवीर
नाथ जिनेन्द्राय जन्मरोगविनाशनाथ जलं निर्वपामीति स्वाहा
जलं ॥ १ ॥

परम चन्दन शीतल वामना । करि सुकेशरि मिश्रित पावना ॥
चरमदेव जिनेश्वर वीरके । चरण पूजत नाशक पीरके ॥
ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय भवातापविनाशनाथ चन्दनं ॥ २ ॥
धवल अक्षत चाव चढ़ावही । करि सुपुंज महामन भावही ।
चरम० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ॥ ३ ॥
पुहप माल बनाय हिरायकै । जुगतिसो प्रभु पास लियायके ॥
चरमदेव० । चरण पूजत० ॥
ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विनाशनाथ पुष्पं ॥ ४ ॥
नवल घेबरबायर लायके । घृतसुलोलित पूव बनायके ।
चरमदेव० । चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोगनाशाय नेवेद्यं ॥ ५ ॥
करि अमोलक रत्नमई दिया । जगत ज्योति उद्योतमई किया ॥
चरमदेव० । चरण पूजत० ॥
ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाथ दीपं ॥ ६ ॥
उठत धूप घटावलि जासुते । इम सुधूप सुगन्धित तासुते ॥
चरमदेव० ॥ चरण पूजत० ॥

ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं ॥ ७ ॥
फणसदाड़िम आम्र पके भये । कनक भाजनमें भरके लये ॥

चरमदेव० । ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय मोक्षपद
प्राप्तये भर्तुं ॥ ८ ॥

अरघ ले शुभ भाव चढ़ायके । धवल मङ्गलतूर बजायके ।
चरमदेव० । ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय सर्वसुखप्राप्ताय
अर्घ ॥ ९ ॥

अथ पंचकल्याणकं गाथा ।

मास आषाढ़ सुदीमे । पष्ठीदिन जानि महा सुखकारी ।
त्रिसला गरम पधारे । तुमपद जजत अर्घ सीरी ॥
ॐ ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय आषाढ़ सुदी ६ गर्भकल्याण काय
अर्घ ॥

चैत्र त्रयोदशि कारी । तादिन जनमे प्रभाव बिस्तारी ॥
अर्घ महाकर धारी । जजत तिहारे चरण हितकारी ॥
ओं ह्रीं श्रीवीर जिनेन्द्राय चैत्रसुदीतेरसज्जन्मकल्याणकाय अर्घ ॥ २ ॥
दशमी अगहन वदीमें । लखि सबजग अथिर भये वैरागी ॥
प्रभू महाव्रत धारै । हम पूजत होत बड़ भागी ॥ ३ ॥
ओं ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय अगहनवदी १० तपकल्याणकाय अघ
केवलज्ञानी हूवे । दशमी बैसाख सुदीके माहो ।

सकल सुरासुर पूजै । हम इह पद लखि अरघ चढ़ाही ॥
ओं ह्रीं श्रीवीरनाथ जिनेन्द्राय बैसाखसुदी १० ज्ञानकल्याणकाय अर्घ
कार्तिक नष्ट कलादिन । पावापुरके गहनते स्वामो ॥
मुकति तिया परनाई । हम चरण पूजि होत बड़ नामी ॥
ओं ह्रीं श्रीचरमदेव महावीर जिनेन्द्राय कार्तिकवदी अमावस
निर्वाण कल्याणकाय अर्घ ॥ ५ ॥

जयमाला (छन्द मूलना)

वीर जिन धोरधर सिंहपग चिन्हधर तेजतप धरन जयसूर
भारी । धर्मकी धुराधर अक्षर बिनु गिराधर परम पद धरन जय
मदन हारी । दयाधर सीमधर पंचवर नाम धर अमल छबि
धरण जय शरमकारी । पञ्चपरवर्तकी भर्मना ध्वंसिके अचलपद
लहत जयजस बिधारी ॥ १ ॥

(छन्द त्रोटक)

जय आनन्दके घनघोर नमों, जय नाशक हौ भवभीर नमों ।
जयनाथ महासुख दायक हौ, जमराजबिहंडन लायक हो ॥ २ ॥
जय चरमशरीर गंभीर नमो, जय चर्मतिर्थकर धीर नमो ।
जय लोक अलोक प्रकाशक हो, जन्मान्तरके दुखनाशक हो ॥ ३ ॥
जय कर्म कुलाचल छेद नमो, जय मोह बिना निरखेद नमो ।
जय पूज्यप्रताप सदा सुथिरा, प्रगटी चहुं ओर प्रशस्त गिरा ॥ ४ ॥
तन सात सुहास विद्याल नमो कनकाभ महा दशतालनमो ।
शुभमूरति मो मन माहिं बसी, सिगरी तबते भव भ्रांति नसी ॥ ५ ॥
जय क्रोध दवानल मेघ नमो, जय त्याग करो जागनेह नमो ।
जय अम्बर छांड़ि दिगम्बर भे, गति अम्बरकी धरि अंमरभे ॥ ६ ॥
जय धारक पञ्चकल्याण नमो, जय रोजनमें गुणवान नमो ।
जय पाद गहें गणराज रहैं, सचिनायकसे मुहताज रहैं ॥ ७ ॥
जय भौद्धि तारण सेत नमो, जय जन्म उधारन हेत नमो ।
जय मूरति नाथ भली दरसी, करुणामय शांति छया करसी ॥ ८ ॥
जय सार्थिक नाम सुवीर नमो, जय धर्मधुराधर वीर नमो ।
जय ध्यान महान तुरी चढ़के, शिवखेत लिया अति ही बढ़के ॥ ९ ॥

जय पारनवार अपार नमो, जय भार बिना निरधार नमो ।
जय रूपरमाधर तो कथनी कथि पार न पावत नागधणी ॥ १० ॥
जय देव महा कृतकृत्य नमो, जयजीव उधारण वृत्य नमो ।
जय अत्रबिना सब लोक जई, ममता तुमते प्रभु दूर गई ॥ ११ ॥
जय केवल लब्धि नवीन नमो, सब बातनमें परधीन नमो ।
जय आत्ममहारस पीवन हौ; तुम जीवन मूल सजीवन हौ ॥ १२ ॥
जय तारण देव सिपारसमो, सुनि ले चित दे इहवार समो ।
दुखदूखित मो मनकी मनसा, नहिं होत अराम इकौ क्षणसा ॥ १३ ॥
तकि तो पद भेषज नाथ भले, तुम पास गरीब निबाज चले ।
मनकी मनसा सब पूजनको, तुमहो इहि लायक दूजनको ॥ १४ ॥
इह कारजके तुम कारण हौ, चित ल्याय सुनो तुम तारण हौ ।
जगजीवनके रखवाल भलै, जय धन्य धन्य किरपाल मिलै ॥ १५ ॥
सबको मनकी मनसा पुजि है, अब और कुदेव नहीं सुभि है ।
सुभि है तुमरे गुम गावनकी, बुझि है तृष्णा भरमावनकी ॥ १६ ॥

छन्द काव्य—पूरन यह जयमाल भई अन्तिम जिन केरी ।
पढ़त सुनत मनरङ्ग कहै नसिहै भव फेरी ॥ बसि है शिवथल मांहि
जहां काया नहिं हेरी । ज्ञानमई भगवान जाय है है गुणदोरी ॥ १७ ॥
हरौ मोह तमजाल हाल शिवबाल निहारौ । हारौ मिथ्याचाल
नाम बड कित्ति पसारौ ॥ सारौ कारज बेस लेस सममान न
धारौ । धारौ निजगुण चित्त मित्त जिनराज पुकारौ ॥ १८ ॥
मारौ न एको काल माल विद्याकी डायौ । डारौ औगुण भार
भार दुनियाबी जायौ । जारौ नहिं निज रीति प्रीति दुर्गतिको
मार्यौ । मारो सननित होउ दोह रञ्जक न विचार्यौ ॥ १९ ॥

(यह पढ़कर अम्बालका अथ चढ़ावे छन्द छप्पे)

होह् अमङ्गसरूप भूपको पद विस्तार्यो । तारो अपनकुले
भुलै मद माथा मार्यो ॥ टारहु नहि निज आनि वानि ममताकी
मार्यो । गारौनाकुलकानि जानिबै मदन प्रहार्यो ॥ मनरङ्ग कहत
धनधान्य अरु, पुत्रपौत्र करि घर भरौ । श्रीवीरचन्द जिन राजते
तुमको यह कारज सरौ ॥ २० ॥

(इति आशीर्वाद—यह पढ़कर पुष्प चढ़ावै)

(श्री सरस्वती पूजा नीचे लिखे भांति करें)
श्री शारदास्तुति ।

(भुजंग प्रयात छन्द)

जिनादेश जाता जिनेन्द्रा विख्याता । विशुद्धा प्रबुद्धा नमो लोक माता ॥
दुराचार दुर्नेहरा शङ्करानी । नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥ १ ॥
सुधा धर्म संसाधनी धर्मशाला । आनाप निर्नाशयी मेघ माला ।
महा मोह विध्वंसनी मोक्षदानी । नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥ २ ॥
अखै वृक्षशाखा व्यतीताभिलाखा । कथा संस्कृता प्राकृत देश भाषा ॥
चिदानन्द भूपालकी राजधनी । नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥ ३ ॥
समाधानरूपा अनूपा अलुद्रा । अनेकान्त धा स्यादबादांक मुद्रा ॥
त्रिधा सप्तधा द्वादशांगी चखानी । नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥ ४ ॥
अकोपा अमाना अदम्भा अलोभा । श्रुतज्ञानरूपी मतिज्ञान शोभा ।
महा पावनी भावना भव्य मानी । नमो देवि वागेश्वरी जैनवाणी ॥ ५ ॥
असीता अजीता सदा निर्घिकारा । विपैवाटिका खंडिनी खड्ग-
धारा ॥ पुरा पाप बिक्षेप कर्तृ कृपानी । नमो देवि वागेश्वरी जैन

बाणी ॥ ६ ॥ अगाधा अवाधा निरंध्रा निराशा । अनंता अनादी-
श्वरी कर्मनाशा ॥ निशंका निरंका चिदंका भवानी । नमो देवि
वागेश्वरी जैनबाणी ॥ ७ ॥ अशोका मुदेका बिबेका विधानी । जग-
ज्जंतु मित्रा विचित्रावसानी ॥ समस्तावल्लोका निरस्ता निदानी ॥
नमो देवी वागेश्वरी जैनबाणी ॥ ८ ॥

इतना पढ़कर थालीमें पुष्प चढ़ावै सरस्वती पूजा ३५८ पृष्ठमें है सो करें ।

(८४) श्री खंडगिरी क्षेत्र पूजन ।

अंगवंगके पास है देश कलिंग धिख्यात । तामें खंडगिरी
लसत दर्शन भव्य सुहात । जसरथ राजाके सुत अतिगुणवानजो ।
और मुनीश्वर पंच सैकड़ा जानजी ॥ अष्टकरम कर नष्ट मोक्षगामी
भये । तिनके पूजहुं चरण सकल मंगल ठये ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं श्रीकलिंगदेशमध्ये खंडगिरीजो सिद्धक्षेत्रसे सिद्धपद प्राप्त इशरथ
राजाके छत तथा पंचशतक मुनि अत्र अवतर अवतर, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
अत्र मम सन्निहितो भव, भव वषट ।

अथाष्टकं ।

अति उत्तम शुचि जल ल्याय, कंचन कलश भरा । करं धार
सुमनबचकाय, नाशत जन्म जरा ॥ १ ॥ श्री खंडगिरीके शीश
जसरथ तनय कहे । मुनि पंचशतक शिवलीन देशकलिंग दहे ॥
ओं ह्रीं धो खंडगिरी क्षेत्रभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं ॥

केशर मलयागिरि सार, घिसके सुगंध किया । संसार ताप
निरवार, तुमपद घसत दिया ॥ श्री खंड० ॥ चंदनं ॥ मुक्ताफलको
उन्मान, अक्षत शुद्ध लिया । मम सर्वं दोष निरवार, निजगुण
मोह दिया ॥ श्री खंडगिरि० ॥ अक्षतं ॥ ले सुमन कल्पतरु धार,

चुन २ ल्याय धरूँ । तुम पददिग धरतहि बाण काम समूल
 हरूँ ॥ श्री खंडगिरि० ॥ पुष्पं ॥ लाडू घेवर शुचि ल्याय, प्रभुपद
 पूजनको । धारूँ चरनन दिग आय, मम क्षुध नाशनको ॥
 श्रीखंडगिरि० ॥ नैवेद्यं ॥ ले मणिमय दीपक धार, दीय कर जोड़
 धरो । मम मोहांधेर निरवार, ज्ञान प्रकाश करो ॥ श्रीखंडगिरी०
 ॥ दीपं ॥ ले दशविधि गंध कुटाय, अग्नि मभार धरौं । मम अष्ट
 करम जल जांय, यातें पांय परौं ॥ श्रीखंडगिरी० ॥ धूपं ॥
 श्रीफल पिस्ता सु बदाम, आम नारंगि धरूँ । ले प्रासुक हेमके
 धार, भवतर मोक्षवरूँ ॥ श्रीखंडगिरी० ॥ जलफल वसु द्रव्य
 पुनीत, लेकर अर्घ करूँ । नाचूँ गाऊँ इहभांत, भवतर मोक्ष
 वरूँ ॥ श्री खंडगिरी० ॥ अर्घं ॥

अथ जयमाला ।

दोहा—देश कलि'गके मध्य है, खंडगिरी सुखधाम ।

उदयागिरि तसु पास है; गाऊँ जय जय धाम ॥ १ ॥

श्री सिद्धि खंडगिरि क्षेत्र जान, अति सरल चढ़ाई तहां मान ॥
 अति सघन वृक्ष फल रहे आय, तिनकी सुगंध दशदिश जु छाय
 ॥ १ ॥ ताके सुमध्यमें गुफा आय, नव मुनि सुनाम ताको कहाय
 तामें प्रतिमा दशयोग धार, पञ्चासन हैं हरि चंवर द्वार ॥ २ ॥ ता
 दक्षिण दिशा एक गुफा जान, तामें चौविस भगवान मान । प्रति
 प्रतिमा इन्द्र खड़े दुओर, का चंवर धरें प्रभु भक्ति जोर ॥ ३ ॥
 आजू बाजू खड़ि देवि द्वार, पञ्चावति चक्रेश्वरी सार । कर द्वादश
 मुजि हथियार धार, मानहुँ निंदक नहिं आवें द्वार । ४ ॥ ताके
 दक्षिण चलि गुफा आय, सत बखरा है ताको कहाय । तामें

चौबीसी बनीसार, अरु त्रय प्रतिमा सब योग धार ॥ ५ ॥ सषमैं
हरि चमर सुधरहिं हाथ नित आय भव्य नावहिं सुभाय । ताके
ऊपर मंदिर विशाल, देखत भविजन होते निहाल ॥ ६ ॥ ता दक्षिण
दूटी गुफा आय, तिनमें ग्यारह प्रतिमा सुहाय । पुनि पर्वतके ऊपर
सुजाय, मंदिर दीर्घ मनको लुभाय ॥ ७ ॥ बुन्देलखंडसे यहां
आय, परवार जाति भूषण कहाय । “मंजू” जु नाम उनका लखाय,
जिन मंदिर था दीना बनाय ॥ ८ ॥ तामें प्रतिमा भगवान जान,
खडगासन योगधरें महान । ले अष्ट द्रव्य तसु पूज्य कीन, मन
बच तन करि मम धोक दीन ॥ ९ ॥ भयो जन्म सफल अपनो
सुभाय, दर्शन अनूप देखो जिनाय । अब अष्ट करम होंगे जु चूर,
जाते सुख पाहें पूर पूर ॥ १० ॥ पूरव उत्तर द्विय जिन सुधाम,
प्रतिमा खडगासन अति महान । दर्शन करके मन शुद्ध होय, शुभ
बंध होय निश्चय जु कोय ॥ ११ ॥ पुनि एक गुफामें बिम्बसार,
ताको पूजनकर फिर उतार । पुनि और गुफा खालो अनेक, ते हैं
मुनिजनके ध्यान हेत ॥ १२ ॥ पुनि चलकर उदयगिरी सुजाय
भारी भारी गुफा लखाय । इक गुफामाहिं जिनराज जान, पद्मासन
धर प्रभु करत ध्यान ॥ १३ ॥ जो पूजत है मन बचन काय, सो
भव-भवके पातक नशाय । तिनमें इक हाथी गुफा जान, प्राचीन
लेख शोभे महान ॥ १४ ॥ महाराज पारबेल नाम जास, जिनने
जिनमतका किया प्रकाश । बनावाई गुफा मन्दिर अनेक, अरु
करीं प्रतिष्ठा भी अनेक ॥ १५ ॥ इसका प्रमाण वह शिलालेख,
बतलाता है जैनत्व एक ॥ प्रारंभ लेखमें यह बखान, सिद्धोंको
बन्दन अरु प्रणाम ॥ १६ ॥ स्वस्तिकका चिन्ह विराजमान, जो

जैनधर्मका है महान । मथुरापतिसे उन युद्ध कीन, प्रतिमा आदी-
 श्वर फैर लोन ॥ १७ ॥ तालाब, कूप, घापी अनेक, खुदवाईं उन
 कर्त्तव्य पेख । रानी भी दाना थीं विशेष, बनवाई गुफा उनने
 अनेक ॥ १८ ॥ पुनि और गुफामें लेख जान, पढ़ते जिनमत मानत
 प्रधान । तहँ जसरथ नृपके पुत्र आय, मुनि संग पाचसौ भी
 लहाय ॥ १९ ॥ तप बारह विधिका यह करंत, बाईस परीषह वह
 सहन्त । पुनि समिति पंचयुत चलें सार, छयालीस दोष टलकर
 अहार ॥ २० ॥ इस विध तप दुर्द्धर करत जोय, सो उपजे केवल
 ज्ञान सोय । सब इन्द्र आय अति भक्ति धार, पूजा कीनी आनंद
 धार ॥ २१ ॥ पुनि धर्मापदेश दे भव्य पार, नाना देशनमें कर बिहार ।
 पुनि आये याहो शिखर थान, सो ध्यान योग्य माना महान ॥ २२ ॥
 भये सिद्ध अनन्ते गुणन ईश, तिनके युगपदपर धरत शीष । तिन
 सिद्धनको पुनि २ प्रणाम; जिन सुख अविचल माना सुधाम ॥ २३ ॥
 बंदत भव दुख जावे पलाय, सेवक अनुक्रम शिवपद लहाय ।
 पूजन करता हूं मैं त्रिकाल, कर जोड़ नमत हैं “मुन्नालाल” ॥ २४ ॥
 घत्ता—उदयागिरि क्षेत्रं अति सुखदेतं तुरतहि भवदाधि पार करें ।
 जो पूजे ध्यावे करम नसावे, बांछित पावे मुक्ति वरे ॥ २५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीखण्डगिरी सिद्धक्षेत्रेभ्यो महार्घं निर्वपामीति स्वाहा ।
 दोहा—श्री खंडगिरि उदयागिरि, जो पूजे त्रिकाल ।

पुत्र पौत्र सम्पत्ति लहे, पावे शिव सुख हाल ॥ २६ ॥

(८५) आराधना पाठ ।

मैं वेषनित अरहंत चाहूँ सिद्धका सुमिरन करौं । मैं सगुरु

मुनि तीनि पद मैं साधुपद हृदय धरो ॥ मैं धर्म करुणामय जु
चाहूँ जहां हिंसा रंचना । मैं शास्त्र ज्ञान विराग चाहूँ जासुमैं
परपंचना ॥ १ ॥ चौबीस श्रोजिनदेव चाहूँ और देव न मन बसे
जिन बीस क्षेत्रविदेह चाहूँ बन्दिते पातिक नशै ॥ गिरनार शिखर
समेद चाहूँ चंपापुर पावापुरी । कैलास श्रोजिनधाम चाहूँ भजत
भाजै भ्रम जुरी ॥ २ ॥ नवतत्वका सरधान चाहूँ और तत्व न मन
धरौ । षट्द्रव्य गुन परजाय चाहूँ ठोक तासों भय हरी ॥ पूजा
परम जिनराज चाहूँ और देव न हूँ सदा । तिहुंकालकी मैं जाप
चाहूँ पाप नहिं लागै कदा ॥ ३ ॥ सम्यक्त दर्शन ज्ञान चारित्र
सदा चाहूँ भावसों । दशलक्षणीमें धर्म चाहूँ महा हर्ष उछावसों ।
सोलह जु कारन दुखनिवारण सदा चाहूँ प्रीतिसों ॥ मैं चित्त
अठाई पर्व चाहूँ लहा मङ्गल रीतिसों ॥ ४ ॥ मैं वेद चारौ सदा
चाहूँ आदि अन्त निबाहसों । पाप धरमके चार चाहूँ अधिक
चित्त उछाहसों ॥ मैं दान चारौ सदा चाहूँ भुवनवशि लाहो लहूँ ।
आराधना मैं चारि चाहूँ अन्तमें जेई गहूँ ॥ ५ ॥ भावन बारह
सदा भाऊं भाव निरमल होत हैं । मैं व्रत जु बारह सदा चाहूँ
त्याग भाव उद्योत हैं ॥ प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूँ ध्यान आसन
सोहना । बसुकर्मतैं मैं छुटा चाहूँ शिवलहूँ जहं मोहना ॥ ६ ॥
मैं साधुजनको सङ्ग चाहूँ प्रीति तिन हीं सो करौं । मैं पबंके
उपवास चाहूँ अरंभै परिहरौं ॥ इस दुक्ख पंचमकाल माहीं कुल
शरावक मैं लहो । अरु महाव्रत धरि सकौं नाहीं निबल तन मैंने
गहो ॥ ७ ॥ आराधना उत्तम सदा चाहूँ सुनो जिनरायजी ।
तुम कृपानाथ अनाथ दानत दया करना न्याय जी ॥ बसुकर्मनाश

विकाश ज्ञान प्रकाश मोको कीजिये । करि सुगति गमन समा-
धिमरन सुभक्ति चरनन दीजिये ॥ ८ ॥

(८६) शान्ति पाठः ।

(शान्तिपाठ बोलते समय दोनों हाथोंसे पुष्प वृष्टि करते रहो)

दोधकवृत्तम् ।

शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रम् ।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममम्बुजनेत्रम् ॥ १ ॥
पञ्चममीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणेश्वर ।
शान्तिकरं गणशान्तिममोत्सुः षोडशतीर्थंकरं प्रणमामि ॥ २ ॥
दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥ ३ ॥
तं जगद्वर्चितशान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं मङ्गपरं पठते परमां च ॥ ४ ॥

(वसन्ततिका)

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः शकादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्मा
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपास्तीर्थंकराः सततशान्तिकरा भवन्तु ॥ ५ ॥

इन्द्रवज्रा

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥ ६ ॥
स्रग्धरावृत्तग—क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु यलवान् धार्मिको
भूमपालः । काले काले च सम्यः वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु
नाशम् ॥ दुर्मिक्षं चौरमारु क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ ७ ॥

अनुष्टुप—प्रध्वस्तघातिकर्माणः केवलज्ञानमास्कराः । कुर्वन्तु जगतः
शान्तिं बुधभाद्या जिनेश्वराः ॥८॥ प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

अंत्येष्ट प्रार्थना ।

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः सङ्गति सर्वदाय्यैः । सद्वृत्तानां
गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् । सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना
चात्मतत्त्वे । सम्पद्यन्तां मम भवमवे यावदेतेऽपवर्गः ॥९॥

आर्यावृत्तम—तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठत जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्बाणसम्प्राप्तिः ॥१०॥

आर्या—अवस्त्ररपयत्यहीणं मत्ताहीणं च जं मये मणियं । तं
स्वमउ णाणदेव य मज्झवि दुःस्वस्वयं दिंतु ॥११॥ दुःस्वस्वओ
कम्मस्वओ समाहिमरणं च वोहिलाहो य । मम होउ जगतवन्धव
तव जिणवर चरणशरणेण ॥१२॥ (परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्)

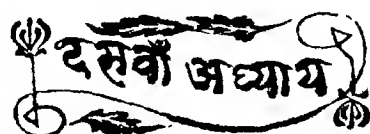
विसर्जन पाठ—ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि शास्त्रोक्तं न कृतं मया ।
तत्सर्व पूर्णं मेवास्तु त्वत्प्रसादाज्जिनेश्वर ॥ १ ॥ आव्हानं नैव
जानामि नैव जानामि पूजनम् । विसर्जनं न जानामि क्षमस्व परमे-
श्वर ॥ २ ॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं द्रव्यहीनं तथैवच । तत्सर्वं क्षम्यतां
देव रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥३॥ आहूता ये पुरा देवा लब्धभागा यथा-
क्रमम् । ते मयाभ्यर्चिता भक्त्या सर्वे यान्तु यथास्थितिम् ॥४॥

(८७) भाषास्तुति पाठ ।

तुम तरण तारण भवनिवारण, भविकमन आनंदनो । श्रीनामिन-
न्दन जगत बंधन, आदिनाथ निरंजनो ॥१॥ तुम आदिनाथ अनादि

सेऊं, सेय पद पूजा करूं । कैलासगिरिपर रिषभजिनवर, पदकमल
 हिरदै धरूं ॥ २ ॥ तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महा-
 बली । यह बिरद सुनकर शरण आयो, कृपा कीजे नाथजो ॥ ३ ॥ तुम
 चन्द्रबदन सुचन्द्रलच्छन, चन्द्रपुरि परमेश्वरो । महासेननन्दन,
 जगतबन्दन, चन्द्रनाथ जिनेश्वरो ॥ ४ ॥ तुम शांति पांच कल्याण
 पूजो, शुद्ध मन वच कायजू । दुर्भिक्ष चोरी पापनाशन, विघन जाय
 पलायजू ॥ ५ ॥ तुम बाल ब्रह्म विवेकसागर, भव्यकमलविकाशो
 श्रीनेमिनाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशो ॥ ६ ॥ जिन
 तजी राजुल राजकन्या, कामसेन्या—वश करी । चारित्र रथ चढ़ि
 भये दूलह, जाय शिवरमणी वरी ॥ ७ ॥ कन्दर्प दर्प सुसर्प लच्छन
 कमठ शठ निर्मल कियो । अश्वसेननन्दन जगतबन्दन, सकलसंघ
 मंगल कियो ॥ ८ ॥ जिन धरौ बालकपने दीक्षा, कमठमान
 बिदारकै । श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्रके पद, मैं नमों शिरधारकै ॥ ९ ॥
 तुम कर्मघाता मोक्षदाता, दीन जान दया करो । सिद्धार्थनन्दन
 जगतबन्दन, महावीर जिनेश्वरो ॥ १० ॥ छत्र तीन सोहैं सुर नर
 मोहे, बीनती अबधारिये । कर जोड़ि सेवक, बीनवें प्रभु, आवाग
 मन निवारियो ॥ ११ ॥ अब होउ भव भव स्वामि मेरे, मैं सदा
 सेवक रहों । कर जोड़ यों बरदान मांगो, मोक्षफल जाचत लहों
 ॥ १२ ॥ जो एकमाहीं एक राजै, एकमाहि अनेकनो । इक अनेक
 की नहीं संख्या, नमों सिद्ध निरंजनो ॥ १३ ॥ मैं तुम चरणकम-
 लगुणगाय । बहुविधि भक्ति करी मनलाय । जनम २ प्रभु पाऊं
 तोहि । यह सेवाफल दीजे मोहि ॥ १४ ॥ कृपा तिहारी पेसी होय
 जनम मरन मिटावो मोय । बारबार मैं बिनती करूं । तुम से ये

भवसागर तरुं ॥ १५ ॥ नाम लेत सब दुख मिट जाय । तुम दर्शन देखो प्रभु आय । तुम हो प्रभु देवनके देव । मैं तो करुं चरण तब सेव ॥ १६ ॥ मैं आयो पूजनके काज । मेरो जनम सफल भयो आज । पूजा करके नवाऊं शीश । मुझ अपराध छमहु जगदीश ॥ १७ ॥



(द्व) सुगन्ध दशमी व्रत कथा ।

चौपाई—बद्धमान बंदो जिनराय । गुरु गौतम बंदो सुखदाय ॥ सुगन्ध दशमी व्रतकी कथा । बद्धमान सुप्रकाशी यथा ॥ १ ॥ मगधदेश राजगृह नाम । श्रेणिक राज करे अभिराम ॥ नाम चेलना गृह पटरानि । चन्द्रोहिणी रूप समान ॥ २ ॥ नृप बैठो सिंहासन परे । वनमाली फल लायो हरे ॥ कर प्रणाम बच नृपसे कहो । वित्त प्रमोदसे ठाड़ो रहो ॥ ३ ॥ बद्धमान आये जिन स्वामि । जिन जीतो उद्यम अरि काम ॥ इतनी सुनत नृपति उठ चलो । पुरजन युत दलबलसे मलो ॥ ४ ॥ समोशरण बन्दे भगवान् । पूजा भक्ति धार बहुमान ॥ नरकोठा बैठो नृपजाय । हाथ जोड़ पूछे शिर नाय ॥ ५ ॥ सुगन्ध दशमी व्रत फल भाषि । ता नरकी कहिये अब सा-
खि ॥ गणधर कहें सुनों मगधेश । जम्बूद्वीप विजयार्द्ध देश ॥ ६ ॥ शिव मन्दिर पुर उत्तरश्रेणी । विद्याधर प्रीत कर जैनी ॥ कमला खती नारि अति रूप । सुरकन्तासे अधिक अनूप ॥ सागरद्व

बसे तहां साह । जाके जिनव्रतमें उत्साह ॥ धनदत्त बनिता गृह
 कही । मनोरमा ता पुत्री सही ॥ ८ ॥ सुगुप्तचार्य गृह आइयो ।
 देख मुनीन्द्र दुःख पाइयो ॥ कन्या मुनिकी निन्दा करी । कुछ मन-
 में नहिं शङ्का धरी ॥ ९ ॥ नग्न गात दुर्गन्ध शरीर । प्रगट पने देही
 नहिं चीर । मुख ताम्बूल हतो मुनि अङ्ग । मानो सुखको कीनो भङ्ग
 ॥ १० ॥ भोजन अन्तराय जब भयो । मुनि उठ जाय ध्यान वन
 दियो ॥ समताभाव धरे उरमांहि । किञ्चित् खेद चित्तमें नाहिं
 ॥ ११ ॥ जीत अवधि समय कछु गयो । मनोरमाका काल सुभयो ।
 भई गंधी पुनि कुकरी ग्राम । अपर ग्राम भई सुकरी नाम ॥ १२ ॥
 मगध सुदेश तिलकपुर जान । विजय सेन तहका नृप मान ॥
 चित्ररेखा ता रानी कहीं । ता पुत्री दुर्गन्धा भई ॥ १३ ॥ एक स-
 मय गुरुबन्दन गयो । पूजा कर चिनतीको ठयो ॥ मो पुत्री दुर्गन्ध
 शरीर । कहो भवान्तर गुण गम्भीर ॥ १४ ॥ राजा बचन मुनी-
 श्वर सुने । मुनि वृत्तान्त रायसे भने ॥ सब वृत्तान्त हालिजो जान
 मुनि राजासे कहो बखान ॥ १५ ॥ सुन दुर्गन्धा जोड़े हाथ । मो
 पर कृपा करो मुनिनाथ । ऐसा व्रत उपदेशो मोहि । यासे तनु नि-
 रोग अब होहि ॥ १६ ॥ दयावन्त बोले मुनिराय । सुन पुत्री व्रत
 चित्त लाय ॥ समता भाव चित्तमें धरो । तुम सुगन्धदशमी व्रत
 करो ॥ १७ ॥ यह व्रत कीजे मन वच काय । यासे रोग शोक सब
 जाय ॥ दुर्गन्धा दिनवे निकुताय । कहिये सविधि महा मुनिराय
 ॥ १८ ॥ ऐसे वचन सुने मुनि जबै । तब बोले पुत्री सुन अबै ॥
 भावों शुक्ल पक्ष जब होय । दशमी दिन आराधो सोय ॥ १९ ॥
 चारो रसकी धारा देव । मनमें राखो श्रीजिनदेव ॥ शीतलनाथकी

पूजा करो । मिथ्या मोह दूर परि हरो ॥ २० ॥ व्रतके दिन छोड़ो
आरम्भ । यासे मिटे कर्मका दंभ ॥ या के करत पाप क्षय जाय ।
सो दश वर्ष बरो मन लाय ॥ २१ ॥ जब यह व्रत सम्पूर्ण होय ।
उद्यापन कीजे चित जोय ॥ दश श्री फल अमृत फल जान । नोबू
सरस सदा फल आन ॥ २२ ॥ दश दीजे पुस्तक लिखबाय । यह
विधि सब मुनि दर्ई बताय ॥ बिधि सुन दुर्गन्धा व्रत लयो । सब
दुर्गन्ध तत्क्षण गयो ॥ २३ ॥ व्रत कर आयु जो पूरण करी । दशवें
स्वर्ग भई अप्सरो ॥ जिन चैत्यालय बंदन करे । सम्यक् भाव सदा
उर धरे ॥ २४ ॥ भरतक्षेत्र महं मगध सुदेश । भूति तिलकपुर बसे
अशेष ॥ राजा महीपाल तहां जान । मदन सुन्दरी त्रिया बखान
॥ २५ ॥ दशवें दिवसे देवी आन । ताके पुत्री भई निदान ॥ मदनाव-
ती नाम धर तास । अति सुरूप तनु सकल सुवास ॥ २६ ॥ बहुत
बातको करे बखान । सुर कन्या मानो उन्मान । कोसांबी पुर मदन
नरेन्द्र । रानी सती करे आनन्द ॥ २७ ॥ पुरुषोत्तम सुत सुन्दर जान ।
विद्यावंत सुगुणकी खान ॥ जो सुगंध मदना वलि जाय । सो
पुरुषोत्तमको परनाय ॥ २८ ॥ राजा मदन सुन्दरी बाल । सुखसे
जात न जानो काल ॥ एक दिवस मुनिवर बंदियो । धर्म श्रवण
मुनिवर पर कियो ॥ २९ ॥ हाथ जोड़ पूछे तब राय । महा मुनीन्द्र
कहो समझाय ॥ मां गृह रानी मदनावली । ता शरीर शौरभताभ-
ली ॥ ३० ॥ कौन पुन्यसे सुभग सुरूप । सुर वनितासे अधिक अनूप ॥
राजा बचन मुनीश्वर सुने । सब वृतांत रायसे भने ॥ ३१ ॥ जैसे
दुर्गन्धा व्रत लहो । तैसी विधि नरपतिसे कहो ॥ सुने भवार्तर
जोड़े हाथ । दिक्षाव्रत दीजे मुनिनाथ ॥ ३२ ॥ राजाने जब दिक्षा

लई । रानी तबे अजिंका भई ॥ तपकर अन्त स्वर्गको गई । सोलम
स्वर्ग प्रतेंद्र सो भई ॥३३॥ बाईस सागर काल जो गयो । अन्त
काल ता विचसे चयो ॥ भरत सुक्षेत्र मगध तहं देश । वसुधा
अमर केतुपुर वेश ॥३४॥ तानप ग्रहे जन्म उन लहो । जो प्रतेन्द्र
अच्युत दिख कहो ॥ कनक केतु कञ्चन धुति देह । बनिता भोग
करे शुभ मेह ॥३५॥ अमरकेतु मुनि आगम भयो । कनिक केतु तहं
बन्दन गयो ॥ सुनो सुधर्म श्रवण संयोग । तजे परिग्रह अरु भव
भोग ॥३६॥ घाति घातिया केवल लयो । पुनि अघाति हनि शिष-
पुर गयो ॥ व्रत सुगन्ध दशमी विख्यात । ता फल भयो सुरमि
युत गात ॥३७॥ यह व्रत पुरुष नारि जो करे । सो दुःख संकट
भूल न परे ॥ शहर गहेली उत्तम बास । जैनधर्मको जहां प्रकाश
॥३८॥ सब श्रावक व्रत संयम धरे । पूजा दानसे पातक हरे ॥
उपदेशी विश्व भूषण सही । हेमराज पंडितने कही ॥३९॥ मन वच
पढ़े सुने जो कोय । ताको अजर अमर पद होय ॥ यासे भविजन
पढ़ो त्रिकाल । जो छूटे बिधिके भ्रम जाल ॥४०॥

॥ श्रीसुगन्ध दशमी व्रत कथा भाषा सम्पूर्णम् ॥

(८६) अनन्त चौदस व्रत कथा ।

दोहा—अनन्तनाथ बन्दों सदा, मनमें कर बहु भाव ।

सुर असुर सेवत जिन्हें, होय मुक्ति पर चाव ॥१॥

चौपाई ।

जम्बूद्वीप द्वीपोंमें सार । लाख योजन ताका विस्तार ॥ मध्य सुद-
क्ष्ण मेरु बखान । भरत क्षेत्र ता दक्षिण मान ॥२॥ मगध देश देशों

शिरमणी । राजगृह नगरी अति बनी ॥ श्रेणिक महाराज गुण-
वन्त । रानी खेलना गृह सोमन्त ॥३॥ धर्मवन्त गुण तेज अपार ।
राजा राय महागुण सार ॥ एक दिवस विपुलाचल वीर । माये
जिनवर गुण गम्भीर ॥४॥ खार ज्ञानके धारक कहे । गौतम गण-
धर सो संग रहे ॥ छह ऋतुके फल देखे नयन ॥ बनमाली ले चालो
ऐन ॥५॥ हर्ष सहित बन माली गयो । पुष्प सहित राजा पर गयो ।
नमस्कार कर जोड़े हाथ । मो पर कृपा करो नरनाथ ॥६॥ विपुला-
चल उद्यान कहन्त । महा मुनीश्वर तहाँ बसन्त ॥ सुन राजा
अति हर्षित भयो । बहुत दान मालीको दयो ॥७॥ सप्त ध्वनि बाजे
बाजन्त । प्रजा सहित राजा चालन्त ॥ दे प्रदक्षिणा बैठो राव ।
जिनवर देख करो वित चाव ॥८॥ द्वै विधि धर्म कहो समुभाय ।
यासे पाप सर्व जर जाय ॥ खग तहाँ आयो एक तुरन्त । सुन्दर
रूप महा गुणवन्त ॥९॥ नमस्कार जिनवरको करो । जय जयकार
शब्द उच्चरो ॥ ताहि देख आश्चर्यितयो । राजा श्रेणिक पूछन भयो
॥१०॥ सेना सहित महागुण खानि । को यह आयो सुन्दर बाणि ॥
बाकी बात कहो समुभाय । ज्ञानवन्त मुनिवर तुम आय ॥११॥
मोतम बाले बुद्धि अपार । विजया नगर कहो अतिसार ॥ मनो-
कुम्भ राजा राजन्त । श्रीमती रानीको कन्त ॥१२॥ ताका पुत्र
अरिंजय नाम । पुण्यवन्त सुन्दर गुणधाम ॥ पूरब तप कीनो इन
जोय । ताका फल भुगते शुभ सोय ॥१३॥ ताको कथा कहूँ वि-
स्तार । जम्बूद्वीप द्वीपोंमें सार ॥ भरतक्षेत्र तामें सु खकार । कौशल
देश विराजे सार ॥१४॥ परम सुखद नगरी तहं जान । बिप्र सोम-
शर्मा गुण जान ॥ सोमित्या मामिन ता कही । सुख दखिनी

पूरित महो ॥१५॥ पूरब पाप किये अति घने । ताको दुःख भुगतेही
बने ॥ सुन राजा याका वृतांत । नगर २ सोंघमें हुआन्त ॥१६॥
देश विदेश फिर सुखमाश । तोहु न पावे सुखस निवास ॥ भ्रमत २
सो आयो तहां । समोशरण जिनवरको जहां ॥१७॥

बोहा—अनन्तनाथ जिनराजका, शमोशरण तिहि वार ।

सुर नर अति हर्षित भये, देख महा घुति सार ॥१८॥

चौपाई

विप्र देख अति हर्षित भयो । समोशरण बन्दनको गयो ॥
बन्दि जिनधर पूछे सोई । कहा पाप में कीनो होई ॥१८॥ दरिद्रा
पीड़ा रहै शरीर । सोतो व्याधि हरो गम्भीर ॥ गणधर कहै सुनो
द्विजराय । अनन्तव्रत कीजे सुखदाय ॥२०॥ तब विप्र बोलाकर
भाय । किस विधि होइ सो देहु बताय ॥ किस प्रकार या व्रतको
करो । कहा विधान भित्तमें धरो ॥२१॥ भादों मास सुखकी
खान । चौदश शुक्ल कही सुख दान ॥ कर ज्ञान शुद्ध हो जाय ।
तब पूजे जिनधर सुखदाय ॥२२॥ गुरु बन्दना करे चितलाय या
विधिसे व्रत लेय बनाय ॥ त्रिकाल पूजे श्रीजिनदेव । रात्रि जामरण
कर सुख लेव ॥२३॥ गीतरु नृत्य महोत्सव जान । धारा जिनधर
करो बखान ॥ वर्ष चतुदश विधिसे धरे । ता पीछे उद्यापन करे
॥२४॥ करै प्रतिष्ठा चौदह सार । या से पाप होइ जर क्षार ॥
भारी भारी अधिक अनूप । चरण कलश देवे शुभ रूप ॥२५॥ बी
घट भालर सकल माल । और चंदोवे उत्तम जाल ॥ छत्र सिंहा-
सन विधिसे करे । ताते सर्व पाप परिहरे ॥२६॥ वार प्रकार दान
दीजिये । याते अतुल सुख लीजिये ॥ मरतावस्था ले सम्यक ॥

ताते मिले स्वर्गका वास ॥२०॥ उद्यापनकी शक्ति न होय । कीजे
व्रत दूनो मवि लोह ॥ विप्र किया व्रत विधिसे आय । सब दुख
तसु गयो बिलाय ॥२८॥ अन्तकाल धरके सन्यास । ताते पायो
स्वर्ग निवास ॥ चौथे स्वर्ग देव सो जान । महा श्रद्धि ताके सो
ब्रह्मान ॥२९॥ विजयाद्वर्गिर उत्तम ठौर । कांबोपुर पत्तन शिर-
मौर । राजा तहं अपराजित धीर । विजया तासु प्रिया बम्भीर
॥३०॥ ताको पुत्र अरिजय नाम । तिन यह आय करो सो प्रणाम ॥
कञ्चनमय सिंहासन आन ॥ ता पर भूप बैठो सुख जान ॥३१॥
व्योम पटल विनशत लख सन्त । उपजो चित बेराग महंत ।
राज पुत्रको द्यो बुलाय । आप लई दीक्षा शुभ भाय ॥ ३२ ॥ सही
परोषह दूढ़ चित धार । ताते कर्म भये अति क्षार ॥ घाति घातिया
केवल भयो । सिद्धि बुद्धि सो पद निर्भयो ॥ ३३ ॥ रानीने व्रत
कीनो सही । देव देह दिव अच्युत लहो ॥ तहां सु सुख भुगते
अधिकाय । तहांसे आय भयो नर राय ॥ ३४ ॥ राज श्रद्धि पाई
शुभ सार । फिर तप कर विधि कीने क्षार ॥ तहांसे मुक्तिपुर को
गयो । ऐसा तिन व्रत का फल लयो ॥ ३५ ॥ ऐसा व्रत पाले जो
कोई । स्वर्ग मुक्ति पद पावे सोई ॥ बिनय सागर गुरु आह्वा करी ।
हरि किल पाठ चित्तमें धरी ॥३६॥ तब यह कथा करी मन ल्याय ।
यथा शास्त्र में धरणी आय ॥ विधि पूर्वक पाले जो कोय । तस्को
अजर अमर पद होय ॥ ३७ ॥

(६०) रत्नत्रय व्रत कथा ।

बोधा-—अरहनाथको बन्दि के, बन्दी सरस्वति पांय ।

रत्नत्रय व्रतकी कथा, कहै सुनो मनलाय ॥ १ ॥

चौपाई—ऊंबूझीप भरत शुभ क्षेत्र । मगध देश सुख सम्पति हेत ।
 राजगृह तहाँ नगर बसाय । राजा श्रेणिक राज कराय ॥ २ ॥
 विपुलाबल जिनवीर कुंवार । केवल ज्ञान विराजत सार ।
 माली भाव जनावो द्यो । तत्क्षण राजा बन्दन गयो ॥ ३ ॥
 पूजा बन्दन कर शुभ सार । लागो पूछन प्रश्न विचार ॥ हे स्वामी
 रत्नत्रय सार । व्रत कहिये जैसा व्यवहार ॥ ४ ॥ दिव्यध्वनि
 भगवान बताय । भादों सुदि द्वादश शुभ भाय । कर स्नान
 स्वच्छ पट श्वेत । पहिनो जिन पूजनके हेत ॥ ५ ॥ आठों द्रव्य
 लेय शुभ जाय । पूजो जिनवर मन धव काय ॥ जोर्ण न्यूनतन
 जिनके प्रेह । बिब घरावो तिनमें तेह ॥ ६ ॥ हेम रूप्य पीतलके
 यन्त्र । तांबा यथा भोजके पत्र ॥ यन्त्र करो बहु मन थिर देव ।
 रत्नत्रयके गुण लिख लेव ॥ ७ ॥ निश्शांकादि दर्शन गुण सार ।
 संशय रहित सो ज्ञान अपार ॥ अहिंसादि महाव्रत सार । चारित्र
 के ये गुण हैं धार ॥ ८ ॥ ये तीनोंके गुण हैं आदि । इन्हें आदि
 जेते गुण वाद ॥ शिव मार्गके साधन हेत । ये गुण धारे व्रती
 सुचेत ॥ ९ ॥ भादों माघ चैत्रमें जान । तीनों काल करो मर्वि
 आन ॥ या विधि तेरह वर्ष प्रमाण । भावना भावे गुणहि निधान
 ॥ १० ॥ लवङ्गादि अष्टोत्तर आन । जपो मन्त्र मन कर श्रद्धान ॥
 पुनि उद्यापन विधि जो एह । कलशा चमर क्षत्र शुभ देह ॥ ११ ॥
 संग चतुर्विधिको आहार । बस्त्राभरण देउ शुभसार । बिब प्रतिष्ठा
 आदि अपार । पूजो श्री जिन हो सब पार ॥ १२ ॥

दोहा—इस विधि श्री मुख धर्म सुन, मनो विचखर भाय ।

कौने फल पायो प्रभु, सो मायो समकाय ॥ १३ ॥

चौपाई ।

अंबुद्वीप भल्लकृत हेर । रही ताहि लवणोदधि छेर ॥ मेरु सु
दक्षिण दिश है सार । है सो विदेह धर्म अवतार ॥ १४ ॥ कच्छ-
वती सुदेश यहां बसे । वीतशोकपुर तामें लसे ॥ बस्त्रिब नाम
तहांका राय, करे राज सुरपति सम भाय ॥ १५ ॥ मालीने अनाबी
दयो । विपुल बुद्धि प्रभु बनमें ठयो ॥ इतनी सुनि नृप बन्दन गयो ।
दान बहुत मालीको दयो ॥ १६ ॥ है स्वामी रत्नत्रय धर्म । भोंसों
कहौ मिटै सब मर्म ॥ तब स्वामोने सब विधि कही । जो पहिले
सो प्रकाशी सहो ॥ १७ ॥ पंचामृत अभिषेक सु ठयो । पूजा प्रभुकी
कर सुख लयो ॥ जागिरनादि ठयो बहु भाय । इस विधि व्रत कर
बिस्त्रिब राय ॥ १८ ॥ भाव सहित राजा व्रत करो । धर्म प्रतीत
चित्त अनुसरो ॥ षोडश भावना भावत भयो । अन्त समाधिमरण
तिन करो ॥ १९ ॥ गोत्र तीर्थकर बांधो सार । जो त्रिभुवनमें पूज्य
अपार ॥ सर्वार्थ सिद्धि पहुंचो जाय । भयो तहां अहमेन्द्र सुभाय
॥ २० ॥ हस्त मात्र तन ऊंचो भयो । तेंतिस सागर आयु सो लयो ॥
दिव्य रूप सुखको भण्डार । सत्य निरुपण अवधि विचार ॥ २१ ॥
सौधमैन्द विचारी घरी । यच्छेभ्वर को आज्ञा करी ॥ वेग देश
निर्माण्यो जाय । थापो सुधरापुर अधिकाय ॥ २२ ॥ कुंभपुर राजा
तहां बसे । देवी प्रजावती तिस लसे धो आदिक तहां देवी भाय ।
गर्मसे सोधना कीनी जाय ॥ २३ ॥ रत्न वृष्टि नृप भांगन भई । पद्मह
मास लो बरसत गई ॥ सर्वार्थ-सिद्धिसे सुर आय । प्रजावती सुकुच्छ
उपजाय ॥ २४ ॥ मल्लिनाथ सो नामको पाय । द्वैज बन्धसम बहुत
सुभाय ॥ जब विवाह मंगल विधि भई । तब प्रभु चित विरामता

लई ॥ २५ ॥ दीक्षा धर कनमें प्रभु गये । घाति कर्म हनि निर्मल
 ठये ॥ केवल ले निर्वाण सो जाय । पूजा करो सरे सो आय ॥ २६ ॥
 यह विधान श्रेणिकने सुनो । व्रत लीने चित अपने गुणो ॥ भक्ति
 विनय कर उत्तम भाय । पहुँचे अपने गृहको आय ॥ २७ ॥ या
 बिधि जो नर नारी कही । ब्रह्मज्ञान भाषा निमंही ॥ २८ ॥

(६१) दशलक्षण व्रत कथा ।

दोहा—प्रथम वन्दि जिनराजके, शारद गणधर पांय ।

दश लक्षण व्रतकी कथा, कहूँ अगम सुखदाय ॥ १ ॥

बौपाई—विपुलाखल श्रीधोर कुवार । आये भावभंजन भरतार ॥ सुन
 भूपति तहाँ वन्दन गयो । सकल लोक मिलि आनन्द भयो ॥ १ ॥
 श्रीजिन पूजे मनधर चाव । स्तुति करी जोड़कर भाव ॥ धर्म
 कथा तहाँ सुनो विचार । दान शील तप भेद अपार ॥ ३ ॥ भव
 दुःख क्षायक दायक शर्म । भाषो प्रभू दशलक्षण धर्म ॥ ताको
 सुनि श्रेणिक रुचि धरी । गुरु गौतमसे विनती करी ॥ ४ ॥ दश-
 लक्षण व्रत कथा विशाल । मुझसे भाषो दीनदयाल ॥ बोले गुरु
 सुन श्रेणिक वन्द । दिव्य ध्वनि कहो वीर जिनेन्द्र ॥ ५ ॥ अण्ड
 धातुकी पूरव भाग । मेरुधकी दक्षिण अनुराग ॥ सीतो दाउ पकंठी
 सही । नगरी विशालाक्ष शुभ कही ॥ ६ ॥ नाम प्रीतकर भूपति
 बसे । प्रीयकरी रानी सुत लसे । मृगांकरेका सुता सुजान । मति
 शेकर नामा सो प्रधान ॥ ७ ॥ शशिप्रभा ताकी वर नार । सुता
 कामसेना निरधार ॥ राजसेठ गुणसागर जान । शील सुमद्रा नारि
 नकान ॥ ८ ॥ सुता मदनरेका तसु करी । रूपकला लक्षण सुन

भरी ॥ लक्ष्मण मद्र मामाकुनबाल । शशिरंका नारी गुणमाल ॥८॥
 कन्या तास धरे रोहनी । ये चारों वरणी गुरु तनी ॥ शास्त्र पढ़े
 गुरु पास विचार । स्नेह परस्पर बढ़ा अपार ॥१०॥ मास वसन्त
 भयो निरधार । कन्या चारों बनहि मंभार ॥ गई मुनीभर देखे
 तहां । तिनको बन्धन कोनो वहां ॥११॥ चारों कन्या मुनिसे कह्ये
 त्रिया लिङ्ग उषों छूटे सहो ॥ ऐसा व्रत उपदेशो अबे । यासे नर
 तनु पावे सबे ॥ १२ ॥ बोले मुनि दशलक्षण सार । चारों करो
 होहु भवपार ॥ कन्या बोली किम कीजिये । किस दिनसे व्रतको
 लीजिये ॥ १३ ॥ तब गुरु बोले बचन रसाल । भादों मास कहो
 गुणमाल ॥ धवल पंचमी दिनसे सार । पंचामृत अभिषेक उतार
 ॥ १४ ॥ पूजाचन कीजे गुणमाल । जिन चौबीस तनी शुभ साल ।
 उत्तम क्षमा आदि अतिसार । दशमो ब्रह्मचर्य गुणधार ॥ १५ ॥
 पुण्यांजलि इस विधि दीजिये । तीनोंकाल भक्ति कीजिये ॥ इस
 विधि दस वासर आचरो । नियमित व्रत शुभ कार्य करो ॥ १६ ॥
 उत्तम दश अनशन कर योग । मध्यम व्रत कांजो का भोग ॥ भूमि
 शयन कीजे दश राति । ब्रह्मचर्य पालो सुख पांति ॥ १७ ॥ इस
 विधि दश वर्षे जब जांय । तब तक व्रत कीजे घर भाय ॥ फिर
 व्रत उद्यापन कीजिये । दान सुपात्रोको दीजिये ॥ १८ ॥ औषधि
 अमय शास्त्र आहार । पंचामृत अभिषेकहिसार ॥ माडनों रत्नि
 पूजा कीजिये । छत्र चमर आदिक दीजिये ॥ १९ ॥ उद्यापन की
 शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजे सोय ॥ पुण्य तनो संनय
 भण्डार । परमव पावे मोक्ष सो द्वार ॥ २० ॥ तब चारों कन्या
 व्रत लिखे । मुनिवर भक्ति भाष उखि दियो ॥ वधाशक्ति व्रत

पूरण करो । उद्यापन विजिसे आचरो ॥ २१ ॥ अन्तकाल वे कन्या
 चार । सुमिरण करो पञ्च नवकार ॥ चारों मरण समाधि सु कियो ।
 दशवें स्वर्ग जन्म तिन लियो ॥ २२ ॥ षोडस सागर आयु प्रमाण ।
 धर्म ध्यान सेवें तहां जान ॥ सिद्ध क्षेत्रमें कर विहार । क्षायक
 सम्यक उदय अपार ॥ २३ ॥ सुभग अवन्ती देश विशाल । उज्जै-
 नी नगरो गुणमाल ॥ स्थूलभद्र नामा नरपतो । रानी चार सो अति
 गुणवती ॥ २४ ॥ देव गर्भमें आये चार । ता रानीके उदर मन्धार
 प्रथम सुपुत्र देवप्रभु भयो । दूजो सुत गुणचन्द्र भाषियो ॥ २५ ॥
 पद्मप्रभा तीनों बलवीर । पद्म स्वारथो चौथो धीर ॥ जन्म महो-
 त्सव तिनको करो । अशुभ दोष ग्रह दोनो हरो ॥ २६ ॥ निकल
 प्रभा राजाकी सुता । ते चारो परणी गुण युता ॥ प्रथम सुता सो
 ब्राह्मी नाम । दुतिय कुमारी सो गुणधाम ॥ २७ ॥ रूपवती तोजी
 सुकुमाल । मृगाक्ष चौथी सो गुणमाल ॥ करो व्याह घर को
 आइयो । सकल लोक घर आनन्द कियो ॥ २८ ॥ स्थूलभद्र राजा
 इक दिना । मोग विरक्त भयो भव तना ॥ राजपुत्रको दीनो सार ।
 बनमें जाय योग शुभ धार ॥ २९ ॥ तपकर उपजो केवल ज्ञान ।
 वसु विधि हनि पायो निर्वाण ॥ अब वे पुत्र राजको करें । पुण्यका
 फल पावें ते घर ॥ ३० ॥ चारों बांधव चतुर सुजान । अहि
 निशि धर्म तनो फल मान ॥ एक समय विरक्त सो भये । आत्म
 कायं चिन्तवत ठये ॥ ३१ ॥ चारों बान्धव दिक्षा लई । बनमें
 जाय तपस्या ठई ॥ निज मनमें चिद्रपाराधि । शुद्ध ध्यानको पायो
 साधि ॥ ३२ ॥ सर्व विमल केवल ऊनो । सुख अमृत तबही
 सो ठनो ॥ करो महोत्सव देव कुमार । जय जब सन्द सबो तिहि

बार ॥ ३३ ॥ शेष कर्म निर्वल तिन करे । पडुंछे मुक्तिपुरीमें करे ।
अगम अगोचर भव जल पार । दशलक्षण व्रतके फल सार
॥ ३४ ॥ वीर जिनेश्वर कही सुजान । शीतल जिनके बाड़े मान ।
गौतम गणधर भाषी सार । सुनि श्रेणिक आये दरबार ॥ ३५ ॥
जो यह व्रत नरनारो करे । ताके गृह सम्पति अनुसरे ॥ भट्टारक
श्री भूषण वीर । तिनके चेला गुण गम्भीर ॥ ३६ ॥ ब्रह्मज्ञान
सागर सुविचार । कही कथा दशलक्षण सार ॥ मन बचतन व्रत
पाले जोह । मुक्ति बारांगणा भोगे सोह ॥ ३७ ॥ सम्पूर्ण ।

(६२) मुक्तावली व्रत कथा ।

दोहा—ऋषभनाथके पद नमों, भवि सरोज रवि जान ।

मुक्तावलि व्रतकी कथा, कहूं सुनो धर ध्यान ॥ १ ॥

चौपाई—मगध देश देशोंमें प्रधान । तामें राजगृह शुभ धान ॥ राज्य
करे तहां श्रेणिकराय । धर्मवन्त सबको सुखदाय ॥ २ ॥ ता गृह
नारि चेलना सती । धर्म शील पूरण गुणवती ॥ एक दिन समो-
शरण महावीर । आयो विपुलान्वल पर धीर ॥ ३ ॥ सुन नृप
अत्यानन्दित भयो । कुटुम्ब सहित बन्दनको गयो ॥ पूजा कर बैठो
सुख पाय । हाथ जोड़ कर अर्ज कराय ॥ ४ ॥ हे प्रभु मुक्ता-
वलि-व्रत कहो । यह कर कौन क्या फल लहो ॥ तब गौतम बोले
हर्षाय । सुनो कथा मुक्तावलिराय ॥ ५ ॥ याही जम्बूद्वीप मंभार ।
भरत क्षेत्र दक्षिण दिशि सार ॥ अङ्गदेश सोहै रमनीक । नगर
कसे सम्पापुर ठीक ॥ ६ ॥ नगर मध्य एक ब्राह्मण कसे । नाम
सोम शर्मा तसु लसे ॥ ता गृह एक सुता जो भई । योवन मध

कर पूरन छई ॥ ७ ॥ एक दिन देखे श्रीगुरु जबे । नम्र नात सो
 निन्दे तबे ॥ अति छोटे दुर्बचन कहाय । बहुत ही ग्लानि चित्तमें
 लाय ॥ ८ ॥ ताकरि महा पाप बांधियो । अवधि व्यतीते मरण जु
 कियो ॥ नरक जाय माना दुःख सहे । छेदन भेदन जाय न कहे
 ॥ ९ ॥ मरक आयु पूरी कर जोइ । भव भ्रमि द्विज गृह पुत्री होइ ।
 निर्जामिका पड़ा तिस माम । अति दुर्गंधा देह निकाम ॥ १० ॥
 कोई द्विग भखे नहीं तहाँ । क्रमकर बड़ो भई सो वहाँ ॥ अन्न
 पानकर दुःखित महा । भूठन भखे कष्ट अति लहा ॥ ११ ॥ एक
 दिवस देखे मुनिराय । कर प्रणाम बिनवे शिर नाय ॥ कौन पाप
 मैं कीनों देख । मैं पायो अति दुःख अमेव ॥ १२ ॥ तब मुनिवर
 पूरव भव कहे । गुरुकी निन्दासे दुःख लहे । तब दुर्गंधा जोड़े
 हाथ । ऐसा व्रत दीजे मोहि नाथ ॥ १३ ॥ यासे रोग शोक सब
 जाय । उत्तम भव पाऊँ गुरुराय ॥ तब श्रीगुरु बोले हर्षाय । मुक्ता-
 वली करौ मन लाय ॥ १४ ॥ तासे सब पाप जर जाय । सुख
 सम्पत्ति मिले अधिकाय ॥ तब दुर्गंधा कहे विचार । कौन मांति
 कीजे व्रत सार ॥ १५ ॥ तब मुनिवर इम वचन कहाय । सुनो
 भेद व्रतका चित लाय ॥ भादों सुदी सप्तम दिन होइ । ता दिन
 व्रत कीजे भवि लोइ ॥ १६ ॥ प्रात समय जिन मन्दिर जाय ।
 पूजा कथा सुनो मन लाय ॥ सब आरम्भ तजो दिन मान ।
 संयम शील सजो गुणखान ॥ १७ ॥ मोर भये जिन दर्शन करो ।
 शुद्ध भसव कीजे तब करो ॥ दुजो व्रत पूर्ववत् करो । अश्विन
 यदि छठि पापनि हरो ॥ १८ ॥ तीजो व्रत कीजे उर धीर । अश्विन
 यदि केरसि सुखकार ॥ कर उपवास पालो गुण रसी । चौथी

अजिब सुदी ग्यारसी ॥१८॥ पञ्चम व्रत कीजे मन लाय । कार्तिक
 वदी बारसि सुखदाय ॥ फिर छठवां उपवास सुजान । कार्तिक
 शुक्ल तीज गुणखान ॥ २० ॥ सप्तम व्रत जिनबरने कहो । कार्तिक
 सुदि ग्यारसि शुभ लहो ॥ फेर करो अष्टम व्रत लोय । मार्गसिर बदि
 ग्यारसि अब होय ॥ २१ ॥ नवमों व्रत मार्ग सुदी तीज । ये व्रत धर्म
 वृक्षके बीज ॥ या विधि करौ नव वर्ष प्रमान । मन बच कस्य
 शुद्धता ठान ॥ २२ ॥ जब व्रत पूरण होय निदान । उद्यापन कीजे
 गुणखान ॥ श्रीजिनवर अमियेक कराय । करो माइनों जिनगृह
 जाय ॥ २३ ॥ अष्ट प्रकारी पूजा करो । जन्म २ के पातक हरो ॥
 यथाशक्ति उपकरण बनाय । श्रीजिन धाम खड़ावो जाय ॥ २४ ॥
 उद्यापनकी शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥ सब विधि
 सुन दुर्गंधा बाल । मन बच तन व्रत लीनो हाल ॥ २५ ॥ गुरु
 भाषित तिन वृत्त ये कियो । पूर्व भव अब पानी दियो ॥ ता फल
 नारि लिङ्ग छेदियो । सौधर्म स्वर्ग देव सो भयो ॥ २६ ॥ तहां
 आयु पूरण कर सोय । चलत भयो मथराको लोय ॥ श्रीधर राजा
 राज करन्त । ताके सुत उपजो गुणवन्त ॥ २७ ॥ नाम पञ्चरथ
 पंडित भयो । एक दिवस बन क्रीड़ा गयो ॥ गुफा मध्य मुनिवर
 को देख । बन्दन कर सुन धर्म विशेष ॥ २८ ॥ तहां पूछ मुनि-
 वरसी सोय । तुमसे अधिक प्रसा प्रभु कोय ॥ तब मुनिवर बोले
 सुन बाल । वांसपूज्य दिन दीप्त विशाल ॥ २९ ॥ चरपापुर राज
 जिनराज । तेज पुत्र प्रभु धर्म जहाज ॥ यह सुन धर्म विवे क्षित
 दयो । समोशरण जिन बन्दन गयो ॥ ३० ॥ नमस्कार कर दीक्षा
 लई । तप कर गणधर पदवी भई ॥ अष्ट कर्म इस विधिसे जाई ॥

पहुँचो शिवपुर सिद्ध मंकार ॥ ३१ ॥ कबो भव्य व्रतका सो
प्रभाव । राज भोगि भयो शिवपुर राय ॥ जो नर नारि करे व्रत
सार । सुर सुख लहि पावे भव पार ॥ ३२ ॥

(६३) पुष्पांजलि व्रत कथा ।

दोहा—वीर देवको प्रणमि कर, अर्चा करों त्रिकाल ।

पुष्पांजलि व्रतकी कथा, सुनो भव्य अधटाल ॥

चौपाई—पर्वत विपुलाचलपर आय । समोशरण जिनवरका पाय ।
तहां सुन राजा श्रेणिकराय । बन्दन चले प्रियायुत भाय ॥ २ ॥
बन्दन कर पूछे नृप तबे । हे प्रभु पुष्पांजलि व्रत अबे ॥ मोसे कहो
करों चित लाय । कोने करो कहा भई आय ॥ ३ ॥ बोले गौतम
वचन रसाल । जम्बू द्वीप मध्य सो विशाल । सीता नदी दक्षिण
दिशि सार । मंगलावती सुदेश अपार ॥ ४ ॥

दोहा—रत्न संचयपुर तहां, वज्रसेन नृप आय ।

जयवंती बनिता लसे, पुत्र बिहानी थाय ॥ ५ ॥

चौपाई—पुत्र चाह जिन मन्दिर गई । ज्ञानोदधि मुनि बंदिता भई ॥

हे मुनिनाथ कहो समझाय । मेरे पुत्र होइके नाय ॥ ६ ॥

दोहा—मुनि बोले हे वालकी, पुत्र होय शुभ सार । भूमि छह खंड
सुसाधि है, मुक्ति तनो भरतार । ७ ॥ सुनके मुनिके वचन तब, उपजो
हर्ष अपार । क्रमसे पूरे मास नव, पुत्र भयो शुभ सार ॥ ८ ॥ चौबन
वयस सो पायके, क्रोडा मण्डप सार । तहां व्योमसे आइयो जग
भूप रति सवार ॥ ९ ॥ रत्नशेखरको देखकर, बहुल प्रीति ऊर माहि ।
मेखवाहनने पांच सो, विद्या दीनीं ताहि ॥ १० ॥

चौपाई - दोनों मित्र परस्पर प्रीति । गये मेढ बन्धन तज मीति ॥
 सिद्धकुट चेत्यालय बन्दि । आये पंचपिता आमन्दि ॥११॥ ताकी खबी
 जनाई सार । वेग खयम्बर करो तयार ॥ भूरि भूप आये तत्काल
 माल रत्नशेखर गल डाल ॥१२॥ धूमकेत विद्याधर देख । क्रोध
 कियो मन माहि विशेष ॥ कन्या काज दुष्टता धरी । विद्या बल
 बहुमाया करी ॥१३॥ रत्नशेखरसे युद्ध सो करो । बहुत परस्पर
 विद्या धरो । जीतो रत्नशेखर तिस बार । पाणि ग्रहण कियो व्यवहार
 ॥१४॥ मदन मजूषा रानी सङ्ग । आयो अपने ग्रेह असंग ॥ बज्रसेनको
 कर नमस्कार । मात तात मन सुखस्य अपार ॥१५॥ एक दिना मन्दिर
 गिर योग । पहुँचे मित्र सहित सब लोग ॥ चारण मुनि बंदे तिहि
 बार । सुनो धर्म चित मयो उदार ॥१६॥ हे मुनि पूर्व जन्म सम्बन्ध
 तीनोंके तुम कहो निबन्ध ॥ तब मुनि कहें सुनो चित धार । एक
 मृणालनगर सुखकार ॥१७॥ नृप मंत्री एक तहां श्रुति कीर्ति । बन्धु
 मती बनिता अति प्रीति ॥ एक दिना बन क्रोडा गयो । नारी संग
 रमत सो भयो ॥१८॥ पापी सर्प सो मक्षण करी । मंत्री मृतक लक्ष्मी
 निज नरी ॥ भयो धिरक जिनालय जाय । दिक्षा लोनी मन हर्षाय
 ॥१९॥ यथाशक्ति तप कुछ दिन करो । पीछे भृष्ट मयो तप टरो ॥
 गृह आरम्भ करन चित ठनो । तब पुत्री मुख ऐसे मनो ॥२०॥ तब
 जो मेढ बढो किहि काज । फिर भव सिंधु पड़े तज लाज ॥ यों
 सुन प्रभावती बच सार । मंत्री कोप कियो अधिकार ॥२१॥ तब
 विद्याको आज्ञा करी । पुत्रीको ले घरमें धरी ॥ विद्या जब घरमें छे
 गई । प्रभावती मन चिन्ता भई ॥२२॥ अखंत भक्ति चित्तमें धरी ।
 तब विद्या फिर आई धरी ॥ हैं पुत्री तेरा चित जहां । वेग बोल

पहुँचाऊँ तहाँ ॥२३॥ पुत्रो कही कैलाशके भाव । जिव दर्शनको अधिक ही चाह ॥ पूजा करके बैठो वहाँ । पद्मावती आई सो तहाँ ॥२४॥ इतने मध्य देव आइयो । प्रभावती से पूछत भयो ॥ हे देवी कहिये किस काज । आये देवी देव सो भाज ॥२५॥ पद्मावती बोली सब सार । पुष्पांजलि व्रत है सुअधार ॥ भावों मास शुक्ल पंचमी । पंच दिवस आरम्भ न अमी ॥२६॥ प्रोषध यथा शक्ति व्यवहार । पूजो जिन सोबीसी सार ॥ नामा विधिके पुष्प जो लाय । करी एक माला जो बनाय ॥२७॥ तीन काल वह माला दैय ॥ बहुत भक्तिसे विनय करेय । जपो जाप शुभ मंत्र विचार । या विधि पंच वर्ष अवधार ॥२८॥ उद्यापन कीजे पुनि सार । चार प्रकार दान अधिकार ॥ उद्यापनकी शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजे लोय ॥२९॥ यह सुन प्रभावती व्रत लयो । पद्मावती कृपाकर द्यो ॥ स्वर्ग मुक्ति फलका दातार । है यह पुष्पांजलि व्रतसार ।

बोहा—पद्मावती उपदेशसे, लीना व्रत शुभ सार,

पृथ्वी परसो प्रकाशिके, कियो भक्ति चित धार ॥३१॥

तप विद्या श्रुत कीर्तिने, पाई अति जो प्रचण्ड ।

पद्मावती व्रत खंडने, आई सो बलबंड ॥३२॥

बौपाई—बासर तीन व्यतीते जबे । पद्मावति पुनि आई तबे ॥ विद्या सब भागी तत्काल । करो सन्यास मरण तिल बाल ॥३३॥ कल्प सोलह्व मुख्य सो जान । देव भयो सो पुण्य प्रमाण ॥ तहाँ देवने कियो विचार । मेरा तात भ्रष्ट आचार ॥ मैं सम्बोधों बाकों अवे । उत्तम गति वह पावे तबे ॥ यही विचार देव आइयो । मरण सन्यास तातको कियो ॥३५॥ बाही स्वर्ग भयो सो देव । पुण्य प्रभाव लयो

फल एव ॥ वन्द्युमती माताका जीव । उपजा ताही स्वने मतीव ॥३६॥

बोहा—प्रभावतीका जीव तू रत्नशेखर भयो भाय ।

माताका जो जीव है, मदन मजूषा घाय ॥३७॥

श्रुतिकीर्तिको जोव जो तहाँ । मन्दी मेघ बाहन है यहाँ ॥ ये तीनोंके सुन पर्याय । भई सो किन्ता अङ्ग न माय ॥३८॥ सुन व्रत फल अस गुरुको घानि । भयो सुचित व्रत लीनों जानि ॥ अपने यान बहुरि आइयो । चक्रवर्ति पद भोग सु कियो ॥३९॥ समय पाय वैराग सो भयो । राज भार सब सुतको द्यो ॥ त्रिगुति मुनिके चरणों पास । दिक्षा लीनी परम हुलास ॥४०॥ रत्नशेखर दिक्षा ली जवे । भये मेघबाहन मुनि तवे ॥ भवि जीवोंको अति सुखकार केवल ज्ञान उपाजों सार ॥४१॥ घाति कर्म निर्मूल सु करे । पाछे मुक्तिपुरी अनुसरे ॥ या विधि व्रत पाले जो कोई । अजर अमर पद गावे सोई ॥४२॥ ॥ श्रीपुष्पांजलि व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

(६४) नन्दीश्वर व्रत कथा ।

बोहा—चरण नमों जिनरायके, जाते दुरित नशाय ।

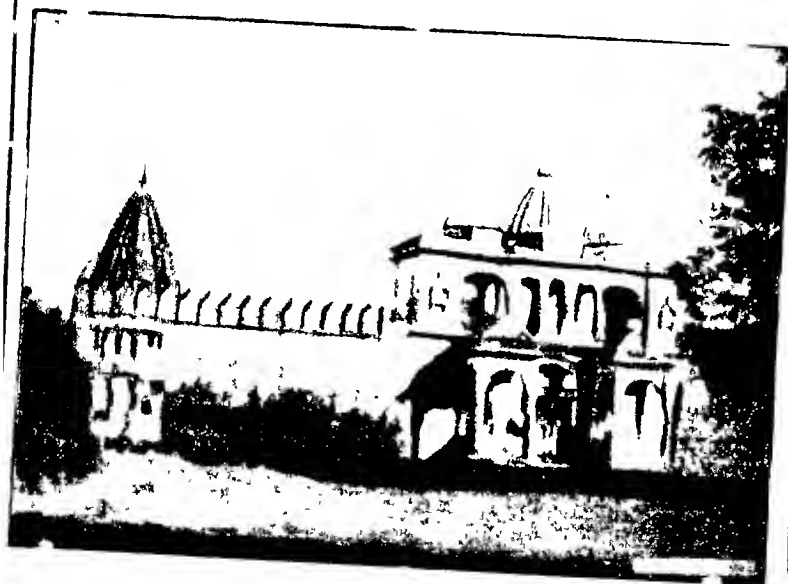
शारद चन्दों भाषसे, सद्गुरु सदा सहाय ॥१॥

जंबूदीप सुदर्शन मेरु । रहो ताहि लवणोदधि घेर ॥ मेरुसे दक्षिण भारत क्षेत्र । मात्र देश सुख सम्पति हेतु ॥ २ ॥ राजगृह जगरी शुभ बसे । गढ़ मठ मंदिर सुन्दर लसे ॥ श्रेणिक राज करे सुप्रसन्न । जिन लीनों अरिगण पर दंड ॥ ३ ॥ पटरानी खेलना सुजान । सदा करे जिन पूजा दान ॥ सभा मध्य बैठो सो जाय । बनमाली मिर नाचो आय ॥४॥ दो कर जोड़ करे सो सेव । विपुलाचल भाये

जिनदेव ॥ बद्ध मानको आमाम सुनो । जन्म सुफल चिन अपने सुनो
 ॥५॥ राजा रानी पुरजन लोग । बन्धन चले पूजने योग ॥ चलत
 चलत सो पहुँचे तहां । समीक्षण जिनबरका जहां ॥६॥ दे प्रदक्षिणा
 भीतर गये । बद्ध मानके खरणों नये ॥ पुनि गणधरको कियो प्रणाम ।
 हर्षित चित्त मया अमिराम ॥७॥ दश विधि धर्म सुने जिन पास ।
 जसो मयो चित्तका त्रास ॥ दोकर जोड़ नृपति बीनयो । अति प्रमोद
 मेरे मन मयो ॥८॥ प्रमुदयाल अब रुपा करेव । अत नंदीधर
 कहो जिन देव ॥ अरु सब विधि कहिये समभाय । भाव सहित
 यों पूछो राय ॥९॥ अवधि ज्ञान धर मुनिवर कहें । कौशल देश स्वर्ग
 सम रहें ॥ ताके मध्य अयोध्यापुरी । धनकण सुखी छत्तासो कुरी
 ॥१०॥ तिहिपुर राज करे हरसेन । त्याग तेग बल पूरण सेन । वंश
 इक्ष्वाक प्रगटे चक्रवे । ताकी आनि खण्ड घट चवे ॥११॥ पाट बन्ध
 रानी नृप तीन । गन्धारी जेठी गुण लीन ॥ प्रिय मित्रा रुपाश्री
 नाम । साबे धर्म अर्थ अरु काम ॥१२॥ सुखसे रहत बहुत दिन भये ।
 ऋतु बसन्त वन राजा गये ॥ जल क्रीड़ा बन क्रीड़ा करें । हास्य
 विलास प्रीति अनुसरें ॥१३॥ ता बन मध्य कल्पद्रुम मूल । चन्द्र
 कांति मणि शिलानुकूल ॥ मण्डप लता अधिक विस्तार । चारण
 मुनि आये तिहि वार ॥१४॥ आरिजय अमितजय नाम । सोम दयालु
 धर्मके धाम ॥ राजा रानी पुरजन नारि । देखे मुनि तिन दृष्टि पसारि
 ॥१५॥ सब नर नारि आनन्दित भये । क्रीड़ा तज मुनि बन्धन
 गये ॥ त्रिया पुरुष खरणों अनुसरें । मष्ट द्रव्य मुनि पूजे करे ॥१६॥
 धर्म ध्यान कहो मुनिराय । अज्ञा सहित सुनो कर भाय ॥ राजा
 प्रश्न करी मुनि पास । सुनो धर्म मयो चित्त हुलास ॥१७॥ दक्ष-



सिद्धक्षेत्र श्रीसोनागिरजो ।



सिद्धक्षेत्र श्रीरामटेकजी ।



सिद्धक्षेत्र मुक्तागिरीजी ।



सिद्धक्षेत्र श्रीमांगीतुंगीजी ।

बल सहित सम्पदा धनी । और भूमि षट् खंड जु तनी ॥ महा-
पुण्य जो यह फल होय । गुरु बिन ज्ञान न पावे कोय । १८ । बार
बार बिनवे कर सेव । पूर्व कही भावान्तर देव ॥ अवधिज्ञान बल
मुनिवर कहै । पर अहिक्षेत्र बनिक इक रहै ॥ सुखित कुवेर मित्रता
नाम । साथे धर्म अर्थ अरु काम ॥ जेष्ठ पुत्र श्रीवर्मा कुमार । मध्यम
जयवर्मा गुण सार । २० । लघु जयकीर्ति कीर्ति विख्यात । तीनों
शुभ आनन्दित गात ॥ एक दिवस उपजो शुभकर्म बनमें आये मुनि
सौधर्म । २१ । सेठ पुत्र मुनिवर बन्दियो । श्रीवर्मा जु अठाई लियो ॥
नन्दीश्वर व्रत विधिसे पाल । भव भव पाप पुजको जाल । २२ ।
अन्त समाधि मरणको पाय । इस पुर वज्र बाहु नृप आय ॥ ताके
चिमला रानी जान । तुम हरिसेन पुत्र भये आन । २३ । पूरब व्रत
पाले अभिराम । ताते लहो सुखको धाम ॥ जयवर्मा जयकीर्ति
वीर । निकट भव्य गुण साहस धीर । २४ । वन्दे गुरु जो धुरन्धर
देव । मन वच काय करी बहु सेव ॥ तब मुनि पञ्च अणुव्रत दियो ।
दोनों भाव सहित व्रत लिये । २५ । अरु नन्दीश्वर व्रत तिन लियो ।
अन्त समाधि मरण तिन कियो ॥ हस्तनागपुर शुभ जहां बसे ।
तहां चिमल वाहन नृप लसे । २६ । ताके नारि श्रीधरा नाम । आ-
रिअय अमितअय धाम ॥ पुत्र युगुल हम उपजे तहां । पूर्व पुण्य
फल पायो जहां । २७ । गुरु समीप जिन दिक्षा लई । तप बल चारण
पदवी भई ॥ यासे हम तुम पूरब व्रत । वेकत प्रेम ऊपजो गात ।
॥ २८ ॥ पूर्ब व्रत नन्दीश्वर कियो । ताते राज चक्र पद लियो ॥
अब फिर व्रत नन्दीश्वर करो । ताते अब स्वर्ग मुक्ति पदपदो
। २९ । तब हरिसेन कहे कर जोर । व्रत नन्दीश्वर कहो सहोर ॥

मुनिवर कहैं द्वीप आठमो । तास नाम नन्दीश्वर नमो ॥३०॥ ताके
 चहुं दिश पर्वत परे । अञ्जन दधिमुख रतिकर धरे ॥ तेरह तेरह
 दिश दिश जान । ये सब पर्वत बावन मान ॥३१॥ पर्वत पर्वत
 पर जिन प्रेह । वह परिमाण सुनो कर नेह ॥ सौ योजन ताका
 आयाम । अरु पचास विस्तार सुताम ॥३२॥ उन्नति है योजन
 पञ्चीस । सुर तहां आय नवावें शीस ॥ अष्टोत्तर सौ प्रतिमा
 जान । एक एक चैत्यालय मान ॥३३॥ गोपुर मणिमयके सुप्रकार ।
 छत्र चमर ध्वज बन्दनवार ॥ प्रातिहार्य विधि शोभा भली । तिन
 रवि कोटि सोम छबि छली ॥३४॥ तास द्वीपमें सुरपति आय ।
 पूजा भक्ति करे बहु भाय ॥ देव अवतो व्रत तहां करे । भाव
 भक्ति कर पातक हरे ॥३५॥ तास द्वीप सम्यन्धो सार । व्रत
 नन्दीश्वरको अधिकार । यहां कइ जिनवर सुप्रकाशि । आदि
 अनादि पुण्यकी राशि ॥३६॥ जो व्रत भव्य भावसे करे । ते
 भव जन्म जरामय हरे ॥ ता व्रतको सुनये अधिकार । वर्ष २ में
 त्रय २ बार ॥ ३७ ॥ आषाढ़ कार्तिक अरु जो फाग । शाखा तीन
 करो अनुराग ॥ आठों दिन आठें पर्यन्त । भक्ति सहित कीजे व्रत
 सन्त ॥३८॥ सातेको एकासन करो । यथा समय जिनवर मन धरो ।
 आठेंके दिन कर उपवास । जासे छूटे कर्मका त्रास ॥३९॥ करो
 प्रथम जिनका अभिषेक । जाते पातक जाय अनेक ॥ अष्ट प्रकारी
 पूजा करो । मुख परमेष्टि पञ्च उच्चरो ॥ तादिन व्रत नन्दीश्वर
 नाम । ताका फल सुनियो अमिराम ॥ फल उपवास लक्ष दश
 जान । श्रीजिनवरने कतरो बखान ॥४१॥ दूजे दिन जिन पूजा करो ।
 पात्र दान ते पातक हरो ॥ अष्ट त्रिभूति नाम दिन सोय । ता दिन

एकासन कर लोय ॥४२॥ फल उपवास सहस्र दश होइ । अब
 तीजो दिन सुनिये लोइ जिन पूजा कर पात्रहि दान । भोजन पानी
 भात प्रमान ॥४३॥ नाम त्रिलोकसार दिन कहो । साठ लाख प्रोषध
 फल लहो ॥ चतुर्थ दिन कर आमौदर्य । नाम चतुर्मुख दिनसोहर्य
 ॥४४॥ तहां उपवास लक्ष फल होइ । पञ्चम दिन विधि करियो
 सोइ ॥ जिन पूजा एकासन करो । हय लक्षण जु नाम दिन धरो
 ॥ ४५ ॥ फल चौरासी लक्ष उपास । जासे जाय भ्रमण भव
 नास ॥ षष्ठम दिन जिन पूजा दान । भोजन भात आमिली पान
 ॥ ४६ ॥ ता दिन नाम स्वर्ग सोपान । व्रत चालीस लक्ष फल
 जान ॥ सप्तम दिन जिन पूजा दान । कीजे भविजनका सन्मान
 ॥ ४७ ॥ सब सम्पति नाम दिन सोइ । भोजन भात त्रिवेली
 होय ॥ फल उपवास लक्षकों जान । अष्टम दिन व्रत चितमें
 आन ॥ ४८ ॥ कर उपवास कथा रुचि सुनो । पात्र दान दे
 सुकृत गुनो ॥ इन्द्रध्वजवृत दिन तस नाम । सुमिरो जिनवर
 आठों जाम ॥४९॥ तीन करोड़ अति लाख पचास । यह फल होय
 हरे सब त्रास ॥ यह विधि आठ वर्षमें होइ । भाव सहित कीजे
 भवि लोइ ॥५०॥ उत्तम सात वर्ष विधि जान । मध्यम पांच तीन
 लघु मान ॥ उद्यापन विधि पूर्वक सचो । वेदी मध्य माडनो रचो
 । ५१ । जिन पूजारु महा अभिषेक । चन्द्रोपम ध्वज कलश अ-
 नेक ॥ छत्र चमर सिंहासन करो । बहुविधि जिन पूजा अघ हरो
 ॥५२॥ चारों दान सुपात्रहि देउ । बहुत भक्ति कर विनय करेउ ।
 बहु विधि जिन प्रमायना होइ । शक्ति समान करो भवि लोइ
 ॥५३॥ उद्यापनकी शक्ति न होय । तो दूनो व्रत कीजे लोइ ॥ जिन

यह व्रत कीमो अमिराम । तिन पद लयो सु कलको घाम । ५४ ।
 यह व्रत पूर्व महा फल लियो । प्रथम श्रवण जिनवरने कियो ॥
 अनन्तवीर्य अपराजित पाल । चक्रवर्त्ति पदवी भई हाल । ५५ ।
 श्रीपाल मैना सुन्दरी । व्रत कर कुष्ट व्याधि सब हरी ॥ बहुतक
 नर नारी व्रत करो । तिन सब अजर अमर पद धरो । ५६ ।
 सुनो विधानराय हरसेन । अति प्रमोद मुख जंपे बेन ॥ सब परि-
 वार सहित व्रत लयो । मुनिवर धर्म प्रीतिकर दयो । ५७ । व्रत
 कर फिर उद्यापन करो । धर्म ध्यान कर शुभ पद धरो ॥ अन्त
 समाधिमरणको पाय । भयो देव हरसेन सुराय । ५८ । पर्या-
 यान्तर जैहैं मुक्ति । श्रैणिक सुनो सकल व्रत युक्ति ॥ गौतम कहो
 सकल अधिकार । सुनो मगधपति चित्त उदार । ५९ । जो नर
 नारी यह व्रत करें । निश्चय स्वर्ग मुक्ति पद धरैं ॥ संकट रोग
 शोक सब जाहिं । दुःख दरिद्रता दूर बिलाहिं । ६० । यह व्रत
 नन्दीश्वरकी कथा । हेमराज सु प्रकाशी यथा ॥ शहर इटावा उत्तम
 स्थान । श्रावक करें धर्म शुभ ध्यान । ६१ । सुने सदा ये जैन
 पुराण । गुणीजनोंका राखैं मान । तिहिठा सुना धर्म सम्बन्ध ।
 कीनी कथा चौपाई बंध । ६२ । कहैं सुनें देवें उपदेश । लहैं
 भावसे पुण्य अशेष ॥ जाके नाम पाप मिट जाय । ता जिनवरके
 बन्दों पाय ॥ ६३ ॥ श्रीनन्दीश्वर व्रत कथा सम्पूर्णम् ॥

(६६) निशिभोजन कथा ।

दोहा—नमों सारदा सार बुध, करें हरें अघ लेप ।

निशि भोजनभुंजकी कथा, लिखू सुगम संक्षेप ॥ १ ॥

जंबूदीप जगत विख्यात । भरत खंड छवि कहिय न जात ॥
तहां देश कुय जांगल नाम । इस्तनागपुर उत्तम ठाम ॥ यशो
भद्र भूपत गुण वास । खूबच द्विज प्रोहित तास ॥ अश्वमास
तिथि दिन आराध । पहिली पड़वा कियो सराध ॥ बहुत बिनय
सों नगरी तने । न्योत जिमाये ब्राह्मण घने ॥ दान मान सबहीकों
दियो । आप विप्र भोजन नहि कियो ॥ इतने राय पठायो दास ।
प्रोहित गयो रायके पास ॥ राज काज कछु ऐसो भयो । करम
करावत सब दिन गयो ॥ घरमें रात रसोई करी । चुल्हें ऊपर
हांड़ी धरी ॥ हींग लैन उठि बाहर गई । यहां विधाता औरहीठई ।
मैंडक उछल परो ता माहि । त्रिया तहां कछु जानो नाहि । वेंगन-
छोंक दिये तत्काल । मैंडक मरो होय बेहाल ॥ तबहुं विप्र नहि
आयो धाम । धरी उठाय रसोई ताम ॥ पराधीनकी ऐसी बात ।
औसर पायो आधी रात ॥ सोय रहे सब घरके लोग । आग न
दीवा कर्म संयोग ॥ भूखो प्रोहित निकसे प्रान । ततछिन बैठो
रोटी खान ॥ बेगन भोले लीनो घ्रास मैंडक मुंहमें आयो तास ॥
दांतन चले चबा नहि जबै । काढ़ धरो थालीमें तब ॥ प्रात हुए
मैंडक पहिचान । तौ भी विप्र न करी गिलान ॥ तिथि पूरो कर
छोड़ी काय । पशुकी योनी उपजो आय ॥

सोरठा छन्द—१ घुघू २ काग ३ विलाव, ४ साधर ५ गिरध्र
पखेदधा । ६ सूकर ७ अजगर माध, ८ घाघ ९ गोह जलमें १०
मगर । दश भव इहि विधि थाय, दसों जन्म नरकहि गयो ।
दुर्गति कारण पाय, फली पाप बट बीजवत् ।

दोहा—निशि भोजन करिये नहीं, प्रगट दोष अविलोय ।

परमवसब सुख संपजो यह भव रोग न होय ॥

छप्पय (छन्द)

कोड़ी बुध बल हरे, कम्प गद करे कसारी । मकड़ी कारण .
पाय कोढ़ उपजे दुख भारी । जुआं जलोदर जने फांस गल विधा
बढ़ावे । बाल सबे सुरभंग बमन माखी उपजावे ॥ तालुवे छिद्र बीहू
भखत और व्याधि बहुकरहि सब । यह प्रगट दोष निश असनके
परमव दोष परोक्ष फल ॥

जो अघ इहि भव दुख करे, परभव क्यों न करेय । डसत सांप
पीड़े तुरत, लहर क्यों न दुख देय । सुवचन सुन डाहारजै, मूरख
मुदित न होय । मणिधर फण फेरे सही, नहीं सांप नहीं होय ॥
सुवचन सत गुरुके वचन, और न सुवचन कोय । सत गुरु वही
पिछानिये, जा उर लोम न होय ॥५॥ भूधर सुवचन सांभलो, स्वपर-
पक्ष कर बौन । समुद्र रेणुका जो मिले, तोड़े तें गुण कौन ॥ इति

(६७) श्रीरविव्रत कथा

चौपाई—श्रीसुखदायक पार्सेजिनेश । सुमति सुगति दाता परमेश ॥
सुमिरों शारद पद अरिवृन्द । तिनकर व्रत प्रगटो सानंद ॥१॥
वाणारस नगरी सुविशाल । प्रजापाल प्रगटो भूपाल ॥ मतिसागर
तहां सेठ सुजान । ताका भूप करे सन्मान ॥ २ ॥ तासु त्रिया
गुणसुन्दरि नाम । सात पुत्र ताके अमिराम ॥ षट् सुत भोग
करें परणीत । बाल रूप गुण धर सुविनीत ॥ ३ ॥ सहस्रकूट
शोभित जिन धाम । आये पति पति खंडित काम ॥ सुनि मुनि
आगम हर्षित भये । सर्व लोग बन्दनको गये ॥ ४ ॥ गुरु वाणी
सुनिके गुणबती । सेठिन तब जो करी बीमती ॥ ५ ॥ करुणा-

निधि भार्ये मुनिराय । सुनो मध्य तुम चित्त लगाय ॥ अब
 आषाढ सुदि पक्ष विचार । तब कीजै अंतिम रविवार ॥ ६ ॥
 अनशन अथवा लघु आहार । लवणादिक जो करे परिहार ॥
 नवफल युत पंचामृत धार । वसु प्रकार पूजो भवहार ॥ ७ ॥
 उत्तम फल इक्यासी जान । नवध्रावक घर दीजो आन ॥ या
 विधि करो नव वर्ष प्रमाण । याते होय सर्व कल्याण ॥ ८ ॥
 अथवा एक वर्ष एक सार । कीजै रविव्रत मनहिं विचार ॥
 सुन साहुन निज घरको गई । व्रत निन्दासे निन्दित भई ॥ ९ ॥
 व्रत निन्दासे निर्धन भये । सात पुत्र अयोध्यापुर गये ॥ तहां
 जिनदत्त सेठ गृह रहे । पूर्वं दुःकृतका फल लहैं ॥ १० ॥ मात
 पितां गृह दुःखित सदा । अवधि सहित मुनि पूछे तदा ॥ दया-
 वन्त मुनि ऐसे कहो । व्रत निन्दासे तुम दुःख लहो ॥ ११ ॥ सुन
 गुरु वचन बहुरि व्रत लयो । पुण्य कियो घरमें धन भयो ॥ भवि-
 जन सुनो कथा सम्बन्ध । जहाँ रहते थे वे सब नन्द ॥ १२ ॥ एक
 दिवस गुणधर सुकुमार । घास ले आये गृह द्वार ॥ क्षुधा वन्त
 भावज पे गयो । दंत बिना नहिं भोजन दयो ॥ १३ ॥ बहुरि गये
 जहां भूलों दन्त । देखो तासे अहि लिपटन्त ॥ फणिपतिकी तहां
 विनती करी । पद्मावति प्रगटी सुंदरी ॥ १४ ॥ सुन्दर मणि-
 मय पारसनाथ । प्रतिमा पंचरत्न शुभ हाथ ॥ देकर कहो कुंवर
 कर भोग । करो क्षणक पूजा सयोग ॥ १५ ॥ आनखिं ब निज घरमें
 धरो । तिहकर तिनको दाखि हरो ॥ सुख बिलास सेबे सब
 नन्द । निन प्रति पूजों पार्स जिनेन्द्र ॥ १६ ॥ साकेत नगरी
 अमिराम । जिन प्रसाद राचा शुभ धाम ॥ करी प्रतिष्ठा पुण्य

संयोग । आये भविजन संग सो लोग ॥ १७ ॥ संघ चतुर्विधिको
 सन्मान । कियो दियो मन वांछित दान ॥ देख सेठ तिनकी
 सम्पदा । जाय कही भूपतिसे तदा ॥ १८ ॥ भूपति तब पूछी
 वृत्तान्त । सत्य कहो गुणधर गुणवन्त ॥ देख सुलक्षणताको
 रूप । अत्यानन्द भयो सो भूप ॥ १९ ॥ भूपति गृह तनुजा
 सुंदरी । गुणधरको दीनी गुण भरी ॥ कर विवाह मंगल सानन्द ।
 हय गय पुरजन परमानन्द ॥ २० ॥ मन वांछित पाये सुख भोग
 विस्मित भये सकल पुर लोग ॥ सुखसे रहित बहुत दिन भये ।
 यब सब बन्धु बनारस गये ॥ २१ ॥ मात पिताके परशे पांय ।
 अत्यानन्द हृदय न समाय ॥ बिघटो विषम विषम वियोग । भया
 सकल पुरजन संयोग ॥ २२ ॥ आठ सात सोलहके अंक । रवि-
 ब्रत कथा रची अकलंक ॥ थोड़े अर्थ ग्रन्थ विस्तार । कहें कवी-
 श्वर जो गुणसार ॥ २३ ॥ यह व्रत जो नर नारी करें सो कबहुं
 दुर्गति नहिं पैं ॥ भाव सहित सो शिव सुख लहैं । भानुकीर्ति
 मुनिवर इमि कहें ॥ २४ ॥ इति श्री रविव्रत कथा सम्पूर्ण ॥

(६८) अथ ज्येष्ठजिनवर कथा ।

चौपाई—बंदौ रिरभदेव जिनराज । फुनि सारद बंदौ सुख
 साज ॥ गोतम बंदौ शुभ मति लहौ । कथा जेठ जिनवर की
 कहौ ॥ १ ॥ आरज खंड देस गुजरात । खंभपुरी नगरी सु वि-
 ख्यात ॥ चन्द्र सिखर राजा गुणवन्त । रानी चन्द्रमतीको कन्त
 ॥ २ ॥ विप्र सोमशर्मा एक वसै । सौमिल्या बनिता सुख लसै ॥
 जज्ञ बालक जाको सुत जान । सोमश्री ता प्रिया बखान ॥ ३ ॥
 सोम विप्रको मरन जू भयो । जज्ञ बालकको अति दुख थयो ॥

सोमश्री सों सासू कही । नूतन कलस भरनको बई ॥ ४ ॥ विघ्न
के घर देहु पठाय । अरु पीपरको सींचउ जाय ॥ आहा लै पनि-
घट पै गई । मिली सखी तहं ठाढ़ो भई ॥ ५ ॥ ता पे जोठ जि-
नालो बर्त । आज सखी नगरी सब कर्त ॥ सुनि कर सोमश्री सुधि
भई । भरि लै घट चैत्यालय गई ॥ ६ ॥ तिन गुरु पास लियो वृत
सहो । जैसी बिध ग्रन्थनमें कही ॥ उत्तम विध चोविस जो वर्ष ।
मध्यम बारह लेखन हर्ष ॥ ७ ॥ लै वृत पूजा जिनकी करी ।
मिथ्या बुद्धि सकल परिहरी ॥ काहु दुष्ट सासू सों कही । बहू गई
चैत्यालय सहो ॥ ८ ॥ वह कलसा जिनवर पर ढरयो । सुनते ब्रा-
ह्मनि कोप जो करयों ॥ सोमश्री घरमें जब गई । सासू वचन कटु
बोलत भई ॥ ९ ॥ तू घरमें आवैगी तवै । मेरो घट ल्यावेगी जबै ॥
ऐसे वचन सासूके सुने । सोमश्री तब मस्तक धुने ॥ १० ॥
वह गई तहां जहां हतो कुम्हार । भैया मेरो वचन सम्हार । सोने
को तू कंकन लेहु । कलस तोस दिन हमको देहु ॥ ११ ॥ तब
कुम्हार कंकन नहिं लयो । तिन कलसा लै ताको द्यौ ॥ धनि
पुत्री तू करि वृत अबै । मेरे ते घट लीजै सबै ॥ १२ ॥ मास
जेष्ठ तौ यह व्रत करौ । कछुक पुन्य मेरो अनुसरौ ॥ तब तिन तापे
तै घट लियौ । भरि जल जाय सासूको दियौ ॥ १३ ॥ वृत अन-
मोद कुम्हार जो मस्यौ । श्रोधर राजा सो अवतस्यौ ॥ करि वृत
सोमश्री जो मरी । श्रोधरके पुत्री अवतरी ॥ १४ ॥ कुम्भश्री है
ताको नाम । राखै चित्त जिनेश्वर धाम ॥ ऐसे करत बहुत दिन
गये । मुनिवर वनमें आये नये ॥ १५ ॥ परिजन सहित राय संग
गयौ । नगर लोग अनन्दिन भयौ ॥ द्वे विध कर्म किया परकास ।

सुनि कर गयो चित्तको त्रास ॥ १६ ॥ वहां सोमल्या देखी दुखी ।
 तन कुचील अरु नेक न सुखी ॥ पूछे राय कहा इन कीन । जाते
 भई महा आधीन ॥ १७ ॥ सुनि मुनि अवधि ज्ञान परकास ।
 यह है सोमश्री की सासु ॥ निंधो वृत जिनवरकों तबै । ताको
 दुख भुगतत है अबै ॥ १८ ॥ कुम्भरोग माथेमें भयो । पूरव
 पावनको फल लयौ ॥ सोमश्री मार उपजी सुता । सो यह कु-
 म्भश्री गुण युता ॥ १९ ॥ सुनि कुम्भश्री जोरे हाथ । मो पर कृपा
 करौ मुनिनाथ ॥ यह मेरी सासूको जीव । इति म. व.
 कल शरीर ॥ २० ॥ ऐसी विध उपदेशो अबै ॥ दुख
 भजि सवै ॥ मुनिवर कहै याहि तूछुवै । अरुगंधोदक ऊपर खुवै
 ॥ २१ ॥ अरु सेबौ जिनवरके पांय । सब दरिद्र दुख वेगि मि-
 टाय ॥ तब कुम्भश्री कियो उपगार । दुर्गन्धाको गयो विकार
 ॥ २२ ॥ सोमिल्या रु अर्जिका भई । तप करि प्रथम स्वर्गमें भई ॥
 कुम्भश्री फिर यह वृत कसौ । दूजे स्वर्ग देव अबतसौ ॥ २३ ॥
 परमरा वहं जे हैं मुक्ति । भवि जन करौ सबे वृत युक्ति ॥ सत्रह
 पर अट्टावन जान । पण्डित जन संवत्सर मान ॥ २४ ॥ जेष्ठ शुक्र
 गुरु एकादसी । नगर गहेली शुभ मतिवसो ॥ जो यह करै भव्य
 वृत कोय । सो नर नारि अमर पति होय ॥ २५ ॥ रोग सोग दुख
 संकट जाय । ताकी जिनवर करी सहाय ॥ जो नर नारी इक
 बित करै । मन बांछित सुख संपति वरै ॥ २६ ॥ इति ॥

(६६) शील महात्म्य

जिनराज देव कीजिये मुझ दीन पर करना । भवि बुन्दको अब

दीजिये बस शीलका शरणा ॥ टेक ॥ शीलकी धारामें जो स्नान
करे है । मल कर्मको सो धोयके शिवनार बरे है ॥ ब्रतराज सो
वेताल ब्याल काल डरे है । उपसर्ग वर्ग घोर कोट कष्ट टरे हैं
॥ १ ॥ तप दान ध्यान आप जपन जोग अचारा । इस शीलसे
सब धर्मके मुंहका हैं उजारा ॥ शिवपन्थ ग्रन्थ ग्रन्थके निर्ग्रन्थ
निकारा । बिन शील कौन कर सके संसारसे पारा ॥ २ ॥ इस
शीलसे निर्वाणनगरकी है अवादी । त्रैलोक्य शलाका कौन ये ही
शील सवादी ॥ सब पूज्यके पदवीमें है परधान ये गादी । अठारा,
सहस्र भेद भने वेद अवादी ॥ ३ ॥ इस शीलसे सीताको हुआ
आगसे पानी । पुर द्वार खुला चलनिमें भर कूप सों पानी ॥ नृप
ताप टरा शीलसे रानी दिया पानी । गङ्गामें ग्राह सों बची इस
शीलसे रानी ॥ ४ ॥ इस शील हीसे सांप सुमन माल हुआ है ।
दुःख अंजनाका शीलसे उद्धार हुआ है ॥ यह सिन्धुमें श्रीपालको
आधार हुआ है । वप्राका परम शील होसे यार हुआ है ॥ ५ ॥
द्रोपदीका हुआ शीलसे अम्बरका अमारा । जा धातु द्वीप कृष्णने
सब कष्ट निवारा ॥ सब चन्दना सतीकी व्यथा शीलने टारा ।
इस शीलसे ही शक्ति विशल्याने निकारा ॥ ६ ॥ वह कोट शिला
शीलसे लक्ष्मणने उठाई । इससे ही नागको नाथा श्रीकृष्ण कन्हाई
इस शीलने श्रीपालजीकी कोढ़ मिटाई । अरु रैन मञ्जू साको
लिया शील बचाई ॥ ७ ॥ इस शीलसे रनपालकुंअरकी कटी बेड़ी
इस शीलसे विष सेठकी नन्दनकी निबेड़ी ॥ शूलीसे सिंह पीठ
हुआ सिंहही सेरी । इस शीलसे कर माल सुमन माल गलेरी । ८।
समन्तभद्रजीने यही शील सम्हारा । शिव पिएइसे जिनचन्दका

प्रति बिम्ब निकारा ॥ मुन मानतुङ्गजीने यही शील सुधारी । सब
 मानके चक्रेश्वरी सब बात , सम्हारा ॥ ८ ॥ अकलकुन्ददेवजीने इसी
 शीलसे भाई । ताराका हरा मान विजय चौदसे पाई ॥ गुरु कुन्द-
 कुन्दजीने इसी शीलसे जाई । गिरनार पै पाषाणकी देवीको
 बुलाई ॥ १० ॥ इत्यादि इसी शीलकी महिमा है घनेरी । विस्तारसे
 कहनेमें बड़ी होयगी देरी ॥ पल एकमें सब कष्टको यह नष्ट
 करेगी ॥ इस ही से मिले रिद्धि सिद्धि वृद्धि सबेरी । ११ ॥ बिन
 शील खता खाते है सब काँछके ढीले । इस शील बिना तन्त्र मन्त्र
 जन्त्र ही कोले ॥ सब देव कर सेव इसी शीलके हीले । इस शील
 ही से चाहे तो निर्वाण पदी ले ॥ १२ ॥ सम्यक्त्व सहित शीलको
 पाले है जो अन्दर । सों शील धर्म होय है कल्याणका मन्दिर
 इससे हुये भव पार है कुल कौल और बन्दर । इस शीलकी
 महिमा ने सकै भाष पुरन्दर ॥ १३ ॥ जिसे शीलके कहनेमें थका
 सहस बदन है । जिस शीलसे भय पाय भगा कूर मदन है ॥ सो
 शील ही भविवृन्दको कल्याण प्रदन है । दश पैड हो इस पैडसे
 निर्वाण सदन है ॥ १४ इति ॥

१०० चैतन चरित्र ।

लावनी

कुमति सुमति दो त्रिय चेतनके तिनका कथन सुनो नर
 नार । जासु श्रवणसे निज स्वरूप लखि भव धिति घटि
 छूरे संसार ॥ टेक ॥ मिथ्या नीदसे अचेत होकर सोवे सेज
 चतुर्गतिया । बक तीव्र बीता चिन्मूरति काल ललित आई इतिया
 सुखचि तिष्ठ हिय सम्यग् दर्शन छोड़ गये अघ निज लतिया ।

सचेत होकर सुमतिसे क्यों न लगी मेरी छतिया ॥ शेर ॥ सु
बुधि बोली कथसे बैरिन कुमति बलवान रे । लखि आपको के
जिन भनो करजेर डारों खानरे ॥ वर बुद्धिवाला सीख धर तब
कुबुद्धि रिस होकर चली । तातसे पुत्री भने पिव हरी मोंको वे
कली ॥ सुता बात सुन अनंग भजा चलो बुलाया है दरवार ।
जासु० ॥ १ ॥ कहा दूतसे जाउ न जावें लड़नेका घामा होगा ।
कही आय नृपसे नहीं आवे लड़ने फौज जाना होगा ॥ राग द्वेष-
को कुब्रम दिया सब सुभट यहां लाना होगा । सात व्यसन सर-
दार सात हो चलके समर ठाना होगा ॥ शेर—करते गमन दल ले
वहांसे सप्तको आगे किया । पहुँच पुर चितको लखो गढ़ निकट
जा डेरा किया ॥ चिदानंद लखिसेनको अब तुरत ही बुलाया
ज्ञानको । आके कहा लड़नेकी तयारी कर हरो बेईमानको ॥ कहे
बोधसे बड़े शूरमा बुलाबो न आबें मम दरवार । जासु० ॥ २ ॥ दान
शील नव भाव धार सत चारित्र बल धर सजि आया । दर्शन
उपशम शंतोष सम भाव सुभावको भी बुलवाया ॥ विवेक चेतन
सुध्यान युत बल दलका पार नहीं पाया । सावधान हो प्रबोध
लड़नेका डंका बजवाया ॥ शेर—युद्ध दोनो मिल हुआ मोहन भजा
होगा फला । भरा विवेकने सातको पुर देश भागा काफला ।
हार अवृत कहे जा प्रतिख्यान पकड़ला । और सेना साथ ले
ब्रत भंग करके जकड़ला ॥ पहुँचे लड़नको सब दल लेकर साजे
सूरमा ले हथियार ॥ जासु० ॥ ३ ॥ दोनोमें मिल पड़ी लड़ाई
मची मार होड़ा होड़ी । मिथ्या सास्वादन मैं जीवको करे मोह
छोड़ा छोड़ी ॥ मोह बली जिसे करे जेर सत्रह कोड़ा कोड़ी ।

तिसे जीतजा मिले अवृतपुर जोड़ा जोड़ी ॥ शेर—मिल एक
 दस प्रतिमासु पहुँचे देश वृत पुर सारमें । आगे ना जाते शस्त्र
 देवे रोक बैठे द्वारमें ॥ ध्यान तेगा मारके सप्तम नगर चलता
 हुआ । तब मोहने सब सूर ले लड़नेको फिर चलता हुआ ॥ राग
 संग चले कषाय निन्दा विषय ल्याय प्रमत्तमें डार ॥ जासु० ॥४॥
 अप्रमत्त किय राज होय कहै हंस इन्से कैसे छूटे । अट्टाहस गुण
 दो दश तप वे वाइस परीष सहै इम लूटे ॥ सप्तम पुर आजा
 रावल जब ध्यान तेजकी लौ फूटे । प्रथम शुक्ल बल अष्टम शिरता
 नवमें मोह नहीं टूटे ॥ शेर—सब ग्राम जीते जायके हता मोह यह
 कैसे टले । जा शूर ले घेरा गाँव सब उपसन्त तक मेरा चले ॥
 पहुँचे वहां छिप शूरमा जिय निकस जात हरायके । सूक्ष्म
 सांपराय नगरी आप प्रगटे आयके ॥ लोभ मार वह भये निशं-
 कित कौन लड़ेगा बारम्बार ॥ जासु० ॥५॥ पकड़ बांह मिथ्यातमें
 डाल करा मोहने ऐसा बल । चिदा नद निज चला लड़नेको जोरा
 अपना दल ॥ तीन करणसे सातों क्षय करि लीना अवृतपुर भट
 चल । देशवृत पुर लिया अनूपम अप्रियख्यान डारा दलमल ॥
 शेर—प्रतिख्यानको नाश कर षट् सप्त पहुँचे जायके । दो कारण-
 से तीन मारे लीना बसुपुर जायके । अनुवृत करण छत्तीस मारे
 लोभको ततक्षिण हरा । तबही उपशम उलंघिके बारहमें पोंहचा
 जा सरा ॥ प्रतिख्यान चारित्र प्रघट तहां द्वितीय शुक्ल असि कर
 गहिसार ॥ जासु० ॥६॥ सोलह शूरमा तहां विनाशे दोष अठारह
 गये कट फट । प्रघटे गुण छयालीस जहां पर लोका लोक लखा
 चटपट ॥ निरोध योग निवृत्य क्रिया कर कृपाण गहि लीना भट-

पद । अयोगपरका राज लिया जहां प्रकृति पचासी गई हटछट ॥
शेर — पहुंचे जाकर मोक्षपुर जहां गुण होते भये । अक्षय अनादि
अनन्त सुखमें लीन जब होते भये ॥ निज शरीरसे हीन कछुक पुर
बाकार प्रदेश है । आपे आप निमग्न परका नहीं लवलेह है ॥ क्षमा
धार शोधो ज्ञानी जिन लघु धी रूपवन्द कहै पुकार जासु ॥ ७ ॥

१०१ दौलत कृत पद

ऐसा मोही क्यों न अधोगति जावे, जाको जिनवानी न
सुहावे ॥ ऐसा ॥ बीतरागसे देव छोड़कर भैरव यक्ष मनावे, कल्प
लता दयालुता तजि हिंसा इन्द्रायति वावै ॥ ऐसा ॥ १ ॥ रुचै न
गुरु निर्ग्रन्थ भेष बहु परिग्रहो गुरु भावै । परधन परित्यक्तो अभि
लाषै, अशन अशोधित खावै ॥ ऐसा ॥ २ ॥ परकी विभव देख है
सो भी पर दुःख हरण लहावै । धर्म हेतु एक दाम न स्वरचे, उप-
वन लक्ष बहावै ॥ ऐसा ॥ ज्यों गृहमें रुचै बहु अघ त्यों, वनह
में उपजावे । अम्बर त्याग कहाय दिगम्बर बाघम्बर तन छावै ॥
ऐसा ॥ ४ ॥ आरम्भ तज शठ यंत्र मंत्र करि जन पै पूज्य मनावे ।
धाम वाम तज दासी राजै बाहिर मढ़ी बनावे ॥ ऐसा ॥ ५ ॥ नाम
धराय जती तपसी मन विषयनमें ललचावै ॥ दौलत सो अनन्त
मन भटके औरनको भटकावै ॥ ऐसा ॥ ६ ॥

१०२ कुधजन कृत राग अहिर्नग ।

तै क्या किया नादान, तै तो अमृत तज विष लीना ॥ तै टेका ॥
लख चौरासी जौनि माहि तै धावककुल मैं आया । अब तज
तीन लोकके साहिब, नवग्रह पूजन धाया ॥ तै ॥ १ ॥ बीतरागके

दरशन ही तैं उदासीनता आवे, तू तो जिनके सन्मुख ठाढ़ा सुतको
 ख्याल खिलावे ॥ तैं० ॥ २॥ सुरग सम्पदा सहजै पावे, निश्चय मुक्ति
 मिलावे । ऐसी जिनवर पूजन सेती, जगत कामना चावै ॥ तैं० ॥
 ॥ ३॥ बुधजन मिलै सलाह कहैं तब, तूं बापे खिजि जावै । जया
 जोगको अजया माने । जनम जनम दुःख पावे ॥ तैं० ॥ ४॥

१०३ भूधरकृत—राग कर्लिगड़ा ।

चरखा चलता नाहीं, चरखा हुआ पुराना ॥ टेक ॥ पग खूटे दो
 हालन लागे उर मदरा खखराना । छीदी हुई पांखड़ी पांसू, फिरै
 नहीं मनमाना ॥ चरखा० ॥ १॥ टेक ॥ रसना तक लीने बल खाया
 सो अब कैसे खूटे ॥ सबद सूत सूधा नहिं निकसै, घड़ी घड़ी पल
 टूटे ॥ चरखा० ॥ २ ॥ आयु मालका नहीं भरोसा अंग चलाचल
 सारे । रोज इलाज मरम्मत चाहे, बैद बाढ़ हो हारे ॥ चरखा०
 ॥ ३ ॥ नया चरखला रंगा चंगा, सबका चित्त चुरावे । पलटा
 चरन गये गुन अगले, अब देसैं नहिं भावे ॥ चरखा० ॥ ४ ॥ मोटा
 महीं कात कर भाई ! कर अपना सुरभेरा । अन्त आगमें ईन्धन
 होगा, 'भूधर' समझ सबेरा ॥ चरखा० ॥ ५ ॥

१०४ न्यामत कृतगजल ।

तुम्हारे दर्श बिन स्वामी मुझे नहिं चैन पड़ती है । छबी
 वैराग्य तेरी सामने आंखोंके फिरती हैं ॥ टेक ॥ निरा भूषण
 विगत दूषण परम आसन मधुर भाषण । नजर नैनोकी नाशाकी
 अनीसे पर गुजरती है ॥ १ ॥ नहीं करमोंका उर हमको कि अब
 लगा ध्यान वरणमें । तेरे दर्शनसे सुनते कर्म रेखा भी बदलती है ।

॥ २ ॥ मिले गर स्वर्गकी संपत्ति, अर्चमा कौनसा इसमें, तुम्हें
जो नयन भर देखे गती तुरगतिकी टरती है ॥ ३ ॥ हजारों मूर्तों
हमने बहुत सी गौर कर देखीं, शांति मूर्त तुम्हारी सो नहीं नजरों
में खड़ती है ॥ ४ ॥ जगत सरताज हो जिनराज, न्यामतको द्रश
दांजे, तुम्हारा क्या बिगड़ता है, मेरी बिगड़ी सुधरती है ॥ ५ ॥

(१०४) अटल—नियम ।

मरना जरूर होगा करना जो चाहो करलो ।

फल उसका पाना होगा, करना जो चाहो करलो ॥ टंक ॥
पाया मनुष्य जनम है, जिसका न मोल कम है । जबतक कि
तनमें दम है, करना जो चाहो करलो ॥ १ ॥ जीवन के साथ मरना,
जोषनका फल बुढ़ापा । धन का भी नाश होगा, करना जो चाहो
करलो ॥ २ ॥ वोओगे बीज जैसा, फल प्राप्त होगा वैसा । होना
है वोही होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ३ ॥ रोओगे वा हंसोगे,
शीशे को देख कर तुम । प्रतिबिम्ब बैसा होगा करना जो
चाहो करलो ॥ ४ ॥ करलो भलाई भाई, करते हो क्यों बुराई ।
दिन चार जोना होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ५ ॥ कर
करके छल कपट जो, लाखों रुपये कमाये । सब छोड़ जाना
होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ६ ॥ अपने मजेकी खातिर
परके गले न काटो । दुख तुम को पाना होगा, करना जो
चाहो करलो ॥ ७ ॥ उपकार को न भूलो, जो चाहते भलाई ॥
ये ही तो साथ देगा, करना जो चाहो करलो ॥ ८ ॥ शुभ
काम करके मरना, समझो इसीको जोना । जोना न और होगा,
करना जो चाहो करलो ॥ ९ ॥ जो आज धर्म करना, छोड़ो

न उसको कल पर । साथी धरम हो होगा, करना जो चाहो करलो ॥ १० ॥ है मोल जगमें सब का, पर मोल ना समय का । “बालक” यह कहना होगा, करना जो चाहो करलो ॥ ११ ॥

१०६ दर्श अभिलाषा गजल कव्वाली

प्रभू मन मेरा व्याकुल है, दर्श दोगे तो क्या होगा । मुझे है चाह दर्शनकी, अगर दोगे तो क्या होगा ॥ १ ॥ टोक ॥ हम सब घर वार तज करके, चरण सेवाको आये हैं । पड़े मभधारमें दुखिया, उबारोगे तो क्या होगा ॥ २ ॥ नहीं तुम सृष्टि करता हो, जगतके दुःख हरता हो । खड़े बिल्ला रहे भविजन, हंसाओगे तो क्या होगा ॥ ३ ॥ तुम्हारी भक्ति ओ प्रीती, यहां तक खींच लाई है । पड़े दुखमें तड़फते हैं, जिलाओगे तो क्या होगा ॥ ४ ॥ “विद्या” सिर ताज जिनराजा, शरण दर्शन चरण आशा । प्रभू मन तीव्र अभिलाषा, दर्श दोगे तो क्या होगा ॥ ५ ॥

१०७ जैन महत्त्व

(तर्जः—मन लागो—रामफकीरीमें)

सुख पायो जैन धरम हितमें ॥ टोक ॥ जो सुख भाई जैन धरममें, सो सुख नाहीं अनमतमें ॥ सुख० ॥ जैन धरममें हिंसा पाप है दुख पशु हिंसा हिंमतमें ॥ सु० ॥ टोक ॥ मोक्ष मार्गका जैन सुगम पथ, उत्तम मुक्ति नसोयतमें ॥ सु० ॥ नहीं सतायो किसी जीवको, दुःख अनेको पशुगतमें ॥ सु० ॥ टोक ॥ अन्य धरम विष भरो कटोरा, दुःख कुदेवी अमृतमें ॥ सु० ॥ पान करो रस जिनमत “विद्या” त्यागो जावे दुरगतमें ॥ सु० ॥ टोक ॥

१०८ नारी भूषण राम मलहार

निश दिन श्री जिन मोहिअधार, हमारा शील धर्म शृंगार
॥ टोका ॥ शील अनूपम स्त्री भूषण, शील रत्न गल द्वार ॥ हमारा ॥
टोका ॥ शीलकी अदभुत विचित्र महिमा शील कीर्ति पतवार ॥ टोका ॥
ह० ॥ शील धर्म बिन नारी पशु सम व्यर्थ जन्म संसार ॥ टोका ॥
ह० ॥ पति भक्तो नितनेम धरमसे किया करो हरवार ॥ टोका ॥
ह० ॥ पतिको परमेश्वर सम जानो प्रेम भक्ति मन प्यार ॥ टोका ॥ ह० ॥
पतिके गुण अवगुण अमृत सम पती मोक्ष मग द्वार ॥ टोका ॥ ह० ॥
पति भक्तिसे मुक्तीजानो “विद्या” तन, मन, चार ॥ टोका ॥

१०९ हमारा कर्त्तव्य

(तर्ज—कल्ल करते हैं मगर—कहते हैं जीना होगा)
जिन चरणोंमें सदा माथ नवाना होगा । रोज सुबह शाम
तुम्हें फर्ज बजाना होगा ॥ १ ॥ कुछ भी करो पाप पुन्य
मर्जो तुम्हारी साहेब । जीवनका जमा, खर्च अन्त बताना होगा
॥ २ ॥ ये खामो ख्याल गलत मरनेके पीछे क्या हो । जो ये
सोचेगा उसे नर्कमें जाना होगा ॥ ३ ॥ दान पुण्य, धरम—
शुभ कामसे प्रीती रखो । इनसे मूँ मोड़नेसे दुःख उठाना—
होगा ॥ ४ ॥ औषधि, दान, अभय—, शास्त्र, अहारा, देना ।
लोभ, मद, क्रोधसे, दिल शीघ्र हटाना होगा ॥ ५ ॥ “विद्या”
घबड़ाना नहिं, भक्तिका फल अमृत जानो । श्री जी भक्तिमें चेतन,
सरको झुकाना होगा ॥ ६ ॥

११० पार्श्व पूजन ।

सुनियो प्यारे महाराज—तुम हो मेरे सरताज, आई पूजनके काज समलिया जान ॥ टेक ॥ प्रभु पारस कृपाल मुझपर होषो दयाल । राखो दुखियाकी लाज अरजिया जान ॥ टेक ॥ मुझको देवो सुबुद्धि दूर होगी कुबुद्धि । आई चरणोंमें आज शरणिया जान ॥ टेक ॥ तारे अंजनसे चोर कृपा होवे इस ओर । मैं हूँ दुखिया संसारी भ्रमतिया जान ॥ टेक ॥ “विद्या” दासी तुम्हारी, दुखसे होवे न्यारी । जाती जिनमत पे धारो खबरिया जान ॥ टेक ॥

१११ राजुलका बैराग्य ।

श्री जिन धर्मकी श्रद्धा मेरे मन अब समाई है । छत्री बैराग्यकी मूरत मुझे प्रियतर सुहाई है ॥ पिता मुझको इजाजतदो प्रभू-नेमीके ढिग जाऊँ । मुझे क्यों रोकती माता बताओ क्या भलाई है ॥ बिना प्रभु नेमके जीवन निरा नीरस मेरे भाई । मेरे गिरनारी जानेसे तुम्हारी क्या बुराई है ॥ मेरा दूजा नहीं कोई जो मैं गिरनारी न जाऊँ । मुझे बस नेमही प्यारा जो लव उनसे लगाई हैं ॥ गईं राजुलजी गिरनारी तपाई देह अति भारी । “विद्या” दासी तुम्हारी भी शरण चरणोंमें आई है ॥

११२ जीवनकी चार पर्यायें ।

चंचल मनको धरममें लगाना रे, कुदेवनसे ये दिल हटानारे प्यारा भारत बतन, दुर्लभ मनुष रतन । बिन धर्म है पतन, निश्चयसे कर जतन ॥ अपने मनको धरममें लगाना रे, जिसमें

सुखसौंका नाही ठिकाना रे ॥ शुभ कर्म जब किया, मानुष जनम लिया, फिर क्या बता किया, बिन धर्म क्यों जिया ॥ मिथ्या मतमें न धन अब गमाना रे, जिन चरणोंमें सरको झुकाना रे । खेलतमें बालबन, भार्या जवानी पन, मध्यम गोरख भवन, अब आया बृद्धपन तुझे मखमलका विस्तर सुहाना रे, अब निश्चय नरक दुख उठानारे ॥ अब भी संभल संभल, गिन्नीपे मत फिसल, कोरत भवन अटल, दिव्य शक्ति आत्मबल ॥ दान देना विलाना करानारे “विद्या” गिरतोंको मारग बतानारे ॥

११३ कर्म निष्ठा ।

प्रभु आश लगी मनतेरे दरशकी सो चरणन शीश झुकाय दिया । छवि बराग्य बसी मेरे इस दिल, वो मन मिथ्यातम हटाय लिया ॥ इस मोह महातम नींदने मुझको, घोर अघोरो बनाय दिया । अब शीघ्रही आकर तारो प्रभू इस नींदने खूब सुलाय दिया ॥ जरादेके दरश मेरे मनको बैराग्य छवि दिखला नेननको । देखे बिना नहि चैन इस तनको, चिन्ताने देह जलाय दिया । “विद्या” आई शरण प्रभु आज तुमारे, तुम दुखियनके लाल प्यारे । सबजीवनके हो तारन हारे, ओसमें आशन जमाय दिया ॥

श्रीविद्यावती कृत

(११४) पर्युषण पर्व भजनावली

उत्तम क्षमा—गजल कबाली

उत्तम क्षमाको धारो, दशलक्ष पर्व वालो । मनमें न क्रोध लाओ, हे ऊँचे भाव वालो ॥ १ ॥ उत्तम क्षमाके धारी फैला दो कीर्ति

सारी । सुमरो क्षमाकी मुद्रा, जैनी कहाने वालो ॥ २ ॥ फेरो क्षमाकी माला, कैसा ये मंत्र आला । उत्तम क्षमाको रटलो भक्ती-के मार्ग वालो ॥ ३ ॥ फैलादो शांति जगमें, उत्तम क्षमासे सबमें । भावोंकी शुद्धि करलो, छोटे विचार वालो ॥ ४ ॥ माया ममत्व छोड़ो, प्रभुजीसे नेह जोड़ो । तृष्णाको अब घटाओ, दानी कहाने वालो ॥ ५ ॥ दश दिन न क्रोध करना, पापोंसे डरते रहना । विद्या विनयको सुनलो मुक्तीके जाने वालो ॥ ६ ॥

उत्तम मार्दव

उत्तम मार्दव व्रत करो सब मान कुछ करना नहीं । मान करनेसे कभी भी लाम कुछ होता नहीं ॥ मानी नरकमें दुख उठाते, जायकर नकोंमें वे । अभिमानसे होती है सबको फायदा बिल्कुल नहीं ॥ अभिमानमें रावण मरा अरु दुर्वशा उसकी हुई । दुख उठाये सैकड़ों पर सुख मिला कुछ भी नहीं ॥ दश पर्व व्रतोंके दिनोंमें भाव समताके धरो । संतोष व्रत धारण करो अरु धैर्यको त्यागो नहीं । योग्य नित प्रभु दर्श करना, अष्ट द्रव्यीमेलसे । निश्चल है कैसी शांत मुद्रा मान इसमें कुछ नहीं । मान विषका कूप है गति नीचमें ले जायगा अभिमान ज्ञानी मत करो, अरु धर्मको विसरो नहीं । जाप मार्दव की जपो, छोटे बड़ोंको सम लखो । करती विनय “विद्या” यही कि, मान कुछ करना नहीं ।

उत्तम आर्जव कहारवा ।

(तर्जः—हो जिन तुम सुजस उजागर तम हर सूर सूर सूर)
व्रतपालो उत्तम आर्जव, छलसे दूर दूर दूर । आओ कपट नीतिसे वाज कपटी दूर दूर दूर ॥ १ ॥ अब जपलो आर्जव माला, छलका करदे

मूंकाला । ये मंत्रोंमें मंत्र निराला, सुखसे पूर पूर पूरा ॥२॥ सब सुख
लो जैनी भाई, ये छल है बहुत दुख दाई । है निश्चय धरम सदाई,
विपदा चूर चूर चूर ॥ ३ ॥ कोई रंचक दगा न करना, छलियासे
डरते रहना । सब मनमें सदा सुमरना, जिनका नूर नूर नूर ॥४॥
हे सरल स्वभावी जैनी, इस छलकी धारा पैनी । “विद्या” मत
चढ़ये नसेनी, श्रावक शूर शूर शूर ॥ ५ ॥

उत्तम सत्य

जगत में उत्तम सत्य महान !

बुद्धिवान गुणवान ॥ जगतमें ॥ झूठ बचन नहिं मुखसे बोलो, झूठ
महा दुख खान ॥ जगतमें ॥ दुनियामें है सत्यकी महिमा, सत्यही
मंत्र महान ॥ जगतमें ॥ दृढ़ प्रतिज्ञ बन जो सत बोले तो निश्चय
कल्याण ॥ जगतमें ॥ पर विश्वास घात न करना, और न करना
मान ॥ जगतमें ॥ पर वस्तुमें मन न लुभानो, चाहे जावें प्राण
॥ जगतमें ॥ सत्य सत्य सब नित्य ही सुमरो, गाकर उसका
गान ॥ जगतमें ॥ उत्तम सत्यकी माला जपलो, धरकर हृदे ध्यान
॥ जगतमें ॥ हाथ जोड़ सब शीश नवावें, दे प्रभु यह बरदान ॥ जगत
में ॥ विद्या विनय यही है प्रभुजी, पाऊं उच्च स्थान ॥ जगतमें ॥

उत्तम शौच

जैनी धारियो जी, उत्तम शौच आज मन भाया ॥ टेक ॥ दुख दाई ला-
लच दुख देता सुनलो उसका हाल । सच्चे मनसे लोभ त्याग दो
ये जोका जंजाल ॥ १ ॥ टेक ॥ कौन कहत है लोभ बिना तुम, होबोगे
कंगाल । दूर हटाओ दिलसे इसको कैसा रही ख्याल ॥ २ ॥ टेक ॥
निलोभी बननेकी शिक्षा प्रभुसे लेलो आज । उत्तम शौचकी जाय

अपलो मुक्त का ये साज ॥ ३ ॥ टेक ॥ राग द्वेष मनमें नहिं लाना
ये है काला पाप । निज सरूप पहिचान लो फिर देखो आपहि आप
॥ ४ ॥ टेक ॥ हृदय में संतोष धारो निश्चय बेड़ा पार । “विद्या” पर्वके
उत्तम दिनमें कर अपना उद्धार ॥ ५ ॥ टेक ॥

उत्तम संयम राग रेखता

(तर्ज-भगवान आदिनाथ सो मन मेरा लगा)

संयममें तेरा मन बता, अब क्यों नहीं लगता । संयम चेतन
करता नहिं भोगोंमें क्यों फँसता ॥ १ ॥ चेतन सभलजा अब भो
नरकोंमें क्यों धसता । करकरके कपट जाल क्यों भोगोंको है
करता ॥ २ ॥ संयम रतन सभाल ले विषयोंमें विष दिखता । भव
भव बिगड़ गये तेरे अब क्यों नहीं सुनता ॥ ३ ॥ जग सून्य है
संयम बिना पापोंसे नहिं लजता । छहकायके जीवों पै रहम क्यों
नहीं करता ॥ ४ ॥ सब इन्द्रियां बशमें रखो धारण करो समता ।
इतना किये बिन पापसे कैसे भला बचता ॥ ५ ॥ दुनियांमें कहीं
भी रहो कुछ हो नहीं सकता । “विद्या” बिना संयमके देखो कैसा
है कलता ॥

उत्तम तप गजल

आज उत्तम तप विरतमें मन लगाना चाहिये । इस दुःख दाई
लामसे अब दिल हटाना चाहिये ॥ १ ॥ निर्लोभो अब बन जाइये
लोभ है जहरी छुरा । लोभ लालचको हृदयसे अब घटाना चाहिये
॥ २ ॥ ये लोभ दुश्मन जानका है जीव लेकर जायगा । इस कष्ट
मय जीवनको सुखसे अब बिताना चाहिये ॥ द्वादश विधिके तप
कठिन है, कैसे कबये होयंगे । पर्वके उत्तम दिनोंमें तन तपाना

चाहिये ॥ ४ ॥ नर भव महा दुर्लभ रतन मुश्किलसे “विद्या” है मिला ॥ तो क्या बिना तपके इसे, योही गमाना चाहिये ॥ ५ ॥

उत्तम त्याग (राग-बंजारा)

मन उत्तम त्याग समाया, नरभव जीवनका पाया । है दान चार परकारा, दे औषधि दान अहारा ॥ टेक ॥ दिलअमय शास्त्र मनमाया, नरभव जीवनका पाया । तप, राग द्वेष, निरवारे, मेरे कर्म शत्रुको मारे । मुनियोंने देह तपाया, मेरे मन त्याग सुहाया ॥ २ ॥ ये जीवन बहु दुखदाई, ये विपदा तप बिन आई । क्यों पाप कूप खुदवाया, नर भव जीवनका पाया ॥ ३ ॥ दुनिया भी अन्तमें न्यारी “विद्या” निश्चय है स्वारी । कह प्रभुसे नेह लगाया, मेरे मन त्याग समाया ॥ ४ ॥

(उत्तम आकिंचन)

(रघुवर कौशल्याके लाल मुनिकी यज्ञ रचाने वाले)

उत्तम आकिंचन व्रतधार जैनी मात्र कहाने वाले । जनी मात्र कहाने वाले, त्यागका रूप दिखाने वाले ॥ १ ॥ त्यागो चौबिस परिग्रह भेद । फिर घर तीरथ सिखर सम्भेद करना अवश्यक नहीं खेद, धर्मकी बाढ़ बढ़ाने वाले ॥ २ ॥ निश्चय जिनबाणी श्रद्धान, जगमें जैनी धर्म प्रधान । कहते बुद्धिवान गुणवान, जग उपदेश सिखाने वाले ॥ ३ ॥ ये है दुखदाई संसार, इसमें सुखपाना दुश्वार । जीवके दुश्मन कई हजार, पग पग दुःख दिलाने वाले ॥ ४ ॥ है दुनियां निस्सार जायेंगे सब कोई हाथ पसार । “विद्या” दान चार परकार, मुक्तिकी राह बताने वाले ॥ ५ ॥

नोट—श्री मतो विद्यावतो कृत “विद्याविनोद” नामक बड़ा संग्रह अलग तैयार हो रहा ।

{ ११५ } गुर्विली ।

जैवन्त दयावन्त सुगुरु देव हमारे । संसार विषम खारसों
जिन भक्त उधारे ॥१॥ जिनवीरके पीछे यहां निर्वानके थानो ।
वासठ बरषमें तीन भये केवल ज्ञानी ॥ फिर सौ बरषमें पांच श्रुत
केवली भये । सर्वाङ्ग द्वादशांगके उमंग रस लये ॥ जैवन्त० ॥१॥
तिस बाद वर्ष एक शतक और तिरासी । इसमें हुए दश पूर्व ग्यार
अङ्गके भाषी ॥ ग्यारै महामुनीश ज्ञानदानके दाता । गुरुदेव सोइ
देहिगे भविवृन्दको साता ॥ जैवन्त ॥२॥ तिसबाद वर्ष दोय शतक
बीसके माहीं । मुनि पंच ग्यार अङ्गके पाठी हुए याहीं ॥ तिस-
बाद बरस एकसौ अठारमें जानी । मुनि चार हुए एक आचारांग
के ज्ञानी ॥ जैवन्त ॥३॥ तिसबाद हुए हैं जु सुगुरु पूर्वके धारक ।
करुणानिधान भक्तको भवसिन्धु उधारक ॥ करकंजतें गुरु मेरे
ऊपर छांह कीजिये । दुख द्वन्दको निकन्दके आनन्द दीजिये ॥
जैवन्त० ॥४॥ जिनवीरके पीछेसों बरस छहसौ तिरासी । तब तक
रहे इक अङ्गके गुरु देव अभ्यासी ॥ तिसबाद कोई फिर न हुए
अङ्गके धारी । पर होते भये महा सुविद्वान उदारी ॥ जैवन्त ॥५॥
जिनसों रहा इस कालमें जिनधर्मका साका । रोपा है सात भंग-
का अभङ्ग पताका ॥ गुरुदेव नयंधरको आदि दे बड़े नामी । निर-
ग्रंथ जैनपंथके गुरु देव जो स्वामी ॥ जैवन्त ॥६॥ भाषों कहां लो
नाम बड़ी बार लगेगा ॥ परनाम करों जिस्से बेड़ा पार लगेगा ॥
जिसमेंसे कछु इक नाम सूत्रकारके कहों । जिन नामके प्रभावसे
परभावको दहों ॥ जैवन्त ॥७॥ तत्त्वार्थसूत्र नामि उमास्वामि किया

है । गुरुदेवने संक्षेपसे क्या काम किया है ॥ जिसमें अपार अर्थने विश्राम लिया है । बुधवृंद जिसे ओरसे परनाम किया है ॥ जैवंत० वह सूत्र है इस कालमें जिनपंथकी पूंजी । सम्यक्त्व ज्ञान भाव है जिस सूत्रकी कूंजी ॥ लड़ते हैं उसी सूत्रसों परवादके मूंजी । फिर हारके हट जाते हैं इक पक्षके लूंजी । जैवंत ॥८॥ स्वामी समन्त-भद्र महामाण्य रचा है । सर्वंग सात भंगका उमंग मचा है ॥ पर-वाधियोंका सर्व गर्व जिससे पचा है । निर्वाण सदनका सोई सो-पान जचा है ॥ जैवंत० ॥९॥ अकलंक देव राजवारतीक बनाया । परमान नय निछेसों सब वस्तु बताया ॥ इश्लोक वारतीक वि-द्यानन्दजी मंडा । गुरुदेवने जड़मूल सी पाखण्डको खंडा ॥ जैवंत ॥११॥ गुरु पूज्यपादजी हुये मरजादके धोरी । सर्वार्थसिद्धि सूत्र-की टीका जिन्हों जोरी ॥ जिसके लखे सों फिर न रहे चित्तमें भरम ॥ भविजीवको भावै है सुपरभावका मरम ॥ जैवंत० ॥१२॥ धरसेन गुरुजी हरो भवि वृंदकी बीया । अग्रायणीय पूर्वमें कुछ ज्ञान जिन्हें था ॥ तिनके हुए दो शिष्य पुष्पदन्त भुजबली । धवलादि-कोंका सूत्र किया जिस्से मग चली ॥ जै० ॥१३॥ गुरु औरने उस सूत्रका सब अर्थ लहा है । तिन धवल महाधवल जयसुधवल कहा है ॥ गुरु नेमिचन्द्रजी हुये धवलादिके पाठी । सिद्धान्तके चक्रोश-की पदवी जिन्हों गांठी ॥ जै० ॥१४॥ तिन तीनोंही सिद्धान्तके अनुसारसों प्यारे । गोमट्टसार आदि सुसिद्धान्त उचारे ॥ यह पहिले सुसिद्धान्तका विरतंत कहा है । अब और सुनो भावसों जो भेद महा है ॥ जै० ॥१५॥ गुणधर मुनीशने पढ़ा था तीजा पराभृत । ज्ञानप्रवाद पूर्वमें जो भेद हैं आश्रित ॥ गुरु हस्तिनागजीने सोई

जिनसो लहा है । फिर तिन सों यतीनायकने मूल गहा है ॥ जै० ॥ १६ ॥ तिन चूणिका स्वरूप तिससे सूत्र बनाया । परमान छ हजार यों सिद्धान्तमें गाया ॥ तिसका किया उद्धरण समुद्धरण जु टीका । बारह हजारके प्रमान ज्ञानकी टीका ॥ जै० ॥ १७ ॥ तिस हीसे रचा कुंदकुंदजीने सुशासन । जो आत्मीक पम धर्मका है प्रकाशन ॥ पंचास्तिकाय समयसार सारप्रवचन । इत्यादि सुसिद्धान्त स्यादबादका रचन ॥ जै० ॥ १८ ॥ सम्यक्त्वज्ञान दर्श सुचारित्र अनूपा । गुरुदेवने अध्यात्मीक धर्म निरूपा ॥ गुरुदेव अमी-इंदुने तिनकी करी टीका ॥ भरता है निजानन्द अमीवृंद सरीका ॥ जै० ॥ १९ ॥ चरणानुवेद भेदके निवेदके करता । गुरुदेव जे भये हैं पापतापके हरता ॥ श्रीबृहत्केर देवजी बसुनंदजी चक्री । निरग्रन्थ ग्रंथ पंथके निरग्रंथके शक्री ॥ जैवन्त ॥ २० ॥ योगीन्द्रदेवने रचा परमात्मा प्रकाश । शुभचन्द्रने किया है ज्ञान आरणौ विकाश ॥ की पद्मनन्दजीने पद्मनन्द पचीसी । शिव कोटिने अराधना सुसार रचीसी ॥ जैवन्त० ॥ २१ ॥ दोसंध तीन संध चारसंध पांचसंध । षट्संध । जातसंधलो गुरु रचा प्रबन्ध ॥ गुरु देवनंदिने किया जिनेन्द्र व्याकरण । जिस्से हुआ परवादियोंके मानका हरन ॥ जैवन्त० ॥ २२ ॥ गुरुदेवने रची है रुचिर जैन संहिता । वरनाश्रमादिकी किया कहैं हैं संहिता ॥ बसुनन्दि वीरनंदि यशोनंदि संहिता । इत्यादि बनी हैं दशों परकार संहिता ॥ जैवन्त ॥ २३ ॥ परमेयकमलमारतरण्डके हुए कर्त्ता । माणिक्यनंदि देव नयप्रमाणके भर्ता ॥ जैवन्त सिद्ध सेन सुगुरु देव दिवाकर । जै वादिसिंह देवसिंह जैति यशीधर ॥ जैवन्त ॥ २४ ॥ श्रीदत्त काण मिश्र और पात्रकेसरी । श्रीवज्रसूर

महासेन श्रीप्रभाकरी ॥ श्रीजटाचार बीरसेन महाम्सेन हैं । जै सैन
 शिरीपाल मुझे कामधेन हैं ॥ जैवंत ॥ २५ ॥ इन एक एक गुरुने जो
 ग्रंथ बनाया । कहि कौन सके नाम कोई पार न पाया ॥ जिनसेन
 गुरुने महापुराण रचा है । मरजाद क्रिया कांडका सब भेद खचा
 है ॥ जैवंत ॥ २६ ॥ गुणभद्र गुरुने रचा उत्तर पुराणको । सो देव
 सुगुरु देवजी कल्याण धानको ॥ रविसैन गुरुजीने रचा रामका
 पुराण । जो मोह तिमर भाननेको भानुके समान ॥ जै० ॥ २७ ॥
 पुष्पाट गणबिषे हुये जिनसेन दूसरे ॥ हरिवंशको बनाके दास
 आसको भरे ॥ इत्यादि जे बसुबीस सुगुण भूलके धारी । निग्रंथ
 हुए हैं गुरु जिनग्रंथके कारी ॥ जैवंत ॥ २८ ॥ बन्दौ तिन्हें मुनि
 जे हुये कवि काव्य करैया । बन्दामि गमक साधु जो टीकाके धरे-
 या ॥ वादी नमो मुनिवादमें परवाद हरैया । गुरु बागमीककों
 नमों उपदेश भरैया ॥ जैवंत ॥ २९ ॥ ये नाम सुगुरु देवका कल्याण
 कर है । भवि घृन्दका ततकाल ही दुख द्वन्द हरै है ॥ धनधान्य
 ऋद्धि सिद्धि नवो निद्धि भरे है । आनन्द कंद देहि सबी विघ्न टरे
 है ॥ जैवन्त ॥ ३० ॥ इस कण्ठमें धारे जो सुगुरु नामकी माला ।
 परतीतिसों उरप्रीतिसों ध्यावै जु त्रिकाला ॥ यह लोक का सुख
 भोग सो सुरलोकमें जावै । नरलोकमें फिर आयके निरवानको
 पावै ॥ ३१ ॥ जैवन्त दयावन्त सुगुरु देव हमारे ॥ संसार विषय
 खारसों जिन भक्त उधारे ॥ इति

११६ मंगलाष्टक

कवित्त ३१ मात्रा ।

संघ सहित श्रीकुन्दकुन्द गुरु, बंदन हेत गण मिरनार । वाद

परो तहं स'शयमतिसों, साक्षी बदी अम्बिकाकार ॥ सत्य पंथ
 निरग्रंथ दिगम्बर, कहो सुरी तहं प्रगट पुकार । सो गुरुदेव बसो
 उर मेरे, बिघ्न हरण मंगल करतार ॥१॥ श्रीअकलंक देव मुनि-
 वर सों, बाद रच्यों जहं बौद्ध बिचार । तारा देवी घटमें थापी, पटके
 ओट करत उच्चार ॥ जीत्यो स्याद्वाद बल मुनिवर, बौद्ध बेधि तारा
 मद टार ॥ सो० ॥२॥ स्वामि समंतभद्र मुनिवरसों, शिवकोटी हठ
 कियो अपार । बन्दन करो शंभुपिण्डीको, तब गुरु रच्यो स्वयंभू
 भार ॥ बन्दन करत पिण्डिका फाटी, प्रगट भये जिनचन्द्र उदार ॥
 सो० ॥३॥ श्रीमत मानतुङ्ग मुनिवरपर, भूप कोप जब कियो गंवार
 बन्द कियो तालेमें तबहीं, भक्तामर गुरु रच्यो उदार ॥ चक्रेश्वरी
 प्रकट तब डूँके, बंधन काट कियो जयकार ॥ सो० ॥ ४ ॥
 श्रीमत-बादिराज मुनिवरसों, कहो कुष्ठ भूपति तिहिं वार श्रा-
 वकसेठ कह्यो तिहं अवसर, मेरे गुरु कंचन तन धार ॥ तबहीं
 एकीभाव रच्यो गुरु, तन सुवर्णदुति भयो अपार । सो० ॥ ५ ॥
 श्रीमत कुमुदचंद्र मुनिवरसों, बादपरो जहं सभा मभार । तबहीं
 श्रीकल्याणधाम धुति, श्रीगुरु रचना रची अपार ॥ तब प्रतिमा-
 श्रीपार्श्वनाथकी, प्रगट भई त्रिभुवन जयकार । सो० ॥ ६ ॥ श्रीमत ।
 विद्यानन्दि जबै, श्रीदेवागम धुति सुनी सुधार । अर्थहेत पहुंचो
 जिनमंदिर, मिलो अर्थ तिहं सुखदातार ॥ तबग्रत परम दिगम्बर-
 को घर, परमतको कीनो परिहार । सो० ॥ ७ ॥ श्रीमत अभयचंद्र
 गुरुसों जब, दिल्लोपति इमिकहो पुकार । कै तुम मोहि दिक्षाबहु
 अतिशय, कै पकरो मेरो मतसार ॥ तब गुरु प्रगट अलौलिक
 अतिशय, तुरत हरो ताको मदभार । सो गुरुदेव बसो उर मेरे,
 बिघ्न हरण मंगल करतार ॥ ८ ॥

दोहा—विघ्न हरण मंगल करण वांछित फल दातार ।

वृंदावन अष्टक रच्यो, करो कंठ सुखकार ॥

११७ लावनी तिर्यकर चिन्ह ।

अब कहूं चिन्ह सो प्रभुके चित लगौये । धरि ध्यान तिनहिं-
को भवसागरतरि जेये ॥ टेक ॥ श्री आदिनाथके वृषभचिन्ह
राजै है । जिन अजितनाथके कुंजर छवि छाजै है ॥ श्रीसंभवनाथ
तुरंग चिन्ह है तनमें । अरु अभिनन्दनके मरकट लखि चिन्हनमें
चकवा श्रीसुमतिजिनेश प्रभूके राजै । अरु पद्मप्रभूके पद्मचिन्ह है
छाजै ॥ पहिचान चिन्ह जब जिनको शीश नवैये ॥ धरि० ॥ १ ॥
सांथिया सुपार्श्वनाथ प्रभूके राजै । जिनचन्द्रप्रभूके चंद्रचिन्ह छवि
छाजै ॥ श्रीपुष्पदंतके लक्षण मगर सुना है । श्रीशीतलप्रभुके पगमें
वृक्ष गिना है ॥ श्रीयांसनाथके गैड़ा सुन रे भाई । अरु वांसुपूज्य-
के महिषाकी छवि छाई ॥ अरु वांसुपूज्यजा रक्तवरण चित लैये ॥
धरि० ॥ २ ॥ पग लक्षण विमल बराह प्रभूके जानो । श्रीजिन अनंत
के सेई पग पहिचानो ॥ श्रीधर्मनाथके बज्र चिन्ह है पगमें । श्रीशां-
तिनाथके चिन्ह सुना है मृग में ॥ श्रीकुंथुनाथके छेला जानो मन
में । श्रीअरहनाथके मोनचिन्ह है तनमें ॥ ये देख चिन्ह जब
जिनको शीश नवैये ॥ धरि० ॥ ३ ॥ श्रीमल्लिनाथके कुंभदेख शिर-
नाऊं । श्रीमुनिसुव्रतके कच्छ देख मैं ध्याऊं ॥ नमिनाथ प्रभूके
कमलचिन्ह चितदेना । श्रीनेमिनाथके शंख चिन्ह लखि लेना । श्री-
पार्श्वनाथके नाग देख लो तनमें । श्रीमहावीरके सिंह छवि चिन्ह

में ॥ इह खुशीलालकी अरजु हृदयमें लैये ॥ धरि ध्यान तिनहिं
का भवसागर तरि जैये ॥४॥ इति ॥

११८ संसार दुख दर्पण ।

दोहा—बीर जिनेश्वर पद नमूँ, जगजीवन सुखदाय ।

कहूँ दशा संसारकी सुनो भविक मन लाय ॥

जोगी रासा—या जगमें नहिं दीखत कोई, जीव सुखी संसारी ।
दुखिया सब जग जीव दिखाई, देत अनेक प्रकारी ॥ कबहुँ जियने जाय
नरक गति, सागर लों थिति पाई । मारन छेदन ताड़न पीड़न,
कष्ट लहे अधिकारी ॥ छूवत भूमि हुई इम पीड़ा, बिच्छू सहस
डसाना । भूख लगी तिहुँ जगका खाऊँ, अन्न मिला नहिं दाना ॥
होय तृषातुर चह्यो सिंधु जल, बून्द एक नहिं पाई । रक्त राघसे
पूरित नदियां, बहती हैं दुःखदाई ॥ असि सम तीक्ष्ण पत्र तृक्षके,
जो तन चीर बिदारै । टूटे फल ज्यों पत्थर बरसै, खण्ड खण्ड
कर डारै ॥ गरमी सरदी कष्ट दायनी, है अन्धियार भयाना । पृथ्वी
की रज अति दुर्गन्धा, व्याकुल करत महाना ॥ कष्ट नरकके जांय
न बरने, जो बहुकाल सहे हैं । पशु गति पाई फिर दुख दाई,
कष्ट अनेक लहे हैं ॥ भार बहन अरु छेदन भेदन, भूख व्यास
दुखकारी । जलचर, नमचर, थलचर पशुको, मारत आन शिकारी ।
पिंजरे पड़ कर, झूटे बंध कर, बन्धनके दुख पावै । चावुक पैनी,
डंडा, लाठी, मार समीसे आवै ॥ पापी हिरदे धार कुष्टता, पंचेन्द्री
पशु मारे । देवी पर बलिदान नामसे । असिके घाट उतारै ॥ है
पशुगति अति कष्ट दायनी, पाय लहै दुख प्रानी । जो भोगै दुख,

वह जिय जानै, या प्रभु केवल जानी ॥ कुछ शुभ भावन कर या
जियने, सुरगति सुन्दर पाई । पर मन इच्छित सुख नहिं पायो,
दुख पायो अधिकाई ॥ रंक भयो, लख सम्पत्त परकी, झुर झुर
बदन भिरायो । देख २ सुख भोग पराये, कर चिन्ता, दुख पायो ॥
बहु दुख माना, चिन्ता कीनी, रुदन किया दुःखदाई । जब मृत्युसे
मास छः पहिले, गलमाला मुरझाई ॥ हा हा ! यह सुख भोग
छुटेंगे अब होगी धिति पूरी । इच्छा मनकी पूरी नाहीं, रह गई
हाय अधूरी ॥ कोई पुन्य उदय जब आयो, तब मानुष गति पाई ।
कर्म उदय कर या गति मांहो, कष्ट अनेक लहाई ॥ पुत्र बिना
दुखिया नर कोई, चिन्तत मनमें ऐसे । मम धन संपत्ति कौन
भोगवै, नाम चलेगा कैसे ॥ होत पुत्र मरजाय दुखी तब, यह कह
रुदन मचावै । जो ना होता तो अच्छा था, कष्ट सहा नहिं जावै ॥
जीयो पुत्र भयो दुर्व्यसनी धन सम्पत्ति सब खोयो । अब दुख
मानत मातपिता सब, कुलका नाम डुबोयो ॥ मित्र स्वारथी स्वा-
रथ सावन कर आंखें दिखलावै । बैरो बनकर धन यश प्राणन,
का ग्राहक बन जावै ॥ कुलटा नारी कहल कारणी, कर्कश बचन
उच्चारै । दोऊ कुलकी लाज गंवावै, पतिको विष दे मारे ॥ वेश्या-
गामी, परतिय लम्पट, ज्वारी, मांसाहारी । मद मतवाली पतिसे
दुखिया हैं पतिबरता नारी ॥ पुत्र पिता पर अरि सम टूटै,
चाहै यह मर जावै । पिता पुत्र पर रुष्ट होय कर, घर से दूर
करावै ॥ भाई भाई लड़त स्वान सम, हैं प्राणनके लेवा । धार
कषाय उपाधि मचावै, हैं दोऊ दुख देवा ॥ विधवा नारि पती
बिन दुखिया बिन नारी पति कोई । कोई बाला बूढ़ पती पा,

दुःखित अतो मन होई ॥ इष्ट मित्रका होय चिछोहा, शोक करत
 तन छीजे । बाल अनाथ न कोउ सहाई, किसका आश्रय लीजे ॥
 कुल कुटुम्बके लोग स्वार्थी, स्वार्थ वश दुख देवै । दास लगेपर
 धन सम्पति क्यों, प्राणन तक हर लेवै ॥ नृप अन्यायी सब धन
 छीने, अत्याचार करै है । बन्दी गृहमें डार मार कर, सम्पति सठवै
 हरै है ॥ धर्म नाम पर लड़त भयाने, धन लूटै अघतापी । मार छेद
 कर प्राण लेत हर, रक्त बहावै पापी ॥ न्यायासन पर बैठ करै
 अन्याय, घूस कोई लेवै । दोषीको निर्दोष बनावै, दण्ड सुजनको
 देवै ॥ मारै लूटै चोर लुटेरे, स्याल ब्याल डरपावै । नीर दुबावै
 अगनि अलावै सिंहादिक हन जावै ॥ मरी रोग दुर्मिक्ष सतावै,
 बिजुरी तनको जारं कालम थानक नित डरपावत, आन अचानक
 मारै ॥ क्रोध मान माया अरु लुण्णा, या वश हो अघ कीनो । मार,
 किया अपमान, कपट कर, धन संपति सब छीनो ॥ परधन धरनी
 तियको हरकर, संकट आप उपायो । कारागृहमें कष्ट उठाये, कुलको
 छाँछन लायो ॥ पायो निर्बल तन अति रोगी, या विटरूप भयाना ।
 अंगहीन लंगड़ या लूला, दुआ अन्ध या काना ॥ फानन सुनत, न
 बोलत मुकासे, देखत नाहीं आपा । कुष्ट रोगसे गलित मयो सन,
 तब दाखण दुख व्यापा ॥ बुद्धावस्था अर्ध मृतक सम, पाय
 महा दुख मानै जाहि मृत्युसे जग भय जावै, ताहि निकट अघ
 जानै ॥ कोई भिखारी दर दर याखत, दुर दुर बचन कहावै । रुखे
 सूखे झूठे टुकड़े, पाकर भूख मिटावै ॥ बिन धन, निर्धन, जन, निज
 मन में कल्पे और दुख मानै, देख धनी जनको दुख पावै, ब्रेह्मर्षी-
 दिक ठानै ॥ धनी पुख मन, तोष न रंभक, लुण्णा वश दुख पावै ।

लोभ पापका बाप, धरै मन, यासे कष्ट उठावै ॥ धनको लूटे खोर
लुटेरे, अगनि जले नस जावै ॥ तब देखो धनवान पुरुषको, सोख
सोख मर जावै ॥ काहुके व्यवहार बणिजमें, टोटा भाव गयो है ॥
टोटा छोटा दुःखका कारण, यासे दुःखित भयो है ॥ तृष्णाके वश
भगपति भूपति, नरपति हैं सब कोई । संतोषामृत पान कियो
नहिं, फिर कैसे सुख होई ॥ इन्द्रिय पांचों कर विषयनरत, बहु
बिध नाख नचावै । मनको गति अति चंचलपनको, लेय विषयमें
धावै ॥ रूप रंग रस गंध राग पर, जगजिय मन ललचावै । हो
आशक्त दुःखित अति होवै, अपने प्राण गमावै ॥ विषयसम विषय
बिनासैं धनबल, यश, वुद्धी, शुचिताई । प्राणजाय विषयाय
विषय पर, भव भवमें दुःखदाई ॥ जो माने सुख या जग माहो,
बिषयादिक विष काके । वह नर स्वान समान सुखी है, सुखा
हाड़ चबाके ॥ है असार संसार दुःखोंका द्वार विपतिका घर है ।
सृण २ दुःखकी हो बढवारी, आधि व्याधिका डर है ॥ मोही मोह
में अंध होयकर, जग वस्तु थिर माने । मेरा घर दर धन जब
धरना, बन्धु मित्र निज जानै ॥ हाड़ मांस अरु रक्त राखकी, देह
अशुचि धिणकारी । रूप रंग पर याके मोहित, होत मनुष अ-
विचारी ॥ जानत नाहीं रूप दरै यह, ज्यों तरबरीकी छाया ।
बालू भीत समान नसै है, कंचन औसी काया ॥ स्वारथके सब
सगे संधाती, इष्ट मित्र जन प्यारे । निज स्वारथको साधन
करके पलमें होवे न्यारे ॥ और किसीकी बात कह्यो यह, देह संग
नहि जावै । आको पोखें मित संतोषै, बहु बिधि खेन करावै
या संसार महाबन भीतर, सार वस्तु नहि कोई ॥ कौन प्यारथ

ऐसा कहिये, नास न जाको होई ॥ जल बुद् बुदवत् जीवन जगमें, आस नहीं इक दिनकी । काल बली मुख खोलत जोई, बाट एक पल छिनकी ॥ फिर जगमें, किससे मोह कीजे, कौन बस्तु धिर कहिये । ऐसे जग जंजाल जालमें, फँसकर बहु दुख लहिये ॥ कूप भांग पड़ीको पीकर, सबने सुध बुध खोई । उत्तम नर भव क्षेत्र पायकर, बेल न सुखकी बोई ॥ धर्म साध, परहित नहिं कीता, योही जन्म गँवाया । मूढ़ पुरुषने रत्न अमोलक, सागर बीच डुबाया ॥ सुख चाहत भी सुख नहिं पावत, दुख पाव संसारी । याका कारण, मोह अज्ञता, अरु मिथ्यात दुखारी ॥ जो चाहे सुख, जिय संसारी, आपा परको जान । हित अनहित अरु पाप पुन्यका, सभी भेद पहिचानै ॥ विश्व प्रेम हिरदय बिच धारै, पर उपकारी होवै । पाप पंक आतम पर लागे संजम जलसे धोवै ॥ दर्शन, ज्ञान, सु चारित्र पालै, इच्छा भाव घटावै । पंख महाव्रत धारण करके, जगसे मोह हटावै ॥ यह जग वस्तु समस्त विनासे, इनसे ममता त्यागै । आत्म चिंतवन कर, निजमनमें, आतम हितमें लागै ॥ मैं आतम परमात्म, चिद् आनन्द रूप सुख रूपी । अजर अमर गुण ज्ञान शांतिमय हूँ आनंद स्वरूपी ॥ यह तन रूप स्वरूप न मेरो, मैं चेतन अविनाशी । ज्ञाता दृष्टा सुख अनन्त मय, हूँ शिवपुर का वासी ॥ मेरी केवल ज्ञान ज्योतिसे, भरम तिमर नस जावे । मैं ऐसा शुद्धात्म, चिदानन्द, जब यह जीव लखावे ॥ तब ही कर्म कलंक बिनासे, जीव अमर पद पावै । मिलै निराकुल सुख अविनाशी, परमात्म कहलावै ॥ आवे कब वह शुभ दिन जब मम, ज्ञान “ज्योति” जग जावै । सत्य अमर आतम को पाकर, मम जियरा सुख पावै ॥

‘दोहा—मेरी है यह भावना, सुख पावै संसार ।

मिले निराकुलता मुझे, हो आनन्द अपार ॥

